



ચાંદ રત્ન ગુપ્તસાગર

તથા

ગુપ્ત જ્ઞાનનો ગુરુકો



રચયિતા :—

શ્રીમદ્ ગરમહંસ

પરિવારકે ત્રી પૂજ્યપાદ અવધૂત

શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ

મુલ્ય : અમુલ્ય



ચૌદ રત્ન ગુપ્ત સાગર

તથા

ગુપ્ત જ્ઞાનનો ગુટકો



— સંચયિકા : —

શ્રીમદ્ પરમહંસ પરિવ્રાજકાચાર્ય પૂજ્યપાદ અવધૂત

✽ શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ ✽

મુલ : અમૂલ્ય

પ્રકાશક :

સંતશ્રી પ્રણવરામજી મહારાજ.

નિત્યાનંદ સેવાશ્રમ, ઓલવ રોડ,

અમદાવાદ.

આવૃત્તિ-૩ જી

પ્રત - ૧૦૦૦.

મહાશિવરાત્રી.

વિ. સં ૨૦૨૧.

તા. ૧-૩-૬૫.

મુલ્ય :

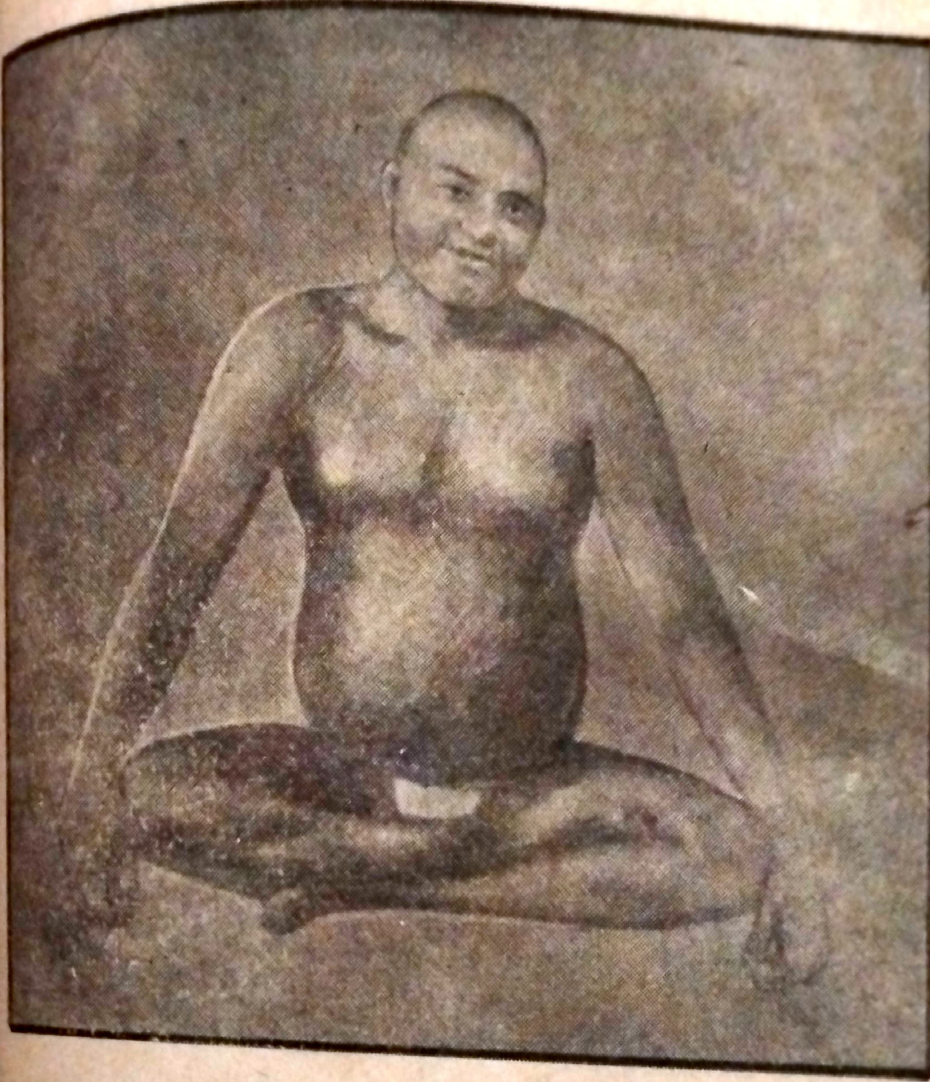
મુમુક્ષુ આત્માઓ માટે,

અમૂલ્ય.

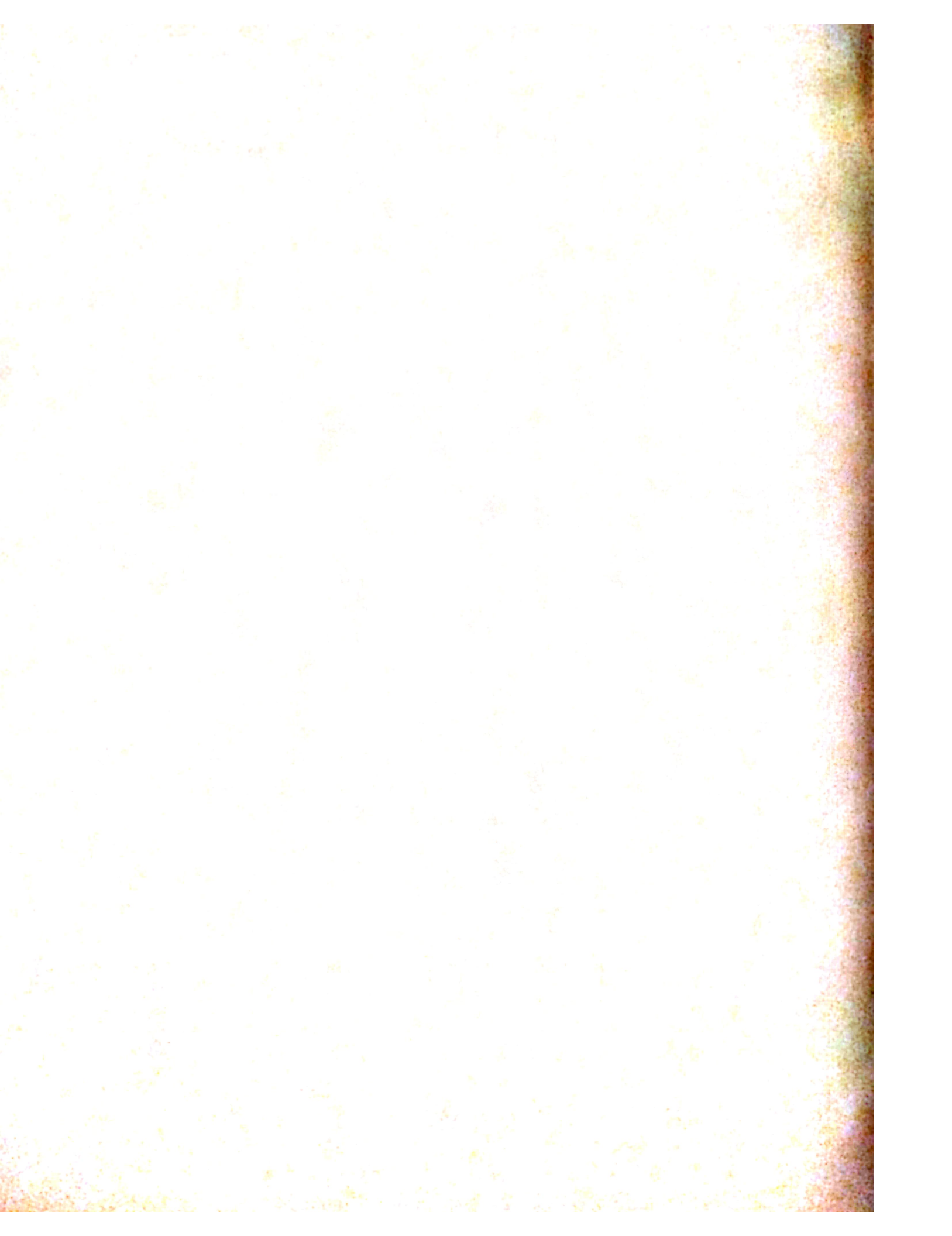
મુદ્રક :

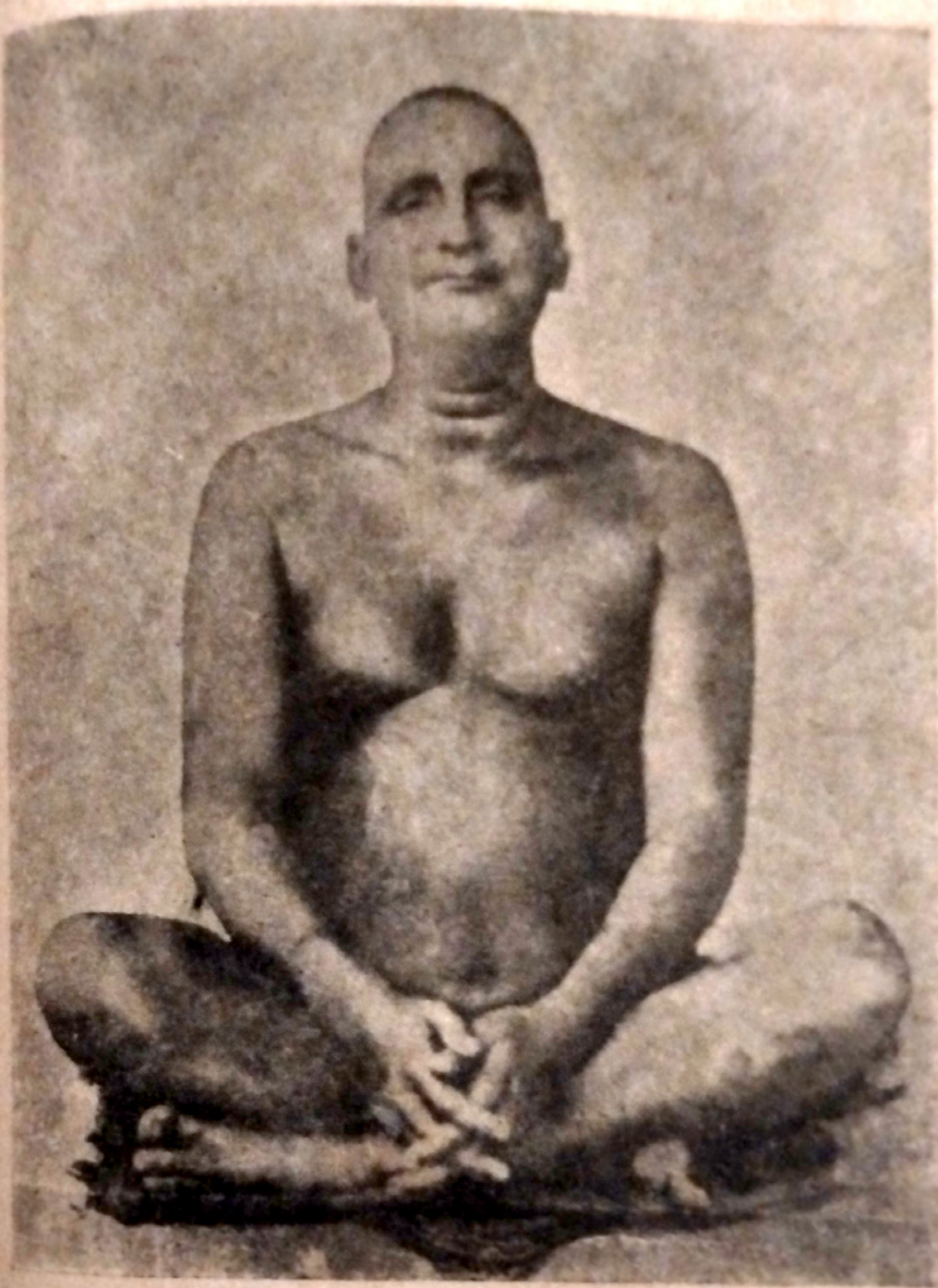
શ્રી રામાનંદ પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ.

કાંકરીઆ રોડ, અમદાવાદ-૧.



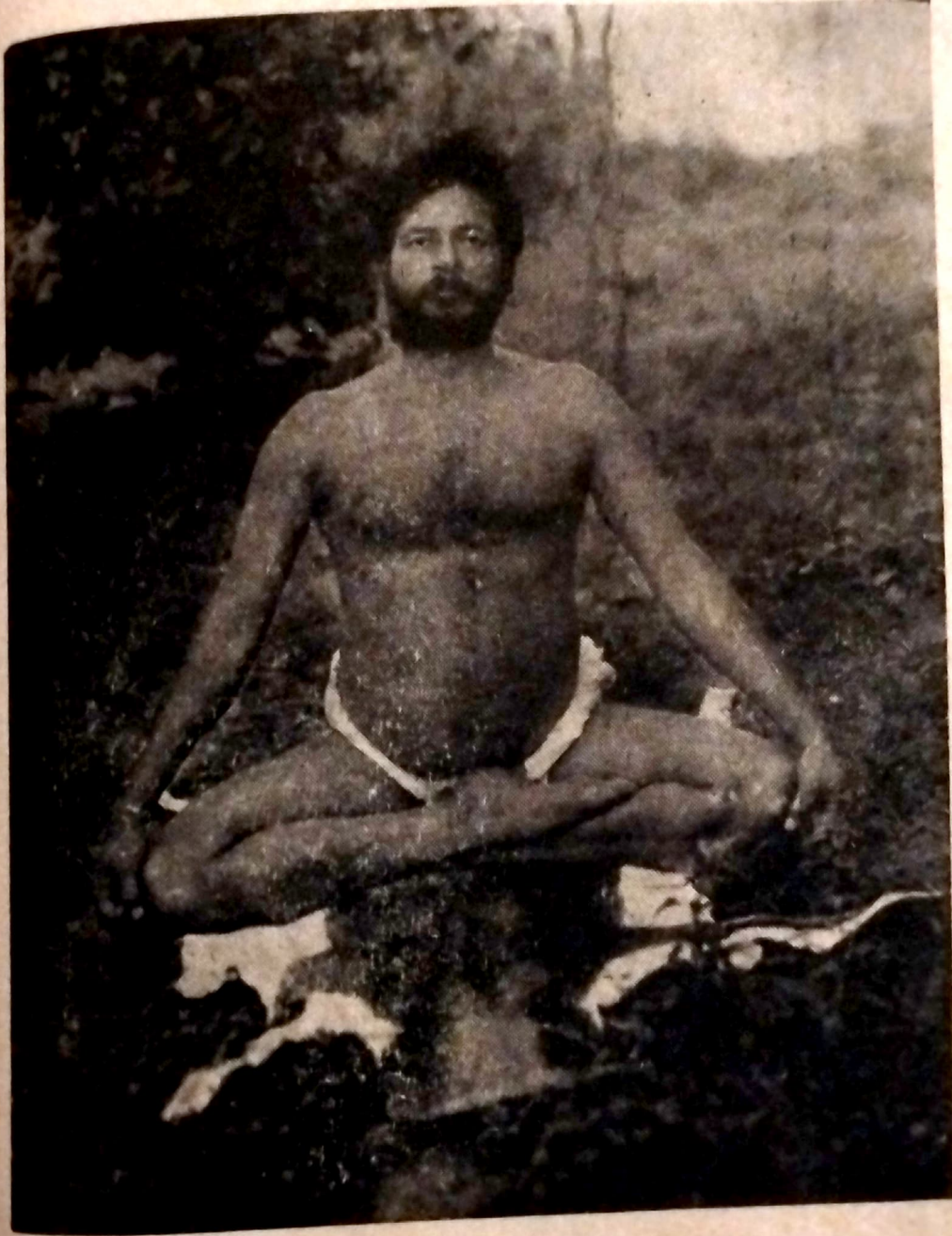
શ્રીમત્ પરમહંસ પરિવાજકાચાર્ય પુજ્યપાદ અવધુત,
શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ





શ્રી અવધૂત ૧૧૦૮ નિત્યાનંદ મહાપ્રભુજી





બ્રહ્મનિષ્ઠ સંત શ્રી પ્રણવરામ મહારાજ



પ્રસ્તાવના

આત્મ: સમણુવીય પ્રાચીન મુનિઓની પરંપરા અનુસાર
બ્રહ્મનિષ્ઠ યોગીરાજ અને મહાન અવધુત શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ
મુમુક્ષુ આત્માઓના હિતાર્થે મધ્યપ્રદેશમાં વણા લાંબા સમય સુધી
જામણ કરીને સંવત ૧૯૭૬ માં મન્દસૌર ગામમાં વિષ્ણુપુરી
નિવાસમાં સમાધિ લીધી હતી તે વાત અર્થ વિદિત છે.

આ જગતમાં ચાર પ્રકારના મનુષ્યો હોય છે (૧) પામર
(૨) વિષયી (૩) છત્રાસુ અને (૪) મુક્ત આ ચર્ચ લોકો માટે
વેદોમાં એક લાખ ૨ લોકો છે જેમાં ૮૦ હજાર કર્મકાંડના,
૧૬ હજાર ઉપાસનાના તથા ૪ હજાર જ્ઞાનકાંડના છે. પરંતુ વેદોમાં
તાત્પર્ય તથા પરંપરાનુસાર અધીકારીજનો માટે કર્મજનનની
નિવૃત્તિ અને પરમાત્માની પ્રાપ્તિ એજ મોક્ષ છે.

આત્મા સ્વયં પ્રકાશીત છે. સ્વયં સિદ્ધ છે. આ જ્ઞાનથી
અધિકાર રૂપી અજ્ઞાનને નાશ કરવા માટે મહાત્માઓની વાણી
અલેહ જ્ઞાનરૂપ સૂર્ય સમાન છે. આ વાણી પાદૃત કે સંસ્કૃત ગમે
તે ભાષામાં હોય તેનું શ્રવણ-મનન-એજ પરમ પુરુષાર્થ છે.
એટલા માટેજ મહાત્મા શ્રી અવધુત ગુપ્તાનંદજી મહારાજે આ
“ચૌદરત્ન ગુપ્તસાગર” નામના અંથનું ઉપરોક્ત જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ
માટે નિર્માણ કરેલું છે. સમુદ્ર મંથનમાંથી નીકળેલા ચૌદ રત્નો
જેમ, આ અંથમાં પણ ચૌદ રત્ન રૂપી મહા જ્ઞાન પ્રગટ કર્યું છે.

“ચૌદ રત્ન ગુપ્તસાગર” નામનો અંથ શ્રી નિત્યાનંદ
જીવાશ્રમમાં વાંચ્યો, મારા અનુભવ પ્રમાણે આ અંથ જે કોઈ છત્રાસુ
શ્રવણ-મનન-નિદિધ્યાસ કરે તો જરૂર મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી શકે, તો
ફરક છત્રાસુએ આ અંથ વાચન કરી મનન કરે તેવો મારો
મત અભિપ્રાય છે.

મુળ પુસ્તક હિન્દીમાં હોવાથી વાંચવું સમજવું કઠીન
પડતું હોઈ ગુજરાતના ઘણા પ્રેમી લખ્તોની ઈચ્છાથી તેમજ
મુમુક્ષુ આત્માઓને સરળ ભાષામાં સમજાય તે માટે આ ગ્રંથ
શ્રી નિત્યાનંદ સેવાશ્રમના સંતશ્રી પ્રણવરામ મહારાજે ગુજરાતી
ભાષામાં પ્રગટ કર્યો છે. તેનો છાન્નાસુઓ લાભ લેશે.

ૐ શાન્તિ: શાન્તિ: શાન્તિ:

આચાર્ય શ્રી વલ્લભરામ વૈદ્ય.



श्रीकृष्ण रत्न गुप्त सागर प्रारंभः

भंगलाचरण

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं मरिम ।

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं मरिम ॥

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं मरिम ।

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं मरिम ॥

ईस भंगलाचरण के अतिरिक्त और भी भंगल करते हैं—

श्रीकृष्ण छंद

निज आत्म भंगल रूप सदा । द्वि भंगल किसका कीजे बुद्ध ।
वो सग्न भंगल का भंगल है । तिसते बिन्न और अभंगल है ॥१॥
दशाष्ट दिशि भंगल है जिस को । निज व्यापकरूप लब्ध्या तिस को ।
हरि हर सूर गणेश निजे । सग्न आत्म में स्तब्ध है तिते ॥२॥
आत्म सग्न का आधार है । वह नाम रूप से न्यारा है ॥
जिस में मिथ्या संसारा है । सो अव्ययरूप अपारा है ॥३॥
सत चेतन का समकारा है । वो आनन्द रूप हमार है ।
दूजे का भंगल क्या कीजे । जो काल पाय के सग्न कीजे ॥४॥
आत्म त्रिदासा पाय सही । दूजे का जिस में लेश नहीं ॥
कोछ लोक न वेद न यज्ञ मुरा । गुरु शिष्य न जने परम्परा ॥५॥
श्री. १

કોઈ મજબૂત ન પાંચ સન્યાસ જહાં । કોઈ સાધન સાધ્ય ન જ્ઞાન તહાં
 સો જ્ઞાન સરૂપ સદા નિત હૈ । નહીં બોલી નહીં ઇન્દ્રિયન હૈ ॥૧॥
 નહીં હૃદ મુઝ મેં આવત હૈ । બાજે જળ બ્યાપક પાવન હૈ ॥
 હમ બ્યાપન મંગલ બ્યાપ ક્રિયા । સળ કરના હમસે દૂર દુયા ॥૨॥
 ક્રિયા કા મુઝ મેં લેશ નહીં । કોઈ દેશ ઓર પરદેશ નહીં ॥
 મેં હી બ્યાપક ગુમે વિના કાયા । કોઈ જીવક કશ નહીં માયા ॥૩॥

અનુબન્ધ

અધિકારી કે લક્ષણ જે મુક્તિ રત્ન સે લેકર જિજ્ઞાસા રત્ન
 પર્યન્ત કથન કિયે હૈં સો જનને યોગ્ય હૈં. પ્રતિપાદ્ય પ્રતિપાદક
 ભાવ રૂપ જે સંબંધ હૈં સો લી ઈસ અર્થ મેં યથાક્રમ કથન
 ક્રિયા ગયા હૈં. વાસ્તવ મેં જીવ બ્રહ્મ હી એકતા ઈસ અર્થ કા
 મુખ્ય વિષય હૈં જે જ્ઞાન રત્ન મેં વિવેશ રૂપ સે પ્રતિપાદન ક્રિયા
 ગયા હૈં. ઈસી પ્રકાર જીવન મુક્તિ ઓર વિદેહ મુક્તિ રત્ન મેં
 ઈસ કે પ્રયોજનકા વિવેચન કરને મેં આયા હૈં.

-)(-

અથ યુક્તિ રત્ન

દોહા

શિષ્ય ગયા ગુરુ દેવ ઢિંગ, છાંડિ કપટ છલ ખંક ॥
 કર પ્રણામ લખિ મુદિત મન, પૂછન લગાં નિશંક ॥૧॥

મુખ ઠી ચાહું પ્રાપ્તિ મૈ, સભી કો હાન ॥
 સા કૈસે હાત હૈ, કહિયે કૃપા નિધાન ॥ ૨ ॥

किसी समय ओह शिष्य, कपट, छल, चकमाच (अर्थात् प्रमाद) आदि त्याग कर अपने सद्गुरु के पास गया और प्रणाम करके उसने देखा कि इस समय गुरु महाराज अपने पर ओढ़ात प्रसन्न हैं तथा तो वह सकेत सहित अर्थात् निर्णय हो कर सविनय पूछने लगा. हे गुरु देव! मैं सुष की प्राप्ति और सष प्रकार के दुःखों की निवृत्ति चाहता हूँ. ऐसा हे देव निधान! आप मुझ पर दया करके कहिये मेरी यह छद्मता कैसे सफल हो सकती है? शिष्य के दीनता पूर्वक इस प्रश्न करने पर गुरु बोले—हे शिष्य तू किसके वास्ते और कैसा सुष चाहता है. वेदोंमें दो प्रकार के पदार्थ कहे हैं (१) आत्म और (२) अनात्म धर्मों से तू आत्मा के सुष की प्राप्ति चाहता है अथवा अनात्मा के यदि तू कहे कि अनात्मा के सुष को चाहता हूँ तो तेरा यह कहना वृथा है क्योंकि अनात्मा का तात्पर्य अपने से भिन्न का है, और यह स्पष्ट है कि तेरे से भिन्न याने दूसरे के आराम से तेरे को आराम नहीं होता है, जैसे किसी मनुष्य को निधि प्राप्त हो तो उस निधि जनित सुष की प्राप्ति ली होगी दूसरे को नहीं होगी. इसी प्रकार अनात्म को सुष प्राप्त होने से तेरा प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा.

वेद ने अनात्म पदार्थों को सुष रूप नहीं कहे हैं, बल्के असत्, जड और दुःखरूप ही कहे हैं. इसलिये इस लोक तथा परलोक के सभी अनात्म पदार्थों को सुष की प्राप्ति होना संभव नहीं. अथ यदि तू कहे कि आत्मा के लिये सुष की प्राप्ति चाहता हूँ तो तेरा यह कथन भी अनता नहीं, क्योंकि वेद ने आत्मा को सुष रूप कहा है और इस शरीर से लेकर स्त्री, पुत्र और शरीर के उपकारक धन पशु आदि सभी लौकिक तथा पार-लौकिक अनात्म पदार्थों को दुःखरूप बताया है.

गुरु के उक्त वचन सुनकर शिष्य बोला—हे भगवन्! आप कहते हैं कि पदार्थों में सुष नहीं है, परन्तु मुझे यह कथन जयता नहीं है. क्योंकि मेरे को तो पदार्थों में सुष प्रतीत होता है. यदि पदार्थों में सुष नहीं हो तो उनके प्राप्त होने से जो

आनन्द होता है सो नदी' होना आदिये, क्योंकि बिना लुबे
 पदार्थ की प्रतीति होती नदी' है, यदि बिना लुबे पदार्थ' की
 प्रतीति माने' तो अन्या पुत्र आदि की प्रतीति होना आदिये
 कि जे किसी को ली होती नही, अतः जैसा प्रत्यक्ष दिगार्थ
 होता है कि पदार्थ' में ही आनन्द है, कि पदार्थ' सुख रूप नदी
 है—यह कथन मेरी समझ में नही आता, यदि जैसा कहा
 जाय कि आत्म सुख का ही विषय में जान होता है तो मेरे
 विश्वासानुसार यह ली संभव नही, क्योंकि आत्मा का तो किसी
 काल में अभाव नही होता, आत्मा नित्य है, जैसी स्थिति
 में सुख का ली कदापि अभाव नही होना आदिये, यदि विषय
 में आत्म सुख का जान होता सदैव ही प्राप्त होना, आदिये
 सुख की परंतु सुख सदैव होता नही है, इस से यही जना जाता
 है कि विषय में ही आनन्द है और प्रत्यक्ष ली देने और
 सुनने में आता है मेरे ली पुत्र, धन, नही इस करके मैं अहुत
 दुखी हूं और शास्त्रद्वारा सुनने में आता है कि जिस काल में
 देवराज धन्वका और दैत्योंका पदार्थ' के वास्ते भडा लारी युद्ध
 हुआ तब दैत्यों ने जय पाई और धन्व डारगया और लोगो
 की धम्छा करके दीन होगया तब विष्णु भगवान् के पास जा के
 विषय सुख के वास्ते अहुत दीनता की यदि विषय में सुख नही
 होता तो अमरेश विष्णु की कृपा का पात्र क्यों होता इस से
 जाना जाता है कि विषय में ही सुख है,

गुरुदेवाय—हे शिष्य ! तुमने जे कहा विषय में ही सुख
 है सो ऐसी बुद्धि तो विषयी पुरुषों की होती है तू' काहे को
 विषयी बनता है और तुझे किसी रीति से विषय में सुख की
 प्रतीति ली हो गध है तो तेरे से यह पूछते हैं कि विषय सुख
 अनित्य है कि नित्य ? यदि तुम प्रथम पक्ष स्वीकार करो कि
 विषय सुख अनित्य है, तो अनित्य सुख की कोछली ज्ञासु
 धम्छा करता नही और अनित्य सुख की जे धम्छा करते हैं
 वे ज्ञासु नही, और जे तुम दूसरा पक्ष अंगीकार करो कि
 विषय सुख नित्य है तो आत्मा का स्वर्पही सुख होवेगा
 क्योंकि वेद में आत्मा को सुखरूप और नित्य कहा है, इसलिये

आत्मासे भिन्न अनात्म वस्तु कोई भी सुख रूप है नहीं, अथ
आत्मा ही सुखरूप है, तिसको सुख की प्राप्ति कहना अनता नहीं
क्योंकि पाहुले को वस्तु नहीं होवे तिसकी प्राप्ति कहना अनता
है, सो आत्मा वेदने आनन्दरूप कहा है तिसको सुख प्राप्ति की
याहना अने नहीं और जो तूने यह जान कही थी जो आत्म
सुख ही विषय में जान होवे तो सख काल सुख की प्रतीति
होनी चाहिये. आत्मा नित्य होने से यह कहना भी तेरा अनता
नहीं क्योंकि आत्मा की तो उत्पत्ति नाश होता नहीं और तुम
भी अंगीकार करते नहीं हो क्योंकि वह नित्य है, परन्तु साक्षी
आत्मा के आश्रित को अनात्म अंतःकरण की वृत्ति धन्द्रिय द्वारा
निकल के वह बाह्य देश में जाकर अनुकूल वा प्रतिकूल पदार्थ
से मिल के सुखाकार वा दुःखाकार होती है और जम अनुकूल
विषय की प्राप्ति होती है तब वृत्ति सुखाकार होता है यद्यपि
वह वृत्ति राजस है तिस वृत्ति से सुख की प्राप्ति कहना संभव
नहीं. क्योंकि सुख सात्विकी वृत्ति से होता है. तिसका कोई
निमित्त है नहीं तथापि तिस विषय की जो प्राप्ति से तिस
राजस वृत्ति का नाश होगया है परन्तु तिस वृत्ति के नाश से
अनंतर दूसरी सात्विकी वृत्ति उत्पन्न होवे है तिस वृत्ति के
उत्पन्न होने में राजस वृत्ति का नाश ही निमित्त है. परन्तु
बहिर विषय के आनन्द का विषय करने से वह वृत्ति भी बहिर
सुख ही होती है तिस वृत्ति से भी अन्तर आनन्द का भाव
होवे नहीं परन्तु तिस बहिरसुख सात्विकी वृत्ति के पीछे और
अन्तरसुख वृत्ति उत्पन्न होवे है, तिस वृत्ति से अन्तरसुख को
अंतःकरण उपहित आनन्द है तिसका ही ज्ञान होवे है और
बहिरसुख को सात्विकी वृत्ति दुर्ध है और विषय के आनन्द का
को लाल लुवा है तिस आनन्द से वृत्ति की स्थिती दुर्ध है यही
तिस अन्तरसुख वृत्ति के होने में निमित्त है, तात्पर्य यह है
कि जतना कि अन्तर और बाह्य को आनन्द ज्ञान होता है
सो सख वृत्ति के ही उत्पत्ति और नाश से होवे है, घसी कर के
सुख का नाश होवे है और वृत्ति को स्थिरता होने से विषय में
आनन्द का ज्ञान होवे है सो आत्मा का ही आनन्द है जैसे

जितना पदार्थन में जो भीड़ा भावूम होता है सो सली गन्ने
 का रस है क्योंकि जितनी ही अन्न मिश्रित मिठाई बनती है सो
 सख सांठे करके भीड़ी होती है तैसे ही जितना कि जो आनन्द
 का लान होवे है आहुर और अन्तर सा सली अन्न आत्मा
 तिस अन्नका ही है आत्मा से सिन्न और कोई ली आनन्द
 स्वरूप है नहीं इस करके जो तू आत्मा के वास्ते सुख को चाहे
 सो तेरा कहना बने नहीं क्योंकि आत्मा सदा आनन्दरूप है
 और वेद ने ली कहा है ॥ प्रज्ञानमानन्दमूर्ध्ना तिस महा वाक्य
 करके प्रज्ञान पद एव आत्मा का वाचक है और अन्न पद ध्विर
 का वाचक है और आनन्द पद दानों को अपने में ही बतावे
 इस करके ली आत्मा सुख रूपही है, परंतु लाग त्याग लक्षण
 करके दृष्टिये तब तेरे को भावूम होवेगा कि आत्मा आनन्द
 स्वरूपही है और जो तू सुखादिकों को आत्मा के गुण कहे सो
 बात तेरी बने नहीं, क्योंकि गुण और गुणी का तादात्म्य संभंध
 होता है सो ली तिन अनात्म पदार्थों का ही होता है, और
 जो जिसका जिसमें तादात्म्य होता है सो तिसका स्वरूपही होवे
 है जैसे जति तादात्म्य होवे सो जति व्यक्ति स्वरूप ही है,
 व्यक्ति से सिन्न करके दृष्टिये तो जति कही मिलती नहीं, याते
 अनात्म पदार्थन का ली जिनका तादात्म्य होवे है, तिनका ली
 कल्पित ही भेद होवे है, वास्तव में गुण और गुणी का अल्लेह
 ही होवे है तब अनात्म पदार्थों का अल्लेहही है, जब अनात्म
 है तो निर्गुण कहा है? तिस निर्गुण आत्मा का गुणों से कौन है,
 संभंध संयोग अथवा संवाय सम्बन्ध है, सो संवाय सम्बन्ध तो
 पूर्व की रीति से बनता नहीं क्योंकि जिन पदार्थन का न्याय शास्त्र
 में संवाय संभंध माना है उन पदार्थन का वेदान्तशास्त्र में तादात्म्य
 संभंध माना है, तादात्म्य के नहीं बनने से संवाय ली बनता
 नहीं, और दूसरा संयोग सम्बन्ध कहा सो ली बनता नहीं,
 क्योंकि संयोग दो के आसरे रहता है याते कोई ली आसरा
 संयोग का बनता नहीं जो ऐसा कहे कि आत्मा के आसरे
 संयोग रहे है, सो कहना बनता नहीं क्योंकि आत्मा को असंग
 कहा है, याते असंग आत्मा में संयोग का आसरा बनता

નહીં. ઓર જો દુસરા પક્ષ કહે કિ ગુણન કે આસરે સંયોગ રહતા
 સો ભી ખાત બનતી નહીં ક્યોંકિ ગુણ જડ હોને સે સંયોગ
 આસરે બનતે નહીં, ઈસ કરકે સુખાદિક ગુણન કા ઓર આત્મા
 કા કોઈ ભી સમ્બન્ધ હે નહીં યાતેં ભી સુખાદિક આત્મા કે ગુણ
 નહીં હે. સુખાદિક આત્મા કે સ્વરુપહી હે જો જિસકા સ્વરુપહી
 હોવે હે. સો તિસ સે ભિન્ન હોવે નહીં, જૈસે દ્રવતા જલકા સ્વરુપ
 હે જૈસે ઉષ્ણતા અગ્નિ કા સ્વરુપ હે, તસે હી સુખાદિક આત્મા
 ગુણ નહીં આત્મા કે સ્વરુપ હી હે, ઓર જો તુમ એસે કહો કિ
 સુખાદિક આત્માકે ધર્મ હે, તો હમ યહ પૂછતે હેં કિ સુખાદિક
 આત્મા કે ધર્મ સો તૈને કેસે જાના યહ આપ બતાધએ જો તુમ યહ
 કહો કિ આત્મા કરકે જાના સો યહ તુમહારા કહના બનતાં નહીં
 ક્યોંકિ આત્મા સબ ધર્મોં સે રહિત વેદ ને કહા જૈસે ઓર સર્વ
 ધર્મન સે રહિત હે, તસે જાનના ભી એક ધર્મ હે સો તિસ જાનને
 સે ભી રહિત યા તે સાક્ષી આત્મા મેં જાનના બનતા નહીં તો
 યદપિ અનાત્મા મેં ભી જાનના બનતા નહીં, ઓર સુખાદિકોં
 કા ભાન હોતા હે સો નહીં હોના ચાહિયે, તથાપિ જૈસે દૂર દેશ
 મેં વસ્તુ હોવે તિસકે દેખને મેં નેત્ર કી સામર્થ નહીં હોવે હે,
 ઓર એક દૂરબીન શીશા હોતા હે કેવલ તિસમેં ભી સામર્થ
 નહીં હોવે હે, ઓર જબ ઉસ દર્ષણ કો નેત્ર સે મિલાધયે તબ
 દૂર દેશ સ્થિત વસ્તુ જાની જાતી હે, તૈસે સાક્ષી આત્મા મેં ભી
 જાનના નહીં હે, ઓર જડ અનાત્મા જો અંતઃકરણ તિસમેં ભી
 જાનના બનતા નહીં, પરંતુ ચેતન આત્મા કે આશ્રિત જો જડ
 અંતઃકરણ તિસ અંતઃકરણ કી વૃત્તિ આત્મા કે પ્રકાશ કરકે પ્રકા-
 શિત હુઈ સુખાદિકન કો પ્રકાશતી હે, તિસ સાભાસ વૃત્તિ કરકે
 સુખાદિક જાને જાતે હેં, ઈસ રીતિ સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને
 હેં ઓર ન્યાયશાસ્ત્ર મેં સુખાદિક આત્મા કે હી ધર્મ કહે હેં. ઈસ
 કરકે ભી સુખાદિક આત્મા કે હી ધર્મ સિદ્ધ હોવે હેં ઈસ યુક્તિ
 ઓર ન્યાય શાસ્ત્ર કા પ્રમાણ દેકે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ સિદ્ધ કરે
 સો ભી કહના બનતા નહીં, ક્યોંકિ પ્રથમ તો આત્મા કો સર્વ
 ધર્મ સે રહિત હી કહા હે, ઉસ સર્વ ધર્મ રહિત આત્મા મેં
 કિસી ધર્મ કે આરોપણ કરને કા નામ ભ્રાંતિ હે, જૈસે ઉષ્ણતા

સે રહિત કે ઉખ્ખતાસહિત કહના તથા ઠંડરહિત કે ઠંડી કહના
 બનતા નહીં, ક્યોંકિ તત્-ધર્મ રહિત કે તત્-ધર્મ વિશિષ્ટ કહના
 હી બ્રાંતિ છે. સો એસી બ્રાંતિ તેરે કે કહાં સે પ્રાપ્ત હુઈ છે.
 સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હૈં. યહ કહના તેરા એસા હૈં, જેસે કોઈ
 કહે ચન્દ્રમા ઠી કિર્ણ સે મેરે કે બડી તપ્તી માલૂમ હુઈ, ઓર
 મરુસ્થલ ઠી નદી મેં મૈને જલપાન ઓર સ્નાન કિયા તબ મેરે
 કે શીતલતા હુઈ, એસે હી તૂં કહતા હૈં કિ મૈને સાભાસ વૃત્તિ
 સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને હૈં, સો આત્મા કે ધર્મ સુખાદિક
 કિસ વૃત્તિ સે જાને હૈં, સાત્વિકી વૃત્તિ કરકે જાને હૈં અથવા
 રાજસી વૃત્તિ કરકે જાને હૈં, અથવા તામસી વૃત્તિ કરકે જાને હૈં.
 ઇસમેં બી વૃત્તિ કે ભેદ હૈં, એક સાત્વિક સાત્વિકી હોતી હૈં દુસરી
 સાત્વિક રાજસી હૈં ઓર તીસરી સાત્વિક તામસી હોતી હૈં, જેસે
 સાત્વિક વૃત્તિ કે ત્રીન ભેદ હૈં તેસેહી રાજસ ઓર તામસ કે બી
 જાન લેના, પર ઉનસે કિસી કા જ્ઞાન કહના સંભવ નહીં, સાત્વિક
 વૃત્તિ સે હી સંભવ હૈં. ફિર યહ પૂછતે હૈં જો પૂર્વ ત્રીન ભેદ કહે
 હૈં, ઉનમેં સે સાત્વિક સાત્વિકીસે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને
 જાતે હૈં, અથવા સાત્વિક રાજસ સે જાને હૈં અથવા સાત્વિક
 તામસ સે જાને હૈં યહ બાત તુમ હુમારે કે બતાઓ. યાદે તુમ
 કહેા કિ સાત્વિક સાત્વિકી વૃત્તિ સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હુમને
 જાને હૈં, તો યહ કહના તુમહારા બનતા નહીં ક્યોંકિ જાગ્રત
 અવસ્થા મેં કોઈ કથા પ્રસંગ સુનકે જો ચિત્ત કા એકાગ્ર હોજના
 હૈં અથવા કિસી ધ્યાન કરકે જો મન એકાકાર હોકે ધ્યેય વસ્તુ
 મેં વૃત્તિ કે પ્રવાહ ઠી સમાપ્તી હોતી હૈં, ઉસી વૃત્તિ કે સાત્વિક
 સાત્વિકી કહતે હૈં, ઓર ઈસી પ્રકાર જાગ્રત અવસ્થા મેં સ્વર્ગ
 કે ભોગોં કી ઈચ્છા કરકે યજ્ઞાદિક કર્મ કા કરના સાત્વિક રાજસ
 વૃત્તિ કા કાર્ય હૈં, ઓર જાગ્રત અવસ્થા મેં આલસ્ય નિદ્રા કે
 વસ હી કે કરને યોગ્ય કાર્ય કો નહીં કરના હી સાત્વિક તામસ
 વૃત્તિ હૈં, એસે હી રાજસ ઓર તામસ કે બી જાન લેના, વાસ્તવ
 મેં રાજસ તામસ વૃત્તિ સે તો કોઈ બી જ્ઞાન યથાવત બનતા
 નહીં, કિન્તુ સાત્વિક વૃત્તિ સે હી બનતા એસા કહના પડેગા,
 ઓર હુમ યહ બી જાનતે હૈં કિ ભગવત વચન કા પ્રમાણ બી

૧૫
 તુમ કહેજો, કે "સત્વાત્સંજાયતે જ્ઞાનમ્ રજસો લોભ એવમ્"
 ઈસ પ્રકાર સે સુખાદિ આત્મા કે ધર્મ સિદ્ધ કરકે સાત્વિક વૃત્તિ
 દ્વારા સુખાત્મા કે ધર્મ હૈ એસા તુમ કહો તો હમ પૂછતે હૈ કે
 જિસ સાત્વિકી વૃત્તિ કરકે સુખાદિ આત્મા કે ધર્મ જાને હૈ સો
 વહ શક્તિ વૃત્તિ હૈ અથવા લક્ષણ વૃત્તિ હૈ, જો તૂં એસા કહે કે
 શક્તિ વૃત્તિ કરકે સુખાદિ હમને જાને હૈ સો ભી તેરા કહના
 ખતતા નહીં ક્યોંકિ જિસ પદ મેં જિસ અર્થ કી શક્તિ હૈ સો
 અર્થ તિસ પદ કા શક્ય અર્થ હોતા હૈ, ઓર તિસ કો વાચ્ય
 અર્થ ભી કહતે હૈ, સો તૂં વાચ્ય વાચક કા ભેદ માનતા હૈ
 અથવા અભેદ માનતા હૈ અથવા ભેદભેદ માનતા હૈ, યદિ તૂં
 કહે કે વાચ્ય ઓર વાચક કા ભેદ માનતા હૂં તો વાસ્તવ સે
 ભેદ માનતા હૈ અથવા કલ્પિત ભેદ માનતા હૈ જો તું એસે કહે
 કે વાસ્તવ સે ભેદ માનતા હૂં, તો યહ તેરા કહના જાને નહીં.
 ક્યોંકિ વાચ્ય ઓર વાચક કા નામ માત્ર ભેદ હોતા હૈ, જૈસે
 ઘટ પદ વાચક હૈ ઓર કલશ અર્થ તિસકા વાચ્ય હૈ, સો ઘટ
 પદ ઓર તિસકા વાચ્ય અર્થ કલશ દોનોં એકહી વસ્તુ કે નામ
 હૈ, ઈસ કરકે વાચ્ય ઓર વાચક કા વાસ્તવ મેં ભેદ જાને નહીં
 ઓર દૂસરા કલ્પિત ભેદ કહે, સો વહ કલ્પના માત્ર હી હૈ.
 ક્યોંકિ કલ્પિત વસ્તુ અધિષ્ઠાન સે ભિન્ન હોતી નહીં, ઈસ સે
 તો હમારા હી મત સિદ્ધ હોતા હૈ, દૂસરા અભેદ પક્ષ કહે સો
 ભી જાનતા નહીં, ક્યોંકિ વાચ્ય વાચક કા અભેદ હો તો જૈસે
 અગ્નિ પદ કા અંગાર વાચ્ય હૈ, જો અગ્નિ સે અત્યંત અભિ-
 ન્ન હોવે તો અગ્નિ પદ ઉચ્ચારણ કરને સે મુખ કા દાહ હોના
 ચાહિયે, એસેહી ઉદક પદ કે ઉચ્ચારણ કરને સે મુખ શીતલ હોના
 ચાહિયે સો હોતા નહીં, ઈસસે વાચ્ય ઓર વાચક કા અભેદ
 કહના સંભવ નહીં, ઓર જો તીસરા ભેદભેદ પક્ષ કહે સો
 અત્યંતહીં વિરુદ્ધ હૈ, ક્યોંકિ જિસ વસ્તુ કા અપર વસ્તુ સે
 ભેદ હોતા હૈ, તિસ વસ્તુ કા દૂસરી વસ્તુ સે અભેદ હોતા નહીં
 જૈસે એક આમ્ર કે વૃક્ષ મેં અપના અભેદ હોતા હૈ, ભેદ હોતા
 નહીં, ઓર જૈ આમ્ર કે વૃક્ષ કા ઓર કરજૂવે કે વૃક્ષ કા ભેદ
 હોતા હૈ તિસકા અભેદ હોતા નહીં, ક્યોંકિ ભેદ ઓર અભેદ

આપસ મેં વિરોધી હોનેસે તિનકા સમાવેશ હોતા નહીં, ઈસ કરકે તીસરા બેદાબેદ પક્ષભી તેરા બનતા નહીં, ઇસી સે જો તૂં શક્તિ વૃત્તિ માન કે આત્મા કે સુખાદિક ધર્મોં કા વિષય કરના કહે, સો તેરા કહના બનતા નહીં, ક્યોંકિ આત્મા કિસી પદ કા શક્ય અર્થ હો તો શક્તિ વૃત્તિ સે આત્મા કા જ્ઞાન હોવે. જ્ય આત્મા કા જ્ઞાન હોતા હૈ. તભી સુખારિકોં કા જ્ઞાન ભી સંભવ હૈ ક્યોંકિ ધર્મોં કે જ્ઞાન સે અન્નરહી ધર્મોં કા જ્ઞાન હોતા હૈ. યહ બાત સખ કે અનુભવ સિદ્ધ હૈ, જૈસે પક્ષી કી જો ગમન રૂપી ક્રિયા હૈ સો પક્ષી કા ધર્મ હૈ સો પક્ષી મેં રહતા હૈ, જ્ય તક પક્ષ કો નહીં જાને તખતક ઈસકે ક્રિયા રૂપી ધર્મ કો ભી નહીં જાનેગે તૈસેહી અનુભવ ગમ્ય આત્મા કા કિસી વૃત્તિ કરકે જ્ઞાન સંભવ નહીં, તો ફિર સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હૈં યહ કહના તેરા કૈસે બનેગા કદાપિ ભી નહીં બનેગા ક્યોંકિ અનાત્મ વસ્તુ યદિ આત્મા મેં જુદિહો તખ તો તેરા કહના બને, ક્યોંકિ આત્મા તો સર્વ વ્યાપક હૈ ઈસસે જિતની અનાત્મ વસ્તુ હૈ, સો આત્મા સે ભિન્ન હૈ નહીં, ઔર મુઝે ભિન્ન ભાસતી હૈં યહ તેરે કે આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે પ્રતિત હોતી હૈ, જૈસે જેવરી કે અજ્ઞાન કરકે નાના પ્રકારકે સર્પ દંડાદિક પદાર્થ ભાસતે હૈં જ્ય જેવરી સમ્યકજ્ઞાન હોતા હૈ, તખ જેવરી હી પ્રતિત હોતી હૈ, તૈસે હી તિસ આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે નાના પ્રકારકે સુખાદિક ધર્મ આત્મા કે ભાસતે ; સો વહ આત્મા કે જ્ઞાન સે હી દૂર હોંગે. દૂર એસા નહીં જાનના કિ કોઈ દો કોસ થસે જાવેંગે જૈસે સર્પ દંડાદિક કહીં સે આયે નહીં, ઔર કહીં જાતે ભી દીખે નહીં, કેવલ રજજૂ કે અજ્ઞાન કે કારણ ભાસતે થે રજજૂ કા જ્ઞાન હોનેસે રજજૂ સ્વરૂપહી હો જાને હૈં તૈસે આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે આત્મા મેં સુખાદિક ધર્મ ભાસતે હૈં, સો કેવલ આત્મા કે જ્ઞાન સે હી આત્મ સ્વરૂપ ભાસતે હૈં ઔર જો તૂં યહ કહે, કિ શક્તિ વૃત્તિ કરકે આત્મા કે જ્ઞાન કે અસંભવ હોને સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ નહીં વિષય હોવે તો લક્ષણ વૃત્તિ સે આત્મા કા જ્ઞાન હોને સે સુખાદિક ધર્મોં કા જ્ઞાન હોવેગા, સો ભી કહના બને નહીં ક્યોંકિ લક્ષણ વૃત્તિ દો પ્રકાર કી હોતી હૈ, એક કેવલ લક્ષણ ઔર

સરી લક્ષિત લક્ષણા છે. કેવલ લક્ષણા કે ત્રીન ભેદ છે જહતી, અજહતી ઓર ભાગત્યાગ. વાચ્ય અર્થ કા જે સંબંધી હો સો લક્ષણા કા સ્વરૂપ કહલાતા હૈ ઓર વાચ્ય અર્થ સારે કા ત્યાગ કરકે ઉસકે સંબંધી કી જે પ્રતીતિ હોતી હૈ ઉસે જહતી કહતે હૈ. ઓર વાચ્ય અર્થ સારે અહણ હોકે અધિક ઉસકે સંબંધી કા બી અહણ હોવે, ઉસે અજહતી લક્ષણા કહતે હૈ. જહાં વાચ્ય અર્થ મેં સે એક ભાગ કા ત્યાગ હો ઓર એક ભાગ કા અહણ હો વહાં ભાગત્યાગ લક્ષણા હોતી હૈ. કેવલ લક્ષણા કે ત્રીન ભેદ હૈં શક્ય કે સાથ સાક્ષાત્ જિસ પદાર્થ કા સંબંધ હૈ ઉસીકો કેવલ લક્ષણા કહતે હૈ: જહાં શક્ય કે સાથ કિસી પદાર્થ કા પરંપરા સંબંધ હો તહાં લક્ષિત લક્ષણા હોતી હૈ. પદ્ધતિ અપને અર્થ સે જે સંબંધ હો હૈ ઉસી કા નામ વૃત્તિ હૈ. આત્મા અસંગ હોને સે ઉસ કે સાથ કિસી બી પદાર્થ કા સંબંધ નહીં બનતા. યદિ તુમ કહો કિ નૈયાયકોં ને આત્મા સે મનકા સંયોગ સંબંધ માન કે આત્મા મેં જ્ઞાન ગુણ ઉત્પન્ન હોના કહા હૈ. ઈસ પ્રકાર કે કથન સે આત્મા જ્ઞાન ગુણ ધર્મ વાલા હી પ્રતીત હોતા હૈ એસા કહના બી તુમહારા ફિજુલ હૈ કયોં કિ નૈયાયકોં ને જે સંયોગ સંબંધ માના હૈ સો સાવયવ પદાર્થો કાહી માના હૈ ઓર આત્મા કો તો શ્રુતિ ને નિરવયવ કહા હૈ. નિરવયવ કા સંયોગ કેસે હોવે? યદિ સંવાય સંબંધ કહૈ તો બી નહીં બનતા કયોં કિ સંવાય ગુણ ઓર ગુણી કા હોતા હૈ. આત્મા કો તો વેદને નિર્ગુણ કહા હૈ. એસે નિર્ગુણ નિરવયવ આત્મા કા કિસી પદાર્થ સે કોઈ બી સંયોગ કેસે બનેગા કદાપિ નહીં બનેગા. કિસી સંબંધ કે નહીં બનને સે લક્ષણા વૃત્તિ સે આત્મા કો તુમ કેસે જનોગે ઓર જપ આત્મા કો નહીં જના તો કિય ઉસકે સુખાદિક ધર્મ કેસે જને. યદિ તુમ યહ કહો કિ તુમને બી યહ બાત પૂર્વ કહી થી કિ જિતના અંતર બાહર જે સુખ હોતા હૈ સો સખ વૃત્તિ સે હી હોતા હૈ સાક્ષી આત્મા કે પ્રકાશ સે પ્રકાશિત હુર્મ અંતરણ કી સુખાકાર વા હુઃખાકાર હોતી હૈ એસેહી હમને બી સાભાસ વૃત્તિ સે સુખાકાર આત્મા કે ધર્મ જને હૈ, તો બી તેને હમારે કહને કા અભિપ્રાય

સમજા નહીં, ક્યોંકિ હમારે કહને ઠા યહ મતલબ કિ અંતર બાહર જે પદાર્થો મેં મુખ પ્રતીત હોના હૈ, સો સબી સાભાસ વૃત્તિ સે હોતા હૈ. આત્મા ઓર આત્મા કે ધર્મ મુખાદિક કિસી ભી સાભાસ વૃત્તિ કે વિષય હમને કહે નહીં. યદિ યહ કહા જાય કિ અંતર આત્મા કે બિના ઓર કોન પદાર્થ હૈ, તો મુન જૈસે જાગ્રત અવસ્થા મેં અંતઃકરણ કી વૃત્તિ નેત્રાદિક દ્વારા નિકલ કે બાહર દેશ મેં જાકર વ્યવહારિક પદાર્થો કો વિષય કરતી હૈ સો વૃત્તિકા વિષય કરના યહી હૈ કિ પદાર્થ વ છિન્ન ચેતન કે આશ્રિત જે અવરણ હૈ ઉસે દૂર કરતી હૈ, યહી વૃત્તિ કી વિષયતા હૈ, ઓર કોઈ વૃત્તિ સે પદાર્થ કા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ પરંતુ વૃત્તિ મેં જે ચેતન કા આભાસ હૈ ઉસી કો ચિદાભાસ ભી કહતે હૈ. જૈસે જાગ્રતકે પદાર્થો કે આભાસ ઓર વૃત્તિ સે જ્ઞાન હોતા હૈ તેસે હી સ્વપ્નોં કે પદાર્થો કા ભી સાભાસ વૃત્તિ સે હી જ્ઞાન હોતા હૈ સો અંતર કહા જાતા હૈ, ઓર સાક્ષી ભાસ કહા જાતા હૈ, ક્યોંકિ જિસ પદાર્થ કો અવિદ્યાકી વૃત્તિ દ્વારા સાક્ષી પ્રકાશે સો પદાર્થ સાક્ષી ભાસ્ય કહલાતા હૈ. ઇસ સે સ્વપ્નોં કે પદાર્થો કો સાક્ષિભાસ્ય કહતે હૈ તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અનાત્મ પદાર્થ હી કે પ્રકાશ કરને મેં વૃત્તિ ઓર આભાસ કી સંકલતા હૈ, આત્મ પદાર્થ કે પ્રકાશ કરને કા સમર્થ કિસી ભી વૃત્તિ ઓર આભાસ કા હૈ નહીં, ઇસી સે આત્મા કો વેદ ને સ્વયં કહા હૈ. ઓર યદિ તૂં યહ કહે કિ વૃત્તિ ઓર આભાસ કી પદાર્થો કે હી જ્ઞાન મેં સંકલતા હૈ તો મુખ્યત્વે અવસ્થા મેં કોઈ ભી પદાર્થ હૈ નહીં, ઓર મુખ કા જ્ઞાન હોતા હૈ તો વહી આત્મા હોગા જ્ઞાન સો યહ કહના ભી તેરા એસા હી હૈ જૈસે :—

(૧) વૃદ્ધ બાલક ન્યાય

કિસી વૃદ્ધ પુરૂષ કે પાસ ઉસકા એક બાલક ખેલ રહા થા ઓર વહીં એક જલકા ભરા ઘટ રખા હુવા થા. વહ બાલક ઘટકે પાસ જાકે અપને મુખ કે પ્રતિબિંબ કો દેખકર ભયભીત હુવા ઓર અપને પિતામહ કે પાસ આકર કહને લગા યહ હમારે કો ડરાતા હૈ. તબ બુઢે ને કહા તેરે કો કોન ડરાતા હૈ બાલક બોલા

कि धिस घउ में है लुहा ठिठके घट के पास आकर देजने लगा तो सड़े दाढ़ी सहित उसका प्रतिबिम्ब भासने लगा, तब लुहा कहने लगा अरे जेधमान घाली दाढ़ी तेरी हो गई, अतक अन्धों को उराता है, तेरे को लज्जा नहीं आती, यह लुहे का दृष्टांत है.

दाष्टांत यह है

जैसे उस लुहे ने नहीं जना कि धिस घट में मेरा ही प्रतिबिम्ब है, कोई दूसरा लय देनेवाला समझ के उसको धिक्कार देने लगा तैसे ही तेने जे कहा कि सुषुप्ति अवस्था में कोई भी पदार्थ नहीं है और सुषुप्ति का जे लान होता है सो आत्मसुषुप्ति होता है, तू विचार करके देख सुषुप्ति अवस्था में कारण शरीर रहता है, उस कारण शरीर को ही अज्ञान कहते हैं, और प्राज्ञनामा एव रहता है सो अज्ञान प्रतीति से सुषुप्ति के अज्ञान आवृत आनन्द को लागता है, सो भी वृत्ति द्वारा ही आनन्द का लान होता है, और जे धृतिर की सर्वज्ञता आदि का ज्ञान सो भी भाया की वृत्ति करके होता है. वृत्ति से जे ज्ञान होता है सो ज्ञान अनात्म पदार्थों का ही है. तू जेतन आत्मा स्वयं प्रकाश होने से किसी भी प्रतीति का विषय नहीं है, और सुषुप्ति का आनन्द तो अज्ञान की वृत्ति से होता है. तू शुद्धरूप आत्मा अज्ञान में शामिल काहे को होता है. तू सुषुप्ति अपने से जुदा समझ के सुषुप्ति प्राप्ति की धृष्टि करता है. यही धृष्टि तेरे को जुदाई की देनेवाली है वास्तव में देखा जाय तो किसी रीति से सुषुप्ति तेरे से न्यारा नहीं क्योंकि अस्ति भांति प्रिय, नाम और रूप यह पांच अंश सब पदार्थों में होते हैं, पर का अस्तित्व यह अस्ति पर का लान होना यह भांति, पर शीत उष्ण को दूर करता है यह प्रिय, पर ये दो अक्षर नाम, और विस्तृत आधार, शुक्ल रूप, किसी दैवयोग से उस वस्त्र में अग्नि लग जाये तब परनाम और शुक्लरूप दोनों बदल जाते हैं रात्र नाम और काला उसका रूप हो जाता है और अस्ति, भांति, प्रिय यह जे तीन अंश हैं सो वहां भी जने रहते हैं. रात्रो

अस्ति, भासती है यह भांति, और अस्तन भोजन के काम में आते हैं इससे प्रिय है, ये तीनों अंश आत्मा के हैं, नाम और रूप का माया जने जते हैं क्योंकि व्यभिचारी होने से ये दोनों अंश कद्विपत हैं, तैसे ही अस्ति, भांति, प्रिय, आत्मा नाम और उसके अंश ये भी नाम होने से सय्य कद्विपत हैं, ये तेरे जताने के वास्ते कहे हैं, क्योंकि कुछ नाम रखने से ही आत्मी का व्यापार होता है और नाम से ही नामी जना जाता है, इस से बार-बार आत्मा का कथन किया है. इसमें शिष्य शंका करता है, हे भगवन नाम से नामी की प्राप्ति होती है और बार-बार जो आत्मा का कथन किया है सो भी आत्मा के समझने के वास्ते कथन किया है क्योंकि सूक्ष्म होने से अस्ति भांति जो है अंश आत्मा के कहे सो तो ठीक है, परंतु प्रियपना, सय्य पदार्थों में कैसे घटेगा, क्योंकि शेर सर्पादिक किसी को प्यारे नहीं लगते हैं, अपने शत्रु में प्रियपना कैसे घटेगा, आप इस शंका की निवृत्ति कीजिये. गुरु कपते हैं कि हे शिष्य ? सर्व वस्तु सर्व को प्रिय नहीं होती है यह वार्ता आप की मानी, परंतु एक अंश से प्रियपना सर्व वस्तुओं में घटता है जैसे सर्पनी को सर्प प्यारा लगता है, शेरनी को शेर प्यारा लगता है और अग्नी को कीट को अग्नी प्यारी लगती है तैसे ही अपने शत्रु के दुष्म में प्रियता होती है सो सर्व के अनुभव सिद्ध है परंपरा से सर्व को अपना आत्मा प्रिय है, जितना चेतन शरीर के अंदर आया है उतने को आत्मा कहते हैं जैसे जितना आकाश घट में आया है उतने आकाश को घटाकाश बोलते हैं, परंतु वह व्यापक आकाश से प्रथक नहीं हो गया है. तैसेही जो व्यापक चेतन है शरीर के अंतर और बाहर व्याप रहता है. इससे विषय अविच्छिन्न और निरविच्छिन्न जो कुछ आनंद का भान होता है सो सर्व तेराही आनंद है. तेरे से जुदा आनंद कहीं भी है नहीं, फिर तेरे को सुख की धृष्टा कैसे संभवैगी. तू सदा सुखरूप ही है. और सर्व ठौर में जो आनंद प्रतीत होता है सो भी तेरा ही आनंद है. इसी से तू चेतन स्वरूप है. जो घट पर आदिक चेतन नहीं है, सो आन-

નદ સ્વરૂપ લી નહીં હૈ. જો આનંદ હૈ સો તેરા હી હૈ. તસે
હી જો ચેતના હૈ સો લી તુઝ ચેતન કી હી હૈ, તેરે પ્રકાશ કો
પાકે સખ કુછ પ્રકાશમાન હો રહ્યા હૈ. ગુરુ કે યે વચન સુનકર
શિષ્ય બોલા હૈ ભગવાન ? આપ મેરે પ્રકાશ સે સર્વ પ્રકાશમાન
કેસે કહતે હો. ક્યોંકિ દિન મં તો સૂર્ય ભગવાન પ્રકાશ કરતા
હૈ ઓર જખ સૂર્ય નહીં હોતા હૈ તખ રાત્રિ મં ચન્દ્રમા પ્રકાશ
કરતા હૈ ઓર ચન્દ્રમા નહીં હોતા હૈ તખ તારાગણ કા પ્રકાશ
હોતા હૈ, જખ બાદલોં સે તારાગણ આચ્છાદિત હો જતે હૈ,
તખ આગ્ન સે પ્રકાશ હોતા હૈ, ઓર જખ અગ્નિ લી નહીં
હોતો હૈ તખ બિજલી સે પ્રકાશ હોતા હૈ ઓર જખ બિજલી
લી નહીં હોતી હૈ તખ વાકચ ઈન્દ્રી કા પ્રકાશ હોતા હૈ ઇસ
રીતિ સે ઇન પદ જ્યોતિયોં સે ઓર ઇન્દ્રિયોં સે ઓર ઇન્દ્રિયોં
કે દેવતાઓ સે અર્થાત્ ઇસ ત્રિપુટી સે સર્વ કા પ્રકાશ દેખને
મં આતા હૈ. મેરે પ્રકાશ સે સર્વ કા પ્રકાશ આપ કેસે કહતે
હો ? આપકા યહ કહના તો અસમ્ભવસા માલૂમ હોતા હૈ ।

ગુરુરુવાચ—હૈ શિષ્ય તેરા કહના દુરસ્ત હૈ ક્યોંકિ એસાહી
માલૂમ હોતા હૈ, પરંતુ જખ તૂં બિચાર દષ્ટિ સે દેખેગા, તખ
તેરે કો માલૂમ હોજવેગા કિ મુઝ ચેતન આત્મા કા હી પ્રકાશ
સર્વ ઠોર હૈ, સો બિચાર યહ હૈ કિ જખ સ્વપ્ન અવસ્થા હોતી
હૈ તખ કોઈ લી જોતિ હૈ નહીં, ઓર સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા પ્રકાશ
હોતા હૈ ઇસસે જના જતા હૈ કિ કોઈ આર હી જોતિ હૈ જો
ઇન જોતિયોં સે ભિન્ન હૈ. યદિ તૂં એસા કહે કિ જૈસે સ્વપ્ન
મં પદાર્થ કલ્પિત પ્રતીત હોતે હૈ તેસેહી સૂર્યાદિક જોતિ લી
કલ્પિત હી હૈ જિન સે સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા પ્રકાશ હોતા હૈ યહ
કહના તેરા એસા હૈ જૈસે કોઈ કહે કિ મૃગ-તૃષ્ણા કે નીર સે
ગારા બનાકે મૈને ઘર બનાયા થા, ઓર શુક્તિ કા રૂપા બહુતસા
મૈને ઇકઠા કિયા ઓર ઉસ ઘરમં રખા થા જિસકો ઢૂંઢકે ચોર
શેડ કે નિકાલ લેગયા. ઉસ ઘન કો ઢૂંઢને કે લિયે મેં ગયા થા,
રાસ્તે મં રજજૂ કે સર્પ ને મેરે કો કાઠ ખાયા ઇસસે મેરે કો બઢા
ભારી કષ્ટ હુઆ હૈ જૈસે ઇસ પ્રકાર કે કથન કો સુન કે સર્વ

લોગોં છો હંસી આતી હૈ, તેસે હી હમેં તેરે કહને સે હંસી આતી હૈ, ક્યોંકિ કલ્પિત પદાર્થોં કા કલ્પિત સૂર્યાદિક જોતિયોં સે પ્રકાશ હોતા હૈ યહ કહના તેરા કેવલ હંસી કા હી વિષય હૈ. કલ્પિત પદાર્થ સે કલ્પિત પદાર્થ કા પ્રકાશ કહના બનતા નહીં. ક્યોંકિ વસ્તુ કલ્પના માત્ર હી હોતી હૈ, ઉસ સે કિસી કા પ્રકાશ હોતા નહીં અતઃ જડપદાર્થોં કા સ્વપ્ન કી કલ્પિત જોતિયોં સે જો પ્રકાશ પ્રતીત હોતા હૈ સો કિસી ચેતન કરકે હી હોતા હૈ. તૂં અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરકે દેખ તેરે બિના ઓર કોઈ ભી વહાં હૈ નહીં, સર્વ કો જાનને વાલા ઓર સર્વ કો પ્રકાશને વાલા તૂં ચેતન આત્મા પરિપૂર્ણ સ્વપ્રકાશ હૈ. તેરે સે સખહી પ્રકાશવાન હો રહા હૈ. જાગ્રત સ્વપ્ન સુષુપ્તિ આર તુરિયા તથા તુરિયાતીત ઈન સર્વ અવસ્થાઓ કા પ્રકાશ તેરે સે હોતા હૈ. યે સખ આપસ મેં વ્યાભિચારી હૈં તૂં ઈન સખ મેં અનુગત હૈ. ઈસ સે તેરી ચેતના કો પાકે યહ ભૂત ભૌતિક જિતના અનાત્મ પ્રપંચ હૈ સો સખ ચેતન પ્રતીત હો રહા હૈ. વાસ્તવ મેં તૂં હી ચેતન તે ભિન્ન ઓર કોઈ ભી ચેતન નહીં. તૂંહી સર્વ જોતિયોંકા જોતિ હૈ. ભગવાન ને ભી કહા હૈ “જોતિયામપિ તદ્ જોતિ” ઓર વેદ ને ભી કહા હૈ “યસ્ય હૃદય અંતર આત્માજ્યોતિભર્વતી” યહી કારણ હૈ કિ આનંદ રૂપ હોને સે ચેતનરૂપ હૈ, ઓર ચેતનરૂપ હોને સે સત્યરૂપ ભી આત્મા હી હૈ. સત્ ચિત્ત આનંદ રૂપ આત્મા તૂંહી બ્રહ્મ સ્વરૂપ હૈ. તેરા કિંચિત્ માત્ર ભી બ્રહ્મ સે ભેદ નહીં હૈ. ઓર જો ભેદ કહતે હૈં ઉનકે વાસ્તે એસા કહા હૈ-

દોહા. અસ્તિ-ભાંતિ-પ્રિય આત્મા, બ્રહ્મ સચ્ચિદાનંદ ।

તાતે એક સરૂપ હૈ, ભેદ કહેં મતિમંદ ॥

ઈસી સે કહા હૈ “ભેદભેદ શબ્દ ગલતો” અર્થાત્ તુઝ ચેતન આત્મા મેં ભેદ ઓર અભેદ કા લેશ ભી નહીં હૈ, ઓર જો ભેદ ઓર અભેદ યે દો પ્રકાર કે વચન શાસ્ત્રકારોં ને કહે ઈસસે તાત્પર્ય યહી હૈ કિ કહને મેં ખાત આતી હૈ સો બાણી કા વિષય હોને સે અનાત્મ હી હૈ ક્યોંકિ બાણી સે અનાત્મ પદાર્થ કા હી

કથન હોતા હૈ. તૂં ચેતન આત્મા કિસી બાણી ઓર મન કા બિષય નહીં હૈ, ઓર કિસી જગહ ઇસે મન ઓર બાણી કા બિષય ભી કહા હૈ સો દિખાતે હૈં કિ જિસ કાલ મેં ગુરૂ દ્વારા મહાવાક્યોં કા જો ઉપદેશ શ્રવણ હોતા હૈ સો બાણી સે હી સુના જાતા હૈ. ઉસ શ્રવણ સે અનંતર મનન કા કથન કિયા હૈ, સો મન સે હી મનન હોતા હૈ, મનન કિયે હુચે અર્થ કે પરિપકવ હો જાને કો નિદિધ્યાસન કહતે હૈં. ઓર નિદિધ્યાસન કી પરિપકવ અવસ્થા કો સમાધી કહતે હૈં. ઇસ પ્રકાર સે આત્મા મન ઓર બાણી કા વિષય ભી કહલાતા હૈ.

કિસી ને મન ઓર બાણી કા નિષેધ ભી કિયા હૈ. દોનોં પ્રકાર કે બચનોં કો મુન કે અલ્પ શ્રુત જિજ્ઞાસુ કો ભ્રમ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ. વહ કહીં ભેદ બચનોં કો સુનતા હૈ, ઓર કહીં અભેદ કો સુનતા હૈ પરંતુ શાસ્ત્રકારોં કે જો કથન હૈ સો સારેહી અધ્યારોપ મેં બનતે હૈં, ઓર જિતને વેદ કે વચન હૈં સો અધિકારી ભેદ સે સારે હી સફલ હૈ. જૈસે કિસી પુરૂષ કો સ્વપ્ન હોતા હૈ તથા ઉસ કો વેદ ઓર વેદ કા ઉપદેશ કર્તા આચાર્ય, ઓર જગત મેં નાના પ્રકાર કે કર્મ, ઓર ઉનકા પ્રેરક ઈશ્વર, ઓર ભોગનેવાલા જીવ આદિ જો કુછ પ્રતીત હોતા હૈ સો સખ હી અવિદ્યા ઓર નિદ્રા દોષ કે કારણ ભાસતા હૈ. સો સખ મિથ્યા હૈ, યથાર્થ મેં એક સ્વપ્નદૃષ્ટા પુરૂષ હી સત્ય હોતા હૈ. પ્રકાર એક તૂં હી સતરૂપ હૈ.

તૂં ભ્રમ કે મુરદે કો કયોં રોતા હૈ? વિવેક રૂપી નેત્ર ખોલ કર દેખ જૈસે યહ સ્વપ્ન કા પ્રપંચ બિના હુવે હી સર્વ અર્થાકાર ભાસતા હૈ, તૈસે હી યહ જગત કા પ્રપંચ ભી તૂં જન. યદિ તૂં એસા કહે કિ જગત પ્રપંચ મેં તો પદાર્થોં કે દેશ. કાલ, કારણ, કાર્ય, ભાવ ભાસતે હૈં ઓર સ્વપ્ન મેં સર્વ પદાર્થ સમ કાલ ભાસતે હૈં, ઇન દોનોંકી એકતા કહના બને નહીં. યહ કહના તેરા ઠીક નહીં હૈ. કયોંકિ દેશ કાલ આદિ જૈસે જગત મેં ભાસતે હૈં વૈસે હી સ્વપ્ન મેં ભી ભાસતે હૈ. યહ સખ અવિદ્યા થી. ૨

के धारण प्रतीत होता है. जगत के देश काल आदि में और स्वप्न के देश काल आदि में कुछ भी अधिक न्यूनता नहीं है क्योंकि ये दोनों ही आविष्कार हैं. इसी पर तेरे को

(२) एक राजपुत्र शोक न्याय

सुनाते हैं. एक राजा रात्री के समय अपनी शय्या पर सोता था. उस समय ऐसा भावम हुआ कि मेरा राज थड़ा लारी है और चार पुत्र सर्व गुणों की जानी और यौवन अवस्था वाले हैं. दैवयोग से राजा के राज में किसी अन्य राजने लड़ाई छेड़ दी जिस में इस राजा के चारों पुत्र मारे गये, तब लड़कियों ने ज्वर दी कि हे राजन ! आपके कुंवर इस लड़ाई में मारे गये, इस प्रकार के वचन सुनके राजा को थड़ा लारी शोक हुआ और हल्लाकार शब्द करने लगा. धीमे में राजा की निद्रा भुल गई और नेत्र उघड़ते ही उसे थड़ा विस्मय हुआ और सोचने लगा किसका राज और किसके पुत्र. देखा मैं वृथा ही मोह के प्राप्त हो गया था. उसी समय मंत्रियों ने आके राजा से कहा, हे राजन आपके कुंवर ने तो अपने कर्म लोग की समाप्ती की. इस प्रकार मंत्रियों के वचन सुन के सभ को अपने पास बिठा कर कहने लगा हे मंत्रियो तुम सभ धैर्य रखो. मैं तुम्हारे से एक गाथा सुनाता हूँ तुम चित्त लगाकर सुनना. वह गाथा इस दुष्परूप संसार से वैराग्य के करानेवाली है और इसे सुनके तीन लोक की संपदा भृगतृष्णा के जलवत् लासेगी; और वह शोक मोह को दूर करने वाली तथा आनंद को देने वाली है. वह गाथा इस प्रकार है :—

अली धाडी दर पहिले मैं सोता था उस समय मुझे स्वप्न हुआ जिसमें मेरे को इस राज से योगुना राज प्राप्त हुआ और यह भी देखा कि बड़ी चतुरंगिनी सेना और अउ अउ शूरवीर सेनापति और अनेक प्रकार के कोष भजने आदि विभूतियां हैं और चंद्रमा के समान मुख जिनके ऐसी मनको मोहनेवाली अनेक रानियां हैं, और चार पुत्र सर्व गुण संपन्न, रूपवान

ઝીર જવાન ઊંચર વાસે જિનકે દેખને સે મેરે કો બડા આનંદ
 હોતા થા. ઈસ પ્રકાર કી મહાન વિભૂતિ કે સાથ મેરે કો ચિર-
 કાલ વ્યતીત હો ગયા, ઝીર એસા બી માલુમ હોતા થા કિ મેરે
 બાપ હાલ સભી રાજ કરતે આયે હૈ, ઝીર આજ હમારે પુત્ર
 ઝીર પોત્ર બી રાજ કરેગ. હે મંત્રિયો! એક ક્ષણ માત્ર કે સ્વ-
 પ્ન મેં મૈને બહુત કાલ સ્વાર્થ દેખા. દેવયોગ સે મેરે ઉસ રાજ
 મેં ઉપદ્રવ હો ગયા ઝીર બડા ભારી સંઘામ હુવા ઉસી યુદ્ધ
 મેં મેરે બડે ર શૂરવીર મારે ગયે ઝીર મેરે ચારો પુત્ર બી યુદ્ધ
 મેં અપની અપની સેના લેકર અઢે ઝીર યુદ્ધ કરને લગે. બહુત
 બાર અબ કયા કહેં વે ચારો કુંવર મારે ગયે, તબ હલકારોં ને
 આકે કહા હે પૃથ્વીનાથ ! આપકે કુંવર યુદ્ધ મેં મારે ગયે હૈ.
 મે વચન સુનકે મેરે કો બડા ભારી શોક હુવા, ઝીર હાહાકાર
 શબ્દ કરને લગા ઈતને મેં મેરી નિદ્રા ખુલ ગઈ. તબ મેં બડે
 વિસ્મય કો પ્રાપ્ત હુવા ઝીર અપને ચિત્ત મેં વિચાર કર હી
 રહા થા કિ તુમને આકે મેરે સે કહા કિ તુમહારે પુત્ર ને અપને
 કર્મ ભોગ કી સમાપ્તી કી હૈ. અબ મેં તુમહારે સે યહ બાત
 પૂછતા હૂં કિ ઉસ રાજ ઝીર ચારોં પુત્રોં કો રોડોં, અથવા ઇસ
 એક પુત્ર કો રોડોં, સો તુમ મેરે કો બતાઓ. મંત્રી કહતે હૈ,
 હે રાજન વહ તો સ્વપ્ન કી સૃષ્ટિ જીઠી હૈ, ઝીર યહ જાત્રત કા
 સમ્યા જગત હૈ. ઉસકા કયા શોચ કરના હૈ શોચ કરને કે યોગ્ય
 તો યહ જાત્રત કે ભોગ્ય પદાર્થ હોતે હૈ, સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા
 કોન શોચ કરતા હૈ મંત્રીયોં કી યહ વાર્તા સુનકર રાજ બોલા:—

હે મંત્રિયો, તુમ ઈસ મૂર્ખતા કે મોહલે મેં આકે કાહે કો
 ઈસ કો સમ્યા કહતે હો ઝીર ઉસકો જીઠા કહતે હો. અરે, મૂર્ખોં
 યહ મનુષ્ય શરીર તુમકો મિલા હૈ, ઈસમેં કુછ વિચાર કરકે દેખો,
 યહ તો સભી જીઠા હૈ વિચાર યહી હૈ કિ ઈસ જીવન ને અપને
 ગતે મેં આપ હી ફાંસી ડાલ રખી હૈ ક્યોંકિ આત્મા તો સદા
 અકર્તા હૈ. પરંતુ અનાત્મ અંતઃકરણ સે મિલકે જ્ઞાતિ સે અપને
 મેં કર્તાપન આરોપણ કરકે કાયક વાયક માનસિક, ત્રીન પ્રકાર કી
 ક્રિયા કા અભિમાન કરને લગા. ઇસસે કો પ્રકાર કે સૂક્ષ્મ ઝીર

स्थूल कर्म हुवे, जय जय को स्थूल कर्म लोग देने को सम्भुज होते हैं तब धर्म कर्म के वस होके जयत अवस्था होती है ऐसी दशा में स्थूल पसारा है उसको सत्य जानता है, और जिस काल में सूक्ष्म कर्म लोग देने को सम्भुज होते हैं उस काल में जयत अवस्था का विस्मरण होता जाता है, और कर्म के वस होकर स्वप्न की सूक्ष्म सृष्टि सतत्प है, और कर्म के वस होकर स्वप्न की सृष्टि वहां पर नहीं रहती लासने लगती है और जयत की सृष्टि वहां पर नहीं रहती धर्मसे जाना जाता है कि यह भी जूठी है और जय स्वप्नसे कर्म के आधीन जयत होता है, तब स्वप्न के पदार्थों का अभाव कर्म के आधीन जयत होता है, तब स्वप्न के पदार्थों का अभाव होता है, अर्थात् जूठे मालूम होते हैं, हे मंत्रियों, तुम अपने चित्त में विचार करके देखो धर्म में कौन सत्य है ये तो सभी भूतपुत्रों के जलवत हैं और तुम अपने चित्त में विचार कर देखो अज्ञान रूपा निद्रा में जगत रूप स्वप्न लासता है, धर्म के दूर करने के वास्ते तुम ज्ञान रूप जयत अवस्था प्राप्त करो, तब तुम्हारे विचार रूपा नेत्र जुलगे और तुमको मालूम होगा कि ये दोनों ही मन के स्पर्श हैं यह मनसी जलके अर्ध डूबे के समान है जो ज्ञान रूपा सूर्य लगवान के उद्देश्य होने पर पिघल जाता है फिर वही जल होके बहने लगता है, ऐसी दशा में वह जल चेतन रूप ही लासता है।

धर्मलिये हे मंत्रियों ! तुम ज्ञानरूपा सूर्य की उपासना करो इससे तुम्हारी जगत की सत्तारूपा ठंड दूर होगी, सूर्य रूपा आत्मा का प्रकाश होगा तब तुम्हारी भूर्भुता धर्म प्रकार बली जवेगी जैसे सूर्य के प्रकाश से अंधकार दूर हो जाता है देखो यही अंधकार है स्थूल, सूक्ष्म, कारण ये तीनों शरीर और जयत स्वप्न, सुषुप्ती ये तीन अवस्था और, विश्व, तेजस प्राज्ञ धर्म तीनों के अलिमानी तीन जय और तीन शरीरों में अन्नमयादिक पञ्चकोश, धर्म और धर्म सत्त्वों के जो धर्म हैं करता, किया, कर्मपना, और जो धर्म में अहंकार सो ही अंधकार है है, और जय तुम धर्मको साक्षी रूप होके देखोगे कि जिस काल में (विवेक, वैराग्य, शम, दम, श्रद्धा समाधान, उपरती, तितिक्षा) और अवष्टु मनन, निदिध्यासन, और तत्त्व पद का शोधन करोगे

तब तुम्हारे दो परिपूर्ण आत्मा ही भासेगा, और तुम्हारे शोक, भ्राह्म, सभ नष्ट होय जावे'गे. हे भन्त्रियों यह साराही स्वप्न है. इसमें किसी का रोना और शोक करना वृथा है, क्योंकि सभ एव अपने कर्म भोग के अनुसार जन्मते हैं और मरते हैं. इस ज्ञान को समझ के यथा योग्य कार्य को करो.

हे शिष्य ! इस प्रकार पूर्व के संस्कारों से राजा को ऐसा मोघ उत्पन्न हुआ और सभ भन्त्रियों को उपदेश करके वह शोक भ्राह्म से रहित होके अपने स्वरूप में स्थित हुआ वह स्वरूप कैसा है ? शांत है, निर्विकार है, चेतन है, परमानन्द है, अजन्मा है, अविनाशी है और सत रूप है, उसी चेतन आत्मा की सत्ता का सभ पदार्थों में अनिर्वचनीय सम्बन्ध उत्पन्न होके सारे पदार्थ सत्य जैसे भासते हैं, परन्तु इसमें कोई भी सत्य नहीं है, क्योंकि अविद्या कृत होने से ये तो सारे ही भ्रम रूप हैं, एक तू ही सत्य रूप है, और सर्व देश, काल, वस्तु परिच्छेद रहित है, क्योंकि जिस पदार्थ का देश से अंत होता है उसका काल से भी अंत होता है उस का वस्तु से भी अंत होता है, जैसे घट, पट, आदिक पदार्थ देश काल वस्तु से अंतवाले हैं इसीसे असत होता है, और तू चेतन आत्मा देश कालादि के परिच्छेद से रहित है इसी से तू सत रूप है.

शिष्य प्रश्न करता है— हे भगवन ! आपने मेरे को सत चित आनन्द रूप कैसे कहा, मैं तो जन्मता हूँ और मरता हूँ पुण्य पाप करता हूँ और उनके इल सुख दुःख को भोगता हूँ. और भी अनेक प्रकार के एवत्व धर्म मेरे में भासते हैं. इससे मैं तो असत, जड, दुःखरूप हूँ और ब्रह्म को तो सतचिदानन्दरूप हमने आप जैसे महापुरुषों के मुख से सुना है. मैं सच्चिदानन्द रूप हूँ यह वार्ता मैं किस प्रकार जानूँ. वेद ने भी इस एव को मोहमान और अनीश ही कहा है. इस कारण एव विरुद्ध धर्मवाला होने से सच्चिदानन्द रूप नहीं है जैसे कोई महीन कर्मों के करनेवाले हैं और कोई अशुद्ध आचरण

से रहनेवाले हैं। इन दोनों प्रकार के पुरुषों की अकृता कैसे बनेगी। यदि तुम ऐसा कहो कि लागत्यागलक्षणा से इनकी नहीं बनेगी अकृता बनती है, तो तुमने अंगीकार ही नहीं, इससे किसी रीति से भी जब को सत्यविदान कहना बनता नहीं। पूर्व आपने यह भी कहा था कि लागत्यागलक्षणा करके देवेगा तब तरेको भाखूम होगा, और फिर आगे आपने सर्व वृत्तियों का निषेध कर दिया है, इसमें हम कौनसी बात को अंगीकार करें। हमको तो गबोला भाखूम होता है, आप हमें समझा कर कहो।

गुरुस्वयं—यद्यपि यह वार्ता हमने पूर्व कही थी परंतु तेरी समझ में गलती है तो सुन। हमने जो लक्षणा वृत्ति कही थी तो कोई आत्मा के प्रकाशने में नहीं कही है। हमारा कथन यह नहीं था कि लक्षणा वृत्ति से आत्मा का प्रकाश होता है, ऐसा नहीं समझना क्योंकि वृत्ति का तो पदार्थ के आवश्यक दूर करने में सामर्थ्य है। पदार्थ के प्रकाश करने में सामर्थ्य नहीं है, तब वह आत्मा के प्रकाश करने में कैसे सामर्थ्य होगी, इसी वास्ते यह बात कही थी कि तेरे को आपकी भाखूम हो जाय, इसी से वृत्ति आदिक जितने जो अनात्म वह स्वयं प्रकाश है, इसी से वृत्ति आदिक जितने जो अनात्म पदार्थ हैं तो सभ आत्मा में छिपित हैं, उन छिपित वृत्ति आदिकों से आत्मा का प्रकाश कलना बने नहीं, क्योंकि वे जो हैं और जो तुमने कहा था कि जब तो जन्म मरण से आदि लेकर ब्रह्म से विरुद्ध धर्मवाला है उसकी ब्रह्म से अकृता बने नहीं, और लागत्यागलक्षणा मानी नहीं इसीसे भी जबको सत्यविदान कहता बने नहीं, यह जो तने कहा है तो सारा ही सिद्धान्त के अज्ञान से कहा है, क्योंकि सिद्धान्त में आत्मा से सिद्ध सर्व अनात्म वस्तु आत्मा में छिपित होने से रज्जु में सर्प की तरह सर्प छिपना मात्र है, जैसे रज्जु में जो सर्प प्रतित होता है, तो केवल जेवरी के अज्ञान से प्रतित होता है, उसके दूर करने को कौनसी वृत्ति आवश्यक है? किसी भी लक्षणा वृत्ति की जरूरत नहीं है, केवल रज्जु के ज्ञान

सो सपर्यं भ्रम निवृत्त हो जाता है तैसे ही वृत्ति और विषय
कारण अंतःकरण और अज्ञान और नाना प्रकार के विषय और
उनका प्रकाश जितना कि ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय त्रिपुटी समाज है
सो सारा ही आत्मा के अज्ञान से तेरे को लासता है, सो
सारा आत्मा के ज्ञान से निवृत्त होगा, और प्रकार से नहीं,
लिखा भी है—

श्लोक ॥ भ्रान्ता प्रतीत संसारो. विवेकानस्तु कर्मभि ॥
रञ्ज्य आरोपितो सर्पो घन्टा घोसो निवर्तते ॥

जो वस्तु जिस के अज्ञान से प्रतीत होती है, सो उसी
के ज्ञान से ही दूर होती है, और किसी भी वृत्ति आदिक की
अपेक्षा नहीं. यदि तू ऐसा कहे कि अधिष्ठान का जो ज्ञान है
और कल्पित की निवृत्ति का जो ज्ञान है, सो भी तो किसी वृत्ति
से ही होता है. यद्यपि तेरा यह कहना दुरुस्त है क्योंकि शास्त्र-
कारों ने प्रमा, अप्रमा और स्मृती, तीन प्रकार की वृत्ति मानी
है. परंतु इनका विषय जो ज्ञान है सो सभ्य अनात्म ही कहा
जाता है. आत्मा को तो किसी ने भी किसी वृत्ति का विषय
नहीं कहा और तुम अपने अनुभव से देखो शुद्ध आत्मा
किसी भी लक्षण आदिक वृत्ति का विषय नहीं है क्योंकि वाच्य
और वाचक भाव और लक्षण भाव तुम शुद्ध आत्मा में है
नहीं. इसलिये किसी वृत्ति से आत्मा का ज्ञान मेरे को होगा
यह धृष्टि छोड़कर तू अपने आप विचार के देखेगा तब तेरे
से जुदा ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय कुछ भी नहीं मिलेगा, इसी आत
पर तेरे को अंक—

(३) रुपया चोर राज न्याय

सुनाते हैं, सो यह है कि एक मनुष्य ने किसी का एक
रुपया चुरा लिया था. जिसका रुपया चुराया उस ने अपने
मन में विचार किया कि आज के दिन अमुक मनुष्य से मिलान
हुवा था, उसने हमारा रुपया लिया है. तब वह उसके पास

જાકે કહીને લગા કિ ભાઈ હમારા રૂપયા તુમને લિયા હૈ સો દેદો
 ઉસને જવાબ દિયા કિ હુમને તો નહીં લિયા. તખ ઉસને રાજ
 મેં જાકે એક કચ્ચા સવાલ દે દિયા. ફિર ઓર મુદ્દાધલેહ
 સે ઇન્સાફ કરનેવાલે ને પૂછા તુમહારા કયા ઝગડા હૈ, મુદ્દા કહીને
 લગા કિ ઇસને મેરા માલ ચુરાયા હૈ. ઇન્સાફ કરનેવાલે ને કહા
 તેરા કયા માલ ચુરાયા હૈ, તખ ઉસને કહા એક રૂપયા થા,
 ઓર દો અઠત્રી, ઓર ચાર ચુઅન્ની ઓર આઠ દુઅન્ની,
 ઓર સોલહ આને ઓર બત્તીસ અધન્ને, ઓર ચૌસઠ પૈસે.
 ઇતના માલ ઇસને મેરા ચુરાયા હૈ, જખ ઇન્સાફ કરનેવાલે ને ચોર
 સે કહા. અરે તૂં ને ઇસકા ઇતના માલ ચુરાયા હૈ તખ વો
 ચોર મુદ્દા સે કહીને લગા, અરે ભલે માનસ તેરા તો એક હી
 રૂપયા થા, ઇતના માલ મૈં કહાં સે દૂંગા. મુદ્દા ને કહા કિ
 અચ્છા તૂમ એક હી રૂપયા દેઓ હુમ રાજનાંમા લિખ દેંગે.
 ઉસને કહા બહુત અચ્છી બાત, યહ અપના રૂપિયા લો. તખ
 ઉસને લે લિયા ઓર ઇન્સાફવાલેસે કહીને લગા, હુજૂર હુમ રાજ
 હો ગયે ઇન્સાફકરનેવાલે ને પૂછા તુમ કૈસે રાજ હુએ. તખ
 મુદ્દા ને કહા એક રૂપિયા લે કર રાજ હો ગયે ઇન્સાફકરને-
 વાલેને કહા. તુમ બડે બેઈમાન હો, તખ મુદ્દા ને
 કહા કૈસે, ન્યાય કર્તા ને કહા કિ તુમહારા એકહી રૂપયા થા ફિર
 ઇતના માલ કાહે કો લિખવાયા થા, ઇસસે તૂમ બેઈમાન હો.
 તખ વહ કહીને લગા કિ હુજૂર આપ વિચાર કરકે દેઓ, વહ તો
 સારા હી ઇસીકે અંદર હૈ. મુદ્દા ને ઇન્સાફ કર્તા કે આગે રૂપયે
 સે આદિ લેકર પૈસે પર્યાંત સારા માલ ઉસ રૂપયે મેં હી બતા
 દિયા તખ ઇન્સાફ કર્તા ને કહા ઠીક હૈ. યહ તો દૃષ્ટાંત હૈ, દૃષ્ટાંત
 યહ હૈ કિ તેરા જો મન હૈ યહી રૂપયા હૈ. જિતના યહ જગત
 ઓર બંધ મોક્ષ સે આદિ લેકર સંસાર ના વિસ્તાર હૈ સો
 સારા તેરે મન કે હી અંદર હૈ, જૈસે વહ રૂપયા નામ હૈ સો
 ભી રજત ધાતુ મેં કલ્પના માત્ર હૈ, વૈસે હી જો મન નામ હૈ
 સો ભી તુઝ ચેતન આતમા મેં મન કી હી કલ્પના હૈ. સખ
 ચેતન કા હી ચમત્કાર હૈ, જૈસે રૂપયા ઓર ઉસકા વિસ્તાર

સખ રજતરૂપ હૈ વૈસે હી મન ઔર મન કા વિસ્તાર સખ ચેતન રૂપ હૈ.

તૂં બિચાર કરકે દેખ જિતને ઘટ હૈ સો સારે મૃત્તિકા હૈ ભિન્ન નહીં હોતે, સખ મૃત્તિકારૂપ હી હોતે હૈં. જિતને સુવર્ણ કે આભૂષણ હોતે હૈં સો સખ સોના હી હોતે હૈં, ઔર જિતને લોહ કે વિવર્ત, હથિયાર આદિક હોતે હૈં સો લોહ સે ભિન્ન નહીં હોતે હૈં. સખ લોહા હી હોતા હૈ, ઔર ઘટ આભૂષણ, હથિયાર, અદિ, નામ મૃત્તિકા, સુવર્ણ, ઔર લોહ મેં કહીં ભી નહીં મિલતે, કેવલ પુરૂષોં કી કલ્પના માત્ર સે હી હૈં જિસકો સુવર્ણ ભાસતા હૈ ઉસકો આભૂષણ નહીં ભાસતા હૈ, ઔર જિસકો સુવર્ણ ભાસતા હૈ ઉસકો સુવર્ણ નહીં ભાસતા હૈ, પરંતુ જિસ પુરુષ કી સુવર્ણ મેં ભૂષણ બુદ્ધિ હે સો પુરુષ મિથ્યાદરશી કહતા હૈ, ઔર જિસકી દૃષ્ટિ મેં સુવર્ણ હે, સો પુરુષ યથાર્થદરશી કહલાતા હે ઇસી પર તેરેકો એક—

(૪) બાબા, ઠાકુર, સરાફ, ન્યાય

સુનાતે હૈં. ઇસકો જખ તૂં ચિત્ત લગા કે સુનેગા તખ તેરે કો સુવર્ણ સ્થાની એક આત્માહી ભાસેગા, ઔર ભૂષણ સ્થાની નાના ભાવ સખ દૂર હો જાવેંગે. સો અખ કહતે હૈં:—

એક બાબાને જવાન અવસ્થા મેં દેશ દેશાંતરોં મેં ઘૂમ કે બહુતસા રૂપયા ઇકઠા ક્રિયા ઔર ઠાકુર પૂજા ભી રખતા થા. જવાન અવસ્થા મેં ઉસ રૂપૈયે ઔર ઠાકુરજી કા કુછ બોઝા માલુમ નહીં હોતા થા. વહુ ઉન્હેં ઉઠા કર ઘૂમા કરતા થા. પરંતુ ફિર કાલ પાકે જખ વૃદ્ધ અવસ્થા આઈ તખ વહુ બોઝા તોકને લાયક નહીં રહ્યા. બાબા ને અપને મન મેં વિચાર ક્રિયા કિ બોઝે કો હલકા કરના ચાહિયે, તખ સખ રૂપૈયોં કા સોના ખરીદ કે સોને કે ઠાકુરજી બનવા લિયે ઔર સોને હી કા સિંહાસન બનવાયા ઔર જો પહિલે પથર કે ઠાકુરજી થે સો ગંગા મેં પ્રવેશ કરદિયે ઔર વહુ એક સ્થાન મેં રહુને લગા, ઔર એક ચેલા ભી સેવા

के चारते झूठ लिया, जन्म इस प्रकार करके कर्मों का अंत हुआ
तब शरीर शांत हो गया, फिर येने ने अपने मन में विचार
किया कि गुरु महाराज का अंजारा करना चाहिये, नहीं तो
हमारे लेश के लोभों में निरादर होगा। इस प्रकार सोचकर वह
अकुरल को और सिंहासन को सराई के यहाँ लेज के कढ़ने लगा
कि लार्छ, इस अकुरल को और सिंहासन को गेयता हूँ, तब उन
दोनों को सराई ने कांटे पर रण के कड़ा कि सौ रूपये के तो
अकुरल है और चार सौ का सिंहासन है, येने ने कड़ा अरे,
तू क्या बकता है, अकुरल तो सौ रूपये के है और सिंहासन
चार सौ का है, तेरी बकल को क्या कोध लोगका है, कहीं ऐसा
भी होता है! सराई ने कड़ा कि महाराज मैं तो सोने का मोल
करता हूँ, अकुरल और सिंहासन तो तुम्हारी ही दृष्टि में है,
मैं तो सुवर्ण ही देखता हूँ, मेरे को तो कहीं भी धंसमें अकुर
और सिंहासन मालुम नहीं होता है, दृष्टांत यह है कि जन्म
तू अपने अंदर से आकारदृष्टि को मिथ्या जन के दूर करेगा
तब तेरे को सत्यित आनंद रूप एक आत्मा ही परिपूर्ण
लासेगा, जैसे उस सराई को एक सुवर्ण ही लासता था, इसी
का नाम दृष्टि सृष्टि, आद कड़ा है, जिसका और भी विवेचन
करने में आता है, आलमीक ऋषिने वशिष्ठ नाम महा रामायण
में यही मुख्य सिद्धान्त रखा है.

होहा—दृष्टि सृष्टि आद का, सुन लीनै शिष लेद ।

द्वैत विलय होजय है, दूर होय सय जेद ॥

दृष्टि सृष्टि आद के तीन लेद है सो तू जन्म अकाश होकर
सुनेगा तब तेरा द्वैत रूप दुष विलय हो जवेगा अर्थात् जैसे
अग्नि से धूम निकलता हुआ मालुम होता है परंतु वह आकाश
में लीन हो जाता है तब जना नहीं जाता कि कड़ा गया, तैसे
ही जन्म तू इस उत्तम सिद्धान्त को धारण करेगा तब तेरा धुंवा
रूपी द्वैत आकाश रूप आत्मा में लय हो जवेगा, फिर तेरे को
सर्वत्र एक आत्मा ही लासेगा, जैसे उदलु को अंधेराही लासता

હૈ, દષ્ટિરેવસૃષ્ટિ દષ્ટિ સે તાત્પર્ય કહિયે નેત્ર કી વૃત્તિ કા હૈ, જખ તક નેત્ર કા વિષય પદાર્થ હૈ તખ તક હી પદાર્થ હૈ. જખ નેત્ર કી વૃત્તિ કા વિષય નહીં હૈ, તખ પદાર્થ ભી નહીં હૈ—યહ મત કનિષ્ઠ હૈ, કયોંકિ જખ તક નેત્ર કા વિષય પદાર્થ હૈ તખ તક દ્વૈત હૈ. દૂસરા મત જો સમજા જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર હૈ, દષ્ટિ રેવ સૃષ્ટિ સે યહાં તાત્પર્ય દષ્ટિ કહિયે અંતઃકરણ કી વૃત્તિ સે હૈ, જખ તક અંતઃકરણ કી વૃત્તિ કા વિષય પદાર્થ હૈ, જખતક પદાર્થ કી સાક્ષાત સત્તા રહતી હૈ. ઇસ મેં ભી દ્વૈત બના રહતા હૈ. ઇસી સે યહ મત મધ્યમ કહલાતા હૈ. તીસરા મત જો ઉત્તમ કહા જાતા હૈ સો દિખાતે હૈ, દષ્ટિ રેવ સૃષ્ટિ અર્થાત દષ્ટિ કહિયે જો ચેતન આત્મા હૈ સો હી સૃષ્ટિરૂપ હોકે ભાસ રહા હૈ. ઇસ પ્રકાર સમજ કે જખ તૂં ઇસ ઉત્તમ દષ્ટિ કો ધારણ કરેગા તખ તેરા દ્વૈત ભાવ નષ્ટ હો જાવેગા. ઓર એક અદ્વૈત હીં તેરે કો ભાસેગા. પરંતુ અદ્વૈત ભી ફિર તેરે કો અપને સ્વરૂપમેં કલ્પિત હી પ્રતીત હોગા. તખ તૂં આપહી જાન લેગા કિ સુખાદિક આત્મા કે સ્વરૂપ હી હૈ; કયોંકિ આત્મા મેં અનાત્મ વસ્તુ કલ્પિત હોને સે વહ આત્મા કા સ્વરૂપ હી હૈ, વાસ્તવ મેં મેં ચેતન આત્મા સદાહી સુખ રૂપ હું ઓર જો મેરે કો સુખ પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા હુઈ થી, સો તો કેવલ જ્ઞાંતિ કરકે હુઈ થી.

હે શિષ્ય, તૂં ઇસ ઉત્તમ સિદ્ધાંત કો ધારણ કર, તૂં તો સદા શુદ્ધ સ્વરૂપ સર્વ ગુણ ઓર ધર્મે મેં રહિત હૈ, ઇસ પ્રકારસે ગુરને સમજાકર કહા તખ શિષ્ય સવિનય કહતા હૈ, હે ભગવન! શુદ્ધ આત્મા મેં કોઈ ધર્મ નહીં ભી હો, પરંતુ વિશિષ્ટ આત્મા મેં તો સુખાદિક ધર્મ હોંગે, કયોંકિ અહં સુખી, અહં દુખી, એસી પ્રતીતિ કિસકો હોતી હૈ સો આપ હમકો બતાઈયે ઓર જો આપ એસા કહો કિ અંતઃકરણ મેં હોતી હૈ તો યહ કહના બને નહીં કયોંકિ અંતઃકરણ કો જડ ભી કહા હૈ, પરંતુ જડ પદાર્થ મેં સુખ દુખ કી પ્રતીતિ કહના બને નહીં કયોંકિ જડ પદાર્થ મેં જો સુખ દુખ કા ભાન હો તો ઘટાદિક મેં ભી હોના ચાહિયે, સો હોતા નહીં ઇસી સે જાના જાતા હૈ કિ ચે ચેતન કે હી ધર્મ હોંગે.

यदि आप साक्षी आत्मा में इस प्रकार धर्म होता कहे तो वह उचित नहीं होगा और न विशिष्ट में कहना ठीक होगा, क्योंकि जो धर्म अंतःकरण में नहीं है और न साक्षी आत्मा में है वे उन के मिलाप में कहाँ से होंगे, होना नहीं चाहिये किन्तु दुष् सुष् प्रत्यक्ष में होते हैं सो कैसे होते हैं, जो धर्म जिन पदार्थ में नहीं है वह उसके मिलाप में कैसे आवेगा, यदि पान सुपारी कथे में रक्तता न हो तो उनके मिलाप में कहाँ से आवे तैसे ही अंतःकरण और आत्मा में सुष्मादिक नहीं होता उन के मिलाप में कैसे होंगे, है प्रभु यह षडा सारी सहेह भरे के प्राप्त हुवा है, आप कृपा कर के इसे निवारण कीजिये.

गुरु कहते हैं, हे शिष्य तूने अच्छा प्रश्न पूछा है क्योंकि इस बात को तो मैं भी भूलाही था, तेने स्मरण करवाया है, अथ तू चित्त लगाकर श्रवण कर. यद्यपि अंतःकरण तो जड़ है, और शुद्ध आत्मा में कोई सुष्मादिक धर्म अनते नहीं, और सुष्मादिक प्रतीत होते हैं सो कैसे ! सुन, पुर्वजन्मों में जो नाना प्रकार के धर्म किये हैं सो सभी अंतःकरण विशिष्ट में ही हुवे हैं और अंतःकरण विशिष्ट में ही सुष् दुष् की प्रतीति होती है क्योंकि जो कर्ता है सो ही भोक्ता होता है, और जो कर्ता नहीं होता है, सो भोक्ता भी नहीं होता है, शुद्ध चेतन इस अनुमान से जना जाता है कि अंतःकरण विशिष्ट जव चेतन में ही सुष् दुष् का भान होता है, क्योंकि जैसे घर में जल का आनयन रूप जो कार्य होता है सो केवल घर में नहीं होता है, और केवल आकाश में भी नहीं अनता है, उन दोनों का जो उपाधिक संश्लेष है उसमें ही पांच सेर, और दस सेर, संख्या का व्यवहार होता है, केवल आकाश में भी पांच सेर कहना अनता नहीं, और केवल मृत पिंड में भी पांचसेर की संख्या की जाती नहीं, उनका जो उपाधिक संश्लेष है, उसमें ही कहना होगा, क्योंकि शरीर अनुमती से जना जाता है कि दोनों के मिलाप में ही व्यवहार होता है, इसी प्रकार दुष् सुष् रूप कार्य की प्रतीति होने से जना जाता है कि अंतःकरण विशिष्ट में ही सुष् दुष्

જા બાન હોતા હૈ, ઓર તેને કહા થા કિ જો ધર્મ દાનોં પદાર્થોં
 નહીં હોતા હૈ સો ઉનકે મિલાપ મેં કેસે હોગા, સો ભી નિયમ
 નહીં બનતા, કયોંકિ વિચાર કર દેખા, જેસે ધૂમ્ર કેવલ લકડી મેં
 નહીં હોતા હૈ ઓર ન કેવલ અગ્ની મેં હોતા હૈ પરંતુ જળ
 દાનોં મિલતે હૈ તથા ધૂમ્ર કી પ્રતીતી હોતી હૈ, અથ તૂં દેખ મનમેં
 સે કિસમેં ધુંવાં થા, એસે હી હસ્ત કી દાનોં તાલિયોં મેં શબ્દ
 નહીં હૈ, પરંતુ જળ દાનોં મિલતે હૈ તથા શબ્દ હોતા હૈ.

હે શિષ્ય ઇસ દેખ. યદિ તુએ એસા કિખાઈ દેતા હો
 તો અંતઃકરણ વિશિષ્ટ મેં સમજ લે, ઓર નહીં તો પૂર્વ
 હમને દષ્ટિસૃષ્ટિ બાદ મેં જો ઉત્તમ દષ્ટિ કહીથી ઉસીકો ધારણ
 કર ઓર જો અંતઃકરણ વિશિષ્ટ બાદ પૂર્વ કથન કિયા હૈ સો તેરે
 પ્રશ્ન કે ઉત્તર દેને કે વાસ્તે હૈ, જિસસે તેરી બ્રાંતી દૂર હોવે. તુએ
 ચેતન મેં જેસે ઓર સર્વ ધર્મ કલ્પિત હૈ, વૈસેહી વિશિષ્ટપના
 ઓર શુદ્ધપના ભી સખ કલ્પિતહી હૈ. યદિ તૂં એસા કહે કિ જો
 કુછ ભી કલ્પિત હૈ સો કલ્પના માત્ર હી હૈ, ઉસસે કાઈ ભી કાર્ય
 હોતા નહીં, જેસે સ્થંભ મેં પિશાય કા ભ્રમ હોતા હૈ સો વહ
 કલ્પના માત્ર પિશાય કિસી કે બાલક કે ભારતા નહીં હૈ ઓર
 રજ્જૂ મેં કલ્પના માત્ર કે સર્પસે રજ્જૂ વિષ વાલી નહીં હોતી
 હૈ, એસેહી જો તુએકો આત્મા મેં અનાત્મા કા અભ્યાસ હુવા હૈ
 સો તેરે આત્મા મેં કુછભી હાની નહીં કર સજતા, કિન્તુ યહ
 અધ્યાસ હી તેરે કો દુખ કો દેને વાલા હૈ ઇસ પર તુએ કો એક—
 સુનાતે હૈ, સો તૂં જળ ઇસકો મન લગા કર સુનેગા તથા તેરા
 યહ અધ્યાસ ઢૂંઢને સે ભી નહીં મિલેગા, ઓર તેરે કો શાંતરૂપ
 એક આત્માહી ભાસેગા, તૂં સાવધાન હો કે સુન.

એક પિંજરા ચલા જાતા થા ઉસ સમય કિસી મંડી મેં
 ઉસને સૂઈ કા બહુત ભારી ગંજ દેખા, તથા ઉસકો એસા સોચ
 હુવા કિ યહ તો સારી મુઝકો પીંજની પડેગી. વહ રાત ઓર
 દિન ઇસી ફિકર મેં રહને લગા ઓર એસી ભારી ચિંતા કે ભારે
 કિસકા શરીર સૂખકર કમજોર હોગયા ઓર ચલને ફિરને કે લાયક
 નહીં રહા. તથા કિસી પુરુષને ઉસ પિંજરે સે પૂછા અરે ભાઈ

તું કિસ ચિંતા મેં રહતા હૈ ? કિસ દુખ કે કારણ તેરા શરીર
 કૃશ હોગયા હૈ, સો બતા તો સહી. પિંજરેને ઉત્તર દિયા કિ વહ
 વહ સારી રીઝ મેરકો હી પીજની પડેગી. તખ પુછને વાલા બોલા
 અરે ભાઈ તું એસા ફિકર કુછ લી મત કર, વહ તો અગ્નિ લગા
 કે સારી ભસ્મ હેસ્મ હો ગઈ હૈ. યહ મુન ઉસ પિંજરે ને કહા
 કયા યહ સચ્ચી બાત હૈ ? તખ વહ કહને લગા, ઝૂં બોલકર
 હમેં કુછ તેરે સે લેના હૈ. વહ તો પરસોં કે રોજ ભસ્મ હોગઈ.
 તખ ઈસ પ્રકાર ઉસ પુરુષ કે વચનોં કો મુન કે પિંજરે કા અધ્યાસ
 નિવૃત્ત હો ગયા. ઈસી પ્રકાર તેને આત્મા મેં અનાત્મા અન્ત:-
 કરણ કે મુખ દુખાદિક ધર્મ આરોપણ કરકે મેં મુખી હૂં મેં દુખી
 હૂં એસા જો માન લિયા હૈ ઈસી કા નામ અધ્યાસ હૈ.

વાસ્તવ મેં એસા સહી કો હોતા હૈ તથાપિ જ્ઞાનવાન ઔર
 અજ્ઞાની કે અધ્યાસ મેં સામાન્ય ઔર વિશેષ કી જિસ પ્રકાર
 વિલક્ષણતા હોતી હૈ સો દિખાતે હૈં. જ્ઞાનવાન વ્યવહાર દશા મેં
 અહ મુખી અહ દુખી, એસે શબ્દો કો ઉચ્ચારણ કરતા માહુમ
 હોતા હૈ, પરંતુ ઉસને જો ચેતન આત્મા કો અપના સ્વરૂપ જના
 હૈ, સો સર્વ દુખ મુખ આદિ સે રહિત અસ ગ હૈ એસા ઉસકા
 દઠ નિશ્ચય હોને સે જ્ઞાનવાન કા અધ્યાસ સામાન્ય હોતા હૈ
 જિસસે વહ જન્મેં કા કારણ નહીં હોતા હૈ. અજ્ઞાની કો એસા
 અકરતા રૂપ કરકે આત્મા જ્ઞાન હૈ નહીં ઈસી કારણ અજ્ઞાની
 કો અધ્યાસ હોતા હૈ જો જન્મેં કા કારણ હોતા હૈ.

શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ, હે ભગવાન ! અધ્યાસ કિતે પ્રકાર
 કો હોતા હૈ સો આપ કૃપા કરકે કહો, કયોંકિ મલો પ્રકાર સે
 વસ્તુકા સ્વરૂપ જાને બિના થહણ ઔર ત્યાગ હોતા નહીં ઈસ-
 લિયે અધ્યાસ કે ભિન્ન ભિન્ન સ્વરૂપ કથન કરો. ઈસ પ્રકાર
 મુન કે ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય અધ્યાસ કા સ્વરૂપ ઔર ભેદ
 હમ કહતે હૈં, તું ચિત્ત લગાકર થવણ કર. અધ્યાસ દો પ્રકાર
 કો હોતા હૈ એક તો અર્થા અધ્યાસ ઔસ દૂસરા જ્ઞાના અધ્યાસ
 હોતા હૈ. ઈનમેં અર્થા અધ્યાસ કે ઔર લી બહુત ભેદ હૈં કહીં
 કેવલ સંખધી અધ્યાસ હોતા હૈ ઔર કહીં સંખધ સહિત

संश्रद्धा का अध्यास होता है और कहीं धर्म सहित धर्मी का अध्यास होता है, और कहीं अन्योन्य अध्यास होता है और कहीं अनंतरा अध्यास होता है, सो भी दो प्रकारका होता है, और दूसरा स्वरूपा अध्यास होता है. धतने अध्यास के भेद भूते हैं, और भी अनेक भेद हैं.

मायाके पदार्थोंका चिंतन करने से अंत नहीं आता है. उनको तो मिथ्या जानने से ही उनका अंत होता है. बहुत गंधे के आस गिनने से कुछ प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है धर्म-सिधे जितना अध्यासकर्म है सो सभ्य अर्था अध्यास और अध्यास के अंतर भूत है.

अध्यासका स्वरूप यह है कि मिथ्या वस्तु और उसका ज्ञान दोनों को अध्यास कहते हैं सो अध्यास और अध्यस्त वस्तु के अधिष्ठान के ज्ञान बिना और प्रकार से निवृत्ती होती नहीं. यह मुन शिष्य शंका करता है, हे भगवान्, आप कहते हो कि अधिष्ठान के ज्ञान से अध्यास और अध्यस्त की निवृत्ती होती है, सो यह नियम अनता नहीं क्योंकि अधिष्ठान के ज्ञान बिना भी अध्यस्त की निवृत्ती दृष्टने में आती है, जैसे किसी पुरुषको सर्प के वंद संस्कारों से रज्जू में सर्प भ्रम होके उसके अनंतर फिर उड़का ही भ्रम होगा, तब रज्जू के ज्ञान बिनाही, सर्प भ्रम निवृत्त होगा, इसमें कर्तापने का जो भ्रम हो रहा है सो आत्मा के अकारण ज्ञानसे निवृत्त होजवेगा तो फिर आत्मा को ब्रह्म रूप करके जानका, इस ज्ञान की क्या जरूरत है! ऐसी शंका के करने पर-

शुरू कहते हैं, हे शिष्य यद्यपि विरोधी पदार्थके ज्ञान से विरोधी पदार्थ की लय रूप निवृत्ती हो जवेगी, तथापि अत्यंत निवृत्ती होती नहीं, क्योंकि सर्प भ्रम तो निवृत्त होगया है. परंतु अधिष्ठान का अज्ञान निवृत्त नहीं हुआ इसी से फिर उड़का भ्रम हो जाता है. अधिष्ठान के ज्ञान बिना अत्यन्त निवृत्ती होती नहीं है. कारण सहित जो कार्य की निवृत्ती है सो ही

અત્યંત નિવૃત્તી કહી જાતી છે જે કેવલ અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન સે હી હોતી છે ઓર કિસી પ્રકાર સે હોતી નહીં, ઓર જે તેને કહા થા કિ આત્મા કા જે બ્રહ્મરૂપ કરકે જ્ઞાન છે ઉસકી કયા જરૂરત છે, આત્મા કે અકર્તાપને કે જ્ઞાન સે આપ હી નિવૃત્તી જાવેગી, સો તેરા કહના જનતા નહીં, કયોંકિ કર્તારૂપ સે જે આત્મા કા જ્ઞાન છે સો તો અકર્તાપને કે જ્ઞાન સે લય રૂપ નિવૃત્તીકો પ્રાપ્ત હો જાવેગા. પરંતુ આત્મા કો બ્રહ્મ રૂપ સે નહીં જાવેગા. તખ તક અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી નહીં હોગી, જખ અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી નહીં હુઈ તો અકર્તાપને કા જ્ઞાન લી અધ્યાસ રૂપ હી છે, જસે સર્વ જ્ઞાન સે ડંડ જ્ઞાન હો ગયા છે, પરંતુ દોનોં હી ભ્રમ રૂપ હેં.

તાત્પર્ય યહ છે કિ જખ તક અધિષ્ઠાન કે અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી નહીં હોતી છે, તખ તક ભ્રમ કી લી નિવૃત્તી નહીં હો સકતી. યહા દષ્ટાંત મેં સર્વ કલ્પિત વસ્તુ કા અધિષ્ઠાન આત્મા છે, સો ઉસકો બ્રહ્મ સે ભિન્ન જાનના હી અધિષ્ઠાન કા અજ્ઞાન છે ઓર બ્રહ્મ સ્વરૂપ આત્મા કો જાનના હી આત્મા કા યથાર્થ જ્ઞાન છે. ઇસ પ્રકાર આત્મા કે યથાર્થ જ્ઞાન સે સર્વ અધ્યાસ ઓર અધ્યાસ કા કાર્ય જે અધ્યસ્ત પદાર્થ છે ઇન સર્વ કી નિવૃત્તી હોતી છે, ઇસી કો અત્યંત નિવૃત્તી કહતે છે. ઇસી પર તેરે કો એક પદ સુનાતે હેં સો તૂં મન લગા કે સુન:—

કહીં આના છે નહીં જાના, એક મનકા મેલ મિટાના ।
દરિયાવ કી મોજ્યા દેખો દરિયાવ કે ખીચ સમાના ॥૧૬॥
કર્તા બુદ્ધિ કો ત્યાગો, અખ મર્મ નીંદ સે જાગો ।
તુમ આતમ પદ સે લાગો, તજ દેઉ ન વિષય વિષ ખાના ॥૧૭॥
જહાં હિંસા નહીં અહિંસા, નહીં જાતિ વરન કુલ વંસા ।
કોઈ નિંદા નહીં પ્રશંસા, અહે કોઈ કુછ બકો જમાના ॥૧૮॥
જહું નહીં ગાયત્રી સંધ્યા, કોઈ મોક્ષ હુવા નહીં વંધ્યા ।
આતમ છે સદા સ્વછંદા, જહું નહીં જ્ઞાન અરુ ધ્યાના ॥૧૯॥
જહું નહીં મૂલ નહીં તૂલા, કલ્પી કુમહલાતા નહીં ફૂલા ।
કુછ જાન અજાન ન બૂલા, વહ એસા દેશ દેવાના ॥૨૦॥

જહં જીવ ઈશ નહીં માયા, કોઈ ધર્મ કર્મ નહીં પાયા ।
 જહં ચેતન કી સખ છાયા, યહ સ્વર્ગ પાતાલ જહાના પાયા ।
 જહં ગુપ્ત રૂપ કો જાના, તખ મિટા ભેદ બ્રમ નાના ।
 ભઈ માયા મલકી હાના, જખ દેખા એક સમાના ॥૩॥

ઈસ બાત કો અપને ચિત્ત મેં વિચાર કે આત્મા કો એક સમરૂપ જાન, ઓર જો પૂર્વ મેં સુખ કો આત્મા સે ભિન્ન આત્મા કો ગુણ તથા આત્મા કો ધર્મ રૂપ કરકે જાના થા, સો વાસ્તવ મેં આત્મા કો સ્વરૂપ હી જાન. યદિ તૂં ઐસા કહે કિ સુખાદિક કિસી ક્રિયા સે આત્મા કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં તેરા યહ કહના સી બનતા નહીં, કયોંકિ ક્રિયા કરકે અનાત્મ પદાર્થ કી હી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, આત્મા તો સર્વવ્યાપી હોને સે નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ, ઓર જો તૂં ઐસા કહે કિ નિત્ય પ્રાપ્ત કી પ્રાપ્તિ, ઓર નિત્ય નિવૃત્ત કી નિવૃત્તિ વેદાંત શાસ્ત્ર મેં કહી હૈ, ઈસલિયે પ્રાપ્ત કી પ્રાપ્તિ બનતી હૈ, સો ઠીક હૈ પરંતુ તેને ઈસ પ્રકાર કે કથન કા અભિપ્રાય સમજા નહીં હૈ. જો વસ્તુ નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ ઉસકી ફિર કિસ ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ હોગી. ઉસકા તો અજ્ઞાત હોના હી અપ્રાપ્તિ હૈ, ઓર જ્ઞાત હોના ઉસકી પ્રાપ્તિ કહી જાતી હૈ, યથાર્થ મેં કિસી ક્રિયા સે ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ ઓર જો નિત્યપદ દિયા હૈ ઉસકો તૂં વિચાર કે દેખ. જખ તૂં ઈસ પ્રકાર વિચાર કરેગા, તખ તેરી ક્રિયાજન્ય પ્રાપ્તિ કી શંકા નિવૃત્ત હો જાવેગી. સો વિચાર યહ હૈ જિસ પર તેરે કો એક—

(૬) બચ્ચા બાબર પિતા ન્યાય

સુનાતે હૈં. એક પુરૂષ અપને બચ્ચેકો સંગ લેકે બાબર કી સેલ કરને ગયા થા. ઉસને બાબર મેં ગાડી, ઘોડે કી બહુત સી લીડ દેખકર અપને મન મેં વિચાર કિયા કિ બચ્ચેકો કોઈ ચોટ ફેડ લેગે નહીં. ઈસલિયે ઉસને ઉસ બચ્ચેકો અપને કંધે પર બિઠા લિયા, ઓર બાબર મેં ધુમતા રહા. વહ અનેક પ્રકાર કે કૌતુક તમાશે દેખતા રહા ઓર બાબર કી અનેક વસ્તુ દેખકે. ઉસકા

मन उधर रुजू होने के कारण उसे उस लड़के का विस्मरण हो गया। फिर उस पुरुष को ऐसा भ्रम हुआ कि लड़का तो कहीं बाजार में जा गया है। तब वह उस लड़के को ढूँढने लगा और साराही बाजार उसने ढूँढा, परंतु वह भ्रम्या उसको कहीं ली मिला। ऐसी दशा में वह पुरुष हैरान होकर अपने घरको चला जब घरके दरवाजे में घुसने लगा तब उस भ्रम्येका सिर दरवाजे में टकराने से वह रोने लगा। उसका रोना सुनके पिता को उसी वक्त पुत्र की ज्ञात हो गध, अथ तू भस आत को विचार कर देण, उस भ्रम्येकी प्राप्ती किस किया से दुर्ध ! किसी ली किया से नहीं दुर्ध, पूर्व में उस पुरुष ने अनेक किया उसकी प्राप्ती के वास्ते की परंतु किसी ली किया से उस भ्रम्येकी प्राप्ती नहीं दुर्ध, जब वह पुरुष सर्व किया को त्याग के निराश होकर अपने घर आया तभी उसको अपने भ्रम्ये की प्राप्ति दुर्ध, यह तो दृष्टांत है।

दृष्टांत यह है कि जबतक तेरेको किसी कायक, वायक, मानसिक किया का अलंकार है कि अमुक किया करके आत्मा को सुख की प्राप्ती होगी, तबतक तेरेको कली सुखकी प्राप्ती नहीं होगी, जैसे वह पुरुष जब तक ढूँढने की किया करता रहा तब तक उसको पुत्र की प्राप्ती नहीं दुर्ध, तब वह निराश होकर अपने घर आया, तब उसको पुत्र की प्राप्ती नहीं दुर्ध, ऐसे ही तेरे को जे सुख प्राप्ती की धंछा दुर्ध है, और उसके वास्ते नाना प्रकार की जे किया करता है, जब तू धन सर्व से निराश होगा, और जे सख्या आत्माइपी घर है उसकी तरफ आवेगा, तब तेरे पुत्र स्थानी आत्म स्वरुपी नित्य सुख की प्राप्ति होगी परंतु वह तभी होगी जब दरवाज स्थानी जे सत् शास्त्र, और महात्मा का सत्संग है उसीमें तू आवेगा और तेरेको "अलं अह्मास्मि" ऐसा बोध लगेगा, तब तू उस भ्रम्ये की में तरुह निदलावेगा कि मैंही येतन आत्मा परिपूर्ण अह्मरुप हूँ-और अकिय हूँ, इसीसे मैं सर्व धर्मा से रहित हूँ, और सलो धर्म और सभी किया, मेरेही से सिद्ध होनी है और मेरे से कोई ली पदार्थ जुदा नहीं है, जब इस प्रकार समझेगा, तब तू

जान लेगा, कि नित्य प्राप्ति कही है सो केवल प्राप्त पदार्थ का ज्ञान करने के वास्ते कही है. और किसी क्रिया से प्राप्त प्राप्ति नहीं होती है.

जिस पदार्थ की किसी क्रिया से प्राप्ति होती है सो पदार्थ अनात्म ही होता है. जैसे घटपटादिक पदार्थ हैं. ये सारे क्रिया जन्य होने से अनात्मा ही हैं. जो पदार्थ किसी क्रिया से उत्पन्न होता है सो नाशवान ही है. यज्ञादिक कर्मों से स्वर्ग के लोग पदार्थ प्राप्त होते हैं, सो भी काल पा के नाश हो जाते हैं. यदि किसी क्रिया जन्य पदार्थ से आत्मा के सुख की प्राप्ति कही, तो सुख भी नाशवाला ही होगा. वास्तव में वेदने आत्मा को अक्षीय ही कहा है. उसमें किसी क्रिया का आरोपण करने उसको सुख की प्राप्ति कहना सर्वथा वेद और शास्त्र से विरुद्ध है. धर्म आत को सुन के शिष्य प्रश्न करता है—

हे गुरो ! वेद में दो प्रकार के कर्म कहे हैं, उनमें एक तो विधी और दूसरा निषेध कर्म कहा है. धर्म दोनों में से निषेध कर्म का तो त्याग ही कहा है, और जो विधी कर्म है सो करने के वास्ते कथन किया है. विधी कर्म से सुख की प्राप्ति कही है. ज्ञात्मा से सिन्न और किसीको भी कर्म का अधिकार है नहीं, ज्ञात्मा ही कर्मका अधिकारी है. धर्मलिये ज्ञात्मा के सुख के वास्ते ही वेदने कर्मका कथन किया है, सो कर्म किसी क्रिया से होता है और आप कहते हो कि किसीकी क्रिया के करने से आत्मा के सुख की प्राप्ति होती नहीं. धर्ममें तो आपका कहना ही वेद से विरुद्ध भावूम होता है, क्योंकि वेदने कर्मों का जो कथन किया है वह कथन ज्ञात्मा के सुख के ही वास्ते करने में वेद का अलिप्राय है, और जो क्रिया जन्य कर्म से सुख नहीं होता तो वेद ऐसा कथन क्यों करता. धर्मसे जाना जाता है कि वेद का तो किसी के अहङ्काने में तात्पर्य नहीं. वेदों के धर्मरने सर्व जनों के लक्ष्य के वास्ते ही उत्पन्न किया है, ऐसी शंका होने से—

ગુરુ કહતે હૈં--યદ્યપિ ઈશ્વરને જીવોં કે ભલે વાસ્તે હી ઉત્પન્ન
 કિયે હૈં, ઔર વિધી નિષેધ દો પ્રકારકે કર્મોં કા કથન કિયા હૈ,
 સોભી જીવોં કે કલ્યાણ વાસ્તે હી હૈ, પરંતુ અપની બુદ્ધિ મેં
 જો અસંભાવનાદિક દોષ હોને સે વેદ કે વચનોં કા તાત્પર્ય
 સમજ મેં નહીં આતા હૈ, ઈસી કારણ વિરોધ માલૂમ હોતા હૈ,
 ક્યોંકિ કિસી સ્થાન મેં તો એસા કહા જખ તક હૈ કિ
 કર્મોં કો જીવે તખ તક હી કરે ઔર કિસી જગહ એસા ભી
 કથન કિયા હૈ કિ "કર્મણા બન્ધ્યતે જન્તુઃ" અર્થાત કર્મોં સે
 જીવ બન્ધાયમાન હોતે હૈં. ઈસ રીતિસે નાના પ્રકારકે વચનોં કો
 સુનકે પુરૂષોં કી બુદ્ધિ મેં ભ્રમ હો જતા હૈ. ઈસસે ન તો કર્મોં
 કા ત્યાગ હોતા હૈ. ઔર ન કર્મોં કે કરને મેં ચિત્ત કી પ્રવૃત્તિ
 હોતી હૈ. ઉભયતા સંશયમેં ઉમર બીત જાતી હૈ. ઈસસે
 પ્રથમ અપની બુદ્ધિ મેં જો અસંભાવના દોષ હૈ ઉસકી નિવૃત્તી
 કરની ચાહિયે. ઉસકી નિવૃત્તી બારંબાર શાસ્ત્ર કે વિચારને ઔર
 મહાપુરૂષોં કે વચનોં મેં વિશ્વાસ રખને સે હોતી હૈ. જખ ઈસ
 પ્રકાર મહાત્મા પુરૂષોં કે વચનોં મેં વિશ્વાસ રખને સે હોતી હૈ.
 જખ ઈસ પ્રકાર મહાત્મા પુરૂષોં કે વચનોં કો બારંબાર સુનેગા
 ઔર શાસ્ત્ર કા વિચાર કરેગા તખ જાન જાવેગા કિ અધિકારી ભેદ
 સે સારે હી વેદ કે વચન ઠીક હૈં. વિધી નિષેધ યે દો પ્રકાર કે
 કર્મ વેદને કહે હૈં. નિષેધ કર્મ સે રોક કે વિધી કર્મ મેં
 લગાતા ઔર ફિર સકામ કો છુડાકર નિષ્કામ વિધી કર્મ મેં
 લગાના ઔર જખતક અશુભ વાસના દૂર નહીં હો તખતક
 નિષ્કામ કર્મ કરના, ઔર જખ અશુભવાસના નહીં માલૂમ હો
 તખ નિષ્કામ કર્મ કો ભી નહીં કરના કિન્તુ નિષ્કામ ઉપાસના
 કો કરના, ઔર વહ ભી જખતક ચિત્ત કી સ્થિરતા નહીં દિખે
 તખતક કરના, ઔર જખ વિશ્લેષ દોષ દૂર હોજાવે તખ નિષ્કામ
 ઉપાસના ભી નહીં કરના ઔર વૈસી દશા નિત્ય અનિત્ય વસ્તુ
 કા વિચાર કરના ઔર કુછ ભી નહીં કરના. એસે હી વિધી કર્મ
 સે લેકર જ્ઞાન કી પ્રાપ્તી પ્રચિન્ત સોપાન કર્મ અર્થાત અધિકાર
 ભેદસે એક કર્મ કા ત્યાગ ઔર દુસરે કા ગ્રહણ વેદ ને કહા હૈ,
 સો કર્મ કે કરાને મેં વેદ કા તાત્પર્ય નહીં હૈ કિન્તુ સર્વ કર્મોં

કો કમશઃ છુડાને મે હી વેદ કા ગૂઢ અભિપ્રાય હૈ. ક્યોંકિ જિન કર્મોં અહંકાર કરકે જન્મ મરણ રૂપ નાના પ્રકાર કે કલેશ પ્રાપ્ત હોતે હૈ. ઉન કર્મોં કે દૂર હોને સે હી દુખ કી નિવૃત્તિ હોગી. કર્મોં કા નાશ ત્રીન પ્રકાર સે હોતા હૈ. (૧) કિસી જ્ઞાત મેં પાપ હો જાવે તો ઉસકી નિવૃત્તિ વિરોધી કર્મ સે હોતી હૈ, જૈસે પ્રાયશ્ચિત કર્મ, (૨) કર્મ કે ભોગને સે કર્મ નાશ હોતે હૈ, જૈસે પ્રારબ્ધ કર્મ ઓર (૩) બ્રહ્મજ્ઞાન સે સર્વ સંચિત આગામી કર્મ નાશ હોતે હૈ.

ઇસ પ્રકારસે ક્રિયા જન્મ કર્મકા વેદને જો કથન ક્રિયા હૈ સો કર્મ કે હી નાશ કરને કે વાસ્તે હૈ જૈસે કિસીકે ભૂત ચિપટ જાતા હૈ તખ ઉસકો બલીદાન દેકર નિવૃત્ત કરતે હૈ પરંતુ જૈસા મૃત હોતા હૈ, વૈસા ઉસકી બલી હોતી હૈ. ઇસી પ્રકાર ઇસ જીવ કો કર્મ રૂપી ભૂત લગા હૈ તો કર્મ રૂપી બલિદાન દેને સે હી વહ દૂર હોતા હૈ, ઓર કિસી ક્રિયા કે કરને સે આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ. એસા જો અક્રિય ઓર સુખરૂપ આત્મા હૈ ઉસકો કિસી ક્રિયા સે સુખ પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા હુઈ હૈ સો દોષ હૈ. ઇસી સે તેરે કો અક્રિય આત્મા મેં નાના પ્રકાર કી ક્રિયા ઓર કર્મ પ્રતીત હુવે હૈ જૈસે કિસી કે નેત્ર મેં દોષ હોતા હૈ ઉસકો આકાશ મેં દો ચન્દ્રમા ભાસતે હૈ. ઇસી પ્રકાર કિસી કો પિત્ત દોષ હોતો ઉસે સભી પદાર્થ પીલે પ્રતીત હોતે હૈ. વાસ્તવ મેં દોષ કેવલ નેત્ર મેં હી હૈ. ચન્દ્રમા તો એક હી હૈ ઓર સારે પદાર્થ પીલે નહીં હોતે હૈ, પરંતુ અપને નેત્ર કે દોષ સે પીલે ભાસતે હૈ. ફિર વહ પુરૂષ દવાઈ કરતા હૈ ઓર આરામ હોને પર જો પદાર્થ જૈસા હોતા હૈ વૈસા હી ભાસને લગ જાતા હૈ. વાસ્તવ મેં દવાઈ સે નેત્રકા દોષ હી દૂર હોતા હૈ, નેત્ર મેં ઉસ દવાઈ સે સામર્થ નહીં બઢતી હૈ. તૈસે હી અજ્ઞાન રૂપી દોષ સે અપની બુદ્ધિ મેં હી કર્તા. ક્રિયા, કર્મ, ભાસતા હૈ, સો કિસી દવાઈ સે હી દૂર હોગા, ઓર વહ દવાઈ નિષ્કામ કર્મ હૈ. ઉસસે અન્તાકરણ શુદ્ધ હોતા હૈ. શુદ્ધ અન્તાકરણ મેં વિવેક હૈ. ફિર શ્રવણ, મનન, નિદિ-વૈરાગ્ય આદિ સાધન ઉત્પન્ન હોતે હૈ. ફિર શ્રવણ, મનન, નિદિ-

ધ્યાસન સે અસંભાવના ઔર વિપરીત ભાવના દૂર હોકર આત્મા કા યથાર્થ જ્ઞાન હોતા હૈ. જૈસા વસ્તુ કા સ્વરૂપ હો વૈસા હી જનના ઇસી કા નામ યથાર્થ જ્ઞાન હૈ.

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જૈસે દવાઈ કી સામર્થ્ય રોગ કે દૂર કરને મેં હોતી હૈ, તેસે હી જિતની સાધનરૂપી દવાઈ હૈ સો અજ્ઞાન રૂપી રોગ કે દૂર કરને મેં તો સમર્થ હૈ પરંતુ આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી કરાને મેં સમર્થ નહીં હૈ, કયોંકિ આત્મા તો સદા સુખ રૂપ હી હૈ, જૈસે કપડ મેં જો મેલ હોતા હૈ ઉસકી મલસે હી નિવૃત્તી હોતી હૈ, પરંતુ સાબુન રૂપી મલસે ઉસ વસ્ત્ર મેં સફેદી નહીં ઉત્પન્ન હોતી હૈ, કયોંકિ સફેદી તો વસ્ત્ર કા સ્વરૂપ હી હૈ. કોઇ કહે કિ જલ કો ઠંડા કરો. વહ કોન વસ્તુ હૈ જો જલ કો ઠંડા કરેગી ? વાસ્તવ મેં જિતની વસ્તુ ઠંડી માલુમ હોતી હૈ સો સખ જલ હી સે ઠંડી હોતી હૈ. ઇસી પ્રકાર પદાર્થોં મેં જો સુખ કી પ્રતીતિ હોતી હૈ સો સારા સુખ ચેતન આત્મા કા હૈ કિર આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી કોન પદાર્થ કરેગા. પદાર્થ માત્ર કો વેદ ને દુખ રૂપ કહે હૈ. યહી વેદ કા ગૂઢ અભિપ્રાય હૈ, સો તેને સમજા નહીં, જૈસે એક વૈરાગી કો ગુરુ કે ઉપદેશ કા અર્થ નહીં સમજા થા ઇસી પર તેરે કો એક--

(૭) ગુરુ શિષ્ય ઉપદેશ ન્યાય

સુનાતે હૈં સો યહ હૈ કિ એક ગ્રહસ્થી કો ઉસકે પૂર્વ જન્મ કે ઉત્તમ સંસ્કારોં કે યોગ સે વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હુવા તખ વહ ઘર છોડ કર ચલ દિયા, ઔર અપને કલ્યાણ કી ઇચ્છા કરકે વિચરને તથા તીર્થ યાત્રા કરને લગા. એક દિન વહ કિસી વૈરાગી કે મંદિર મેં જાકર ઠહરા તખ મંદિર વાલા વૈરાગી ઉસસે પૂછને લગા તુમ કહાં સે આયે ઔર કહાં જાતે હો! વહ કહને લગાકિ મહારાજજી, મેં તો એસે હી તીર્થયાત્રા મેં વિચરતા રહતા હૂં, અપને ઘર કા તો મૈંને ત્યાગ કિયા હૈ, પરંતુ મેરે કો યહ ઇચ્છા બની રહતી હૈ કિ ઇસ જન્મ મરણ રૂપી સંસાર દુખ સે કિસી પ્રકાર મુક્ત હોંઉં. ઇસ પ્રકાર સુનકર વે બાબાજી કહને લગે, અરે

થઈ તો તેરે કો હમ બતા દેગે. તખ વહ બોલા કિ મહારાજ
 બહુત અચ્છી બાત હૈ. આપ કૃપા કરકે બતાવે બાબાજી કવને
 ભગે કિ બાર્ષી તુમ ત્રીન કામ કરતે રહો તો તુમહારી મુક્તિ હો
 જાવેગી. વે ત્રીન કામ ચે હૈં એક તો ગડી કા ગાબર થાપ દિયા
 કરો. દુસરા કામ તમાખૂ કૂટકર મેરે કો ભર દિયા કરો, ઓર
 ત્રીસરા કામ ગડી કે વાસ્તે હરી હરી ઘાસ જંગલ સે ખોદ
 લાયા કરો. ઇન ત્રીન કામોં કે કરને સે તુમહારા મોક્ષ હો જાવેગા.
 તખ વહ પુરૂષ ઈસ બાત કો સુનકે ઉસ બાબા કા ચેલા હોકર
 ઉસી મદિર મેં રહને લગા, ઓર ચે ત્રીનોં કામ કરને લગા. બહુત
 દિન વ્યતીત હોને પર વહ અપને મન મેં વિચાર કરને લગા કિ
 ચે કામ તો હમ અપને ઘર પર ભી કરતે ચે, જો ઇનસે કલ્યાણ
 હોતા તો વહીં હો જાતા. મહારાજ ને કહા હૈ સો કુછ સમજ
 કે હી કહા હોગા. ઈસ પ્રકાર વિચાર કરતા હી રહા. ફિર એક
 દિન વહ બાબા જૈયા કે વાસ્તે કિસી તાલાબ કે કિનારે ઘાસ
 ખોદ રહા થા ઉસ સમય ઉસી તાલાબ પર કોઈ પરમહંસ મહા-
 ત્મા વિચરતે હુવે ચલે આયે. ઉન્હોંને વહાં સ્નાન કિયા
 તખ વહ પુરૂષ ઉન મહાત્મા કે તરફ દેખ રહા થા. સ્નાન
 કરકે વે મહાત્મા ઉસી તાલાબ કે કિનારે આસન
 લગા કર બેઠ ગયે ઓર ગીતા કા પાઠ કરને લગે.
 જખ વે પાઠ કર ચુકે, તખ વહ મનુખ્ય ઉનકે પાસ જાકે જય
 સીતારામ કહતા હુવા વન્દનાપૂર્વક ઉનકે સમીપ બેઠ ગયા. ફિર
 વે મહાત્મા ઉસસે પૂછને લગે કિ તુમ કૌન હો ? ઉસને કહા કિ
 મહારાજ મેં ભી સાધુ હૂં. તખ ઉન્હોંને કહા કિ બહુત અચ્છી
 બાત હૈ. વહ મનુખ્ય કહને લગા કિ મહારાજ મેં આપસે એક
 બાત પૂછતા હૂં, સો આપ કૃપા કરકે બતાવે મહાત્માને કહા.
 બહુત અચ્છા આપ પૂછીએ તખ વહ કહને લગા કિ મહારાજ,
 મેરે ગુરને ત્રીન કામ મેરે કો બતાવે હૈ, ઓર વહ કહા કિ ઇનકો
 તુમ કરતે રહો, તુમહારા મોક્ષ હો જાવેગા. વે કામ ચે હૈં (૧)
 ગડી કા ગાબર થાપના, (૨) તમાખૂ કૂટ ૨ કર ભર ૨ કે દેના,
 ઓર (૩) ગડી કે વાસ્તે હરી ૨ ઘાસ ખોદ લાના. ઇન
 કામોં કે કરને સે મોક્ષ હોતા હૈ યા કયા સો આપ બતાવે.

तब वे महात्मा कहने लगे--

हे सज्जन, इन कामों के करने से तो मोक्ष नहीं होता है, परंतु इनका अर्थ समझने से मोक्ष होता है. तुम्हारे गुरु ने ही कहा था कि अतलाह परंतु तुमने इनका अर्थ नहीं समझा. तब वह कहने लगा कि महाराज कृपा करके अर्थ बताओ. इस पर से वे महात्मा बोले कि गोप्य थापने का अर्थ यह है, कि गो नाम धन्द्रियों को और थापने से तात्पर्य छोटे विषयों से रोकने का है. ऐसे ही वर नाम श्रेष्ठ का है. वही पुरुष श्रेष्ठ है जिसने अपनी धन्द्रियों को दुष्ट विषयों से रोका है. तमाछू कूटने और कूंकने का अर्थ तमा अर्थात् तम है, लोल और लालच को कूट कूटके कूंक देना ही तमाछू कूट र कर लर देना है. तीसरा काम जो हरी र घास जोड़ लाने का है इसका अर्थ यह है कि जब तू छोटे विषयों मन और धन्द्रियों को रोकेगा, और लोल लालच काम क्रोध आदि सर्व को कूट र के कूंक देगा, तब हरी अर्थात् विष्णु लगवाने का जोजने से ही तेरा मोक्ष होगा. इस प्रकार से इन कामों के अर्थ को समझ के वह जली पुरपी छाउ के मंदिर में जाकर बैठ गया और माला हाथ में लेकर ठाकुरजी का भजन करने लगा. गुरुजी उसे पुकार के कहने लगे, अरे जनकीदास, जिसका काम नहीं किया, तो वह बोला कि महाराज आज तो मैं कामों के अर्थ को समझ गया हूँ. अब पहिले जैसे काम करने से क्या प्रयोजन है. यह सुन गुरुजी कहते हैं--

अब, जनकीदास आज तेरे को कोई चोटीकट तो नहीं मिला यह गुरु बोलकर दृष्टांत है. दृष्टांत यह है कि जबतक इन कामों का अर्थ जनकीदासने नहीं समझा था, तब तक गोप्यको थोपा, तमाछू को कूटा और घास को ली जोड़ता रहा. जिस समय इनके अर्थ को जान लिया तो सर्व कामों से निवृत्त हो गया और आनन्द को प्राप्त हुआ तैसे ही जब तब तू किसी क्रियासे आत्मा को सुख की प्राप्ति चाहता है, तब तब तेरे को सुख की प्राप्ति कदापि नहीं होगी, क्योंकि कर्म और इनके फल को वेद ने दुष्प्रपी कहा है, इससे ली जाना जाता है कि कर्म और इनके फल दुःख

રુપ હી હૈ. પ્રત્યક્ષ મેં ભી યહી દેખને મેં આતા હૈ કિ બિના સંતોષ કે જો પુરુષ નાના પ્રકાર કે લૌકિક કાર્ય આરંભ કરતા હૈ ઉસકો દેખ કે લોગ કહતે હૈં યહ તો બહુત દુખી હૈ, ઓર જો પુરુષ સર્વ કાર્યોં કો ત્યાગ વિવેક પૂર્વક એકાન્ત દેશ મેં રહતા હૈ ઉસે દેખકર લોગ કહતે હૈં કિ યહ પુરુષ આનન્દ મેં હૈ. કહીં એસા સિખા ભી હૈ—

દોહા—નહી દેવ નર તાસ સમ, જો નર વસૈ એકાંત ।

ભોગોં કી નહીં વાસના, મન હુવા બ્રહ્મ મેં શાંત ॥

કર્તા ક્રિયા કર્મ કા, દૂટ ગયા અહંકાર ।

તાસ સમાન ન ઓર સુખ, સખ કહતે સંત પુકાર ॥

હે શિષ્ય ! જૈસે ઉસ મહાત્મા ને ઉસ બાબા કો ઉન કર્મોં કા ગૂઢ અર્થ સમજાયા, તખ અર્થ સમજને પર બાબા કો આનંદ પ્રાપ્ત હુવા તૈસે હી તૂં ભી વેદ કે ગૂઢ અર્થ કો સમજ. વેદ કા ગૂઢ અર્થ યહ હૈ કિ કર્મ કે કરને સે કર્મ-કા નાશ હોતા હૈ. ઇસ વાસ્તે કર્મ કા કથન વેદમેં ક્રિયા હૈ. કિસી ક્રિયાજન્ય કર્મ સે આત્મા કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ એસા વેદને કથન નહીં ક્રિયા કયોંકિ આત્મા તો નિત્યહી પ્રાપ્ત હૈ, નિત્ય પ્રાપ્ત વાસ્તુ કી કિસી ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ હોતી નહીં, જૈસે કોઇ પુરુષ કહે કિ મેરેકો આકાશ કી પ્રાપ્તિ કિસ ક્રિયા સે હોગી, તખ સુનનેવાલા ઉસે કહતા હૈ, અરે, મૂર્ખ કહીં ક્રિયા કરને સે આકાશ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ. આકાશ તો નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ ઇસકી પ્રાપ્તિ કયા હોગી એસી ઇચ્છા કરના હી મૂર્ખતા કા ચિન્હ હૈ. ઇસ પ્રકાર કી બાત સુનકે સાધારણ મનુષ્ય ભી એસા ઉલ્લભા દેતે હૈં તો વિદ્વાન લોગ કયા કહેંગે ? આકાશ કી કિસી ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ નહીં બનતી. આકાશ ભી ચેતન આત્મા મેં સુમેરુ પર્વત કે તુલ્ય હૈ. સુક્ષ્મ સે સુક્ષ્મ સર્વ જીવોં કે અન્તર ઓર બાહર જો વ્યાપ રહા હૈ. એસા પરિપૂર્ણ આત્મા કેસા હૈ ? વહ સર્વ વિદ્યેષોં સે રહિત ઓર સદા સુખ રુપ હૈ. ઇસમેં કુછ ભી સંદેહ કી બાત નહીં

હૈં કિ આત્મા સ્વયં આનન્દ સ્વરૂપ હૈં. ઉસકો કિસી ક્રિયા સે
આનન્દ કી પ્રાપ્તિ કહના સર્વથા અસંભવ હૈં, જેસે જલ મેં
જો લહરે હોતી હૈં વે પૂછે કિ જલ કિસ ક્રિયા હમ કો મિલેગા,
ઓર વસ પૂછે કિ મેરે કો સૂત કિસ ક્રિયા સે મિલેગા. ઇસી પ્રકાર
ભૂષણ કહે કિ સ્વર્ણ કહાં ઓર કિસ ક્રિયાસે મિલેગા ? એસે
પ્રશ્ન પૂછનેવાલે કી કેવલ મૂર્ખતા સિદ્ધ હોતી હૈં, તેસે હી તુમ
કહતે હો કિ કિસી ક્રિયા સે આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તિ હોગી
સો યહ તુમહારા કહના ભી ઉન લહરોં આદિ કે પ્રશ્ન કરને કે
તુલ્ય હૈં, વે તો જડ પદાર્થ હૈં પરંતુ તૂ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય હોકર
એસી બાત કયોં કરતા હૈં.

વાસ્તવમેં સચ્ચિદાનન્દ સ્વરૂપ જો તૂં હી હૈં તો ફિર કિસ
ક્રિયા સે સુખ કી પ્રાપ્તિ આહતા હૈં. તૂં કેવલ અપની ભૂલ સે
હી દુખ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં. જેસે કોઈ બનિયા અપને ઘર કો
ભૂલ કે સારે બાજર મેં ફિરા ઓર દુખ પાયા, તેસે હી તૂં અપને
કો નહીં જન કે નાના પ્રકાર કે ક્રિયાજન્ય કલેશોં કો પ્રાપ્ત
હો રહા હૈં. ઇસી પર તેરે કો એક—

બનિક અફીમ ઘર વિરમરણ ન્યાય

સુનાતે હૈં, સો તૂં ચિત લગા કર સુન. એક બનિયે કી દુકાન
બાજર મેં થી ઓર ઉસકા ઘર જરા ફાસલે પર થા એક દિન
એસા હુવા કિ રાત્રી સમય જબ કુછ વર્ષા હો રહી થી તબ
શરદી કી વજહ સે ઉસ બનિયે ને કુછ અફીમ ખા લિયા. વૈસી
દશા મેં વહ બનિયા દુકાન સે ઘર કો ચલા. રાસ્તે મેં કિસી
જગહ પેશાબ કરને ઐઠ ગયા, તબ અફીમ કે નશે મેં ઉસકી
આંખ લગ ગઇ. કુછ દેર બાદ ઉસકી આંખ ખુલી તો વહ અપને
મનમેં વિચાર કરતા હૈં કિ હમ ઘર કો ચલે થે, સો ઘર તો અબ
તક આયા હી નહીં. વહ વહાં સે ઉઠ કે આગે ચલા ઓર ભય-
ભીત હો ગયા. ફિર અપને ઘરકી જાંચ ઉસકો નહીં રહી તબ
જિસકા ઘર આવે ઉસકો અપના ઘર સમજ કે વહ દરવાજે કે

किवाड जोलने लगा. वे घरवाले कहने लगे अरे कौन है. तब
 वह अनिया वहां से लगा. जैसे ही और ली अनेक गृहों में
 जा के लागता रहा आभिर दैवयोग से उसीका घर आ गया,
 वहां सेठानी रास्ता देखा ही रही थी, तब सेठान गम पानी से
 पैर धोके रसोई लगे और पलंग पर विराज गये, हुक्का गुडा-
 गुडाने लगे. तब कहते हैं कि सुभ तो अपने ही घर में है,
 क्योंकि जब तक मैं अपने घर को प्राप्त नहीं हुआ, तब तक
 दूसरे ग्रहों में जा के अनेक प्रकार के तिरस्कारजन्य दुष्ण को
 प्राप्त हुआ, जब अपने ग्रह में आया तभी मुझ को सुभ प्राप्त
 हुआ. तैसे ही तू अपने सत्चित् आनन्द स्वरूप को भूल के
 किसी क्रिया से सुभ की प्राप्ति चाहता है. यह धृष्टा अपने स्व-
 रूप के अज्ञान से ही दुष्ट है, सो स्वरूप के ज्ञानसे ही दूर होगी.
 वह स्वरूप कैसा है ? नित्य ही प्राप्त है—जैसे समझना ही
 नित्य प्राप्त की प्राप्ति है, और किसी क्रिया से प्राप्ति की प्राप्ति
 किसीने ली नहीं कही है, और जो किसी क्रिया से प्राप्ति कही है,
 सो तो अनात्म पदार्थ की ही प्राप्ति होती है. जैसे कुम्हार की
 क्रिया से घट की प्राप्ति है और पुरुषों को दंड आदिकों के
 प्रहाररूप क्रिया करने से सर्प आदिकों के नाश रूप फल की
 प्राप्ति होती है. इसी प्रकार पंडाध पुरुष को बलनरूप क्रिया
 से ब्राम आदि की प्राप्तिरूप फल होता है, और रसोई करनेवाले
 को पाक क्रिया से नाना प्रकार के पदार्थों काविकासरूप फल होता
 है, और संस्काररूप क्रिया से मल की निवृत्ति और गुण की प्राप्ति
 रूप फल होता है. जैसे क्रियाजन्य कर्म से ये फल होते हैं परंतु
 आत्मा तो धन क्रियाओं में से किसी भी क्रिया का फल नहीं
 है, क्योंकि जो आत्मा पूर्व में नहीं हो तो उत्पाद्यरूप क्रिया से
 होता संभव हो सकता है परंतु आत्मा तो अज है, इसीसे आत्मा
 का नाश भी नहीं होता है क्योंकि जिसका जन्म होता है उसीका
 नाश होता है, जैसे घट पट आदि. यदि आत्मा किसी एक देश
 में हो तो गमनरूप क्रिया से प्राप्त होवे परंतु आत्मा को तो
 वेद ने सर्वव्यापी कहा है. आत्मा साययव हो तो विकाररूप
 क्रिया का फल होवे. परंतु आत्मा को तो श्रुति ने निरवयव कहा

है, जैसे ही आत्मा में मैल हो तो मैल की निवृत्तीरूप किया का इल होवे परन्तु आत्मा को वेदने निर्मल कहा है, गुण की प्राप्तीरूप किया का इल भी तभी हो सकता है जब गुणादि पदार्थ आत्मा से जुड़े हों। वास्तव में गुणादिक आत्मा में कल्पित होने से आत्मा के स्वरूप ही हैं, जैसे शुक्ती में जो रजत कल्पित होता है, सो शुक्ती का स्वरूप ही है, धसी से आत्मा को वेद ने निर्गुण कहा है। श्रुति इस प्रकार कहती है—

अक्रोदेवः सर्व भूतेषुगूढः सर्वव्यापी सर्व भूतान्तरात्मा ।
कर्माधिक सर्व भूतादि भाससाक्षी येता केवलो निर्गुणश्च॥

हे शिष्य ! प्रथम तेने कहा था कि मैं सुख की प्राप्ती और दुःख की निवृत्ती चाहता हूँ सो तेरा कहना तभी बन सकता है जब आत्मा में दुःख हो और सुख नही हो। वास्तव में आत्मा सदाही सुख रूप है, और सुखादिक आत्मा के गुण और धर्म नही है, किन्तु आत्मा के स्वरूप ही हैं धसी से किसी भी किया की जरूरत नही है। इस रीति से पूर्व में अनेक प्रकार के दृष्टांत, प्रमाण, युक्ति और न्याय कहे हैं सो केवल आत्मा को सुखरूप और स्वयंप्रकाश रूप जानने के वास्ते कहे हैं। जैसा सुखरूप और स्वयंप्रकाश आत्मा तू ही है।

(२) ॥ अथ सत्संग रत्न ॥

शिष्य पूर्व सुने अर्थ को अपना दृढ निश्चय करने के वास्ते पूछता है—हे लगवान, आपने अनेक प्रकार के दृष्टांत और सिद्धांत कहे कि आत्मा को सर्व गुण और धर्मों से रहित सुख रूप कथन किया, धसीसे किया का निषेध किया और स्वयम् प्रकाश होने से सर्व वस्तुओं का भी निषेध किया है, इस रीति से आत्मा को सुख रूप और स्वयंप्रकाश कथन किया सो मैंने लली प्रकार से जाना और आपने कहा कि वह आत्मा तू ही है। इस बात को मैं कैसे निश्चय करूं कि मैं ही सुख रूप और स्वयंप्रकाश हूँ और प्राप्त वस्तु की प्राप्ती में किसी भी किया को

કથન નહીં ક્રિયા, કિન્તુ કહા કિ ઉસકા જ્ઞાન હોના હી પ્રાપ્તી
હૈ. ઈસ પ્રકાર જો આપને કહા ઉસ પર સે મેં જાનના ચાહતા
હું કિ ઉસકા જ્ઞાન હોના કેસે સંભવ હૈ સો આપ કૃપા કરકે
ખતાઈએ.

શ્રી ગુરુઉવાચ-હે શિષ્ય: યહ બાત તો હમને પૂર્વ ભી કહી
થી કિ જબ તૂં સત શાસ્ત્ર ઓર સતસંગ રૂપી દરવાજે મેં દાખિલ
હોગા તબ તેરેકો "અહં બ્રહ્માસ્મિ"એ સી ચોટ લગેગી ઓર વૈસી
દશામેં તૂં બચ્ચે કી તરહ ચિલ્લાવેગા. યહ સુન શિષ્ય બોલા-
હે ભગવન મેરી બુદ્ધિ અલ્પ હૈ. મેં થોડે મેં નહીં સમજ સકતા
હું. આપ વિશેષ પ્રકાર સે સમજાઘએ-સત સંગ કિસ કો કહુતે
હૈ. સતશાસ્ત્ર કૌન સે હૈ. સત સંગ કા કારણ ઓર સ્વરૂપ
કયા હૈ, ઉસકા ફલ કિસ પ્રકાર હોતા હૈ, ઉસકી અવધિ કયા હૈ,
ઓર જિસ શાસ્ત્ર કો આપ સત કહુતે હો ઉસમેં સતપના કયા
હૈ? કયોંકિ આત્મા સે ભિન્ન કોઈ ભી અનાત્મ વસ્તુ સત નહીં
હૈ એસા જો આપને કહાથા ઉસ પર સે ચે શંકાએ ઉત્પન્ન
હુઈ હૈ.

ગુરુ કહુતે હૈ, હે શિષ્ય ! યદપિ આત્મા સે ભિન્ન કોઈ
ભી અનાત્મ વસ્તુ સત્ય નહીં હૈ, તથાપિ સત્યતા દો પ્રકાર કી
હોતી હૈ એક તો વ્યાવહારિક સત્યતા ઓર દૂસરી પારમાર્થિક
સત્યતા પારમાર્થિક સત્યતા તો વેદમેં નહીં પરંતુ વ્યાવહારિક
સત્યતા વેદમેં હૈ જૈસે સત્ય વચન કહુને વાલે કો સત્યવાદી કહુતે
હૈ; તૈસે હી સતવસ્તુ પ્રતિપાદન કરનેવાલા વેદાંત શાસ્ત્ર હૈ. ઈસસે
ઉસકો સત કહા હૈ ઓર વેદાંત શાસ્ત્ર સે ભિન્ન જો પાંચ ન્યાય
વૈષેશિક આદિક શાસ્ત્ર હૈ સો દ્રવ્ય, ગુણ, પ્રમાણ, પ્રેમ, આદિક
અનાત્મ પદાર્થોં કા હી કથન કરતે હૈ ઈસી સે વે સત્ય નહીં
કહુ જાતે હૈ, જૈસે કોઈ છે પુરુષ કિસી મંદિર મેં દર્શન કરને
કો ગયે થે મસમેં પાંચ તો અંધે થે ઓર એક કાણા થા. વે
નીચે લિખે અનુસાર દર્શન કરને લગે.

(૧) અન્ધ, ઠાકુર, ન્યાય.

અંધેને કહ્યા કે પૂજારીજી હમકો નેત્ર સે દિખતા નહીં
 ઈસલિયે ઠાકુરજીકા હમારે હાથ સે સ્પર્શ કરાધએ. તખ પૂજારીજી
 બતા દિયા કે યે ઠાકુરજી હૈ. વે પાંચોં અંધે હાથ લગાય ર
 ઠાકુરજી કા સ્પર્શ કરને લગે. એક કા હાથ અંગુલીકે લગા, દૂસરે
 કા પંજે કે લગા, તીસરે કા પેરોં કે લગા, ચૌથે કા ધડકે લગા
 ઓર પાંચવેં કા સિર કે લગા. ઇસ રીતિ સે જિસકા જહાં
 હાથ લગા થા, ઉસને વૈસાહી ઠાકુરજી કા સ્વરૂપ નિશ્ચય કિયા
 ઓર કાણે ને તો જૈસા ઠાકુરજી કા સ્વરૂપ થા વૈસાહી જાન
 લિયા. જખ વે ઇસ પ્રકાર દર્શન કરકે મંદિર સે બાહર આયે
 તખ આપસ મેં કહને લગે કે ભાઈ ઠાકુરજી કા કેસા સ્વરૂપ થા
 એકને તો અંગુલી જૈસા હી બતાયા, દૂસરેને પંજે જૈસા બતાયા
 તીસરેને ડડે જૈસા બતાયા, ચૌથે ને સારંગી જૈસા બતાયા ઓર
 પાંચવે ને ગોસે જૈસા બતાયા. વે ઇસ પ્રકાર આપસ મેં એક
 દૂસરે કે ચિરુદ્ધ બકને લગે તખ ઉનકે પરસ્પર વિવાદ હો ગયા
 ઉસ સમય જહાં જો કાણા થા ઉનકી બાતેં સુન ર કે હંસતા રહ્યા
 કયોંકિ વે પાંચોં હી વૃથા બકતે થે. એસે હી યે જો પાંચ શાસ્ત્ર
 હૈં સો અંધોં કે સમાન હૈં. જ્યાં જો વેદાંત હૈં સો કાણે કે સમાન
 હૈં કયોંકિ જૈસે કાણે કો ઠાકુરજી કા યથાર્થ જ્ઞાન થા, ઓર વે
 અંધે કિસી એક અંગ કો હી ઠાકુરજી કહતે થે. તેસે હી યે પાંચોં
 શાસ્ત્ર હૈં, કોઈ તો અન્નમય કોષ જો યહ સ્થૂન શરીર હૈં ઉસી કો
 આત્મા કહતે હૈં, ઓર કોઈ પ્રાણમય કો, કોઈ મનોમય કો, કોઈ
 જ્ઞાનમય કો ઓર કોઈ આનન્દમય કોષ કો હી આત્મા કહતે હૈં.

ઇસ પ્રકાર ત્રીન શરીર ઓર ઉનમેં જો પંચકોષ હૈં વે કિસી
 એક અનાત્મ્ય પદાર્થ મેં આત્મબુદ્ધિ કરકે નાના પ્રકારકે વિવાદોં
 સે ઉન અંધો કી તરહ કલેશ કો હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં, જૈસે કાણા
 ઠાકુરજી કે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાનતા હૈં સો ઉન અંધો કી બાત
 કો સુનકે હંસતા હૈં વૈસે હી અન્નમય આદિ કોષ કો આત્મા
 માનકર અન્યથા બકતે હુવે સુન કે હંસી આતી હૈં, ઓર જૈસા
 આત્મા કા સ્વરૂપ હૈં વૈસા હી સતચિત આનન્દ સ્વરૂપ સે જો

शास्त्र कथन करता है वही उसमें सतपना है। इसी प्रकार जो पुरुष सत वचन बोलने वाला होता है उसकी आत्मा सुनके संशय दूर हो जाता है। तैसे ही आत्म वस्तु में जो कुछ भी संशय हो वह वेदान्त शास्त्र के आरम्भार श्रवण करने से निवृत्त हो जाता है, और जो नित्य प्राप्त आत्मा है उसकी स्मृति हो जाती है उसी को ज्ञात कहते हैं, इसीसे वेदान्त शास्त्र को सत कहा है। परन्तु उसको काणा भी कहते हैं क्योंकि केवल वेदान्त के पढ़ने से परोक्ष ज्ञान होता है परन्तु जब गुरुमुखा से वेदान्त के अर्थ का श्रवण होता है तब दोनों से ही आत्मा का अपरोक्ष ज्ञान हो सकता है। इस प्रकार दूसरा नेत्र गुरु है, और जो तब यह आत्मा कहे कि गुरु किसको कहते हैं तो सुन—

॥ दोहा ॥

वेद शास्त्र में कुशल है आत्म ब्रह्मस्वरूप ।

आम्हि तले आनी नही, यह होय लुपका लुप ॥

एक अभ्युदित आत्मा, करे यही उपदेश ।

देश काल अरु वस्तु का जमें नाहीं देश ॥

अर्थ स्पष्ट है परन्तु भाव यह है कि वेद शास्त्र के जनने में चतुर हो और आत्मा को ब्रह्मरूप करके जननेवाला और निस्पृही हो, याहो कोई राजाओं का भी राजा हो तो भी उसे नेत्र के नीचे नहीं लावे, जिज्ञासु जनों को यही उपदेश करे कि तू येतन आत्मा एक अभ्युदित है और देश काल वस्तु के परिच्छेदसे रहित है, इस प्रकार जिज्ञासु पुरुषों की बुद्धि में नाना प्रकार के जो भेद रूपा पक्षी बैठे हों उनको ज्ञान रूपी ताली बजा के तत्काल उड़ा देवे और सतमार्ग में चलावे, सो सद्गुरु कहलाता है। ऐसे सत पुरुषों का संग और सत शास्त्र का विचार जो नित्य प्रति करते हैं उनका कल्याण होने में क्या संशय है ! वे तो सदा ही कल्याण रूप हैं, आप स्वतः संसार समुद्र से तारते हैं और दूसरों को भी तार देते हैं जैसे नौका तैरती है और अन्य को भी तार देती है। ऐसे सतशास्त्र का विचार और महा पुरुषों के संग ही का नाम सतसंग है। सतसंग ही के

કારણ આદિક કે સંબંધ મેં જો પ્રશ્ન ક્રિયા હૈ ઉસકા ઉત્તર તૂં
 અથ શ્રવણ કર. જળ મનુષ્ય કે કિસી પૂર્વ જન્મ કે શુભ કર્મ
 ભોગ દેને કે અર્થ સન્મુખ હોતે હૈ. તથ ઉસકે અન્તઃકરણ મેં
 શુભ વાસના ઉત્પન્ન હોતો હૈ. ઉસ વાસના કે અનુસાર જો પુરુ-
 થાર્થ ક્રિયા જાતા હૈ વહી પુરુષાર્થ સતસંગ કા કારણ હોતા હૈ,
 સતપુરુષોં કે વચનોં મેં ચિત્ત કી સ્થિતી હોના સતસંગ કા સ્વ-
 રૂપ હૈ, ઓર તત્ કથનં તત્ ચિન્તનં તત્ પરસ્પર બોધનં અર્થાત
 વારંવાર ઉસી સત વસ્તુ કા કથન કરના, ઉસીકા ચિન્તન કરના
 ઓર ઉસી કે પરસ્પર વિચાર કરકે અધિકાધિક જાનના યહી
 સતસંગ કા સ્વરૂપ હૈ. નિષ્કામ કર્મ સે લેકર મોક્ષ પર્યંત જો
 સાધન સાધ્ય પદાર્થ પ્રાપ્ત હોતે હૈ સો સતસંગ કા ફલ હૈ,
 ઓર સતસંગ કી અવધી તો કુછ હૈ નહીં, પરંતુ જખતક કંઠમેં
 પ્રાણ રહે વહાં તક અથવા વિદેહ મોક્ષ પર્યંત સતસંગ અવશ્ય
 હી કરના ચાહિયે ફિર આપહી અવધી હો જાયેગી, યહી
 ઉસકી અવધી હૈ જખ ઇસ પ્રકાર કારણકો સ્વરૂપ કો ઓર ઉસકે
 ફલ તથા અવધી કો જાન કર નિત્ય પ્રતી સતસંગ કરેગા તથ
 દીર્ઘકાલ કે અભ્યાસ સે ઉસ સત વસ્તુ કા જ્ઞાન તેરે કો હોગા,
 ક્યોંકિ સત પુરુષોં મેં ઓર સતશાસ્ત્ર મેં યહી સતપના હૈ કિ
 અપને સહિત જિતના સ્થૂંડ ઓર સૂઢમ પસારા હૈ ઉસકો મિથ્યા
 કરકે જનાતે હૈ ઓર જો ચેતન આત્મા હૈ ઉસે સતરૂપ કરકે
 કથન કરતે હૈ, યહુ સત્યવાદીપના ઉનમેં હોને સે હી વે સત કહે
 જાતે હૈ, સતશાસ્ત્ર કે અતિરિક્ત અન્ય ગ્રન્થ જો વસ્તુ કા યથાર્થ
 કથન નહીં કરતે હૈ, સો સભી અસત કહે જાતે હૈ, તૈસે હી જો
 સત કા ઉપદેશ કરને વાલા ગુરુ હૈ ઉસસે ભિન્ન જો કંઠી માલા
 કે બાંધનેવાલે ઓર કાન મેં કુંક મારને તથા મંત્ર યંત્રકે સુનાને-
 વાલે ઓર ચોટી કાટકે ગેરુએ કપડે રંગને આદિ નાના પ્રકાર
 કે ચિન્હોવાલે હૈ, સો સખ અસત ગુરુ કહે જાતે હૈ. ઉનકા
 સંગ કરને સે જીવ ઇસ સંસાર સમુદ્ર મેં તિર નહીં સકતે ક્યોંકિ
 કાઠકે સંગ મેં લોહા તિરે પરંતુ લોહ કે સંગ લોહા નહીં તિરતા
 હૈ, ઇસી પ્રકાર સે વે તો આપહી કામ ક્રોધ લોભ મોહ રૂપ
 લોહ સમાન ભાર કો પ્રાપ્ત હો રહે હૈ, દૂસરે કો કૈસે તિરાવેગે.

ઇસસે જો પુરુષ એસે ગુરુ કા સંગ કરેગા સો

કુટા કાન રૂડક થૂક ન્યાય

કો કૈસે પ્રાપ્ત હોગા સો દિખાતે હૈં. એક ગૃહસ્થી એસા થા કિ અપને હાથોં સે કુછ કામ ઉસને નહીં કિયા ઓર ઉસકે ભાઈ પિતા આદિ જો કમાઈ કરકે ઉસકા પાલન પોષણ કરતે થે સો દૈવયોગ સે હૈંજે કી બિમારી ચલને સે સારે મર ગયે. તખ ઉસ પુરુષ ને અપને મન મેં બિચાર કિયા કિ કમાઈ તો હોવે નહીં, ઓર ખાને કો દોનોં વક્ત ચાહિએ, ઇસ લિએ કોઈ એસા હુનર ધંધા કરના ચાહિએ કિ જિસસે તકલીફ નહીં હોવે, ઓર ખાને પીને કા-કામ ચલ જાય. ઉસને સખ કામોં કો અપને મન મેં વિચારા તો સભી મેં ઉસકો તકલીફ દિખાઈ દી. પરંતુ માંગના ઉસકો સુગમ માલૂમ હુવા. તખ બાબા કા સ્વાંગ બના કર નજદીક કે ગ્રામો મેં જા કે માંગ લાને લગા. ફિર લોગોં મેં જાન પહિચાન ભી હો ગઈ તખ તો ગંડા ગોલી ભી કરને લગા, ઓર ચેલી ચેલા ભી બહુત સે હો ગયે. કુછ ચેલે કહને લગે કિ મહારાજ આપ કાહે કો તકલીફ ઉઠાતે હો. વહીં એક વહુત અચ્છા મકાન બનાવા દિયા ઓર મહારાજ ઉસમેં રહને લગે. ફિર ઓર ભી ચેલે બહુત સે હોગયે ઓર ખૂબહી આનંદ કે તાર બાજને લગે. કોઈ તો પુત્ર કી ઇચ્છા કરકે ઉનકી સેવા કરે ઓર કોઈ ધન કી કામના કરકે સેવા કરે. ઇસ પ્રકાર જખ ગાડા ગુડકને લગાં તખ ઉન ચેલોં મેં કોઈ પુરુષ પરમાર્થ કે ભી જિજ્ઞાસુ થે, ઉનહોંને મહારાજ સે પૂછા કિ હે ભગવન ઇંસ દુખ રૂપ સંસાર સે યહ જીવ કીસ પ્રકાર મુક્ત હો સકતા હૈ, યહ ખાત આપ કૃપા કરકે હમારે કો બતા-ધયે ! તખ વે કહને લગે કિ ભાઈ અભી તો તુમહારી જવાન ઉમર હૈ, બચે બચિયોં કા વિવાહ કરો, ફિર તુમકો બતા દેગે. અભી કયા જલદી હૈ. તખ ઉન ચેલા ને કાલ પાકે ફિર પૂછા કિ મહારાજ અબતો કુછ બતાઓ, ઉમર તો બીતી જતી હૈ, તખ બાબા ને કહા અરે, તુમ એસી જલદી કાહે કો કરતે હો, બેટોં

કે બહુ આનેદા ઓર પોતે પોતી હોને દો. ઇસ પ્રકાર બો લખોડ
શાખવાલી બાતે કરતા રહ્યા. અન્ત મેં દૈવયોગ સે ઉસ બાબા
કા શરીર શાન્ત હોગયા. તખ કુત્તે કી ચાની પ્રાપ્ત હુવા. ઉસ
કે જિજ્ઞાસુ ચેલોં કો ગુરુસે મિલને કી કામના થી. વે ભી મર
કે કુત્તે હી હુવે. ગુરુજી પહિલે હી સે હાડ ચાખતે ફિરતે થે.
વે ચેલે ગુરુજી કો મિલ કર કહુને લગે કિ મહારાજ આપ ઓર
કોન ગાંત કો પ્રાપ્ત હુવે હૈં. અબતો કુછ બતાઓ. તખ વહ
કાન હિલાકે કહતા હૈ અરે મૈને તો ખાને પીને કે લિયે સ્વાંગ
બનાયા થા ઓર મૈં કુછ ભી નહીં જાનતા થા. તખ વે ચેલે
કહુને લગે કિ ત્રિકકાર હો તેરેકો ક્યોંકિ તૂં આપ ભી ડૂબા ઓર
હુમેં ભી ડુબાયા. ઇસી પર કહતે હૈં—

દોહા—ઝુઠે ગુરુ કે આસરે, ડૂબિ ગયે બહુ જીવી ।
સચ્ચા સતગુરુ સેધયે, જસે પાવે પીવ ॥
ઝુઠે ગુરુવા મરિ ગયે; હો ગયે ભૂત સમાન ।
સચ્ચૈ ગુરુ સે પાઇયે, સત વસ્તુ કા જ્ઞાન ।

જખ ઇસ પ્રકાર સત ઓર સત શાસ્ત્ર કા વિચાર ઓર
મહા પુરુષોં કા સંગ કેઈ કરતા હૈ તભી વહ જીવ કદ્યાણુ કા
ભાગી હોતા હૈ,

ચૌપાઈ

જે તિરિ ગયે તિરંગે જેતે
અખ તિરતે હૈ કહું અરુ કેતે
સો સાધુ સંગતિ સે જાનો
દુજા ઓર ઉપાય ન માનો.

ઇસમેં બહુત લિખને કી જરૂરત નહીં હૈ. જિસ કિસી
ઘર કી બુદ્ધિ હોતી હૈ વહ થોડે હી મે સમજ લેતા હૈ ઓ
ઉસ કે સમજને કે લિયે એક—

कुंडलिया, लिखते हैं

सत संगति भलिमा कही लीनै यही प्रसाद ।
 हम कहुया तुम सुन्या इस को रખना याद ॥
 इसको रખना याद, पाद काहु से न कीजे ।
 ने कोध साधू भित्ते, संग वाहु का कीजे ॥
 दोली लंपट लालची, धनसे रहना दूर ।
 गुमानन्द निज रूप लभि, सदा ऐक लरपूर ॥

हे शिष्य तेरे को कर्ता बुद्धि है. इसी से तुझे आत्मा में कर्तव्य आंति हो रही है, जब तू और सर्व किया का त्याग करके एक सतसंग को ही करेगा तो उस से तेरी कर्तापने की आंति भिन्न नयगी, और आत्मा को अन्नरूप करके अपने आपही नानेगा कि वह कर्ता किया कर्म से रहित है.

॥ धृति श्रीसतसंग रत्न समाप्त ॥

[३]

अथ निष्काम रत्न

कर्म कहे हैं वेद में, सुन तिनका विस्तार ।
 एक निषिद्ध दून विधि, सो कहिये चार प्रकार ।
 काम्य प्रायश्चित्त नित निमित्त, करो कामका त्याग
 नित्त निमित्तक कीजिये, इलका तजि के राग ॥

अर्थ यह है कि वेद में जो कर्म का कथन किया है उसका विस्तार यह है—एक तो निषिद्ध कर्म कहाता है जिसको कभी नहीं करना चाहिये क्योंकि वह वेद विरुद्ध है, यदि कोई ऐसा पूछे कि निषिद्ध कर्म कौन से हैं तो सुन-

परस्त्रीगमन करना, जुवा खेलना, मदिरा भांस पाना, वेश्या का संग करना, चोरी करना जिन जूझके किसी की व्यवस्था करना, ऊठ खेलना, कमती तोलना, धृत्यादि सभ निषिद्ध ही हैं, इस से ये कर्म कदापि नहीं करना चाहिये.

दूसरे विधि कर्म है सो चार प्रकार के हैं (१) काम्य (२) प्रायश्चित्त, (३) नित्य, और (४) नैमित्तिक. जिज्ञासु पुरुष काम्य कर्म और निषिद्ध का त्याग करके नित्य और नैमित्तिक कर्म को इस की धृष्टा से रहित होकर करे, तब उसे ऐसे कर्म से नित्य सुख की प्राप्ति होती है, और जो इस की धृष्टा रण कर करता है उसे अनित्यही इस मिलता है. इसी पर तेरे को अधिक

राज मन्दिर मण्डूर न्याय

सुनाते हैं, सो अपने मन को सावधान करके सुन. किसी राजा का एक भवान् बनता था उसमें बहुतसे मण्डूर लगे हुवे थे. उन मण्डूरोंमें एक ऐसा मण्डूर था जो कामतो कर दे और मण्डूरी चुकाते समय नहीं ले, फिर जन्म गिनती होवे तब एक मनुष्य जन्म निकले और जन्म मण्डूरी चुकावे तब कमती होवे. इस प्रकार एक मण्डूरकी मण्डूरी जन्म जाती थी. जो मण्डूरी चुकानेवाला कामदार था सो कहने लगा अरे मण्डूरों ! यह एक मनुष्य की मण्डूरी जन्म जाती है और गिनती पूरी होती है, वह केन मण्डूर है सो मण्डूरी नहीं लेता है. तब फिर जिन मण्डूरों के पास में यह रहता था वे कहने लगे कि हुजूर वो यह है, तब कामदार बोला अरे तुम मण्डूरी क्यों नहीं लेते. तब वह कहने लगा कि काम तो हमारा ही है मण्डूरी किससे लेवे, क्योंकि राजा तो सारी प्रजा का पिता है और प्रजा पुत्र के समान होती है, फिर पुत्र पिता से क्या मण्डूरी लेवे. ऐसी बातें उस मण्डूर की सुन के कामदार ने वह उकीकत राजा की क्यलरी में जाकर कही, और आगिर जन्म ये सभ राजा के कान तक पहुँची तो राजाने कहा उस मण्डूर को हमारे पास लाओ. इस परसे कामदास उस मण्डूर को राजा के पास ले गया. तब राजा ने पूछा अरे तुम मण्डूरी क्यों नहीं

લેતે. ઉસને જૈસા કામદાર સે કહા થા વૈસા હી રાજા કો ભી ઉત્તર દિયા. ઉસકી ખાત મુન કે રાજા ખડા પ્રસન્ન હુવા ઓર ખોલા કિ તુમ હમારે પાસ રહા કરો, ઉસને કહા હુજર ખહુત અમ્છા. ફિર રાજા કે પાસ રહને લગા, ઉસકા સમ્યા વ્યવહાર ઓર નિષ્કામતા દેખ કે કુછ કાલ પાકર જ્યાદે કયા કહેં ઉસકો હી રાજા ખના દિયા ઓર રાજા ખુદ ઠાકુરજી કે ભજન કરને કે વાસ્તે વન કો ચલા ગયા. યહ તો દષ્ટાંત હૈ. દષ્ટાંત યહ હૈ કિ રાજા કો નાઈ તો ઈશ્વર હૈ ઓર મજદૂર કી નાઈ યહ જીવ હૈ જિસકે અનેક પ્રકાર કે શુભ કર્મ કા ફલ હી મજદૂરી હૈ ઓર એસે ફલ કી કામના કા ત્યાગ હી નિષ્કામતા હૈ, જૈસે રાજા ને ઉસ મજદૂર કો અપને પાસ હી રખ લિયા થા, તૈસે હી ઈશ્વર નિષ્કામ કર્મ કરનેવાલે ભક્ત કે વશ હોકર વહ આપહી ઉસકે પાસ રહતા હૈ ઓર જિસ પ્રકાર રાજા ને સખ રાજા દે દિયા થા તૈસે હી વહ નિષ્કામી ભક્ત અપને આપકો હી ઈશ્વર કે અર્પણ કર દેતા હૈ ઈસ પ્રકાર નિષ્કામ કર્મ મહાન નિત્ય સુખ રૂપી ફલ હૈ જો સર્વ પાપોંકા નાશ કરનેવાલા હૈ, યહ ખાત કહ શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ-હે ભગવાન ! આપ કહતે હો કિ નિષ્કામ કર્મ સર્વ પાપોં કા નાશ કરતા હૈ સો યહ કહના આપકા ખનતા નહીં કયોંકિ જો જ્ઞાનવાન હૈં વે ભી દુખ ભોગતે હુવે દેખને મેં આતે હૈ ઓર જ્ઞાન સે પૂર્વ ઉન્હોંને નિષ્કામ કર્મ કિયે તો ફિર ઉનકો દુખ નહીં હોના ચાહિયે. એસી શંકા હોને પર ગુરુ કહતે હૈં કિ નિષ્કામ કર્મ કરને સે પાપોં કી સર્વથા નિવ્રત્તી નહીં હોતી હૈ. જૈસે બીજ સે દો અંકુર નિકલતે હૈં એક તો નીચે કો જતા હૈ ઓર દૂસરા ઉપર કો આતા હૈ, નીચે કે અંકુર મેં પુરુષાર્થ નહીં ચલતા હૈ. ઉપર કે હી મેં પુરુષાર્થ ચલતા હૈ. તૈસે હી કર્મરૂપી બીજ સે ભી દો અંકુર નિકલતે હૈં, એક તો વાસના ઓર દૂસરા અદ્વૈત. અદ્વૈતસે સુખ દુખકા જો ભોગ હોતા હૈ સો દુર નહીં હો સકતા, પરંતુ વાસના રૂપી અંકુર ઉપર કે અંકુર કી નાઈ ફિર જતા હૈ, ઓર સર્વથા નાશ તો ઉસકા ભી નહીં હોતા હૈ. પરંતુ વિરોધી શુભ વાસના સે અશુભ વાસના

જો જન્માન્તર કે મલિન કર્મ સે હોતી હૈ સો પલટ કે શુભ હો
જાતી હૈ, ઐસા અવસર પ્રાપ્ત હોને પર વિવેક વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન
હો કે શ્રવણ મેં પ્રવૃત્તી હો જાતી હૈ. શ્રવણ સે જ્ઞાન હોકર
સર્વ સંચિત આગામી કર્મોં કા નાશ નહીં હો જાતા હૈ, પ્રારબ્ધ
કર્મ કર્મોં ભોગને સે નાશ હોતા હૈ, ઇસ રીતિ સે સર્વ કર્મોં
કા નાશ નિષ્કામ કર્મોં સે કહા હૈ. સો વાસના કે પલટ જાને દારાહી
સંભવ હૈ. સાક્ષાત નિષ્કામ કર્મ સે સર્વ કર્મોં કા નાશ નહીં
હોતા હૈ. ઇસી સે જ્ઞાનવાન કો ભી સુખ દુખ હોતે હૈ ઇસ
ખાત કો ભક્તી ભાંતિ સમજ કર શિષ્ય પૂછતા હૈ.

ભગવન ! આપને જો યહ નિષ્કામ કર્મ રત્ન કહા હૈ સો
ઇસ મેં રત્નપના ક્યા હૈ ઔર નિષ્કામતા ક્યા હૈ, ઔર ઇસકા
કારણ તથા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ઔર ફલ તથા અવધી ક્યા હૈ, યહ
સખ આપ હમારે કો સમજાય કે કહિયે.

ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય. શ્રુતિ સ્મૃતિ આદિ મેં અનેક પ્રકાર
કે કર્મોં કા કથન કિયા હૈ સો સખ કર્મોં કા સાર ખીંચકે મહાત્મા
પુરૂષોં ને નિષ્કામ કર્મ કે રૂપ મેં જિજ્ઞાસુ પુરૂષોં કે વાસ્તે રખા
હૈ યહી ઉસમેં રત્નપના હૈ ઔર ઇસ લોક તથા પરલોક કે પદાર્થોં
કી કામના ઇસમેં નહીં હૈ યહી ઇસ મેં નિષ્કામપના હૈ. શાસ્ત્રો
મેં સકામ કર્મ કે ફલ કો અનિત્ય કહા હૈ ઔર નિષ્કામ કર્મ
કે ફલ કો નિત્ય કહા હૈ, જૈસે ગીતા મેં ભગવાન કહતે હૈ—

શ્લોક ॥ નેહાભિક્ષમ નાશોસ્તિ પ્રત્યવાયો ન વિદ્યતે ।

સ્વલપમપ્યસ્ય ધર્મસ્ય ત્રાયતે મહતો ભયાત ॥

ઇસ પ્રકાર ઐસે શાસ્ત્ર કા બારંબાર શ્રવણ કરતા હી
નિષ્કામ કર્મ કા કારણ હૈ, ઔર કિતી ભી લૌકિક, વૈદિક આદિ
પદાર્થોં કી કામના નહીં કિન્તુ કેવલ અપને કલ્યાન કી કામના
હી ઉસકા સ્વરૂપ હૈ, ઔર અશુભ વાસના કી નિવૃત્તિ હોના
ઉસકા ફલ હૈ. અશુભ વાસના નિવૃત્ત નહીં હો તખતક નિષ્કામ
કર્મ કરે, ઔર જખ અશુભ વાસના અપને અંતઃકરણ મેં નહીં
રહે તખતક નહીં કરે, યહી ઉસકી અવધી હૈ. ફિર મલદોષ નિવૃત્ત

હો જાતા હૈ ઇસી મલદોષ કો અશુભ વાસના કહતે હૈ. સો નિષ્કામ કર્મ સે દૂર હોની હૈ.

ભગવાન ને સખ કર્મો સે ઓર નિષ્કામ કર્મ હી કો શ્રેષ્ઠ કહા હૈ. ઓર ઉસકે કરનેવાલા જો પુરુષ હૈ ઉસકો સર્વ તપસ્વી જ્ઞાનીને કર્મ સે ભી શ્રેષ્ઠ કહા હૈ. ચાંદ્રાયન કૃત્તિક આદિક ઉપાસના કરનેવાલે કો તપસ્વી ઓર શાસ્ત્ર કે પદ પદાર્થો કે જાનનેવાલે કો જ્ઞાની ઓર સકામ કર્મ કરનેવાલે કો કર્મી કહતે હૈ. ઇન સે અપરોક્ષ આત્મજ્ઞાની ઉંચા હૈ, ઇસ પ્રકાર નિષ્કામ કર્મ કરનેવાલે કો ભગવાન ને સખ સે ઉંચા કહા હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી નિષ્કામ કર્મ રત સમાપ્તમ ॥

[૪]

અથ ભક્તિરત્ન

દોહા—ભક્તિ નામ યક કહત હૈ, તિસકે સુન અખ ભેદ ।

નોંધા, પ્રેમા, અરુ પરા, યોં કહત શાસ્ત્ર વેદ ॥

વાસ્તવ મેં નોંધા, પ્રેમા, પરા ભેદ સે ભક્તિ ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ. ઇસ પ્રકાર શાસ્ત્ર મેં ભક્તિ કે ત્રીન ભેદ કહે હૈ.

દોહા—નોંધા નૌ પ્રકાર સે, ઇશ્વર મેં ચિત લાય ।

યાદી સે ભક્તી કહી; ભય સખગત હો જાય ॥

અર્થ : નોંધા કહિયે નૌ પ્રકાર સે ઇશ્વર મેં અપના મન લગાને સે નાના પ્રકાર કે જો જગત કે ભય હૈ સો સારે દૂર હો જાતે હૈ; ઇસી સે ઇસે નોંધા ભક્તિ કહતે હૈ.

શિષ્ય પૂછતા હૈ હે ભગવાન, વહ નૌ પ્રકાર કૌન સે હૈ જિનસે ઇશ્વર મેં મન લગે સો આપ કૃપાકર કે બતાઈયે. ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય, જિસ કથા મેં પરમેશ્વર કા કથન હોતા હો ઉસકો ચિત્ત લગા કર શ્રવણ કરના, ઇસકો શ્રવણભક્તિ કહતે

हैं ॥१॥ धृतिर के जिन विशेषणों को श्रवण किया हो उन विशेषणों का सिद्ध भिन्न कथन करना कि धृतिर कैसा है, सत्यकाम है, सत्य संकल्प है, दयालू है, अंतर्यामी है, ओष्ठ है, परमानन्द स्वरूप है, व्यापक है, अजन्मा है, अविनाशी है, और असा श्रितधन देव है कि जिसका नाश कभी नहीं होता है, धंसके कीर्तन कहते हैं ॥२॥ जो धृतिर के विशेषण पूर्व कथन किये हैं उनको वारंवार याद करना ही उसकी नामस्मरण लक्ष्ति है ॥३॥ जो पाद सेवन रूपी लक्ष्ति कही है सो प्रत्यक्ष में तो धृतिर के पादों का सेवन जनता नहीं क्योंकि धृतिर में पराक्षता धर्म है परंतु यत्न और अयत्न ये दो प्रकार के परमेश्वर के स्वरूप कहे हैं, धस में महात्मा तो यत्नरूप परमेश्वर का रूप है, और भूर्ति आदिक अयत्नरूप है. धनके पैरों का पूजन करना ही परमेश्वर की पाद सेवन लक्ष्ति कही जाती है ॥४॥ दो प्रकार का परमेश्वर का स्वरूप कहा है. उन दोनों का श्रद्धापूर्वक नाना प्रकार के धूप दीप पुष्पमाला चन्दनादिका जो लेपन करते हैं उसी को अर्थन लक्ष्ति कहते हैं ॥५॥ उनके चरणों में प्रेम पूर्वक श्रद्धा लक्ष्ति से नमस्कार करने को चन्दना लक्ष्ति कहते हैं ॥६॥ परमेश्वर में धस प्रकार दास भाव होना कि परमेश्वर ही मेरे कर्म के फल को देनेवाला है, और मैं उस का दास हूँ. धसी को दास भाव लक्ष्ति कहते हैं ॥७॥ जैसे ग्वालोंने अपना सभा रूप जन के परमेश्वर को लज्ज था उसी प्रकार परमेश्वर को अपना सभा रूप जन के हृदय वस्तु याद रखने ही को सभाभाव लक्ष्ति कहते हैं ॥८॥ और निज के शरीर से आदि लेकर स्त्री, पुत्र, धन, धत्यादिको अपने नहीं जाने किन्तु धन सभ को परमेश्वर के ही जाने, धसी को आत्मनिवेदन लक्ष्ति कहते हैं ॥९॥

धस प्रकार नौधा लक्ष्ति का विवेचन है. अथ प्रेमा लक्ष्ति के सम्बन्ध में कहते हैं.

दोहा—प्रेमा प्रीति हरि से जड़ी, और न कष्ट सुहाय ।

लक्ष्ति भाव्या जगत से, मन दर्शन में लाय ॥

જહાં પ્રેમ તહાં નેમ નહિં, તહાં ન વિધિ વ્યવહાર ।

પ્રેમ મગન જખ મન ભયે, કૌન ગિનૈ તિથિ વાર ॥

અર્થ—યહુ હૈ કિ જિસ કાલ મેં નૌથા ભક્તિ કે દઠ અભ્યાસ હોને સે ફિર પ્રેમાભક્તિ હોતી હૈ, તખ સખ પદાર્થો સે પ્રીતિ છૂટ કર એક પરમેશ્વર મેં હી પ્રેમ હોજતા હૈ, ઇસી સે પ્રેમા ભક્તિ કહતે હૈં. ભક્તિ થોં કહા હૈ કિ મન જગત કી તરફ સે તો ભગતા હૈ ઓર પરમેશ્વર કી ઓર જતા હૈ. જૈસે વિષયા-સક્ત પુરુષ કા મન પરમેશ્વર મેં લગાને સે ભી નહીં લગતા હૈ, ઓર વિષય ભોગોં કી તરફ સ્વતઃ હી ચલા જતા હૈ, તૈસે હી પ્રેમી ભક્ત કા મન પરમેશ્વર કી ઓર તો સ્વતઃ હી જતા હૈ ઓર સંસાર કે વિષય ભોગોં મેં લગાને સે ભી નહીં લગતા હૈ. જલ જૈસે નીચે કી ઓર જાકે ઠહરતા હૈ તૈસે હી ભક્ત કા મન એક પરમાત્મા મેં હી જાકર ઠહરતા હૈ કયોંકિ ઉસ કે અન્તઃકરણ સે જો વૃત્તી ઉઠતી હૈ સો પરમેશ્વર આકાર હી હોતી હૈ, ઓર જો કુછ દેખતા હૈ સો સખ પમેશ્વર કા સ્વરૂપહી ઉસકો ભાસતા હૈ.

॥ શેર ॥

નગર મેં બાગ મેં બન મેં કુલ આલમ નિહારા હૈ ।

જિંધર દેખું ઉંધર ખ્યારે સભી જલવા તુમહારા હૈ ॥

ઇસી પર એક તેરે કો—

લૈલા મજનૂં ન્યાય

સુનાતે હૈં, સો યહુ હૈ કિ દિલ્લી કે કિસી બાદશાહ કી લૈલી નામ કી એક લડકી થી, ઓર લાહોર કે બાદશાહ કા મજનૂં નામ કા એક લડકા થા. જખ લૈલી ને મજનૂં કી તસવીર દેખી તખ પરસ્પર ઉતકા સ્નેહ બઢ ગયા. દિલ્લી કે બાદશાહ ને લૈલી કે નિકાહ કી તયારી કી તખ લૈલી ને કહા કિ મેં તો મજનૂં સે નિકાહ કરુંગી, ઓર કિસી કે સાથ નહીં કરુંગી. બાદશાહ ને હુકમ દિયા કિ દેશ દેશાંતરોં મેં બખર કરવા દો કિ અમુક રોજ લૈલી કા નિકાહ હોગા જો કોઈ મજનૂં હો સો આવે. તખ દેશ

દેશાંતરે મેં ઢંઢારા ફિરગયા. બહુત સે મજનૂં બન ર કર આનંદ,
 ઓર વહ સચ્ચા મજનૂં ભી આયા. બાદશાહ ને સારે દિલ્લી
 શહર મેં વહ ઢંઢારા ફિરવા દિયા કિ જિસકી દુકાન સે મજનૂં જો
 કુછ ભી લે સો દે દેના. હામ સરકાર સે મિલ જાયે, તમ દેશ-
 દેશાંતરેસે જો અનેક મજનૂં બન ર કે આવે થે, સો દુકાનરમે
 અનેક પ્રકાર કી ચીજે લેતે રહે ઓર ખૂબ માલ ઉઠાને લગ.
 વહ જો સચ્ચા મજનૂં થા સો તો દિલ્લી સે ત્રીન મીલ દૂર જમુના
 કિનારે પર રહતા થા. જખ નિઝાહ કા દિન આગયા, તમ સારે
 શહર મેં ખખર કરવાદી કિ આજ લૌલી કા નિગાહ હોવા. જો
 કોઈ મજનૂં હો સો આવે ઓર જો નિઝાહ કા મકાન મુકરર કિયા
 થા ઉસમેં લૌલી કો સામને ખિઠાદિયા ઓર બીચ મેં લોહે કીતવી
 ગરમ કરવા દી. મજનૂં આને લગે ઓર તપતી હુઈ તયો કો દેખકે
 ઉલટ ફિરને લગે, જો ઉલટ ફિરકર ચત્રોઉનકો પીજરા પૌલ મેં રોક
 દિયે. વહાં વે વનાવટી મજનૂં ચક્કી ફેરને લગે, અન્ત મેં જો સચ્ચા
 મજનૂં થા સો ભી આયા ઓર ઉસને લૌલી કો દેખા તમ ઉસકી
 વૃત્તિ લૌલી મેં હી લગ ગઈ, ઓર જો વહ તવી ગરમ હો રહી થી
 ઉસ કી તરફ ઉસને દેખા હી નહીં ક્યોંકિ ઉસકી વૃત્તી તો લૌલી
 મેં હી લગ રહી થી. લૌલી કે સિવાય ઉસકો દૂસરા કુછ ભી નહીં
 દીખતા થા. ઉસ સચ્ચે મજનૂં સે લૌલી કા નિઝાહ હુવા ઓર ઝૂં
 મજનૂં ચક્કી ફેર ર કરે દાના દલતે રહે, વહ તો દૃષ્ટાંત હૈ. દૃષ્ટાંત-
 વહ હૈ કિ બાદશાહ કી નાઈ પરમેશ્વર હૈ ઓર લૌલી કી નાઈ
 ભકિત હૈ ઓર મજનૂં કી નાઈ પ્રેમી ભકત હૈ, જૈસે સચ્ચે મજનૂં
 કો લૌલી મિલી હૈ તૈસે હી સચ્ચે પ્રેમી ભકત હી કો લૌલી રૂપી
 ભકિત પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઓર જસે ઝૂં મજનૂં ચક્કી પીસતે થે
 તૈસે હી સકામી ઝૂં ભકત જન્મ મરણ રૂપ ચક્કી પીસતે થે
 છૂટે. ઇસ સંસાર રૂપી કેદખાને મેં હી પડે રહતે હૈ. ઇસી પ્રકાર
 જો નિષ્કામ પ્રેમભકિત કો કરતે હૈ સો હી ઇસ જન્મ મરણ ચક્ર
 સે છૂટે હૈ. ઇસી કા નામ પ્રેમાભકિત હૈ. અખ પરભકિત
 કો દિખાતે હૈ—

॥ દોહા ॥

પરા ન પારાવાર દે, વ્યાપક એક સ્વરૂપ ।

ભક્તી હી સે પાઈયે, એસા રૂપ અનૂપ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ જિસ સે પરે કોઈ પદાર્થ નહીં હૈ સો હી સર્વ પદાર્થો કી અવધી રૂપ હૈ, ઓર સર્વ સે સૂક્ષ્મ હૈ. યહ પરા શબ્દ કા અર્થ હૈ, ઓર એસા વ્યાપક, ઉપમા રહિત, એક સ્વરૂપ, ભક્તી સે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, યહી પરાભક્તીકા તાત્પર્ય હૈ, સો એસા વ્યાપક ઉપમા સે રહિત એક રૂપ એક બ્રહ્મહી કહા જતા હૈ.

શ્રુતી—ઇન્દ્રિયેભ્ય પરાહર્થા અર્થેભ્યશ્ચ પરં મનઃ ।

મનસ્તો પરા બુદ્ધિ બુદ્ધરે આત્મ મહાન પરઃ ॥

મહતો પર મવિક્ત મવિક્તાત પુરુષઃ પર ।

પુરુષાન પરે કિંચિત સઃ કાષ્ટાસા પરાગતિ ॥

અર્થ યહ હર્થા કહિયે શબ્દ, સ્પર્શ, રૂપ, રસ, ગંધ, યે જો વિષય હૈ, સો પર કહિયે. ઇન્દ્રિયોં સે સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ ઓર ઇન વિષયોં સે મન સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર મન સે બુદ્ધિ સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર વ્યગ્રિ બુદ્ધિ સે સમગ્રિ બુદ્ધિ રૂપ જો મહાન આત્મા હિરણ્યગર્ભ હૈ, ઉસકી સમગ્રી બુદ્ધિ સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર અવ્યક્ત માયા સે પર કહિયે. સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક બ્રહ્મ આત્મા હૈ, બ્રહ્મ આત્મા સે પર કહિયે. સૂક્ષ્મ ઓર કોઈ નહીં હૈ, ઇસલિયે પરા ગતી કહિયે. બ્રહ્મ આત્મા સર્વ કી અવધી કહિયે. સીમા અથવા હદ હૈ, ઇસ પ્રકાર આત્મા કો સર્વ સે સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક રૂપ કરકે જાનના હી પરા ભક્તિ કા સ્વરૂપ હૈ. વાસ્તવ મેં પરા ભક્તિ ઓર પરાક્ષ જ્ઞાન મેં કુછ ભી ભેદ નહીં હૈ. શિષ્ય કહતા હૈ—હે ગુરો, યહ જો આપને ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તિ કહી હૈ ઇસકા કારણ કોન હૈ, ઓર ઇસકા સ્વરૂપ ઓર ફલ ક્યા હૈ, ઓર ઉસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ, કયોંકિ કિસી ભી કાર્ય કા કારણ, સ્વરૂપ, ફલ તથા અવધી જાને બિના ઉસ

કાર્ય મેં યથાર્થ પ્રવૃત્તિ હોતી નહીં હૈ. ગુરુ કહતે હૈ—હે શિષ્ય
 પૂર્વ જન્મોં મેં જો નિષ્કામ કર્મ કિયે હૈ, ઉન કર્મોં કે સંસ્કાર
 ઓર ઇસ જન્મ કે પુરુષાર્થ સે જો મહાપુરુષોં કા સંગ કિયા હૈ
 યે ત્રીનોંહી ભક્તિ કે કારન હૈ, ઓર પૂર્વ જો ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તિ
 કથન કી હૈ ઓર ત્રીનોંકે જુદે ર લક્ષણ કહે હૈ, સોહી ભક્તિ કા
 સ્વરૂપ હૈ, વિશેષ દોષ કી નિવૃત્તિ ઉસકા ફલ હૈ. જ્ય તક સત
 અસત વસ્તુ કા દૃઢ નિશ્ચય નહીં હો તખ તક ભક્તિ કરે, ઓર
 જ્ય દૃઢ નિશ્ચય હો જતય તખ નહીં કરે. યહી ભક્તિ કી અવધી
 હૈ. ફિર સત અસત વસ્તુ કા વિચાર હી કિયા કરે.
 ॥ ઇતિ શ્રીભક્તિરત્ન સમાપ્ત ॥

[૫]

અથ વિવેક રત્ન

ઇસી મેં વિચાર સંબંધી કૃષ્ણ વિવેચન ભી કિયા જાવેગા. જાગ્રત
 અવસ્થા મેં સ્થૂત શરીર સે નાના પ્રકાર કે સ્થૂત પદાર્થોં કા
 ભોગ રૂપી વ્યવહાર હોતા હૈ. ઝીસે વ્યવહાર ઓર સ્થૂત શરીર
 કો ઓર ઉસકી જાગ્રત અવસ્થા કો જાનનેવાલા મેં ઇન સર્વ સે
 જુદા હૈ. ઇસી પ્રકાર સ્વપ્ન અવસ્થા મેં જો ૧૭ તત્વ કા સૂક્ષ્મ
 શરીર હૈ ઓર ઉસ મેં નાના પ્રકાર કે જો સૂક્ષ્મ ભોગ્ય પદાર્થ
 હૈ. ઉનકો ઓર સૂક્ષ્મ શરીર કો ઓર ઉનકી સ્વપ્ન અવસ્થા કો
 જાનનેવાલા મેં ઉન સે જુદા હી હૈ. તેસે હી સુષુપ્તિ અવસ્થા મેં
 જો કારણ શરીર હૈ, ઓર ઉસ મેં જો સુષુપ્તિ કા ભોગ ઓર સુષુપ્તિ
 અવસ્થા હૈ, ઇન સર્વ કા જાનનેવાલા મેં તો વહાં ભી સખ
 સે જુદા હી હૈ. ઇસ પ્રકાર ઇન ત્રીન શરીર કે વિવેક સે હી પંચ-
 કોષોં કા વિવેક હો જાતા હૈ.

ત્રીન શરીર ઓર પંચકોષ સે આત્મા કો પૃથક જાનને કા
 નામ યથાર્થ વિચાર હૈ. ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે હી નિત્ય અનિત્ય
 પદાર્થ જાના જાતા હૈ, કયોંકિ યે ત્રીન શરીર તો વ્યભિચારી હૈ.
 વાસ્તવમેં ઇસ સ્થૂત દેહ કી પ્રતીતિ સ્વપ્ન મેં નહીં હોતી હૈ ઓર

स्वप्न पदार्थों का जाननेवाला मैं वहां भी हूँ. सूक्ष्म शरीर सुषुप्ति में नहीं रहता है, और सर्व के अनुभव करनेवाला मैं तो वहां भी हूँ. सुषुप्ति का कारण शरीर है, जो जग्रत स्वप्न में नहीं रहता है और सूक्ष्म स्थूल पदार्थों का जाननेवाला मैं वहां भी हूँ. इस प्रकार के विचार से ही तीन शरीर और उन में जो पंचकोष और तीन अवस्था है ये सभ व्यक्तियारी और अनित्य हैं और आत्मा अनुगत होने से नित्य कहलाता है. अतः आत्मा की नित्यता और अनात्मा की अनित्यता का जो दृढ निश्चय है, उसी को विवेक कहते हैं.

शिष्य प्रश्न करता है—हे भगवान, यह तो सभी जानते हैं कि शरीर आदि अनित्य हैं, और आत्मा नित्य है, जैसे विवेक ही से वैराग्यादि उत्पन्न होते हैं. परंतु ऐसा विवेक तो कभी पुरुषों को भी होता है, क्योंकि शरीर से सिन्न आत्मा का ज्ञान कर्म का हेतु है. यदि शरीर इतनी आत्मा को जाने तो शरीर जन्म यही लक्ष्म हो जावेगा, फिर कर्म के फल को कौन भोगेगा? इससे भोगनेवाले को ज्ञान ही मानते हैं, फिर उनको वैराग्य होना चाहिए, सर्व कर्मों से रहित होना चाहिए. परंतु इस प्रकार होता तो नहीं है. कर्मों को ही करते देखने में आते हैं सो इसमें कारण क्या है आप कृपा करके कहिये.

गुरु कहते हैं. हे शिष्य, यद्यपि कभी को देह से सिन्न और नित्य रूप करके आत्मा का ज्ञान है भी परंतु अकर्ता रूप से आत्मा का ज्ञान कभी को नहीं है. इसी से वैराग्य आदि उत्तम साधन नहीं होते हैं और जो तुमने कहा था कि ऐसा सभी जानते हैं कि आत्मा नित्य है, और शरीर आदि अनित्य है. सो तेरा कहना दुरस्त है, परंतु उनके निश्चय में भ्रम है, क्योंकि विवेकी पुरुष को तो अन्वय व्यतिरेक युक्तियों के सम्बन्ध में विचारपूर्वक दृढ निश्चय है और अविवेकी का विवेक समझाना वैराग्य की नाई होता है. इसी कारण अविवेक को शरीर आदि में आत्मभुक्ति होती है, और विवेकी को निश्चय होने से शरीर

આદિ મેં આત્મબુદ્ધિ નહીં હોતી હૈ, ઇસી સે વિવેકી કો વૈરાગ્ય
 આદિ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર વિવેકી કો આત્મ-અનાત્મ કા દૃઢ
 નિશ્ચયપૂર્વક વિવેકે હૈ નહીં. ઇસી સે વૈરાગ્ય નહીં હોતા
 હૈ, અતઃ ઉસકો અવિવેકી કહતે હૈં. ઇસ પ્રકાર સુનકે શિષ્ય
 પૂછતા હૈ, હે ભગવાન ! આપને યહ જો વિવેક કા કથન કિયા
 હૈ ! ઉસમેં રત્નપના કયા હૈ ઓર ઇસ કા કારણ, સ્વરૂપ કયા
 હૈ ઓર ફલ કયા હૈ ઓર ઉસકી અવધી કયા હૈ સો આપ
 કૃપા કરકે કહિયે. ગુરુ કહતે હૈં કિ જૈસે રત્નોં સે અનેક
 પ્રકાર કે સ્વર્ણ રજત આદિ અશરદિયેં સરાફે મેં પ્રાપ્ત
 હોતી હૈં, તૈસેહી વિવેક રૂપી રત્ન સે સતસંગ રૂપી સરાફે મેં
 અનેક કો વૈરાગ્યાદિ અશરદિયેં, રૂપયે પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઓર જિસ
 પ્રકાર દ્રવ્ય પદાર્થ સે વ્યાવહારિક સુખ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ, તૈસે
 હી વૈરાગ્યાદિસે પારમાર્થિક આનન્દ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ, યહી
 ઉસ વિવેક મેં રત્નપના હૈ.

પૂર્વ જો ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તી કહીં થી સો વાસ્તવ મેં ઐસી
 ભક્તિ સે ચિત્ત કી એકાગ્રતા હોકર સત અસત પદાર્થોં કા વિચાર
 ઉત્પન્ન હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર વિચાર કરને પર પદાર્થોં સે નિત્ય
 અનિત્ય વસ્તુ કા વિવેક ઉત્પન્ન હોતા હૈ. ઇસલિયે ભક્તિ ઓર
 વિચાર યે દોનોં હી વિવેક કે કારણ હૈં ઓર નિત્ય અનિત્ય સે
 તાત્પર્ય યહી હૈ કિ આત્મા તો નિત્ય હૈ ઓર જો વૈરાગ્ય આદિ
 કે ઉત્તમ સાધન વિવેક સે હોતે હૈં, યહી વિવેક કા ફલ હૈ, ઓર
 જ્ઞાન પ્રાપ્ત હોને પર્યન્ત ઉસકી અવધી હૈ, ઓર વહ વિવેક રત્ન
 જો કહા હૈ ઉસે જિજ્ઞાસુ પુરુષોં કો અવશ્ય સમ્પાદન કરના
 આહિયે કયાંકિ યહી જ્ઞાન કે અન્તરંગ સાધનોં કા મૂલ હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી વિવેક રત્ન સમાપ્ત ॥

अथ वैराग्य रत्न

॥ कुण्डलिया ॥

वैराग्य नाम यक्ष कहत है, उभय भेद तील जन ।

पर अपर दो कहत है, तिनका करं ज्ञान ॥

तिन का करं ज्ञान अपर का यह विस्तार ।

यत्तमान व्यतिरेक यक्ष छन्दस्य अक्ष वशीकार ॥

वशीकार है तीन विधि तीव्र तर तीव्र मन्द ।

जो धन को धारन करे सोई पाव गुप्तानन्द ॥

अर्थ यह है कि एकही वैराग्य के पर और अपर दो भेद हैं। इस में अपर वैराग्य के चार भेद हैं। यत्तमान, व्यतिरेक, येकेन्द्रिय और वशीकार, वशीकार भी मन्द तीव्र, और तीव्रतर जैसे भेद से तीन प्रकार का होता है, ये सभी एक ही वैराग्य की तारतम्यता करके भेद कहे जाते हैं परंतु जितनी वैराग्यमाला है, उस से तात्पर्य सूक्ष्म स्थूल, लोक परलोक के जो पदार्थ हैं, उन सभी के त्याग करने की का है।

दोहा—भोग लोक परलोक का मन में रहै न राग ।

दारा सुत वित गेह का करना चाहै त्याग ॥

ऐसी जात भियार के छांड़ि गये नृप राज ।

धारण कर निरवेद को कीन्हा अपना काज ॥

अर्थ यह है कि स्त्री, पुत्र, धन, आदि इस लोक के जितने भोग पदार्थ हैं, और अमृत पान, अमरसरादिक जो अन्न लोक के भोग हैं, उन सभी का राग मन से जिसने दूर किया है, और इनके त्याग करने की इच्छा जिसको उत्पन्न हुई है उस पुरुषको

એસા વિચાર કરના ચાહિયે કિ ઈન ભોગ પદાર્થો મેં સુખ હોતા
તો રાજા ભોગ રાજા કો છોડ કે વૈરાગ્ય કો કયોં ધારણ કરતે! ઈસો
સે જાના જાતા હૈ કિ પદાર્થો મેં સુખ નહીં હૈ. જો પદાર્થો મેં
સુખ હોતા તો ઉન રાજાઓં કો તો બહુત સે પદાર્થો પ્રાપ્ત
થે. ઇસ પ્રકાર અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરના ચાહિયે કિ
વિષયોં કે ભોગ સે સુખ નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ વિષયોં કે ત્યાગ
મેં જો સુખ પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા હૈ ઉસકો ત્યાગ કરના
ચાહિયે, કયોંકિ જિન રાજાઓં કો સર્વ ભોગ પદાર્થો પ્રાપ્ત થે
ઉન કો ભી સુખ નહીં હુઆ તો હમારે કો કહાં સે સુખ હોગા,
ઇસ પ્રકાર સે જો વિચાર કરતા હૈ સો હી વાસ્તવ મેં મનુજ્ય હૈ,
જો મનુજ્ય શરીર પા કે એસા વિચાર કરકે વૈરાગ્ય કો ધારણ નહીં
કરતા હૈ વહુ ગર્દભ કે સમાન હૈ. ઇસી પર તેરે કો અંક—

રાજા સાધુ શોક નિવર્ત ન્યાય

સુનાતે હૈં સો તૂં સુન. એક રાજા કો મંદ વૈરાગ ઉત્પન્ન હુઆ
થા. મંદ વૈરાગ કા લક્ષણ હૈ કિ ન તો વિષયોં કા ત્યાગ હોના
ઔર ન ભોગ હોના. ઉભયતા સંદેહ હી રહતા હૈ, ઇસ પ્રકાર
વહુ રાજા દ્વાતોં તરફ સંદેહ કરકે શોકાતુર હુવા તખ કામદાર
મંત્રી ભોગ ભી રાજા કી દશા દેખ કે સભી ચિંતા મેં રહે ઔર
આપસ મેં વિચાર કિયા કરતે કિ રાજા કી તો એસી દશા હોગઈ
કિ જૈસે કોઈ સર્પ ચૂહે કે ઘોખે મેં છૂંદર પકડ લેતા હૈ, તખ
વહુ ઉસ કો ખાતા નહીં ઔર ન છોડતા હૈ, કયોંકિ ઉસકો ખાવે
તો કોઠી હો જાવે ઔર, છોડે તો વહુ ઉસકે નેત્ર ફોડ દે. ઇસી
પ્રકાર રાજા કો ભી કોઈ બડા ભારી ખેદ આકે પ્રાપ્ત હુઆ
હૈ ઇસકી નિવૃત્તી કા કોઈ ઉપાય કરના ચાહિયે, કયોંકિ સચ્ચા
મંત્રી ભી વહી હૈ જો અપને મહારાજા કો દુખ પ્રાપ્ત હોને પર
ઉસકી નિવૃત્તી કા ઉપાય કરે, નહીં તો સુખ મેં તો બહુત મંત્રી
હો જાતે હૈં. જખ ઇસ પ્રકાર મંત્રિયોંને વિચાર કરકે અચ્છ
બુદ્ધિમાન પંડિતોં કો બુલા કે પૂછા કિ મહારાજા કો જો બડા
ભારી શોક હુવા હૈ ઉસ કી નિવૃત્તી કા કોઈ ઉપાય આપ બતાઈએ,
મંત્રિયોં કી ખાત સુનકે પંડિતોં ને કહા કિ શોક નિવૃત્તી તો કોઈ

साधू महात्मा करते हैं. इस से तुम किसी साधू को ढूँढके लाओ, तब मंत्री ने आरों तरफ़ ढूँढनेवाले भेज दिये. किसी जगह गुरु भेला दो साधू मिल गये, उस समय वे अपनी कुटिया को लीप रहे थे. ढूँढनेवालों ने उनको नमस्कार किया, और कहने लगे कि महाराज आप कृपा करके बलिये, हमारा राज भउ शोक को प्राप्त हुआ है, उसको शोकनिवृत्त कीजिये. तब गुरु ने कहा कि बहुत अच्छा, और ऐसेसे कहा कि जज्जो राज के शोक को निवृत्त करो. वह मिट्टी से लरा हुआ ही बल दिया और उनके संग में राज की कयलुरी में आया, तब राज ने उस महात्मा की तरफ़ देखा. उसको घेढंग देभके उस राज को हसी आर्य, और अपने पास में उसके वास्ते गादी पिछवादी. वह तो मिट्टी से लरे हुवे शरीर से उस गादी पर अकम्भ गिर गया, क्योंकि उस ढंग दुनिया घेढंग इकीर, अर्थात् जैसे राज तैसे ही इकीर.

वह राज कहने लगा कि महाराज, आप में और गधे में कितना इर्क है, आप बताधये. वह महात्मा अपने और राज के बीच की जमीन हाथ से नापकर कहने लगा कि गधे में और हमारे में दो हाथ का इर्क है. तब तो राज लज्जित हो के बोला कि महाराज आपने तो हमारे को ही गधा बनाया. मैं किस रीति से गधा हूँ सो कहिये. उस महात्मा ने उत्तर दिया कि हमने अपनी युक्ति से तुम को गधा नहीं कहा है, किन्तु तुम्हारे जैसे को शास्त्र ही गधा कहता है.

श्लोक

आत्मानमःत्मास्थ त वेति भूढा,

संसार कुपे, परिवर्त तोयः ।

तिक्त्वा तमाइपम विषियान भुक्ते,

सहे नरो साक्षात् अेव गर्दलः ॥

अर्थ यह है कि आत्मा को परमात्मा इप करके तुमने नहीं जाना है, और संसार इपी रूप में पडे हुवे हो इसी से तुम

भुठ हो, और आत्मा का जो व्यापक रूप है, सो भी तुमने नहीं जाना है, और यत्किञ्चित् वैराग्य के होने से पदार्थों में दृष्टि होने के कारण उनको भी नहीं भोग सकते हो। जैसे पुरुष को ही शास्त्र ने साक्षात् गर्हिल कहा है, इस प्रकार के लक्षण तुम्हारे में घटते हैं, इसी से तुमको गर्हा कहा है। इस रीति से जन्म मन्द वैराग्यवाले को भी गर्हिल कहा है तो जिस को सर्वथा वैराग्य का अभाव है, उस के गर्हिलपने में क्या संशय है। वह तो साक्षात् गर्हिल ही है, उस से परे और गर्हिल कौन होगा। यह दशा गृहस्थ की कही है।

जो वैराग्य को धारण करके विषयों का त्याग नहीं करता है, वह लाभ गर्हिलों का गर्हिल है। इस से जिसने घर आम छोड़ कर वैराग्य धारण किया है, उसको स्त्री सग तथा पसे का संग्रह नहीं करना चाहिये, क्योंकि ये दोनों वैराग्य का नाश करनेवाले हैं। महात्मा पुरुषों का तो वैराग्य ही धन है। वैराग्य जिसके नहीं होता है उसी को साधुलोग कंगला कहा करते हैं, और जिसको वैराग्य से भी वैराग्य होता है, वही सभसे उत्तम कहा जाता है। सर्व पदार्थों से वैराग्य को उत्तम और निर्लभ्य कहा है।

श्लोक—

भोगे रोग भयं, सुप्ते क्षय भयं, वित्ते नृपलात भयं,
माने हानि भयं, जये रिपु भयं, रूपे जराया भयं ।
शास्त्रे वाद भयं, गुणेषु जलु भयं, काये कृतान्ताद भयं,
सर्वम् वस्तु भयाव नित्यं भव भिनिषु वैराग्यमेवाभयं ॥

इस रीति से महात्मा पुरुषों ने वैराग्य ही को सर्व पदार्थों से उत्तम और निर्लभ्य कहा है। यही कारण है कि वैरागवान् पुरुष सर्व पुरुषों से उत्तम और निर्लभ्य दिखार्ह होता है। इसी पर अन्त—

(૨) રાજા-વજીર ન્યાય

સુનાતે હું. એક રાજા કા વજીર કિસી સમય અપને સ્વામી સે ખાત કરતા થા, તખ વહ રાજા કિસી ઝીર હી તરફ કામ કર રહા થા. ઇસ સે વજીર કી ખાત નહીં સુન સકા, તો ભી એક દો વાર ઉસ વજીર ને કહા, પરંતુ રાજા કી નિગાહ, વજીર કી તરફ નહીં હુઈ. તખ વજીર હૈરાન હો કે અપને ધિકકાર દેતા હુવા ચલ પડા, ઝીર અફસોસ કરને લગા કિ દેખો, યહ ભી મનુષ્ય હૈ ઝીર હમ ભી મનુષ્ય હી હૈ, પરંતુ હમ લોભ મોહ કે વશ હોકર, કેસે દીન હો રહે હૈ. હમ તો મહારાજ મહારાજ કરતે હૈ, ઝીર વહ હમારી તરફ નજર કરકે ભી નહીં દેખતા હૈ, ઇસ સે ધિકકાર હૈ એસી દીનતા કો, જિસ ને હમકો દીન કિયા હૈ, ઝીર યે લોભ મોહ હી હમારે સે નીચ કર્મ કરવાતે હૈ. ઇસી સે ઇનકા ત્યાગ હી કરના યોગ્ય હૈ. એસા વિચાર કરકે વહ રાજા કા વજીર સર્વ કા ત્યાગ કર વન કો ચલા ગયા જખ. રાજા કો ખબર હુઈ કિ વજીર સાહુખ તો સંન્યાસી ખન કે ખનકો ચલે ગયે તખ રાજા ને ઝીર મંત્રિયોં સે કહા કિ ચલો વજીર કો મનાકે લાવેંગે. રાજા ઝીર દૂસરે મનુષ્ય જહાં પર વજીર થા જહાં પહુંચે ઝીર રાજા ને વજીર કો દેખા કિ વો લમ્બે પૈર પસારે જમીન પર પડા હૈ. રાજા ઉસકે પાસ જા કે ખોલને લગા તખ વજીર નહીં ખોલા. તો રાજા દો ચાર બાર ખાત કરને લગા તો ભી વો નહીં ખોલા. તખ રાજા કહને લગા કિ વજીર સાહુખ અપને ઇસ પ્રકાર કખ સે કિયા. તખ વજીર ને કહા કિ હાથ સિકોડે જખ સે. ઇસ પ્રકાર વજીર કે ઉત્તર દેને પર રાજાને ખહુત સી ખિનતી કી કિ આપ હમારા કસૂર માફ કીજિયે ઝીર શહર કો ચલિયે. તખ વજીર ને અપને મન મેં વિચાર કિયા કિ એક હી દિન કે વૈરાગ સે રાજા હમારે આગે હાથ જોડ કે ખિનતી કરતા હૈ તો જાના જાતા હૈ કિ યહ વૈરાગ કોઈ ખડી ચીજ હૈ. ઇસ કો ત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે, કયોંકિ જિસ રાજા કે ભય સે હમારા શરીર ક'પાય-માન હોતા થા વો ઇસ વૈરાગ કે ખલ સે એક સૂખે તૃણવત પ્રતીત હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર વિચારને લગા ઝીર રાજા હૈરાન હોકર

अपने नगर को लौट आया। वैराग की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में
 दो पुरुष के परस्पर—

(३) श्रेष्ठता विवाद न्याय

और ली श्रवण कर. वह इस प्रकार है कि किसी जगह
 दो पुरुष रहते थे. एक ने कहा कि यलो लैया, ठाकुरल के
 दर्शन करें, तब दूसरा कहता है कि ठाकुरल तो मैं ही हूँ.
 यह सुन प्रश्नकर्ता ने कहा कि तुम ठाकुरल हो तो मैं मुकुट
 तब उस ने कहा कि मैं कीट हूँ इस पर से दूसरे ने कहा कि
 मैं पुष्प हूँ. तब पहिले ने कहा कि मैं लवरा तो दूसरा ओला
 कि मैं सूर्य हूँ. तो पहिले ने कहा कि मैं कर्ण हूँ. दूसरे ने कहा कि
 मैं दानी हूँ. पहिला ओला कि मैं निरयाह हूँ. तब दूसरे ने कहा
 कि इस में आगे बढ़ने को और कोई भी रास्ता नहीं है. वास्तव
 में ऐसी निरयाह वैराग से ही होती है. इस से ली जाना जाता
 है कि वैराग से भंडा और कोई भी पदार्थ संसार में नहीं है.
 इस लिये जिज्ञासु पुरुषों को अवश्य आहिये कि वैराग की ही
 धारण करें.

यह बात सुनके शिष्य पूछता है वैराग का कारन कौन है,
 उसका स्वरूप तथा इस क्या है, और अवधी कितनी होती है
 सो कृपा करिके बताईये.

श्री गुरु कहते हैं कि पूर्व जो नित्य अनित्य पदार्थों का एक
 विवेक हुआ है उससे अनात्म पदार्थ में दोष दृष्टि भुल है. यह
 पदार्थ दृष्टि वैराग्य का कारण है और विषयों का मन से त्याग
 करना वैराग्य का स्वरूप है, और दीनता से रहित होकर दीनों
 का सा स्वांग धारण करके फिरना ही वैराग्य का फल है, और
 संसार के जितने लोग पदार्थ हैं उन सभीको भृगुतृष्णा के जल-
 वत बनना जैसे भृगुतृष्णा के जल से किसी की भी प्यास दूर
 नहीं होती है, तैसे ही पदार्थों से किसी की तृष्णा नहीं जाती
 है. इस से उन के त्याग करने से ही अमृत भाव की प्राप्ति होती

હૈ. યહી વૈરાગ્ય કી અવધી હૈ. સર્વ વેદશાસ્ત્રોં સે વિદ્વાન પુરુષોં
ને યહી તત્ત્વ નિકાલા હૈ, ઇસી સે ઇસકો રત્ન કહા હૈ.
॥ ઇતિ શ્રી વૈરાગ્ય રત્ન સમાપ્તમ ॥

[૭]

અથ ષટ્સમ્પત્તિ રત્ન

દોહા—એક સાધન કે બીચ મેં, પ્રાપ્ત હોય ષટ બાત ।

તાકો ષટ સંપત્તિ કહે, અબ બિન્ન ર સુન તાત ॥

દુષ્ટ વિષયોં સે રોકના, મન કર્મ ઇન્દ્રિય જ્ઞાન ।

યાસે સમ, દમ, કહત હૈં, સમુજિ કરો પહિયાન ।

અર્થ યહ કિ એક હી સાધન મેં ષટ પદાર્થોં કી જો પ્રાપ્તિ
હોતી હૈ ઉસકો ષટ સંપત્તિ કહતે હૈં. અબ ઉનકો જુદા ર કહતે
હૈં, તૂ સુન. શાસ્ત્રને જિન વિષયોં કા નિષેધ કિયા હૈ, ઉન વિષયોં
સે મન કો રોકને કા નામ શમ હૈ ઓર પંચ જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોં ઓર
પંચ કર્મ ઇન્દ્રિયોં કો ઉન્હોં વિષયોં સે હટાને કા નામ દમ હૈ.
અબ શ્રદ્ધા ઓર સમાધાન કે સંબંધ મેં કહતે હૈં :—

ત્રોટક છન્દ ।

તીજ શ્રદ્ધા કો પાય જખી, ગુરુ વદ વચત સત જન તખી
ચોથા સમાધાન સમઝ સોઈ, મન મેં વિક્ષેપ નહીં કોઈ ॥
પંચમી ઉપરતી સુનુ પ્યારે ॥ સાધન અરુ કર્મ સભી જરે ॥
નેત્ર સે નારિ લખૈ જખહી ॥ તિહિ દુઃખ અગાર પિખૈ તખહી
યહ છઠી તિતિક્ષા જોઈ લહે ॥ સો દ્વંદ્વ ધર્મ કા સર્મ સહે ॥
આતપ અરુ શીત ક્ષુધા તિરણાસ્વપ્ને સમ જનિ સહે મૃષા

જો એસી ધારન ધારેગા ॥ સો કામ ક્રોધ કો મારેગા ॥
 યહ સીખ હમારી માનેગા ॥ તખ ગુપ્ત રૂપ કો જાનેગા ॥

અર્થ યહ હૈ કિ ગુરુ વેદ કે બચનોં કો સત્ય કરકે જાનને
 કા નામ શ્રદ્ધા હૈ. યહ શ્રદ્ધા ગુરુ વેદ કે વચનોં કો સત્ય જાનને
 સે હોતી હૈ. મનમેં કિસી પ્રકાર કી ચંચલતા નહીં હોને કા અર્થાત્
 કિસી એક વસ્તુમેં મનકી વૃત્તિ ઠહરને કો સમાધાન કહુતે હૈ. સાધન
 સહિત સર્વ કર્મ કો નહીં કરે અર્થાત્ સર્વ પ્રકાર કે કર્મ ઓર
 ઉનકે સાધનોં કા ત્યાગ કરકે-જખ કભી નેત્ર સે નારી કો દેખે
 તો ઉસે દુઃખ કા સ્થાન જાને, ઇસી કો ઉપરતી કહુતે હૈ. આતપ
 શીત ક્ષુધા તૃષ્ણા રાગ દ્વેષ માન અપમાન, ઇત્યાદિક દ્રવ્ય કો સહન
 કરને સે તિતિક્ષા કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ. જખ કોઈ એસી ધારણા
 કો ધારતા હૈ ઓર મહાત્મા પુરુષોં કે વચનોં કો અંગીકાર કરતા
 હૈ તખ વહુ અપને આપ કો નિરાકાર ઓર વ્યાપકરૂપ જાનતા
 હૈ. યહ જો તિતિક્ષા રત્ન કહા હૈ, સો નાના પ્રકાર કા દીનતા-
 રૂપી કંગાલી કા નાશ કરનેવાલા હૈ ઓર આત્મા રૂપ અલૌકિક
 ધન કો દેનેવાલા હૈ. યહી ઉસ મેં રત્ન પના હૈ.

શિષ્ય કહુતા હૈ, હે ગુરો ! યહ જો આપને ષટ સંપત્તિ રત્ન
 કહા હૈ, ઇસ કા કારન કોન હૈ ઓર ઇસ કા સ્વરૂપ તથા ફલ
 કયા હૈ ઓર ઇસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ સો આપ કૃપા કરકે
 બતાઈયે. ગુરુ કહુતે હૈ; પૂર્વ જો વૈરાગ્ય કા કથન કિયા ગયા હૈ
 સો હી ઇસ કા કારણ હૈ, ક્યોંકિ વૈરાગ્ય બિના રામ દમોદર નહીં
 હોતે હૈ. ઇસસે વૈરાગ્ય હી ષટ સંપત્તિ કા કારણ હૈ, ઓર જો
 ષટ સાધનોં કા જુદા ર કથન કિયા ગયા હૈ વહી ઉસકા સ્વરૂપ
 હૈ ઇસકે પ્રાપ્તિ હોને પર જો મોક્ષ કી ઈચ્છા ઉત્પન્ન હોતી હૈ
 વહી ઉસકા ફલ હૈ. ઇસ પ્રકાર ફલ કી પ્રાપ્તિ પર્યન્ત પ્રયત્ન કરતા
 હી ઉસ કી અવધી હૈ. અતઃ જિજ્ઞાસુ પુરુષ કો પ્રથમ ષટ સંપત્તિ
 સંપાદન કરના ચાહિયે.

॥ ઇતિ શ્રી ષટ સંપત્તિ રત્ન સમાપ્તમ્ ॥



अथ मुमुक्षुता रत्न

कवित ।

भोक्षहि की धम्मा को मुमुक्षता कहुत सुधी, नको
यह होय ताको मुमुक्षु पड़ियानिये ॥ सुण की हो
प्राप्ति जेह दुण की निवृत्ति होह, भोक्ष का रूप
यही वेदन में गानिये ॥ समिद्धपाणि होय सतगुरु
के शरण जये, धम्मर से अधिकता में बक्ति ही को
ठानिये ॥ पूर्व पुण्य से गुरुदेव ने प्रसन्न होय
तिन के प्रसाद गुप्त रूपहि को लनिये ॥१॥

अर्थ यह है कि सुधी कहिये ओह है, पि नाम पुदी जिनकी
असे ने महात्मा पुरुष है वे भोक्ष की धम्मा को मुमुक्षता कहुते
हैं. और जिस पुरुष में यह धम्मा उत्पन्न होता है उसको ही
मुमुक्षु कहते हैं. ने ऐसा पूछें कि भोक्ष का स्वरूप क्या है, तो
सुन. अत्यंत सुण की प्राप्ति और अत्यन्त दुण की निवृत्ति को
भोक्ष कहते हैं. यह वेद में भोक्ष का स्वरूप कहा है जिस की
प्राप्ति के वास्ते समिद्ध पानि कहिये कुछ द्वाथ पै ओह रूप के
सतगुरु के पास जा कर धम्मर से वी अधिक उन की अनुकूल
सेवा करे, तब ऐसी सेवा करने से अथवा किसी पूर्वजन्म
के निष्काम कर्म से गुरु प्रसन्न हो के आप ही कृपा करके
जा अर्थात् धन्द्रिये उन सर्वका ने पति अर्थात् प्ररक्ष
ऐसा गूढ और सूक्ष्म ने चैतन्य आत्मा है उसको निजका
स्वरूप करके जना हते हैं ऐसी ने यह मुमुक्षता है सो
अलौकिक रत्न है क्योंकि ने लौकिक रत्न है उनका तो भाल सशोभ
में होता है. जेहरी उन के आधार को जयता है तब कीमत

કરતા હૈ, પરંતુ આત્મરૂપી રત્ન નિરાકાર ઓર અનમોલ હૈ. ઉચ્ચ
ધી પ્રાપ્તિ વાસ્તે જિજ્ઞાસુ સતસંગ રૂપી સરોદ્રે મેં જાતા હૈ તો
તહાં સતગુરુહી જોહરી હૈ. વે કેસે હૈ ? વે નિરાકાર ઓર ગૂઢ
કહિયે. તીનોં શરીર ઓર પંચકોશસે ઢકે હુવે આત્મા કો સાક્ષાત
સ્વરૂપ કરકે જના દેતે હૈ; ઇસમેં જિજ્ઞાસા હી કારણ હૈ. ઇસી સે
ઉસકો રત્ન કહા હૈ. અતઃ યહ તો જિજ્ઞાસુ કો અવશ્ય હી
પ્રાપ્ત કરના ચાહિયે. શિષ્ય કહતા હૈ, હે ભગવન ! યહ મુમુક્ષતા
રત્ન તો હીક હૈ પરંતુ ઇસકા કારણ કોન હૈ ઓર સ્વરૂપ ક્યા તથા
ફલ ક્યા હૈ ઓર ઇસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ સો આપ કૃપા
કરકે કહો.

ગુરુ કહતે હૈ, પૂર્વ જો સાધન કહે હૈ, સો પરમ્પરા સે તો
સભી કારણ હૈ પરંતુ સાક્ષાત કારણ યટ સમ્પત્તીહી હૈ, ઓર
ઇસકા સ્વરૂપ પૂર્વ છન્દમેં કથન કિયા વહી હૈ. મોક્ષ કી ઇચ્છા
કો મુમુક્ષતા કહતે હૈ, સોહી ઇસકા સ્વરૂપ હૈ ઓર શ્રવણ કી
પ્રાપ્તી હી ઇસકા ફલ હૈ, જખ તક શ્રવણ દૃઢ નહીં હો તખતક
કરે, ફિર નહીં કરે. યહી ઇસકી અવધી હૈ.

॥ ઇતિ શ્રીમુમુક્ષતા રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[૯]

અથ શ્રવણરત્ન

પ્રથમ શ્રવણ કા સ્વરૂપ દિખાતે હૈ.

॥ દોહા ॥

જો સુનને મેં આવત, સખહી સરવન જન ।

અધિકારી કે ભેદ સે, જુદા જુદા પહિચાન ॥ ૧ ॥

જો અધિકારી જ્ઞાન કા, ગુરુ સે પૂછે તત્ત ।

મહાવાક્ય કે અર્થ કા, સરવન કરના નિત્ત ॥ ૨ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ જો કુછ સુનને મેં આતા હૈ સો સભી
શ્રવણ કહા જાતા હૈ. યહ તો શ્રવણ કા સાધારણ સ્વરૂપ હૈ.

धर्म, धर्म, धर्म की धर्म, धर्म का प्रयत्न, और ज्ञान, तैसही
 देश, काल, अद्य, प्रागभाव और प्रतिभंधाभाव ये नौ, सर्व
 कार्य के कारण होने से साधारण कारण कहे जाते हैं। और जो
 अकेली कारण हो वह साधारण कारण होता है। जैसे रसना
 धर्म से रसका ही का ज्ञान होता है, सुगंध आदि का नहीं
 होता है। तैसही जो श्रवण किसी अकेली के वास्ते हो, वह श्रवण
 का असाधारण स्वरूप कहलाता है, जैसे महावाक्य का श्रवण
 एक ज्ञान की धर्मवाले के ही वास्ते है इससे महावाक्य के
 श्रवण को असाधारण श्रवण करते हैं। जो पुरुष आत्मज्ञान
 की धर्मवाला है सो सत वस्तु को ही गुरु को पूछता है और
 महावाक्य के अर्थ को ही बार बार श्रवण करता है क्योंकि हर
 वक्त वेदान्त का चिंतन करने से संशय की निवृत्ति हो जाती है।
 संशय ही पदार्थ के ज्ञान में प्रतिभंध होता है। इसी को असं-
 लावना भी कहते हैं; वह भी दो प्रकार की होती है, एक तो
 प्रमाणगत और दूसरी प्रमेयगत कहलाती है। प्रमेयगत को आगे
 कहेंगे। यहां प्रमाणगत का विवेचन कहते हैं। प्रमाण कहिये
 शास्त्रगत। अर्थात् इसमें असंलावना या संशय यह है कि
 वेदान्त के वचन स्वर्ग या मोक्ष का कथन करते हैं इसमें जो
 संशय है उसका प्रमाणगत असंलावना कहते हैं। वेदान्त शास्त्र
 के बार-बार श्रवण करने से ऐसी प्रमाणगत असंलावना की
 निवृत्ति हो के निस्संशय हो जावेगा, जैसे रत्न के परंपनेवाले
 जोहरी होते हैं जो नाना प्रकार की युक्ति सुना के उस रत्नवाले
 को निस्संशय कर देते हैं, तैसही यह जो श्रवण है इसमें
 अनेक प्रकार के जो संशय हैं जैसे वेदान्त शास्त्र के सुनने का
 हमारे को अधिकार है वा नहीं है। अथ इस प्रकार श्रवण करने
 से जैन इस होता है, स्वर्ग प्राप्त होता है कि मोक्ष, अथवा
 इसका सुनना निष्कल होता है। इस रीति से अनेक प्रकार के
 संशय होते हैं, उन सर्व संशयों को जोहरी की नांछ जो गुरु
 है सो अनेक प्रकार की युक्ति सुना के शिष्य को निस्संशय कर
 देते हैं। आत्मा सर्व में होने से आत्मनिज्ञासा सर्व को ही
 होती है, इससे श्रवण का सभी को अधिकार है और स्वर्ग को

તા વૈદાન્ત ને બારંબાર અનિત્ય કહ્યા હૈ, અતઃ નિત્ય જો મોક્ષ
 હૈ ઉસકે પ્રતિપાદન કરને સે વૈદાન્ત કી સફલતા હૈ. ઇસી સે
 વૈદાન્ત મેં અપૂર્વતા હૈ. ઇસ પ્રકાર કી યુક્તી રૂપી બાધિની કો
 દેખ કે સ્થાલરૂપી સંશય ભાગ જાતા હૈ. ઇસ રીતિ સે શ્રવણ
 રૂપી રત્ન મેં જો નાના પ્રકાર કે સંશય હૈં ઉન સે જિજ્ઞાસુ કો
 નિરસંશય હો કર શ્રવણ કરના ચાહિયે. ઇસી સે ઉસકો રત્ન કહ્યા
 હૈ ઔર જિજ્ઞાસા હી શ્રવણ કા કારણ હૈ. પૂર્વ જો સાધારણ
 વ અસાધારણ દો પ્રકાર કા શ્રવણ કહ્યા. સોહો ઇસકા સ્વરૂપ હૈ,
 ઔર અસંભાવના કી નિવ્રત્તી ઇસકા ફલ હૈ. મનન કરને કા
 સામર્થ નહીં હો તબ તક શ્રવણ કરતે રહના ચહી શ્રવણ કી
 અવધી હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી શ્રવણ રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[૧૦]

અથ મનન રત્ન

દોહા

મનન તિસી કો કહત હ, મનસે કરે વિચાર ।

બૈઠિ ઇકાન્તિક દેશ મેં, સોધે સાર અસાર ॥

યુક્તિ બાધક ભેદ કી, અરુ પુનિ કહે અભેદ ।

તિનહીં કરકે દૂરિ હો,ય અસંભાવના ખેદ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ પૂર્વ ગુરુમુખ સે મહાવાક્યોં કા જો
 શ્રવણ ક્રિયા થા ઉસકો એકાન્ત સ્થાન મેં બૈઠ કે બિચાર કરકે
 સાર ઔર અસાર કો સોધન કરને કો મનન કહતે હૈં. શિષ્ય
 કહતા હૈ—

હે ભગવન ! આપને જો સાર અસાર કા શોધન કહ્યા સો
 સાર કયા હૈ ઔર અસાર કયા હૈ ઔર ઇનકા શોધન કિસ પ્રકાર
 હોતા હૈ સો આપ કૃપા કર કેઠાહિયે. ઇસ પર સે ગુરુ કહતે હૈં,

हे शिष्य पूर्व तत्त्वमसि, अहं ब्रह्मास्मि भत्यादि जिन महावा-
क्यों का श्रवण कला है उन सर्व वाक्यों के तीन २ पद होते
हैं, अहं पद एव का वाचक होता है, ब्रह्म पद ईश्वर का वाचक
होता है, अस्मद् पद चेतनमात्र का वाचक होता है. शुद्ध सतो-
गुणवाली माया में चेतन का जो आभास पडा है, उस को
ईश्वर कहते हैं, और भस्मिन सतो गुणवाली जो आविद्या है,
उसमें चेतन का जो आभास है, उसको एव कहते हैं. इस
प्रकार अल्पज्ञ एव अल्प शक्ति, पराधीनता, आदि अनेक एवत्व
धर्मवाला है. माया में आभास जो ब्रह्म है, सो कैसा है ।
सर्वज्ञ है, सर्व सक्तिमान है, और स्वतंत्र है, इनके अनिरिक्त
और ली ईश्वर धर्म, उस में अहुत हैं, परंतु एव ईश्वर के
अल्पज्ञता, सर्वज्ञता, आदि जितने धर्म कहे हैं, सो सभ उपा-
धिक धर्म हैं. वास्तव में उन के कोई धर्म नहीं है, क्योंकि यह
माया और आविद्या उपाधी है, इसी से एव और ईश्वर में
सर्वज्ञता और अल्पज्ञता का आरोपण किया जाता है. वास्तव
में चेतन का कोई धर्म नहीं है.

अतः जो कोई धर्मों के सहित एव और ईश्वर की ऐक्यता
कहता है वह महाभूर्ण है, क्योंकि दोनों के धर्मों का आपस में
विरोध है. फिर जिनको विरोध हो उनके सम्बन्ध में ऐक्यता कहना
भूर्णता नहीं तो क्या है, जैसे कोई भस्मिन कर्म करनेवाले
लंगी की आत्मण से ऐक्यता कहे तो वह संभव कैसे होगी.
आत्मण का धर्म तो वेद अध्ययन आदि शुद्ध है और लंगी का
धर्म भूत्र, विष्टा उठाना भस्मिन है, इस से उन धर्मों का विरोध
है, और जब धर्मों को त्याग दे तो मनुष्य मात्र में ऐक्यता
भन सकती है, उस में कोई ली विरोध नहीं.

जैसे घटाकाश और महाकाश की घट, मठ उपाधी के सहित
ऐक्यता कहे तो नहीं भनत है क्योंकि घट में दस सेर अन्न
समाता है और मठान में हजारों मन आ सकता है, फिर उनही
ऐक्यता कहना कैसे भने. इससे उपाधि सहित ऐक्यता कहना विरुद्ध
है. घट मठरूपी उपाधी और उस के जो आननरूप धर्म हैं उन

सम को त्याग के केवल आकाशमात्र ही अस्तित्व बनती है, इसी प्रकार माया अविद्या और उनके सर्वज्ञता व्यपञ्चता आदि धर्मों के सहित अस्तित्व नहीं बनती है, परन्तु इन सर्व को त्याग के चेतन मात्र अस्तित्व ही है, वही सार है और सर्वज्ञता-व्यपञ्चता आदि धर्म सहित माया अविद्या असार है। इस प्रकार से विचार करके सार और असार को जल्दी प्रकार निश्चय करना चाहिये।

अब दूसरे दावे का अर्थ कहते हैं। प्रमेय कहिये एव अज्ञान अस्तित्व, गत कहिये इस में असंभावना अर्थात् संशय और भेद अर्थात् दुःख इषी भेद ही व्यापक और अभेद ही साधक के युक्तियां हैं उन से प्रमेयगत असंभावना को दूर करे। यदि ऐसा कहे कि प्रमेयगत असंभावना क्या है, तो सुन।

यह जो वेदान्त शास्त्र के वचन एव अज्ञान के भेद को अथवा अभेद को कथन करते हैं, इसका नाम प्रमेयगत असंभावना है। इसकी निमित्त के वास्ते भेद के व्यापक, और अभेद के साधक युक्तिपूर्वक महावाक्यों के अर्थ का आरंभार्थ चिंतन करना चाहिये। इसी को मनन कहते हैं। अपने चित्त में इस प्रकार विचार करे कि वास्तव में द्वैत है नहीं, क्योंकि यदि परमार्थ से द्वैत हो तो उसकी निवृत्ति नहीं होनी चाहिये। कहते हैं कि परमार्थ से अस्तित्व सतश्च त्रिकालव्यापक है। जो वस्तु परमार्थ से सत हो उसकी तीन काल में निवृत्ति होती नहीं है और द्वैत ही तो अद्वैत ज्ञान से तिष्ठती हो जाती है। इससे द्वैत माया मात्र है, सो माया और उसका कार्य प्रपञ्च मिथ्या होने से कुछ चैतन्य में द्वैत कर सकता नहीं। जैसे वास्तविक स्वरूप में सर्प है ही नहीं तो फिर वह किसको काटेगा, तैसेही वास्तविक माया का स्वरूप ही सिद्ध नहीं होता है। इसी से माया को अचिन्त्य शक्ति कहा है। जो युक्ति के आगे कदम नहीं सकती। यह युक्ति यह है कि यदि माया को सत्य कहे तो जी हीन नहीं क्योंकि सत्य वस्तु का नाश नहीं होता है, और माया का ज्ञान से नाश हो जाता है, इससे माया सत्य नहीं कही जाती, और जो माया

के सत्य कहे, तो भी जात नहीं बनती, क्योंकि माया और माया के कार्य की अवत. स्वप्न, और सुषुप्ति तीनों हाल में प्रतीति होती है, इसलिये असत्य भी नहीं कही जाती है।

सत्य असत्य दोनोंको मिलाके कहे तो भी झूठ नहीं क्योंकि जब सत्य असत्यही संभव नहीं तो मिलानेकी जात कहाँ. इससे किसी रीति से भी मायाका स्वरूप नहीं बनता, और यदि ऐसा कहे कि माया चेतन से भिन्न है तो भी जात नहीं बनती क्योंकि चेतन से माया भिन्न है. तो जिस देशमें माया है उस देशमें चेतन का अभाव होगा और चेतन के तो वेद ने सर्वव्यापी कहा है. इससे वेद विरोध होगा. अतः भिन्न कहना भी नहीं बनता है. यदि ऐसा कहे कि माया चेतन से अभिन्न है सो भी नहीं बने. क्योंकि चेतन स्वरूप में स्थिती होने के ही मोक्ष कहते हैं. जब नाना प्रकार के साधनों से चेतन स्वरूप में स्थिती होगी तो मोक्ष दशा में छव के साथ माया फिर चिपट जावेगी. जिस से सभ साधन निष्फल होवेगा.

अतः माया के अभिन्न कहना भी नहीं बनता है और फिर भिन्न अभिन्न मिलाके कहे सो भी नहीं बनेगा. यदि मायाको सावयव कहे तो भी नहीं बने क्योंकि माया सावयव हो तो मायाकी प्रतीति होनी चाहिये परन्तु वह नेत्र से किसी को प्रतीत होती नहीं है. और जो माया के निरवयव कहे तो इससे जगत् की उत्पत्ति नहीं होनी चाहिये. क्योंकि निरवयव पदार्थ से किसी की भी उत्पत्ति देने में आती नहीं है. भृत्तिका आदि सावयव पदार्थों से घट आदि की उत्पत्ति देने में आती है. निरवयव से किसी की उत्पत्ति नहीं होती है. इससे माया के उपादान कारण कहा है परन्तु निरवयव उपादान नहीं होता है. इससे माया के निरवयव कहना भी बनता नहीं, और सावयव निरवयव मिला के कहे सो भी नहीं बनेगा. क्योंकि सावयव निरवयव तो उसका स्वरूप बना ही नहीं तो मिला के कैसे बनेगा. किन्तु किसी रीति से मायाका स्वरूप सिद्ध नहीं होता है. इससे मिथ्या माया से द्वैत नहीं होता है. जैसे मिथ्या सर्प

से रज्जु विषवासी नहीं होती है। तैसे ही मिथ्या भाया से चेतन आत्मा में द्वैत नहीं होता है। भाया उसे कहते हैं कि है तो नहीं और है ऐसी भासे।

जैसे आलुगर की आलु तैसे ही अहम् आत्मा का वास्तव से भेद नहीं है। और भेद की नाई प्रतीति होती है, इसी को भाया कहते हैं, और जो उपर नौ युक्तियां कही हैं उनसे भाया का स्वरूप ही नहीं बनता है तो आत्मा से अहम् जुदा कैसे होगा, और जो आत्मा से अहम् को जुदा कहे तो आत्मा से जो बिलिन्न है सो सभ्य अनात्मा ही कहा जाता है। इससे अहम् ली आत्मा से जुदा होगा तो यह ली अनात्मा ही होगा।

अहम् को अनात्मा किसी वेदशास्त्र ने अंगीकार किया नहीं है, इसी से जाना जाता है कि आत्मा से अहम् जुदा नहीं है और जो आत्मा को अहम् से जुदा कहे सो ली बने नहीं, क्योंकि जिस देश में आत्मा है उसी देश में अहम् नहीं होगा, और अहम् को तो वेदने सर्वव्यापी कहा है, अतः वेद से विरोध होगा। यह किसी ली आस्तिक जन को अंगीकार नहीं हो सकता, इससे आत्मा ली अहम् से जुदा नहीं है, अहम् और आत्मा दोनों एक ही वस्तु के नाम हैं। जैसे वृक्ष और तरु दोनों पर्याय हैं। जैसे एक ही आकाश का उपाधी भेद से बार नाम कहे हैं, तैसे ही उपाधी के भेद से चेतन के अनेक नाम कहे जाते हैं, जैसे घट उपाधी से घटाकाश कहते हैं और जल उपाधी से जलाकाश कहते हैं, आदल की उपाधी से मेघाकाश कहते हैं, और सर्व पदार्थों के अन्तर आहुर होने से महाकाश कहा जाता है, परंतु आकाश में कोई टुकड़े नहीं होते हैं, वह तो एक ही है, तैसे ही, कूट कहिये मिथ्या युद्ध और चिदाभास उनमें जो निर्विकार चेतन है, वही कूटस्थ कहा जाता है, और युद्ध व अज्ञान में चेतन के आभास को एव कहते हैं। शुद्ध सतोगुणवासी भाया में चेतन के आभास को ध्विर कहा है, और सर्व पदार्थों के अन्तर और आहुर जो व्याप रहा है, उसको अहम् कहते हैं। इस रीति से नामों का ही भेद है, वस्तु

हा बेट है नदी। अर्थात् अक्ष से आत्मा जुड़ा नहीं है, आत्मा और अक्ष दोनों एक ही ध्यान के नाम हैं, और अक्ष आत्मा का जो बेट बनता है। इनके लिये वेदां में बेट का ध्यान दिया है। बेट दृष्टिवाले को पशु भी कहा है, इससे भी जना जाता है कि वेद जगदान का भी अभेद में ही तात्पर्य है।

जब इस प्रकार की युक्तिपूर्वक महावाक्यों के अर्थ का ध्यान करेगा, तब अक्ष आत्मा का अभेद निश्चय होकर एक परिपूर्ण आत्मा ही सासेगा, और जो अनात्म पदार्थों का बेट सासता है, सो भी युक्ति से विचार करने पर नहीं सासेगा, सो युक्ति यह है कि जितना पृथ्वी का कार्य घर, पट, वृक्ष, पहाड़ आदि है सो सभी पृथ्वी रूप ही है, तैसे ही पृथ्वी जल का कार्य होने से जल रूप ही है, इसी प्रकार जल अग्नि का कार्य होने से अग्नी रूप ही है, ऐसे ही अग्नि वायु का कार्य होने से वायु रूप ही है, वायु आकाश का कार्य होने से आकाश रूप ही है, और माया विशिष्ट ईश्वर से आकाश की उत्पत्ति कही है सो उसका कार्य होने से माया विशिष्ट रूप ही है। उस में जो माया भाग है सो तो पूर्व कही रीती से मिथ्या है, और ध्यान भाग अक्ष आत्मा रूप एक ही है।

इस रीती से भी द्वैत नदी है, क्योंकि किसी भी तरफ को बसो आकाश तो एक ही है, तैसे ही विधी भुज करके देजा तो आत्मा से ही सर्व का विधान करना पड़ेगा और जो निषेध भुज करके देजा तो आत्मा में ही सभका निषेध कटना होगा। किसी भी रीति से द्वैत नदी बनता है, तेरी कल्पना में ही द्वैत है, सो कल्पना मात्र ही है, जो कुछ अधिष्ठान से जुड़ी नहीं है। कल्पित वस्तु अधिष्ठान से भिन्न नहीं होती है, ऐसी युक्तियों का बार-बार विचार करने का नाम मनन है, इस प्रकार मनन करने से सार का प्रदण्य होता है।

यही उसमें स्तम्भपना है, और श्रवण ही उसका द्वारण है, क्योंकि श्रवण बिना मनन नहीं होता है, और साधारण, असाधारण, बेट से दो प्रकार का उसका स्वरूप है, प्रमेयगत

असंभावना की निमन्त्री इसका इंस है। महावाक्यों का अर्थ
 इस निश्चय नहीं हो तो तब तक चिन्तन करना—यादिये, और जब
 इस निश्चय हो जावे तब नहीं करना यही इसकी अवधि है।

॥ इति श्री भवन रत्न समाप्तम् ॥

[११]

अथ निदिध्यासन रत्न

—:—:—

होहा—निदिध्यासन ताके कहे, लम्ब हिले नहीं होठ ।
 विरती के प्रवाल में, होय नहीं कोछ जोट ॥
 प्रती सज्जति यों उठे, अंतःकरण मंजार ।
 जैसे पुंजे से छुटे, दृष्ट नही तार ॥

अर्थ यह है कि पूर्व जो महावाक्यों के अनुसार लय ब्रह्म
 के अस्त्य का विवेचन किया सो युक्तिपूर्वक चिन्तन करने से जब
 इस हो गया है, तो फिर इसमें बाह्य धारियों के व्यापार की, और
 होठ हिलाने की कुछ जरूरत नहीं, अंतर ही अंतःकरण से
 प्रतियों के प्रवाल को अज्ञावे, और जोट कहिये विजती अनात्मा-
 धर प्रती नहीं होने के, अर्थात् अंतःकरण में से सज्जती कहिये
 ब्रह्माकार प्रतियों का अभ्युद प्रवाल जैसे यसे कि जैसे र्ध के
 तलके जेयने से तार अंध जाता है, और दृष्टता नहीं, धरती
 प्रकार प्रती का प्रवाल होने को निदिध्यासन कहते हैं।

निदिध्यासन इपी वृक्ष इस होने पर तलाल ही इस होता है
 जैसे वृक्ष के ज्ञान में कुछ दूरी नहीं लगती है किन्तु प्रथम
 जमीन की सझाई करने में ही दूरी होती है, भीज तो जहदी
 जोया जाता है, और फिर जल सिंचन रजवाली से आदि लेकर
 जो हिराजत करनी है, इसमें दूरी लगती है, परन्तु हिराजत
 करने से वह वृक्ष दृढता को प्राप्त होकर इस जहदी होता है,

તેસે હી નિદિધ્યાસન રૂપી જો વૃક્ષ હૈ ઉસે ઉપદેશરૂપી બીજ મેં
કુછ દેરી નહોં લગતી હૈ. પરંતુ જમીન રૂપી અન્તઃકરણ કે મલ-
વિક્ષેપ કી સફાઈ કરને મેં દેરી લગતી હૈ.

ઉપદેશ અર્થાત શ્રવણ તો હર એક જગહ હો જતા હૈ, પરંતુ
બીજરૂપ જો શ્રવણ હોતા હૈ ઉસકી મનનરૂપ હિક્ષાજત મેં દેરી
લગતી હૈ. ક્યોંકિ અનેક પ્રકાર કી ચુકિત સે ચિન્તનરૂપી
હિક્ષાજત કરની પડતી હૈ. જિસસે ઉસ શ્રવણરૂપી બીજ સે મનન-
રૂપી પૌધા કુછ કાલ પા કે દ્રઢ હોતા હૈ, પરંતુ દ્રઢ હોને કે
બાદ વહ નિદિધ્યાસનરૂપી વૃક્ષ કે રૂપ મેં હોકર જ્ઞાનરૂપી
ફલ કો જલદી હી ઉત્પન્ન કર દેતા હૈ. એસે જ્ઞાનરૂપી ફલ કે
ખાને સે અજ્ઞાનરૂપી ક્ષુધા દૂર હોકર દુખ કી સદાકે લિયે નિવ્રત્તી
ઓર પરમાનન્દ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ. ઇસી કારણ જિજ્ઞાસુ
પુરુષોં કો નિદિધ્યાસન રૂપ વૃક્ષ કી પુષ્ટી કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ
યહ મહાન ફલ કો દેતા હૈ. જૈસે કિસી રત્ન સે મહા દ્રવ્ય
કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ. પરંતુ ઉસ કે નાશ હોને કે અનેક ભય રહતે
હૈ; પરંતુ ઉક્ત જ્ઞાન રૂપી ધનકા તો કોઈ ભી નાશ નહોં કર
સકતા હૈ, ચોર ન ચોરે, રાજ ન ડ'ડે, ન કોઈ ભૂટ સકે. ગુપ્ત
જ્ઞાન રૂપી મહાન ધનકી એસી મહિમા અનાડી લોગ નહીં
જાન સકતે હૈ.

ઇસી સે નિદિધ્યાસન કો રત્ન કહા હૈ. મનન હી ઇસકા કારણ
હૈ. ઓર જો બ્રહ્મ મેં અન્તઃકરણ કી વૃત્તિયોં કા તૈલ ધારાવત
પ્રવાહ હૈ સોહી નિદિધ્યાસન કા સ્વરૂપ હૈ. વિપરીત ભાવના
કી નિવ્રત્તી ઇસકા ફલ હૈ. યદિ કોઈ એસા પૂછે કિ વિપરીત
ભાવના કિસકો કહતે હૈ, તો સુન, જૈસે સ્વર્ગાદિક અનિત્ય હૈ,
તિનકો નિત્ય જાનના ઓર સ્ત્રી, પુત્ર, અશૌચ્ય હૈ, તિનકો
શૌચ્ય જાનના, ઇસી પ્રકાર કૃષિ, વાણિજ્ય, મદિરાપાન, આદિ
દુખ રૂપ હૈ. તિનકો સુખ રૂપ જાનના, ઓર શરીર આદિ અનાત્મ
હૈ, તિનકો આત્મ રૂપ સમજના. યે ચાર પ્રકાર કે કાર્ય અવિદ્યા
કે કારણ જૈસે ઉલટે સમજે જાતે હૈ, વૈસેહી અવિદ્યા સે યહોં દ્રષ્ટાંત
મેં શુદ્ધ સત ચિદાનન્દ જન્મ મરણ તથા પુણ્ય પાપ સુખ દુખ

સે રહિત એક પરિપૂર્ણ બ્રહ્મ સ્વરૂપ એસા જો આતમા હૈ ઉસકા અસત જડ દુખ કા ભોગનેવાલા માનતા હૈ, ઇસી કો વિપરીત ભાવના કહતે હૈ, જિસકી નિવ્રત્તી નિદિધ્યાસન સે હી હોતી હૈ. ક્યોંકિ વારંવાર બ્રહ્માકાર વ્રત્તી કે હોને સે જીવ ભાવ દૂર હોકર બ્રહ્મભાવના હોને સે અપને કો બ્રહ્મ રૂપહી કરકે જાન સકતા હૈ, ઇસસે જીવ ભાવ દૂર હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર વિપરીત ભાવના કી નિવ્રત્તી નિદિધ્યાસન કા ફલ હૈ. જખતક જીવ બ્રહ્મ કી એકતા કા દઢ નિશ્ચય નહીં હો તખતક નિદિધ્યાસન કરે ઓર જખ દઢ નિશ્ચય હો જાવે, તખ વ્રત્તી કી પરિસંજ્યાન નહીં કરે, યહીં ઇસકી અવધી હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી નિદિધ્યાસન રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[૧૨]

અથ જ્ઞાનરત્ન

કવિત ॥ વેદરૂપ ઉદ્ધિ મેં જ્ઞાન રત્ન સુધા સમ,
કરકે યતન તાકો મથિ કે નિકાલિયે, ગુરુ દેવ વિષ્ણુ
હૈ યુક્તિ કી નેતી કરિ, વાર વારકો અભ્યાસ હી
મથન કરિ પાલિયે, જીવ દેવ અધિકારી નિરબલ
હોય રહા, ખ્યાય જ્ઞાન સુધા અસુર અહંકાર ગાલિયે,
કીની હૈ જુગત ભયો વિષ્ણુગુપ્ત સુધા સુરોં પિલાય કર કો
અસુરો કો જાલિયે ॥૧॥

અર્થ યહ હૈ કિ એક કાલ મેં દેવતા દૈત્યોં સે નિરબલ હો
ગયે તખ હાર માનકર કે વિષ્ણુ ભગવાન કે પાસ આકે કહુને
લગે કિ હો ભગવન ! હમ દેવતા તો નિરબલ હો ગયે હૈ. આપ
કૃપા કર કે કોઈ એસી યુક્તિ કીજિયે કિ હમારે કો બલ કી પ્રાપ્તિ

हो। तब विष्णु भगवान्, देवताओं और दैत्यों को धक्का कर कहुने लगे कि यलो समुद्र को मथन करके अमृत निकाल के तुम्हारे को पिलावे। अब इस सम्बन्ध में बहुत विवेचन करने से कुछ प्रयोजन नहीं है, जो हाथ पात द्रष्टान्त अनुकुल है सो आगे लिखी जावेगी। यहां द्रष्टान्त में विष्णु भगवान् की नांछ गुरु है और समुद्र नांछ वेद है। जिस में अमृत के समान ज्ञान रूपी रत्न है। इस की प्राप्ति के लिये सतसंग लेकर निदिध्यासन पर्यंत जो साधन कहे हैं सोई यत्न हैं। इन यत्नों से ज्ञान रूपी रत्न निकालना चाहिये, गुरुओं से जो नाना प्रकार की जिन युक्तियों द्वारा बोध सम्पादन किया है उन की रस्सी बनाके उससे पार-भार अव्यास रूपी मथन करें। ऐसे अव्यास को पालना अर्थात् पुष्ट करना चाहिये और यह एवही देवताओं की नांछ है जो निरपल कहिये अपने व्यापक ब्रह्मभाव को भूल के अनेक प्रकार के एतत्त्व धर्मों को निश्चय करके तुच्छता को प्राप्त हो रहा है। यही इस में निरपलता है, इस पर तेरे को अंक

आध अकरी न्याय

सुनाते हैं। सो यह है कि किसी एक वाधिन ने आध जया था। उसी काल में किसी कारजवश वह वाधिन तो लग गई और उसका अन्धा वहाँ पड़ा रह गया। तब किसी ग्वालिये ने उसे उठाकर अपनी अकरीयों में मिला लिया। वह शेर का अन्धा, अकरीयों का दूध पीकर उनके संग में वास आया करता था। वह अपने को भौकड़ा समझने लगा, और काल पा के भड़ा हो गया। तब किसी दिन उन अकरीयों को देख के किसी अन्ध का एक शेर बला आया उनको पकड़ ने के वास्ते बला। वे अकरीयें लय की भारी लगने लगी, और उनके साथ वह शेर भी लागा। तब अन्ध का शेर ने कहा अरे भूर्भूतू इसा शेर है। अकरीयों के संग में लागता फिरता है, तब वह बोला कि मैं शेर कैसे हूँ। मैं तो भौकड़ा हूँ। यह सुनकर वह अन्ध का शेर कहुने लगा अरे भूर्भूतू कुछ विचार के देख, जैसे शेर लम्ब है, तैसाही शेर तू भी है, इन अकरीयों में जाके को फिरता है, तू देख तो सही, जैसा हमारा

स्वरूप है, तैसा तेरा स्वरूप है, तब उन व्यक्तियों में रहनेवाले शेर ने उस मन के शेर की तरफ देखा और फिर आपने शरीर की तरफ देखा तो जैसा रंग रूप उसका था तैसाही अपने को भी देखा, तब उसको कुछ संस्कार हुए आये और उस मन के शेर को दहाड़ लगाई और जिन कर्मों के संयोग से शेर का शरीर रखा था वे भी हुए आये तब तो वह क्रुद्धने लगा और अपने को शेर रूप जानने लगा और उन व्यक्तियों को भार भार के आने लगा।

इस संघर्ष में द्रष्टांत यह है कि यह चेतन आत्मा ही एक शेर है, जिसे मन रूप व्याप्तिये ने शरीर तथा इंद्रिय रूपी व्यक्तियों के साथ मिला दिया है, यह चेतन आत्मा शरीर व इंद्रियों में मिलकर उनके जो धर्म हैं उनके वृथा ही अंगीकार करने लगा अर्थात् स्थूलोह, सूक्ष्मोह ऐसा अहंकार करके अपने को शरीर मानने लगा, और इस प्रकार शरीर व इंद्रियादि के धर्मों को अपने जानने लगा, तब नाना प्रकार के श्रवण धर्मों का अपने में आरोपण करके नाना प्रकार के दुष्कों को प्राप्त हुआ, फिर किसी पुण्य कर्म के प्रभाव से मन के शेर के नाईं को विचारवान महात्मा पुरुष हैं उनसे मिलाप होने पर जब वे मन के शेर की नाईं उसे समझाते हैं कि अब तो तो शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म स्वरूप है, फिर अपने में शरीर इंद्रियादि के धर्मों को क्यों आरोपण करता है, तो तो उत्पत्ती नाश रहित परिपूर्ण सर्व धर्मों से रहित ब्रह्म स्वरूप है, जैसे मन के शेर ने दहाड़ लगाई थी, तैसे ही महात्मा पुरुष "अहं ब्रह्मास्मि" ऐसी दहाड़ सुनाते हैं, तब व्यक्तियों के शेर की नाईं को जिज्ञासु है, उसको पूर्व को अनेक बार वेदान्त शास्त्र का श्रवण होने से उसके संस्कार अंतःकरण में सुक्ष्म रूप से स्थिति होने के कारण गुरुजनों ने मुण्डकोपनिषद् से अच्युत सुनते ही उनके मन से "मैं ब्रह्म रूप हूँ" ऐसी स्मृति आ जाती है, और वह अपने को ब्रह्मरूप जानता है।

इस प्रकार व्यक्तीपना को श्रवण है सो झूट जाता है, यही निरवज्ञता इस देवतारूपी श्रवण में हो रही है, जैसे विष्णु

अजयान ने समुद्र से अमृत रत्न को निकाल के देवताओं को
पिलाया तब वे अन्न को प्राप्त होकर असुरों को मार सके, तबसे
ही यदा विश्वरूप गुरु ने समुद्ररूपी वेद के युवाक्षी नाभ के ज्ञान
रत्न है उसको नाना प्रकार की युक्ति रूपाँ स्त्री से मयन करके
अधिकारी पुरुषों को पियाया, तब उन्होंने अन्न कायरूपी अन्न
को प्राप्त करके परिष्कृत अक्षररूपी असुरों को मारा है, और
जैसे विश्व ने, देवता और असुरों का आपस में विवाद हुआ
तब युक्ति से मादुनीरूप धारण किया तब उस रूप को देव के
असुर मादित हो गये, उस समय देवताओं को युवा और
असुरों को मुरा पिला के उनका विवाद मिटा दिया, तबसे ही देव-
रूपी शय और अनात्म अक्षररूपी असुरों का वे आपस
में विवाद है उसको मिटाने के लिये विश्वरूपी गुरु अनेक प्रकार
की गुप्त प्रगट युक्ति करके परिष्कृत अक्षररूपी असुर को
ज्ञानरूपी अग्नि प्रत्यक्षित करके जला देते हैं. यह अर्थ है.

अथ ज्ञान का कुछ ध्यान दिया जावेगा. ज्ञान क्या है अथवा
कोई पूछे तो सुन. जिस से पदार्थ की ज्ञान होवे उसको ज्ञान
कहते हैं, पदार्थों की ज्ञान तीन प्रकार से होती है. कहीं तो
अनुमान से ज्ञान होती है. पर्वता वन्दिमान, कहीं स्मृतिरूप
करके ज्ञान होती है. जैसे यह महात्मा, और कहीं छंदरूप करके
ज्ञान होती है. जैसे यह महात्मा, इसी प्रकार ज्ञान की तीन
प्रकार के होते हैं. अथ ज्ञानों को दिखाने हैं. जहां पर्वत आदि
में बन्दि आदि का ज्ञान है सो परोक्ष ज्ञान होता है. परोक्ष
ज्ञान के और भी अद्भुत भेद हैं सो न्याय के ग्रन्थों में लिखे
हैं, परन्तु यह अनुमान ज्ञान हेतु अंश में तो प्रत्यक्ष ही होता
है और साध्यअंश में अनुप्रतीतिरूप होता है. सो भी प्रत्यक्षता
को लेकर ही वे बन्दी आदि का परोक्ष ज्ञान है इसका कारण
होता है. और जे पूर्व हेतु महात्मा आदि की ज्ञान कराता है
उसको स्मृति ज्ञान कहते हैं. उसके भी अद्भुत भेद हैं.

कोई स्मृति यथार्थ ज्ञानजन्य संस्कारों से होती है सो
यथार्थ स्मृति कही जाती है, और अज्ञानजन्य संस्कारों से

जो स्मृति होती है वह अथार्थ स्मृति नहीं होती है, उनके भी आगे दो दो अंग हैं, कोई आत संक्षेप में लींभी हो परन्तु पूर्वद्रष्ट पदार्थ के ज्ञानजन्य संस्कार विद्यमान होने और सादृश्य वस्तु का दर्शन आदि होने से यह स्मृतिज्ञान अपने विषय का ज्ञान कराता है, परन्तु यह भी पूर्व द्रष्टव्य प्रत्यक्षता को लेकर ही तब अंश स्मृति कराता है, सो तबअंश में तो स्मृतिरूप है और पूर्व द्रष्टव्यअंश में प्रत्यक्षरूप है, इससे वह भी प्रत्यक्षरूप होने से प्रत्यक्ष की सहायता को लेकर अपने विषय सिद्धी करता है, जो उक्त पदार्थ की ज्ञात करानेवाला ज्ञान कहा जाता है,

जैसे यह महात्मा है, सो छे प्रकार का होता है, कहीं तो श्रोत्र इंद्रिय से प्रत्यक्ष होता है, सो शाब्दिक ज्ञान कहाता है और यहीं यक्षु इंद्रिय करके होता है, सो आक्षुब्धज्ञान कहा जाता है, और कहीं घ्राण इंद्रिय से होता है सो घ्राणजज्ञान कहा जाता है, और जहां त्वया से ज्ञान होता है, सो त्वय्यज्ञान कहा जाता है, और जो रसना से होता है सो रसनाज्ञान कहा जाता है, और जो मन से होता है सो मानसज्ञान कहा जाता है, जैसे भुज दृण का जो ज्ञान है सो मानस प्रत्यक्ष कहाता है, और शब्द का ज्ञानश्रोत्र से प्रत्यक्ष होता है, तैसे ही रूप का ज्ञान यक्षु से प्रत्यक्ष होता है और गंध का ज्ञान नासिका से प्रत्यक्ष होता है, और ठंडे गर्म का ज्ञान त्वया से प्रत्यक्ष होता है, तैसेही रसका ज्ञान रसना से प्रत्यक्ष होता है,

इस रीति से प्रत्यक्ष ज्ञान पट प्रकार का होता है, परन्तु यह प्रत्यक्ष ज्ञान भी दो प्रकार का होता है, एक तो प्रमा और दूसरा अप्रमा कहाता है, जैसे रज्जु में अंधकार आदि दोष सर्प आदि का जो ज्ञान है सो भ्रम ज्ञान कहा जाता है, और रज्जु का जो रज्जु रूप से ज्ञान है सो प्रमा ज्ञान होता है, इसी को यथार्थ ज्ञान भी कहते हैं, यह तो ज्ञान का साधारण लक्षण है, और जो केवल एक आत्मा का ही ज्ञान है वह असाधारण लक्षण है, जैसे नेत्र से एक रूप का ही ज्ञान होता है,

સો ઉસકા સાધારણ લક્ષણ હૈ. ઔર યદિ એસા પૂછે કિ આત્મા કા જ્ઞાન કૌન પ્રમાણ સે પ્રત્યક્ષ હોતા હૈ, તો સુન, યહ કહના એસા હૈ, જેસે કોઈ કહે કિ સૂર્ય કા પ્રકાશ કિસ લૌકિક પદાર્થ સે હોતા હૈ ?

ઇસ બચન કો સુન કે દૂસરા પુરુષ કહતા હૈ, અરે મૂર્ખ, જિતને લૌકિક પદાર્થ હૈ, સો તો સારેહી સૂર્ય કે પ્રકાશ સે પ્રકાશવાન હોતે હૈ; સૂર્ય કો કૌન પ્રકાશ કર સકતા હૈ ? તૈસેહી જિતને પ્રમાતા, પ્રમાણ પ્રમેય, જ્ઞાતા, જ્ઞાન જ્ઞેય, દ્રષ્ટા, દર્શન, દશ્ય, કરતા, ક્રિયા, કર્મ, યે સખ ત્રિપુટી હૈ. જો જ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કે પ્રકાશ કો પાકર જ્ઞાનવાલી હોતી હૈ. આત્મા કા જ્ઞાન ઇન સે નહીં હોતા હૈ કયોંકિ યે તો સભી અનાત્મ ઔર ઔર જડ હૈ; ઇસ પ્રકાર કે પદાર્થ સે કિસી કા પ્રકાશ હોતા નહીં પરંતુ જેસે અગ્નિ સે તપા હુઆ લોહા દૂસરે પદાર્થો કો પ્રકાશ કર સકતા હૈ ઔર જલા ભી દેતા હૈ, ઔર ઉસ અગ્નિ કે પ્રકાશ કરને મેં ઔર જલાને મેં ઉસ લોહે કી સામર્થ નહીં હોતી હૈ. તૈસેહી યહ જો પ્રમાતા પ્રમાણ આદિ ત્રિપુટી હૈ, સો આત્મા કે તાદાત્મ સંબંધ સે જ્ઞાનવાલી હોતી હૈ, તખ ઇનકે કિસી પદાર્થ કા જ્ઞાન હોતા હૈ, પરંતુ આત્મા કા જ્ઞાન ઉનસે કેસે હોવે, આત્મા તો સ્વયં પ્રકાશ હૈ. ઔર સર્વ ત્રિપુટી કો પ્રકાશ કરતા હૈ. ઇસ પ્રકાર કા ચેતન આત્મા તૂ હી વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ હૈ. એસા તૂ હી હૈ.

ઇસી બાત કો તૂ અપના નિશ્ચય કર. જખ એસા તુઝે દઢ નિશ્ચય હોગા, તખ ઉસી કો તૂ દૃઢ અપરોક્ષ જ્ઞાન જાનના. યહ જ્ઞાન શ્રોત્ર સંબંધી વાક્ય સે હોતા હૈ, પરંતુ વાક્ય કો પ્રકાર કે હોતે હૈ. એક તો મહાવાક્ય ઔર દૂસરે અવાંતર વાક્ય હોતે હૈ. જો વાક્ય અસ્તિ રૂપ સે બોધ કરે ઉસસે પરોક્ષ જ્ઞાન હોતા હૈ. જેસે દશમોં અસ્તી. ઇસ વાક્ય સે દશમ કા પરોક્ષ જ્ઞાન હી હોતા હૈ, ઔર જહાં વાક્ય એસા બોધ કરે કિ દસવાં તૂ હૈ વહાં વાક્ય સે અપરોક્ષ જ્ઞાન તત્ત્વમસિ, અહં બ્રહ્માસ્મિ, પ્રજા-નમાનંદં બ્રહ્મ, અયં આત્મા બ્રહ્મ, આદિ મહાવાક્યોં સે હોતા

है, 'मैं' जहाँ रूप है, वहाँ ज्ञान और ज्ञानही महावाक्य को ही होता है, और सत्य ज्ञानमय का अन्त, अन्तही अन्त, वहाँ जहाँ अन्तही वाक्य है, वहाँ अन्त ही परमा ज्ञान ही होता है, जो भुक्ति का हेतु नहीं होता है।

इससे जहाँ महावाक्य का उपदेश शुद्धभूत से अवश्य दिया है और तत्त्वम् पर के शासनपूर्वक, अर्थात् माया आविर्भाव का ज्ञान के शुद्ध ध्यान मात्र को सर्व जहाँ से रहित अपना स्वयम् ही करके जानने को ही अन्त निष्पत्ति (ज्ञान) कहते हैं, और यही भुक्ति का हेतुवाला है, इस के अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार के ज्ञानों का ध्यान करने में आता है परन्तु वे कोई भी भुक्ति के हेतुवाले नहीं हैं नैयामिक आदि अज्ञानाभाव को ही ज्ञान कहते हैं, जो अत्यन्त विशुद्ध है।

क्योंकि ज्ञान के बिना अज्ञान का अभाव किसी रीति से बनना नहीं अर्थात् किसी कारण से ही कार्य का अभाव होता है जैसे घर अभाव रूप कार्य प्रतिभागी के नाश रूप कारण से बिना अथवा प्रतिभागी के छिदा से जानने के कारण बिना अभाव किसी रीति से नहीं बनता है, और जहाँ ऐसा छिदा कि अज्ञान से ही अज्ञान का आभाव होता है, जो भी आत नहीं है, क्योंकि आत्मभाव आदि होयों का प्राप्ति होगी, इस से जाना जाता है कि अज्ञान का अभाव एक ज्ञान से ही होता है, जैसे अंधकार का नाश और किसी से नहीं होता है, एक प्रकाश से ही होता है, तैसी ही अज्ञान का नाश भी और किसी से नहीं होता है एक अज्ञान से ही नाश होता है।

इस रीति से अज्ञान रूप कार्य के नाश करने में एक ज्ञान ही कारण है, परन्तु यह ज्ञान भी अज्ञान के नाश करने में तभी समर्थ होता है जब कोई प्रतिषेध नहीं हो। प्रतिषेध के होने से ज्ञान अज्ञान का नाश नहीं कर सकता है जैसे राहू के रथ की छाया पड़ने से चंद्रमा प्रकाश नहीं करता है और जहाँ ऐसा छिदा कि प्रतिषेध किसीको कहते हैं, तो मुन. अवश्य से पूर्व

काल में जे किसी पदार्थ में चित्त की दृढ़ आसकती हो, उसीका श्रवण काल में वारंवार चिन्तन होता है, उसको भूत प्रतिबन्ध कहते हैं, और लावि यह है कि जैसे प्रारब्ध कर्म. यह भी अनेक प्रकार का विलक्षण होता है, जैसे किसी एक ही कर्म को दस शरीरों का आरंभ करना है, और पहिले शरीर में ही तत्त्व-मयी आदिका महावाक्य का श्रवण होने से भी ज्ञान नहीं होगा, क्योंकि आगे नौ जन्म बाकी पड़े हैं, सो ही ज्ञान के प्रतिबन्ध है.

जैसे सनकादिकों ने वामदेव आदि अधिकारी प्रज को ज्ञान का उपदेश किया परंतु प्रतिबन्ध के होने से माता के गर्भ में ही पूर्व के श्रवण से ज्ञान हो गया. यह वार्ता शास्त्रों में प्रसिद्ध है. तैसेही सरत के तीन जन्म बाकी रहे थे. जन्म उन की निवृत्ति हुई तब उसको ज्ञान हुआ. उसको आगामी प्रतिबन्ध कहते हैं. तीसरा जे वर्तमान प्रतिबन्ध है, सो चार प्रकार का होता है. एक तो विषयों में आसकती, दूसरा बुद्धी की मन्दता, तीसरा पूर्व काल में जे वेद वादियों के वचनों का श्रवण किया है, उनके संस्कारों से अनेक प्रकार की वेद विरुद्ध खेदकी तर्क जिनको कुतर्क कहते हैं, और चौथा दुराग्रह विपर्याय है.

इस जन्म को अनेक जन्मों में जन्म धर्मों का दृढ़ निश्चय होने से श्रवण काल में जन्म लावना बनी रहती है, और लावना नहीं होती, इसी को दुराग्रह जनना. जन्म तक यह विपर्याय होता है, तबतक मैं हूँ ऐसा ज्ञान नहीं होता है. इसी से उसको प्रतिबन्ध कहते हैं. भूत प्रतिबन्ध की और वर्तमान प्रतिबन्ध की तो उपाय करने से निवृत्ती हो जाती है, परंतु तीसरा जे लावी प्रतिबन्ध है. उसकी निवृत्ती विलक्षण कर्म के योगने से ही होती है, इस से इस में पुरुषार्थ नहीं चलता है, परंतु प्रथम दोनों की तो पुरुषार्थ करने से निवृत्ती हो जाती है. इसलिये जिज्ञासु पुरुषों को उनकी निवृत्ती अवश्य करना चाहिये क्योंकि ज्ञान के प्रतिबन्ध से रहित होते ही मोक्षरूपी फल की प्राप्ति होती है.

વાસના ભી જ્ઞાન કી પ્રતિબંધ હોતી હૈ, ઓર વાસના કો પ્રકાર કી હોતી હૈ. એક તો શુદ્ધ વાસના જિજ્ઞાસુ કો હોતી હૈ ઓર જન્મોં કા નાશ કરનેવાલી હૈ, ઓર દૂસરી મલીન વાસના હોતી હૈ. મલીન વાસના ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ, એક તો લોભ મેં પૂજે જાને કી જો ઈચ્છા હૈ ઉસે લોભ વાસના કહતે હૈ. દૂસરી કેહ વાસના હૈ, ઓર વહુ અનેક પ્રકાર કી હોતી હૈ મેરી કેહ બહુત અચ્છી હૈ, મેરી જાતિ સબસે ઉત્કૃષ્ટ હૈ, મેરા અગ ગારા હૈ, સર્વ શરીરોં સે મેરા શરીર અચ્છા હૈ, આદિ ઇસ પ્રકાર કી સભી વાસના મલીન કહી જાતી હૈ, ઓર જન્મોં કે દેનેવાલી હોતી હૈ, ઓર ત્રીસરી શાસ્ત્ર વાસના હોતી હૈ સો ભી કોઈ તો પાઠ વાસના હોતી હૈ ઓર કોઈ અર્થ વાસના આદિ. ઇસ પ્રકાર શાસ્ત્ર વાસના કે ભી બહુત ભેદ હૈ, પરંતુ યે સભી મલીન વાસનાઓં હૈ, ઓર જન્મોં કે દેનેવાલી હૈ, ઇસ લિયે યહ વાસના ભી જ્ઞાન કા પ્રતિબંધ હોને કે કારણ ત્યાગ કરને કે યોગ્ય હૈ. છઠ્ઠા પ્રતિબંધ અભિનેશ હૈ. ઉસી કો સાંજ્ય મત મેં મહત્ત્વ કહતે હૈ, ઓર વેદાંતવાલે ઉસે હૃદય ગ્રન્થી ઓર સૂક્ષ્મ અહં-કાર ભી કહતે હૈ. પૂર્વ કે સૂક્ષ્મ સંસ્કારોં કા દ્રઢ અભ્યાસ હોને સે જો અનાત્મ સ્થૂલ સૂક્ષ્મ સંઘાત હૈ ઉસે આત્મારૂપ કરકે જાનને ઓર શ્રવણ કાલ મેં ભી યહી ભાવના બની રહને સે ઇસ કો પ્રતિબંધ કહા હૈ.

ઉક્ત પ્રકાર કી ભાવનાઓં કા ત્યાગ કરના ચાહિયે કયોં કિ વિરોધી કી નિવૃત્તી હુયે બિના કાર્ય કી સિદ્ધિ હોતી નહીં હૈ. ઇસી લિયે વિરોધી કી નિવૃત્તી કી આવશ્યકતા હૈ. ઇસ રીતિ સે પ્રતિબંધ સે રહિત જો યથાર્થ જ્ઞાન હૈ વહુ મોક્ષરૂપી ફલ કી પ્રાપ્તી કરતા હૈ. જો પુરુષ ચારોં સાધન સમ્પન્ન હો ઓર જિસકી બુદ્ધી સર્વ પ્રતિબંધોં સે રહિત હોં ઉસકો કેવલ મહાવાક્ય કે અર્થ કા શ્રવણ હોતે હી "મૈ બ્રહ્મ હૂં" ઇસ પ્રકાર બ્રહ્મ આત્મા કે એકત્વ કો સુનતે હી દ્રઢ નિશ્ચય હો જાતા હૈ. ઇસ પ્રકાર કે જ્ઞાનવાન પુરુષ લક્ષણ શાસ્ત્રોં મેં નીચે લિખે અનુસાર કહે હૈ.

श्लोक

अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रियत्वं क्षमा दया सर्वे प्रिय-
त्वं ॥ निर्लोभ दाता भय शोकहीनं ज्ञानं प्रलब्ध्वा
दश लक्षणानि ॥१॥ निरुद्धो निरविवादश्च निशं-
कश्च निरंकुश ॥ तृप्तश्च कृतकृतश्च ज्ञानं च षट्
लक्षणं ॥२॥

अर्थ यह है कि (१) क्रोध रहित होना, (२) वैराग्यवान् होना (३) जितेन्द्रिय अर्थात् छोटे विषयों से मन तथा इन्द्रियों को रोकनेवाला होना (४) क्षमावान् होना (५) दयावान् होना (६) प्राणी मात्र पर विशेष प्रकार का प्रेम करनेवाला होना (७) निर्लोभी होना (८) दाता अर्थात् अन्नज्ञान का देनेवाला होना (९) भयहीन अर्थात् जन्म मरण के भय जिसके गये हैं और (१०) सांसारिक पदार्थों के वियोग में जिससे शोक नहीं है, ये दश लक्षण उसी में होते हैं जिसको ज्ञान की प्राप्ति हुई है।

ज्ञानी पुरुषों के लक्षण और भी होते हैं। निरुद्ध अर्थात् किसी प्रकार का किसी से लड़ नहीं करते हैं विवाद भी किसी से नहीं करते, निशंक अर्थात् आत्म वस्तु में कोई भी शंका उन को नहीं है, और किसी वेदशास्त्र की आज्ञाकारी अंकुश उन के सिर पर नहीं होता। किसी से वे निरंकुश हैं, आत्मा में ही तृप्त होते हैं, और कृतकृत्य हैं, इस पर भगवान् ने कहा है—

श्लोक—यस्य आत्मरतिरेवस्य हात्मतृप्तिश्च मानवे ।

आत्मन्येवयश्च संतुष्ट तस्य कार्यं न विद्यते ॥

विज्ञानवान् किसी पदार्थ से तृप्ति को प्राप्त नहीं होता है और लौकिक तथा वैदिक सर्व कार्यों से रहित होता है। अतिरिक्त उक्त षट् लक्षण और दस ऐसे सोलह लक्षण ज्ञानवानों के होते हैं। इनके और भी अभानित्व आदिक अद्भुत है।

तात्पर्य यह है कि जितने लक्षण जिज्ञासु में होते हैं वे प्रयत्न-
साध्य होते हैं और ज्ञानवान में वे स्वाभाविक ही होते हैं।

इस बात को सुन के शिष्य कहता है, हे भगवन ! यह
जो आपने ज्ञान का कथन किया है जिस में ज्ञान का कारण
है, और उसका स्वरूप तथा इस का है, और उसकी अवधि
किस प्रकार है, सो ये सभ, आप कृपा करके बताइये।

गुरु कहते हैं- हे शिष्य ! अथ तू ज्ञान के कारण
आदि का श्रवण कर. प्रथम तो विवेक आदि चार ज्ञान के
कारण हैं, परंतु ये चारों कारण श्रवण में प्रवृत्ति द्वारा हैं.
क्यों कि अहिरभुज का तो श्रवण में अधिकार ही नहीं होता
है, और श्रवणादिक जो तीन हैं सो भी असंभावना और
विपरीत भावना की निवृत्ति द्वारा ज्ञान के कारण हैं, और
साक्षात् कारण तो श्रोत्र संघर्षी महावाक्य ही होते हैं. वे
ही ज्ञान के मुख्य कारण हैं. सत्य मिथ्या का विचार कर के शुच
ब्रह्म की ऐक्यता का निश्चय किया है वही ज्ञानका स्वरूप है, और
सर्व प्रकार के कर्मों से रहित हो के ब्रह्माधार वृत्ति का कारण करके
विचारना ही ज्ञान का इस है. जैसा अज्ञान जल में शरीर में
अलंकार था कि मैं शरीर हूँ, वैसा ही अलंकार ज्ञान
होने पर शुद्ध आत्मा में होता है. इसी को ज्ञान की अवधि
कहते हैं. इस रीति से ज्ञान रत्न का कथन किया.

॥ इति श्री ज्ञान रत्नम् समाप्तम् ॥

[१३]

अथ ज्वनमुक्त रत्न

सवैया छन्द

ज्वनमुक्त भये जग में, जिन आत्म पूरण ब्रह्म-
निहारया ॥ पिंडरु प्राण के संयोग हू ते, भेद अरु

आंति का मूल उभारया ॥ परारब्धिसंयोग से देह
वहै नित, संयित और अगाभी के। नरया ॥ शुष्क
तृणवत लरमत है तन, घण्ट अनिष्ट अदृष्ट अधारा ॥

अर्थ यह है कि जगत में ज्वनमुक्त वही है जिसने
आत्मा को परिपूरण ब्रह्म रूप करके जना है. पिंड प्राण के
संयोग होने से पंच प्रकार की जो आंति है सो दिखाते हैं:-
बेद आंति, कर्ता लोगतापने की आंति, संगकी आंति, विकार
आंति, और ब्रह्म से लिन्न जगत के सत्यपने की आंति. इन
पंच प्रकार की आंति की निवृत्ति जिन पंच द्रव्यों से की जाती
है वे द्रव्यांत ये हैं; अि-प्रतिअि के द्रव्यांत से बेद आंति
की निवृत्ति होती है, स्फटिक में लाल वस्त्र के लाल रंगको प्रतीति
के द्रव्यांत से कर्ता लोगतापने की आंति की निवृत्ति होता है,
घटाकाश के द्रव्यांत से संग आंति की निवृत्ति होती है, रज्जु में
कल्पित सर्प के द्रव्यांत से विकार आंति की निवृत्ति होती है, और
कनक के कुण्डल के द्रव्यांत से ब्रह्म से लिन्न जगत के सत्यपने
की आंति की निवृत्ति होती है, इस प्रकार की आंति से जो नाना
प्रकार का बेद आसता है, उस बेद का और आंति का मूल कहिये
जो अज्ञान उसको उभारया अर्थात् ज्ञान रूपी असंग शस्त्र से
जिसने काट दिया है, और जिसका प्रारब्ध के अनुसार व्यवहार
होता है, और जिसने संयित और अगाभी को, ज्ञानाग्नि
द्वयकर्मणुं तमाहुः पंडितभू युधाः—उस ज्ञान रूपी अग्नि से
जला दिया है और सुषे तृण की नाई प्रारब्ध के फल से जिसका
शरीर संसार में द्धिरता है, घण्ट कहिये अनुकूल और अनिष्ट
कहिये प्रतिकूल अदृष्ट ऐसे दोनों के फल से वह विचरता है.

इस प्रकार अहंकरता के आव से रहित ज्वनमुक्त पुरुषों
का व्यवहार होता है. ये सारा व्यवहार ऐसा है कि जैसी आंति
की संध्या होती है, और जैसे कुम्हार ढंढा लगा के चक्को द्धिर
देता है, तैसे ही प्रारब्ध रूपी उड से शरीर रूपी चक्कर द्धिरता
है, जितना वेग चक्कर में चडता है, उतने समय तक द्धिरता है

और वेग बढने से ठहर जाता है. तेरे ही प्रारब्ध रूपी व्यक्त
शांत हो जाता है.

परन्तु सर्व ज्ञानवान् जवनयुक्तों का व्यवहार एक सा
नहीं होता है, क्योंकि प्रारब्ध कर्म सभ के विलक्षण होते हैं.
प्रारब्ध के अनुसार व्यवहार भी विलक्षण होता है. किसी का
प्रारब्ध कर्म राज्यपालन का ही होता है जैसे जनक राज का
किसी का प्रारब्ध शिक्षावृत्ति का होता है जैसे इत्त. जड.
जस्तादिक. किसी का प्रारब्ध कर्म ज्ञान से उत्तरकाल में निवृत्ति
का होता है जैसे वासुदेव आदि का. किसी का कर्म ऐसा
ही होता है कि ज्ञान से उत्तरकाल में अधिक योगों में प्रवृत्ति
का होता है जैसे शिष्यरत्न का.

इस प्रकार जवनयुक्त महात्माओं का कहीं तो प्रवृत्ति का
व्यवहार और कहीं निवृत्ति का व्यवहार होने और सुनने में
आता है. परन्तु प्रारब्ध के विलक्षण होने से व्यवहार भी विल-
क्षण ही होता है. परमार्थ में तो सभी का एक ही निशान है,
सो निशाना क्या है ! मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ ऐसा जो जानने का
है. सो एक ही भाव है. इस में किञ्चित्मात्र भेद नहीं है. और
जितना भेद प्रतीत होता है सो सभी प्रारब्ध कर्म से आसता
है. सो प्रारब्ध भी ऐसा है जैसे मुक्ति में रजत कद्विपत होता
है तैसे मैं ब्रह्म आत्मा सर्व का अधिष्ठान होने से मेरे में कर्ता
किया कर्म सभ कद्विपत रूप हैं, फिर कोई तो लिंग सन्ध्यास धारण
करके विचरते हैं, कोई तीर्थ में ही प्रारब्ध के आधीन विचरते
हैं, कोई विधी कर्म को ही करते हैं और कोई विधी को नहीं
ही करते हैं. परन्तु जैसे आकाश ध्रुव से लिपायमान नहीं
होता है तैसे ही जवनयुक्त किसी कर्म से लिपायमान नहीं होते
हैं. क्योंकि वे तो निरूप्य हैं.

जिन को मुक्ति की भी भ्रम नहीं होता है उन के समान
और कोई मनुष्य, देवता तथा चर्च आश्रमवाला नहीं होता
है. इसी से उन को अति आश्रमी और अति आकाश भी कहते
हैं. ऐसे जवनयुक्त विद्वान किसी पुण्य पाप कर्म से लिपायमान

नहीं होते हैं। याहें वे किसी विधी कर्म को करें याहें न करें। यह मुन शिष्य शंका करता है। हे भगवान् जिन संध्या गायत्री आदि कर्मों को पाप निवृत्ति के वास्ते वेद ने कथन किया है उन कर्मों को जीवनमुक्त नहीं करेगा तो उसको भी पाप होगा। इस परसे गुरु कहते हैं:—

हे शिष्य, वेद ने पाप निवृत्ति के वास्ते संध्या गायत्री कर्म का जो कथन किया है सो सभ्य दिन के तथा सभ्य पुरुषों के वास्ते करना नहीं कहा है, किन्तु किसी हाल में उनके करने का निषेध भी दिया है। जैसे सूतक पातक में उनका निषेध भी दिया है। ऐसे ही ज्ञानवान् के लिये भी सर्व कर्मों का निषेध ही कथन किया है, क्योंकि उनके घर में सूतक और पातक दोनों होते हैं।

कुलुडलिया।

ममता माँ भर गह, पुत्र उपज ज्योव ॥ सूतक पातक
हो लुये, घर में रही न सोव ॥ घर में रही न सोव,
कैसे अण करिये सन्ध्या ॥ शास्त्र वर्जित कर्म सोव करे
सोई जन्मो अन्धा ॥ गुप्त माँहि किरिया लप्ते सो नर
भूरण जन्म ॥ सन्ध्या गायत्री विना सदा अक
निरवान ॥ १ ॥

जिस के घर में अक सूतक के होते सन्ध्या गायत्री का निषेध कहा है फिर जिसके यहां सूतक पातक दोनों धक्के हों उसको क्या करना चाहिए ? वह तो निषेध रूप ही है, क्योंकि जीवनमुक्त ज्ञानवान् पुरुष विधि के भी किंरक नहीं होते हैं। वे तो विधी और निषेध दोनों के सिर पर पैर धरके वर्तते हैं। केवल प्रारब्ध के आधीन उनका व्यवहार होता है। उनकी क्रिया का नियम नहीं होता है। इसी से उन को जीवनमुक्त कहते हैं। शिष्य शंका करता है—

हे जगवन ! यह ते एवममुक्त के सम्बन्ध में आपनि
कहा है सो तो जन्म सिद्धि हो तो ऐसा होता है परन्तु यदि
एवमवयव क्या है सो आप पूछा करके जनायिये.

गुरु कहते हैं, हे शिष्य ! तीन शरीर और पंच कोषों में
ते कर्ता बोधतापने का परिच्छिन्न आवरण हो रहा है, यही
एवमवयव है. जैसे, और आदि के वास्ते काशबुद्ध अवयव होता
है और इनके हाथों में लक्ष्मी पैरों में गिरी गले में तौक
जलर और हाथ रस्सी से बांध कर उसे काशबुद्ध में रोक देते
हैं, और पहरेदार सिपाही उसकी रणवाजी करता है. यदि वह
कभी आहूत निकलना चाहे तो उसके सिर में डंडा मारते हैं,
तैसे ही अज्ञानी पुरुषों को लज्जितभी तौक गले में पडा है
और ममताइया गिरी पैरों में पडी है. और पदार्थों में ते
प्रोति है सो ही रस्सी है. इस से हाथ बांध के रणे है, और
अज्ञान इषी काशबुद्ध में बांधकर रणा है. और भाव इषी
सिपाही पहरेदार रहता है. यदि वह कभी अज्ञान इषी काशबुद्ध
से निकलना चाहे तो भाव इषी सिपाही आवरण इष डंडे
मारता है, तब वह बांध में पडा पडा रोता है, और नाना
प्रकार के जन्म मरण इषी दुर्गों को लोगता है. यही इस एव
को एव को एवमवयव है और यह अपने आपही बांधा
है. किसी दूसरे ने नहीं बांधा है. जैसे भट्टे मुट्ठी बांध के छोड़ता
नहीं है, और जैसे कोई पुरुष किसी स्थल को गाय कर ले
और समझे कि मुझे वृक्ष ने पकडा है, वास्तव में उस पुरुष
ने ही वृक्ष को पकडा है और वह उसको छोड़ के तो छूट जाता है.

तुझे नहीं पकडया जगत ने, तेने ही पकडया आनि ।
ज्यों नलिनी का सूयटा, घाणे पकडया ननि ॥

इसी तरह तीन शरीर और पंच कोषों में इस एव
आत्मा ने ही आवरण किया है. यही उसका एवमवयव है.
जन्म यह उस परिच्छिन्न मलिन आवरण को छोड़ देता है तब
यह बांध से छूट जाता है. यही उसका एवमवयव भाव है. स्थूल

શરીર કે ઔર પ્રાણ કે સંયોગ હોતે હોતે બંધ બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી
 ઔર બ્રહ્માકાર વૃત્તી કી સ્થિતી કો હી જીવન મોક્ષ કહતે હૈ.
 જીવન મુક્તી કો સુન કે પ્રસન્ન ચિત્ત હોકર શિષ્ય પૂછતા હૈ,
 હે ભગવન ! યહ જો આપને જીવનમુક્ત કા કથન કહા કિયા હૈ
 સો ઉસકા કારણ કોન હૈ ઔર ઉસકા સ્વરૂપ તથા ફલ કયા હૈ,
 ઔર ઉસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ. સો આપ કૃપા કરકે બતાધયે.

ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય ! પૂર્વ જો જીવ બ્રહ્મા કા એકત્વ
 રૂપી દૃઢ નિશ્ચય કો અપરોક્ષ જ્ઞાન કહા થા, સો દૃઢ અપરોક્ષ
 કહા જ્ઞાન હી જીવનમુક્તિ કા કારણ હૈ, ઔર પૂર્વ કહા હૈ
 કિ શરીર કે હોતે બંધ બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી ઔર બ્રહ્માકાર વૃત્તિ
 કી સ્થિતી હી જીવન મુક્તિ કા સ્વરૂપ હૈ. જીવન મુક્તિ કે
 પાંચ પ્રયોજન કહે હૈ. સો યે હૈ. જ્ઞાન રક્ષા વિષ્ણુ વાદા અભાવ
 તથા તપ દુષ્ણ કી નિવૃત્તી ઔર સુષ્ણ કી પ્રગટતા. યે જો પાંચ
 પ્રયોજન કહે હૈ. સો હી જીવન મુક્તી કા ફલ હૈ, ઔર વિદેહ
 મુક્તી પર્યંત ઉસકી અવધી હૈ. વેદ રૂપી સમુદ્ર સે અનેક સાધન
 રૂપી યત્ન કરકે વિદ્વાન પુરુષોં ને જીવન મુક્તી રૂપી રત્ન નિકાલા
 હૈ, યહી ઉસમેં લક્ષ્મી કે સમાન રત્ન પાના હૈ. જીવનમુક્ત
 પુરુષોં કે લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હોતે હૈ.:-

શ્રુતિ:—

ઉંડં ન શિખા ન યજ્ઞોપવીતં ન છાદનં ચરતિ પરમહંસઃ ।

શ્લોક:-કંથા કોપીન વાસસ્તુ ઉંડે દગ્ધ ધ્યાન તત્પરમ્ ।

એકાકીરમતે નિત્યં તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૧ ॥

નિરાશિસ મનારંભં નિર્નમસ્કારમસ્તુતિઃ ।

ક્ષીણું ચ ક્ષીણકર્માણું તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૨ ॥

ન જાતિ કારણું તાત ગુણઃ કલ્યાણ કારણમ્ ।

સ્થિતવૃત્તિ ચંડાલોપિ તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૩ ॥

॥ ઇતિ શ્રી જીવનમુક્ત રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[૧૪]

અથ વિદેહમુક્ત રત્ન

—:૦:—

કવિત—વિદેહ મોક્ષ કે મંજાર પડા ઝગડા અપાર કહે' ખાત
જે હજાર કહેા કોન સે કી માનિયે ॥ કોઈ તો
કહત યહ ઇશ્વર સે અભેદ હોય કોઈ તો કહત
શુદ્ધ બ્રહ્મહુ સે જનિયે ॥ ઔર કોઈ કહે કિસી
લોક માહીં મોક્ષ હોત સે કોઈ તો કહત તારો
ઉલટહુ આનિયે ॥ ભેદ ઔ અભેદ નાહીં વિધી
ઔ નિષેધ નાહીં. આન જન ખેદ નાહીં. ગુપ્તરૂપ
જનિ કે ભ્રમ સખ ભાનિયે ॥ ૧ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ યહ જે વિદેહ મોક્ષ હૈ ઇસમેં અનેક પ્રકાર કા
શાસ્ત્રકારોં કા કથન હૈ. ઇસમેં કિસ કી ખાત માનેં ઔર કિ
સકી નહીં માનેં, ક્યોંકિ કોઈ તો વિદેહ મોક્ષ મેં ઇશ્વર સે અભેદ
કહતે હૈં ઔર કોઈ શુદ્ધ બ્રહ્મ સે અભેદ કહતે હૈં, કોઈ કિસી
લોક મેં લોક મેં જનને કો મોક્ષ કહતે હૈ. કોઈ પુનરાવૃત્તિ નહીં
માનતે હૈં ઔર કોઈ પુનરાવૃત્તિ માનતે હૈં. ઇસી પ્રકાર કોઈ કર્મ
સે મોક્ષ માનતે હૈં, ઔર કોઈ શિલામેં હી મોક્ષ માનતે હૈં,
ઇસ તરહ કેઈ લોગ અપની અપની કલ્પના અનુસાર અનેક
ખાતેં કરતે હૈં. હમણી અપની કલ્પના કે અનુસાર કહતે હૈં કિ
બંધ ઔર મોક્ષ દોનોં હી કલ્પના માત્ર હોને સે વાસ્તવ મેં
કલ્પિત હૈ, ઔર યે સખ ભ્રમરૂપ હૈં,

સર્વ કા અધિષ્ઠાન ગુપ્ત આત્મા હૈ. ઇસમેં ભેદ અભેદ,
વિધી નિષેધ, આના જના, પુણ્ય પાપ, સુખ દુખ આદિ જે અવિદ્યા

ક્રી જલ પ્રતીત હોતી હૈ સો સલી બ્રમરૂપ હૈ, પરંતુ જૈસે રજજૂ કે અજ્ઞાન સે સર્પાદિક બ્રમ ભાસતે હૈ, ઔર રજજૂ કે અપરોક્ષ જ્ઞાન સે સલી બ્રમ શાંત હો જતા હૈ, તૈસે હી ગુપ્ત આત્મા કે અજ્ઞાન સે આના જના બંધ મોક્ષ આદિ જો કુછ પ્રતીત હોતા હૈ સો સલી આત્મા કે યથાર્થ જ્ઞાન સે નિવ્રત્ત હો જતા હૈ, ફિર કહીં જને કી ઇચ્છા નહીં હોતી હૈ, જૈસે ઘટ કે ફૂટને સે ઘટાકાશ કહીં લી નહીં જતા હૈ, ક્યોંકિ આકાશ નહીં હો તબ તો જના આના સંભવ હો સકતા હૈ, પરંતુ આકાશ તો સર્વત્ર પરિપૂર્ણ હૈ, ફિર જતા કહાં ?

શિષ્ય શંકા કરતા હૈ, હે ભગવાન ઘટ કે ફૂટને સે ઘટાકાશ કા મહાકાશ મેં અભેદ હોતા હૈ, આપ કૈસે કહતે હો કિ ઘટાકાશ કહીં નહીં જતા હૈ. ઇસી પ્રકાર શરીર રૂપી જો ઘટ હૈ ઉસકે નાશ હોને સે ઘટાકાશ રૂપી જો જીવાત્મા કા મહાકાશ રૂપી ઇશ્વર સે અથવા મહાકાશ રૂપી શુદ્ધ બ્રહ્મ સે જીવાત્મા કા અભેદ કૈસે નહીં હોતા હૈ ? મેરે વિચાર સે તો જરૂર જીવાત્મા કા અભેદ માનના ચાહિયે. ઇસ શંકા કે ઉત્તર મેં ગુરુ કહતે હૈ:—

હે શિષ્ય ! ઇશ્વર સે જીવ કા અભેદ માનેં સો નહીં બનતા હૈ. ક્યોંકિ જૈસે એક હી બિંબકા એક પ્રતિબિંબ તો દર્પન મેં હોતા હૈ ઔર દૂસરા જલ મેં હોતા હૈ તબ એક ઉપાધી કે નિવૃત્તિ હોને સે દૂસરી ઉપાધી કે પ્રતિબિંબ સે એકતા કહેં સો નહીં હોગી ઔર જો બિંબ સે અભેદ કહેં તો વહ લી નહીં બનેગા, ક્યોંકિ પ્રથમ જિસકા ભેદ હોવે ઉસી કા અભેદ હોતા હૈ ઔર જિસકા ઉપાધી સે ભેદ પ્રતીત હો ઉસકા ભેદ નહીં હોતા હૈ. વહ ઉસકા સ્વરૂપહી હૈ ઇસલિયે બિંબ સે લી અભેદ કહના નહીં બનતા હૈ, તૈસે હી બિંબ જો શુદ્ધ ચેતન ઔર પ્રતિબિંબ જીવ ઇશ્વર જલ દર્પણ નાંઈ હૈ. ઇશ્વર મેં માયા ઔર જીવમેં અવિદ્યા રૂપી ઉપાધી હૈ, એક અવિદ્યા ઉપાધી કે નિવૃત્તિ હોને સે માયા ઉપાધીવાલા જો ઇશ્વર પ્રતિબિંબ હૈ ઉસકે સાથ જીવ પ્રતિબિંબ ઇ એકતા કહના નહીં બનતા હૈ, ઔર બિંબરૂપ જો શુદ્ધ ચેતન હૈ ઉસમેં અભેદ કહના તલી બને જબ ઉસમેં ભેદ હોં.

अतः उससे किसी वस्तु का भेद कहना अनता नहीं, क्योंकि चेतन में वास्तव में तो कुछ है ही नहीं, और कल्पित है, ऐसा कहें तो उससे कुछ भेद सिद्ध होता नहीं है, क्योंकि जैसे कल्पित रजत से शुक्ती में भेद होता नहीं है तैसे ही भुज शुद्ध आत्मा में माया अविद्या उपाधी जिसमें प्रतिबिम्ब धर्म तथा लव और धनके सर्वज्ञता अद्वयज्ञता आदि जो धर्म हैं सो सत्य में भेद कल्पित होने से भेद और अभेद कहना नहीं अनता है, इसलिये सर्व द्वैत कल्पना से रहित एक में ही परिपूर्ण हैं.

श्लोकः—

किं करोमि क्व गच्छामि किं ग्रह्यामि त्यजामि किम् ॥

आत्मानं पुरितं सर्वम् मला कल्पांशु ना यथा ॥१॥

जब इस प्रकार जन के शरीर का बोध होगा, तब पुनरावृत्ति से रहित हो सकेगा. इसी को विदेह मोक्ष कहते हैं. शिष्य कहता है, हे लगवन, वह जो आपने विदेह मोक्ष कहा इसमें उत्तम देश उत्तरायन काल और किसी सिद्ध आसन आदि की अपेक्षा होगी. ऐसी शंका के होने पर--

गुरु कहते हैं, हे शिष्य जैसा पूर्व में लवनमुक्त पुरुष का जो वर्णन किया है उस देहपात होने में किसी उत्तम देश का, उत्तरायन काल का, और आसन विशेष का किसी वेदशास्त्र ने विधान नहीं किया है, क्योंकि ज्ञान से उत्तर काल में लवनमुक्त अवस्था में भी किसी वेदशास्त्र की विधी उस पर नहीं है तो देह के अंत होने पर विधी का होना कैसे संभव होगा. ऐसे विद्वान पुरुष का लते समय तथा भरते समय जो व्यवहार होता है, सो सारा ही प्रारब्ध के आधीन होता है, और कोई विधी उस पर नहीं होती है, इससे किसी भी ध्यानादि की उसकी जरूरत नहीं.

श्लोकः—

तीर्थे स्वपयगेहे वा नष्ट स्मृति परित्यजन् ।

ज्ञानस्य सम काले ही विमुक्तः केवलं यतिः ॥

धर्मी से ज्वनमुक्त पुरुष को विदेह भोक्ष के वास्ते कोई भी विधि आदि की अपेक्षा नहीं है।

आहे तीर्थ में आते स्वयं के अहं में पिंड प्राण का वियोग होवे आते व्याधी से हलाकार करते हुवे आते सावधान होकर अहं चिंतन करते हुवे किसी भी प्रकार से उसके शरीर का पात हो, उसने तो जिस काल में गुरु द्वारा महावाक्यों का उपदेश श्रवण किया उसी काल से वह सर्व शोकों से रहित है, और उसी काल से मुक्त है। फिर उसको कौन विधी की जरूरत है, इस प्रकार के जो ज्ञानवान निरंकुश हैं उनको किसी वेद विधी की शंका नहीं होती है, क्योंकि वे वेद के दास नहीं होते हैं और किसी वर्ण आश्रम का भी अलिमान उनको नहीं रहता है।

श्रुति:—

वर्णश्रमाभिमानेन श्रुतिदासो भवेन्न नरः ।

वर्णश्रमविहीनश्च वर्तते श्रुतिमूर्धनि ॥ १ ॥

अर्थ यह है कि जो वर्णश्रम का अलिमानी होता है सो ही वेद का किंकर होता है, और जो ज्वनमुक्त विद्वान है, सो किसी वर्णश्रम का अलिमानी नहीं होता है, धर्मी से उसपर वेद का उंठा नहीं है, इस लिये वह सभ वेद शास्त्र को उत्कृष्ट करके वर्तता है, यही कारण है कि उसके विदेह भोक्ष में कोई भी विधी नहीं है क्योंकि मुक्त तो ज्ञानकाल से ही है, परंतु शरीर का बोध होने से विदेह भोक्ष कहा जाता है, और यह जो साधन साध्य रूप जितना कथन किया है, सो सारा तेरी उक्त शंका की निमृत्ती के वास्ते है, क्योंकि पूर्व ग्रन्थ के आरंभ में तेरे को सुष प्रार्थी की वांछा हुई थी, सो आत्मा को सुष रूप न जानने के कारण हुई थी, वह सुष रूप तू ही है, तेरेसे भिन्न और दूसरा है ही नहीं, और तू ही सुष स्वरूप है धर्मी को ज्ञान कराने के लिये सत्संग से लेकर विदेह भोक्ष पर्यंत जो कुछ कथन किया गया है सो सभ तेरी ही दृष्टी को लेकर कहा गया है हमारी दृष्टी में तो ऐसा—

શ્લોક:—

ન ચોત્પત્તિર્નોવિરોધો ન ચ બંધોસ્તિ સાધકે ।
ન મુમુક્ષુરનમુક્તશ્ચ ઇત્યેષા પરમાર્થતા ॥ ૧ ॥

અર્થ યહ કિ હે શિષ્ય ! કોઈ ઉત્પન્ન હી નહીં હુવા તો નાશ કિસકા હોવે, ઔર પ્રથમ કોઈ બન્ધ હી નહીં તો ઉસકે વાસ્તે સાધન કેસે હોવે, ઔર કોઈ મુમુક્ષુ હી નહીં તો મુક્ત કહાં સે હોવે. યે તો પરમાર્થ સે હી નહીં હૈ. હમ તો એસા જાનતે હૈં. તૂ ભી એસા હી જાન. સુખ કી પ્રાપ્તિ કી ઔર પ્રાપ્તિ કી પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા મત કર. તૂ સદા ચેતન આત્મા સુખરૂપ પ્રાપ્ત હી હૈ, ઇસ બાત કો મુન કે શિષ્ય કહતા હૈ—

હે ભગવાન ! મૈં ચેતન આત્મા સુખરૂપ ઔર નિત્ય પ્રાપ્ત હી હૂં, ઇસ કી પ્રાપ્તિ કી શંકા મેરી નિવ્રત્ત હો ગઈ હૈ. અબ મેરે કો કુછ ભી શંકા નહીં હૈ, પરંતુ યહ જો આપને વિદેહ ભાક્ષ કહા ઇસકા કારણ કોન ઔર ઇસકા સ્વરૂપ તથા ફલ કયા હૈ, ઔર ઇસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ સો બતાધયે.

ગુરુ કહતે હૈં, હે શિષ્ય ! સત્સંગ સે લેકર જ્ઞાન પરંપરા ત જો સાધન સાધ્ય પદાર્થ કહે હૈં સો પરંપરા સે તો સભી કારણ હૈં પરંતુ સાક્ષાત્ કારણ જીવનમુક્તિ હી હૈ, ઔર પુનરાવૃત્તિ સે રહિત હોના ઇસકા સ્વરૂપ હૈ. ઔર અપને સ્વરૂપ કી જ્ઞાત હોના ઔર ઉસી કી તરહ વૃત્તિયોં કા પ્રવાહ ચલના યહી ઇસકા ફલ હૈ. નદિયાં જૈસે સમુદ્ર મેં જાકે સમાપ્ત હોતી હૈં તેસે હી બ્રહ્મ આત્મારૂપ સમુદ્ર મેં બ્રહ્માકાર વૃત્તિયોં કી સમાપ્તિ હી ઇસકી અવધી હૈ

॥ ઇતિ શ્રી વિદેહમુક્તિ રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

॥ ઇતિ શ્રી ચૌદહ રત્ન ગુપ્તસાગર સંપૂર્ણ ॥

ઇતિ શ્રી ચૌદહ રત્ન ગુપ્તસાગર સંપૂર્ણ.

શ્રીગણેશાય નમઃ

અથ ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા પ્રારમ્ભ

અથ મંગલાચરણ લિખ્યતે

અથ શ્રી આદિ મેં મંગલાચરણ લિખ્યતે હૈં, સો મંગલા-
ચરણ ત્રીન પ્રકાર કા હોતા હૈ, એક વસ્તુ નિર્દેશ રૂપ, દૂસરા
નમસ્કાર રૂપ, ત્રીસરા આશીર્વાદ રૂપ, મંગલાચરણ હોતા હૈ,
અથ કે આદિ મેં મંગલાચરણ ચાહિયે, કયોંકિ પૂર્વ વૃદ્ધ જો
આચાર્ય હુયે હૈં ઉંનકી રીતી સે.

(વસ્તુ નિર્દેશરૂપ મંગલ)

દોહા—નિર્ગુણ સગુણ પરમાત્મા, વસ્તુ તાહિ પિછાન ।
ભિન્ન ભિન્ન કીર્તન કો, નિર્દેશ હિ લે જન ॥

(નમસ્કાર રૂપ મંગલ)

ચૌપાઈ—અમુરન કો જો કરે સંહારા, તિનકો નમસ્કાર હૈ હમારા ।
લક્ષ્મી પાર્વતી પતિ હોઈ, ભજતન કો સંતત ભજે સોઈ ॥

(આશીર્વાદ રૂપ મંગલ)

સોરઠા—શિષ્ય વાંછિત સ્વયં વાંક્ષ, કરત પ્રાર્થના જો નર ।
યાસો દૂર બહે ભ્રાંતિ, આશીર્વાદ તાકો કહત ॥

૨ (મૂલ ચક્ર સવૈયા છંદ)

મૂલ—ચક્ર માહિં ગણેશ વિરાજત, સ્વાદ ચક્ર માહિં ક્રિયા અજ
વાસા ॥

નાભિ કમલ મેં વિશ્નુ વિશ્વંભર । હૃદય કમલ મહું મહાદેવ
નિવાસા ॥

કંઠ કમલ મેં વસે દેવી નિત । ત્રિકુટી કમલ મહં સૂર્ય ઉભસા ॥
સહસ્ર કમલ દલ આપ વિરાજત । જાકે પ્રકાશ સભી પરકાસા ॥
મમગુપ્ત સ્વરૂપસે ન્યારો નહીં । કષ્ટકાકો નમાઝીં છહો અવમાયા ॥

લાવની દોહોંવાલી : અજનાશક

૩. ખારહમાસી

લાવની સુન ખારહ માસી । કટે સખ જન્મ મરન ફાંસી ॥ ૧ ॥
ચેત મેં ચીંતા યહ કીજે । કિ યહ તન ઘડી ઘડી છીજે ॥
કીજિયે ઈસમેં કછુ વિચાર । કોન વસ્તુ હૈ સાર અસાર ॥

દોહા—સત્ય વસ્તુ હૈ આત્મા, મિથ્યા જગત અસાર ।
નિત્યાનિત્ય વિવેક યહ, લિજે ખાત વિચાર ॥

ફિરે કયા મથુરા અરુ કાશી ॥ ૧ ॥
વૈશાખ યહ વક્ત પુઝે પાયા । સખી ઝુંઢી જાનો કાયા ॥
યહાં કોઈ રહને નહીં પાયા । કાલને સખ કોઈ ખાયા ॥

દોહા—ભોગ લોક પરલોક કે, તિનકા ત્યાગો રાગ ।
તિનકી રહે ન કામના, કહત તાહિ વૈરાગ ॥

જગત સે રહના ઉઘાસી ॥ ૨ ॥
જેઠ મેં યતન યહી કરના । મિઠૈ સખ જનમ ઓર મરના ॥
મન ઈન્દ્રિય વિષયતે પરિહરના । લીજિયે સંતન કા શરના ॥

દોહા—શ્રદ્ધા કરિ ગુરુ વેદ મેં, મન કેા કર સમાધાન ।
કર્મ કર્મ કે સાધન ત્યાગો, સહો માન અપમાન ॥

તિતિક્ષા તોસોં પરકાસી ॥ ૩ ॥
પાઠ મેં સત સંગત કરના । વહાં પુઝે પાવે સખ મરમા ॥
પુઝે વહાં હોવે જિજ્ઞાસા । મોક્ષ કી લગે ફેરી આશા ॥

દોહા—પરમાનંદ કી પ્રાપ્તિ, સખ અનર્થ કા નાસ ।
યહ ઈચ્છા મન મેં રહે, કહે મુમુક્ષુ તાસ ॥

તિસી સે પાવે અવિનાસી ॥ ૪ ॥

સાવન મેં શરનાગત હોના । પૈર સત ગુરુ કે ધોપીના ॥

સાફ હોવે તેરા સીના । રંગ ફિર રૈની કા દીના ॥

દોહા-તત્ત્વમસિ કે અર્થ કા, કરેં તોહિં પરકાસ ॥

સંશય શોક નસેં સવતેરે, હોય, અવિધા નાસ ॥

હોય અમરાપુર કા વાસી ॥ ૫ ॥

ભાદો મેં ભરમ તભી નાશૌ । પ્રેમ ભકતી ગુરુ પરકારૌ ॥

ઇશ્વર સે અધિક જન સેવો । સુફલ માનુષ તન કર લેવો ॥

દોહા-બ્રહ્મવેત્તા વક્તા શ્રુતી, ગુરુકા લક્ષણુ જન ।

ઇચ્છા જને મોક્ષ કી, સોઈ શિષ્ય પહિચાન ॥

બુદ્ધિ જખ શિષ્ય કો પહિચાની ॥ ૬ ॥

કવાર મેં કરના યહી ઉપાય । તત્ત્વમસિ સરવન મેં મન લાય ॥

જુગતિ સે કરો મનન અભ્યાસ । કાલ પાકર હોવે નિદિધ્યાસન ॥

દોહા-નિદિધ્યાસન કે અંત મેં, એસા હોવે ભાન ।

બ્રહ્મ આતમા એક હૈ, લખિ યહી બ્રહ્મ કા જ્ઞાન ॥

હાનિ જિસે હોવે ચૌરાસી ॥ ૭ ॥

કાર્તિક મેં કર્મ સભી નાસા । જ્ઞાન જખ ઉર મેં પરકાસા ॥

આપના આપ રૂપ ભાસા । ઉસી કા દેખૂં તમાસા ॥

દોહા-વાર પાર હમરા નહીં, નહિં દેશ કાલ તે અંત ।

મેં હી અખંડિત એક હુ, સળ વસ્તુકા તંત ॥

મેં હી હું ચેતન અવિનાસી ॥ ૮ ॥

અગહન મેં જ્ઞાન અગ્નિ જાગી । લોક સખ દાજન કો લાગી ॥

પૂજિ દિયે શિવ બ્રહ્મા વિષ્ણુ । કૂકી દિયે રામ ઔર કૃષ્ણ ॥

દોહા-જલત જલત એસી બઢી, જિસકા વારન પાર ।

ઇશ્વર જીવ બ્રહ્મા અરૂ માયા, પૂજિ દિયા સંસાર ॥

વિના ઇંધન નહિં પરકાસી ॥ ૯ ॥

પૂષ મેં પૂરણુ આયે આપ । જહાં કોઈ નહીં પુન્ય નહીં પાપ ।
જપેં અળ્ય કહો કૌન કા ખપ । છૂટયા સળ જન્મ મરણ સંતાપ ॥

દોહા—જ્ઞાતા જ્ઞાન ન જોય કશું, ધ્યાતા ધ્યાન ન ધેય ।

મમ નિજ શુદ્ધ સ્વરૂપ મેં, ઉપાદેય નહિં હોય ॥

કરું અળ્ય કિસડી તલાશી ॥ ૧૦ ॥

માહ મેં મિટીમિલન કી ભૂખ । જહાં કોઈ નહિં આશિક માશૂક ।
ઘરક ફિર ફેસે જહાં હોવે । કાહેકો વૃથા કાલ જોવે ॥

દોહા—તુઝ ચેતન શુદ્ધ સ્વરૂપ મેં, નહીં આશિક માશૂક ।

લક્ષ રૂપ મેં માર નિશાના, કહા વૃથા વિલોવે થૂંક ॥

કરાવે કયોં જગ મેં હાસી ॥ ૧૧ ॥

વસંત ઋતુ ફાગન મેં આવે । ખેલ સળ પરારબંધ રચવાવે ॥
અતર શુલાલ જ્ઞાન રોરી । ખેલતે ભરભર કે ઝોરી ॥

દોહા—હોલી અવિદ્યા ફૂકિ કે, હો ગયે ગુપ્તાનંદ ।

॥ સમજેંગે કોઈ સુધર વિવેકી, કયા સમજે મતિ મંદ ॥

જગત કી ઉઠી ધૂલિ ખાસી ॥ ૧૨ ॥

પટ કે પર નૌકા જળ લાયા । પાઠ જળ અધિક માસ આયા ॥
કલેવર જિસમેં બદલાયા । લાવની તેરહ માસ ગાયા ॥

દોહા,—અધિક માસકા અર્થસુન, અધિક પિછાન ।

કલેવર બદલ્યા યહિ જનો, આપ રૂપકાજ્ઞાન ॥

જહા નહિં દાસ અરૂ દાસી ॥૧૩॥ ટેક

૪ લાવની

પિવેજી ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા । દૂરી હોવે સળ હી ખટકા ॥ ટેક
કિયા હૈ ઇસકા જિસને પાન । નરોં મેં ઉસકો હી નર જાન ॥
ઔર તો સગહી જનો નાર । ગારગિ ને સભામેં કહી પુકાર ॥

દોહા—બ્રહ્મદારણ્ય કે બીચમેં, લિખા યહી સંવાદ ॥

વચકંની કે વચન સુન, પંડિતોં ક્રિયા વિવાદ ॥

બોધ વિનુ ખાય મરે ભટકા ॥૧॥ ટેકા ॥

કોઈ તો રખતે હૈં ઉપવાસ । કોઈ તો કરતે કર્મ ઉપાસ ।

કિસી કો જાય ક્રિયા વનવાસ । કોઈ તો જગ મેં ફિરે ઉદાસ ॥

દોહા—કોઈ ચૌરાસી ધૂની તપૈં, કરેં જંતર મંતર ખેલ ॥

ચામ જલાવેં આગમેં, ઉર મલૈ ન જ્ઞાનકા તેલ ॥

ભરમ ફૈસે છૂટે શટકા ॥૨॥

કિસી કે ગલે મેં પડા સંનાસ । કોઈ તો બને ઈસકા દાસ ।

કોઈ કે સનકા બનાતે જોટ । કિસીને કીના ઘોટમ ઘોટ ॥

દોહા—કોઈ પદ વ્યાકરણ કાવ્ય કોષકો, કરેં વેદકે પાઠ ।

પંડિત બહેકર ભવમેં વિચરેં, ખૂબ લગાયા ઠાઠ ॥

સમજ ન બાતનમેં અટકયા ॥૩॥

કરે નિબંધોં કા સતસંગ । તભી કુછ ચહે જ્ઞાન કા રંગ ।

તભી જીતે માયા કા જંગ । ભ્રમ કી ઉતર જાય સખ ભંગ ॥

દોહા—ગુપ્ત ગલીચે ખેઠકર, કીજૈ યહી વિચાર ।

બ્રહ્મ રૂપ હૈ આતમા, સખ ઝુંઠા જગ વ્યોહાર ॥

ખેલ સખ બાજીગર નટકા ॥૪॥

૫ લાવની

સોઈ નર જનો બ્રહ્મચારી । જિને વશ કીની સખ નારી ॥ટેકા ॥

પ્રથમ ગુરુકુલ મેં કીયા બાસ । ફેર ક્રિયા વિદ્યાકા અભ્યાસ ॥

જિને સખ તજી જગત કી આસ । નહીં કછુ રખતે અપને પાસ ॥

દોહા—આઠ ભાંતિ મૈથુન કહા, તાકા કીના ત્યાગ ।

કંચન કાંચ એક કરિ જને, નહીં કિસી મેં રાગ ॥

करी आत्म पदवी तारी ॥१॥॥॥
विवेक वैराग्य लुपे सपन्न । विषय ते रेखि लियो है मन ॥
प्रगटे जिनके पूरख पुन्य । जगत में वही पुरुष है धन्य ॥

होहा—ऐसी धारना धारीके, भयछा उपल येह ।

कोहं को संसार है, को देही को देह ॥

आत जिन ऐसी श्रीभारी ॥२॥

हर लिया सतगुरु का सरना । विधी से परशान को करना ॥
मिटे सख जनम और भरना । हर होवे सख ही भरना ॥

होहा—गुरु ऐसी कृपा करो, मिटं भेद का पाप ॥

भेद भ्रम छुटे विना, मिट नहीं संताप ॥

अविद्या छुटि जय सारी ॥३॥

जो नहीं करते हैं यह काम । सोई जूट अलखारी जन ।
भवाये केश और दाही । लरमी जही लावत है गादी ॥

होहा—करना था सो ना किया, दोर कुल लाही लाज ।

जुठे स्वांग बनावता, सरे न ऐ कहु काज ॥

गर्भ भूर्ज की भति भारी ॥४॥॥॥

६ लावनी

भूष शिर कीना घोटम घोट । भूष लक्ष भूष और दाही ॥
कोई गुरु का लगाते रंग । कोई तो रहते नंग निछंग ॥५॥
गले में रुद्राक्ष माला । लरम का दूरा नहीं जला ॥

होहा—कोई विद्या का अध्ययन कर भूष सुनावे वात ।

त्याग वराग कहैं औरन को, आप पसारै हांथ ॥

लगी है तृष्णा अति गादी ॥६॥॥॥

वांचते शास्त्र और पुराण । वेद के दते हैं परमान ।

खोख ने ऐसी भति भारी । दिरे ज्यों नारी व्यलियारी ॥

होहा-काम कीध मरु लोग की लज्जा लग घट में जान ।

क्या पड़ित क्या भूरुआ, दोनों मित्र समान ॥

कामिनी आशा नहीं छोड़ी पड़ा

भुज किया तन का बंजा साज । जने है पड़ित छ मदासाज ।

और इस भूरुआ से लिये बंजा । लगाने छपट में लडा रज ॥

होहा-लोगन से यों कहत है, हम संन्यासी लोग ।

हमको कुछ सम्मान नहीं, सज तन दिये घर के लोग ॥

कहे ज'गासाजर आदी पड़ा

जैसे हम जेने संन्यासी । पदी गल आशा की दांसी ।

लज्जा नहीं धितन आविनासी । कहे हम वसते है दांसी ॥

होहा-ठाया दासी ना लज्जी, शिर पर धरया संन्यास ।

पंचक्रेष वपु तीनको, हीना नाहीं साई ॥

७ लावनी

भक्तलज की दांसी नहीं छोड़ी पड़ा

भक्तलज का पडा गले में है । आपको समझत नाहीं अंध ॥

वश्य जती का करके त्याग । हेर आश्रम में करते राग ॥

लगी है घरसे दूनी आग । लखत डालत जैसे दाग ॥

होहा-विषय मांस की लालसा, तन दिया आत्मरूप ।

औरनको उपदेश सुनावे, आप पडा लव रूप ॥

लज्जा नहीं पुरुष परमानंद पड़ा

कहे जे आश्रमका अभिमान । वही नर पशु वेद के जान ।

औरन से आहत है लडा मान । मान मर पी मती हो गर्हदान

होहा-गुहरी कर अंधा हुआ, पडा मान मोतिया विंद ।

दशाहु दिशा को पडा अंधेरा, छिपगया आत्मचंद ॥

हर कैसे होवे आनंद ॥२॥

आपको मानत है करता । वही नर जनमें अरु भरता ।
गर्ल की अग्नी में जडता । जानि बौरसी में द्रिस्ता ॥

दोहा—कर्ता किया कर्मका, छटा नहीं छंकार ।

याम धर्म अपने कर माने, सोई नर जनो यभार ॥

सोई तुम जनो भतिका भंड ॥३॥

तबो करता भतिका छंकार । तेरा है रूप जो अपरंपार ।
गुप्तकी समझ देष दुक्यार । छोड सभ लेख पंथ आजार ॥

दोहा—तुहि आत्म येतन शुद्ध है, नहीं कर्मका देश ।

कर्ता किया कर्म छोडि के, देयो अपना देश ॥

तुही है आनन्दन का कंद ॥४॥

८. लावनी.

धस काया नगर भंजार । वसे यक राजन पतिराज ॥१॥

राज है जिसका अपरंपार । नहीं कुछ हृद जेहृद शुभार ॥

सदा वह बना रहे यक तार । तिसे कोर कर नहीं सक्ता छार ॥

दोहा—सदा अभंडित ऐक रस, जमे लाभन हान ।

सोतो अपना आप है, सो हम लियो पिछान ॥

सुधर जवे सभ ही काज ॥२॥

और जो जनो राज । काल ज सभ ही है आज ॥

तिसे कली काल नहीं जाता, कही सो आवे नहीं जाता ॥

दोहा—आपै राज आपै परज, आप करै सभ काज ।

आपही अन्यो दिवान मुसद्दी, आपही रहा विराज ॥

जिने यह साज सली साज ॥३॥

जहां कोर भास न भजना । वहां पर नहीं दइतर आना ॥

जहां पर नहीं कोर हिलकार । नहीं कोर बौधी पहरेदार ।

દોહા—એસા નિરભયરાજ હૈ, જહાં કોઈ નહીં ઢગચાર ।

નિરાકાર હૈ સભી વિભૂતી, ચલે ન કિસીકા જોર ॥

જહાં પર ભરમ સભી રાજ ॥૩૧॥

મિલા હુમૈ બિન પરજા કા રાજ । જહાં કોઈ બીગડે નાહીં કાજ ॥

સભી હૈ અમરાપૂર કા સાજ । જહાં કોઈ નહીં કાજ નહીં લાજ ॥

દોહા—ગુપ્ત રાજ કો જો કરૈ, સો ભૂપન કા ભૂપ ।

તાસુ સમાન ઔર નહીં દૂજ, કિસકી દીજ ઊપ ॥

દેખ તિસકો સખહી લાજ ॥૩૨॥

૯. લાવની.

ખેલ બાજીગરકે સારે । દેખ કર મતભૂલો પ્યારે ॥ ૩૩ ॥

રચી બાજીગરને બાજ । કિ રચના બહુત ઘની સાજ ॥

કોઈ તો જૂની કોઈ તાજ । કોઈ તો પડિત કોઈ કાજ ॥

દોહા—રચિકર જખ દેખન લગા, મિલા તિસીકે સંગ ।

નિરાકાર કો ભૂલલિકર, દેખન લાગા અંગ ॥

દેખતા પંચ ભૂત સારે ॥૩૪॥

નિદ્રામે ભાસતા હૈ સ્વપના । કોઈ તો પરકા કોઈ અપના ॥

દેખતા હૈ સખહી રચના । સખી વહુ નિદ્રા કા સપના ॥

દોહા—જગત માહીં દેખતા, નાના જગત અપાર ।

જૈસે તાર છુટયા પુવેતે, સખ પુવેકા વિસ્તાર ॥

આપ સે કછુ નહીં ન્યારે ॥૩૫॥

ભઈ જખ આપ રૂપકી ભૂલ । દેખતા સૂક્ષ્મ અરુ સ્થૂલ ॥

કલ્પના કારણ કી હોવે । અવસ્થા મુખોપતિ જોવે ॥

દોહા—એસા મન યહ બાજીગર હૈ, કરકૈ દેખ ખિચાર ।

મનન ભાવ જખ ધૂટે યાકા, તવ હોવે નિસ્તાર ॥

કામ ઓર કોષ સભી હારે ॥૩॥
જસ હુક કરેકે દેખ વિચાર । કુઠા હૈ મનકા સભી અકાર ॥
આપના ગુપ્ત રૂપ હૈ સાર । જાસુ મેં કબહુ ન હોય વિકાર ॥

દોહા—શુદ્ધ સ્વરૂપ પ્રકાશ મેં, ના કોઈ ચિત્ત સમંદ ।
જો માનત હૈ શુદ્ધ રૂપમેં, તે નર મૂરખ અંધ ॥

ફિરત જગમેં મારે મારે ॥૪॥

૧૦. લાવની

તિરબ્યા જમ આપ આપના નૂર । કરના સખ હમસે હો ગયા દૂર દે,
કહો અખ ક્યા કીજે પ્યારે । ખુલે સખ અંધ મોક્ષ તારે ॥
જપૂં અખ કહો કોનકા જપ । મેં હી હૂં પૂરણ આપે આપ ॥

દોહા—દેશકાલ અરુ વસ્તુમેં, વ્યાપી રહ્યો ભરપૂર ।
સભી જગતકે અંતકે બાહર. નહિં નેરે નહિં દુર ॥

સભી વહુ મેરા નૂર જહૂર ॥૧॥
કૈસે અખ કીજે કર્મ ઉપાસ । મૈલ નહીં ના કાહુકે દાસ ॥
કિયા હમ લેઠ ભરમ કા નાસ । કમી કી દૂરી ગર્ભ સખ કાંસ ॥

દોહા—ભરમ માંહી ભરમત ફિરા, ખના દેવકા દાસ ।

જ્ઞાન પ્રકાશ ભયા ઘટે અન્દર, હુઠ અવિધા નાસ ॥

દેવ કહુ હમને નાહીં દૂર ॥૨॥
કુરચા વર્ણ આશ્રમ કા અભિમાન । કિયા હમ વેદ નીરકા પાન ॥
કુટે સખ માન ઓર અપમાન । કુટી સખ લોક વેદકી કાન ॥

દોહા—કરતા કિયા કર્મકા, છુટિ ગયા હંકાર ।

જ્ઞાન અગ્ની પરગટ ભઈ, કર્મ ભયે જરિછાર ॥

સ્વાયક મેં હી મેં ભરપૂર ॥૩॥
જો નર માનત હૈ કરના । ઉન્હી કો જન્મ ઓર મરના ॥
ગુપ્તમેં કદિયે નિષ્કર્મ । જિસમેં નહીં જન્મ ઓર મરના ॥

દોહા—તુઝ ચેતન શુદ્ધ સ્વરૂપમે, નહિં ક્રિયા કી ગંધ ।

જે માને કૂટસ્થ રૂપમે, સો પામર મતિ મંદ ॥

કરો અબ કરતા મતિકા ચૂર ॥૪૧॥

૧૧. લાવની

ખતાઉં કહા જ્ઞાન કા રૂપ । જહાં પર નહિં છાયા નહિં ધૂપ ॥૪૨॥

જહાં પર નહિં સૂક્ષ્મ સ્થૂલ । નહીં કોઈ પંચકોશ કા મૂલ ॥

જહાં કોઈ નહીં મૂલ નહિં તૂલ । નહીં કોઈ શાખા ફલ અરુ ફૂલ ॥

દોહા—જહાં ચંદ સૂર તારા નહીં, નહિં પંચ ભૂત કા લેશ ।

જહાં નહીં તન માત્રા, નહીં કાલ નહિં દેશ ॥

કહો ફિર કિસકી દીજે ઉપ ॥૪૩॥

જહાં નહિં સ્વર્ગ નહીં કોઈ । જહાં નહિં દેવ દનુજ દોઈ ॥

જહાં પર પુરુષ નહીં લોઈ । જહાં કજુ પાઈ નહિં ખોઈ ॥

દોહા—જ્ઞાન ધ્યાન જહાં કો નહીં નહીં મોક્ષ નહીં બંધ ॥

વેદ પુરાણ શાસતર નહીં, નહીં ગાયત્રી છંદ ॥

વહાં કોઈ પડતા નહિં ભવ કૂપ ॥૪૪॥

જહાં નહિં જીવ ઈશ માયા । નહીં કોઈ ધર્મ કર્મ પાયા ॥

જહાં નહિં સાદી અન્નાદી । નહીં કોઈ વાદ ઓર વાદી ॥

દોહા—નહીં વર્ણ નહીં આસરમ, ના કોઈ જતી ન પાંતી ।

ના કોઈ ન્યારા રહે, ના કોઈ રહતા સાથ ॥

હમે સખ દેખા ફરકિ કર સૂપ ॥૪૫॥

કહે કોઈ ઘી કા કહા સવાદ । મૂઢ નર વિરથા કરે વિવાદ ॥

જાગુ મેં નહીં અંત નહીં આદિ । નહીં કોઈ સાધન સિદ્ધ સમાદી ॥

દોહા—કોઈ જીવ બ્રહ્મકી એકતા કા, નિશ્ચય કહતે જ્ઞાત ।
 દ્વેત અદ્વેત જહાં પર નહીં, કહે સો મૂરખ જન ॥
 જહાં કોઈ નહીં ઊપ અનૂપ ॥૪॥

૧૨. લાવની

આત્મા વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ । જસુ કે નહીં રંગ નહિં રૂપ ॥૮૬॥
 અવસ્થા ત્રીનોં સે ન્યારા । નહીં વહ રક્તપીત કારા ॥
 નહીં વહ અગ્ની ને જારા । પવન સે સૂખત ના પ્યારા ॥

દોહા—શસતર સે કટતા નહીં, જલસે ભીગે નાહિં ।
 જૈસે ઘત દૂધ મેં વ્યાપક, સભી ઠોર કે નાહિં ॥

યહી તુમ તિસકા જનો ૩૫ ॥૧॥
 નહીં કભી જમેં નહિં મરતા । નહીં કોઈ સુખ દુખ કો ધરતા ॥
 નહીં કષ્ટ ભોગે નહિં કરતા । નહીં કહીં સ્થિર નહીં ચરતા ॥

દોહા—હાથ પર જિસકે નહીં ના કોઈ પિંડ ન પ્રાન ।
 ના વહ પંડિત મૂરખા, ના કષ્ટ જન અજન ॥

નહીં કભિ જિસમેં પ્યાસ ન ભૂખ ॥૨॥
 નહીં કભિ સોવે નહિં જાગે । નહીં વહ સ્થિર નહિં ભાગે ॥
 નહીં કષ્ટ ગ્રહણ કરે ત્યાગે । નહીં કભી ધ્યાન માહિં લાગે ॥

દોહા—અસ્મિંભાતિ કરિ રમિ રહા, સભી ઠોર કે માહિં ।
 સભિ કષ્ટ કરતા સા દિખે, કષ્ટ ભી કરતા નહિં ॥

જસુ મેં રંક નાથ નહિં ભૂપ ॥૩॥
 સદા હૈ સત ચેતન આનંદ । જસુ મેં કોઈ દુખ નહિં દુઃખ ॥
 ફેરભી સમજત નાહીં અંધ । વહી હૈ સખ સિદ્ધન કા સિદ્ધ ॥

દોહા—હસ્તી છિપૈ ન ધાસમેં, કરકે દેખ વિચાર ।

સો ગુપ્ત આપના રૂપ હૈ, સખ કરતા જ્ઞાન ખ્યોહાર ॥

જાસુ મેં નહીં ઉક નહિં ચૂક ॥૪૧॥

૧૩. લાવની

જરા ટુક કર કર દેખો ગોર । તેરેસે નહીં દૂજ કોઈ ઓર ॥૪૨॥

જીવ હોય તૂહી પરકાસા । તુહી ફિર મંદિર હો ભાસા ॥

તુહી હૈ જગત જલ માયા । તુહી હૈ પિંડ પ્રાણ કાયા ॥

દોહા—જીવ વિના નહિં આતમા, જીવ વિના નહિં પ્રભ ॥

જીવ વિના સીવો નહીં જીવ વિના સખ ભ્રમ ॥

કરો ટુક વિચાર બલકા જોર ॥૪૩॥

જાગ્રત મેં સખ હી તેરા ખ્યાલ । સુપને મેં દેખો વોહી હાલ ।

અવસ્થા સુષોપતી આવે । જાગ્રત સ્વપન નહીં પાવે ॥

દોહા—તુરિયા મેં દેખન લગા, સુષોપતી ભી નાહિં ॥

સભી અનાતમ કલ્પીતજનો, અધિષ્ઠાન કે માહિં ॥

કાહે કો જૂઠા મચાયા શોર ॥૪૪॥

જભી તુરિયેકો છિટકાવે । તભી તુરયા તિતકો પાવે ॥

વહાં સે ઉલટી નહીં આના । આપ મેં આપહીમિલિ જના ॥

દોહા—વિશ્વ નહિં તેજસ પ્રાણ કછુ, નહિં તુરિયા તો માહિં ।

સ્વ સ્વરૂપ નિજ જ્ઞાનધન, મૈં તૂ બિખત હે નાહિં ॥

વહાં પર ચલો ન કિસકા જોર ॥૪૫॥

ભયે થિત આપ રૂપ મેં આપ । જહાં પર લગે ન કિસકી છાપ ॥

ગુપ્ત મેં સદા રહો ગરગાપ । મિટા ધ્રુવ જનમ સંતાપ ॥

દોહા-ઈસ દરજે કો સો પાવે, જિનકે વિમલ વિવેક ।

તજકે સખ સંસાર કો, યક લઈ ગુરાં કી ટેક ॥
નિરખ્યા જખ આપના જોહર ॥૪॥

૧૪ લાવની

હીરા તુઝે ખોદિયા કયરે મેં । દેખે કયા પોથી પતરેમેં ।
ફિર કયા મયુરા ઓર કાશી । કરે ઇસ તન કી તલાશી ।
જહાં તુઝે પાવે અવિનાશી । કરે સખ કાલ કર્મ ફાંસી ॥

દોહા-વસ્તુ તો ઘર મેં ધરી, બાહર ફૂંઢન જાય ।

કહો તાકોં કૈસે મિલે, દીજે બાત બતાય ॥

કહા હૈ પાની પથરે મેં ॥૧॥

જભી સત ગુરુ શરને આવે । વસ્તુ કા તખ વ્યારા પાવે ।
વચન મેં કીજે પરતીતી । વસ્તુ કે પાને કી રીતી ॥

દોહા-શ્રદ્ધા કરી ગુરુ વેદ મેં, તખ પાવે કુછ ભેદ ।

જ્ઞાન પ્રકાશ હોય ઘટ અંદર, દૂર હોય સખ ખેદ ॥

ભૂલે મત અપને ચતુરે મેં ॥૨॥

જહાં તૂ પાવે સમતા ભાવ । દૂર હો ચિત તેરેકી દાહ ।
ફેર તુઝે મિલે એસા દાવ । જરા દુક ધર આગે કો પાંવ ॥

દોહા-સમદર્શી હો વિચરના, ના કહીં રાગ ન દોષ ।

ભયો જ્ઞાન જવ નાશી અવિદ્યા, છવત પાયો મોક્ષ ॥

એક સમ ભૂટે મુથરે મેં ॥૩॥

ગુપ્ત સાગર મારા ગોતા । જગત સખહી લાગા થોથા ।
કુરુવ ને એસો કીયો વિચાર । જગત કા ઝૂઠા સખી આચાર ॥

દોહા-બ્રહ્મ આતમા એક લખિ, કિયો ભેદકો અંત ।

કુખરુ કનહયા યોં કહૈ. કોઈ જને વિરલા સંત ॥

બહૈ મત મન કે નખરે મેં ॥૪॥

૧૫. લાવની

ચહે કોઈ રામ કહો ચહે શ્યામ । લખે નિજ રૂપ હો પૂરણ કામ ।
રજ્ય અધિષ્ઠાન હૈ એક । કલ્પના હોવે વામે અનેક ॥
સીપી મેં રૂપે કા ભ્રમ હોય । રવિ કિરનોં મેં નીર કહે કોય ।
દોહા—અધિષ્ઠાન અજ્ઞાન તે; ભ્રમ હોવત ખડુ ભાંત ।

જ્ઞાન હુયે નિજ વસ્તુ કો; સખ ભ્રમ હોવત શાંત ॥
સભી કો એક આપ વિશ્રામ ॥૧॥
પુવે સે ખીંચત નિકસત તાર । તાર સખ પુવે કા વિસ્તાર ॥
બ્રહ્મ મેં ચોં હોવત સંસાર । ખીજ મેં કલી ફૂલ ફલ ડાર ॥

દોહા—જગ હોવત અજ્ઞાન કર જ્ઞાન હોત જગ હાન ।
જૈસી ઇચ્છા કર આપ મેં હોવત સોઈ પિછાન ॥

યાહી કે કલ્પિત હૈં સખ નામ ॥૨॥
પૂરણ પદ વશિષ્ઠાદિ ગાવેં । વેદ નિત અભેદ બતલાવે ।
સંત ભી ચોંહી સમજાવે । દ્વૈત સે જનમ મરન પાવે ॥

દોહા—દ્વૈત મિટા અદ્વૈત હુવા જખ સખ જગ બ્રહ્મ વિલાસ ।

સત ચિત આનંદ શુદ્ધ રૂપમેં નહીં જવ આભાસ ॥
યાહી વિધિ હોવત હૈ આરામ ॥૩॥
સુરદુર્લભ તન યહ જનો ગુપ્ત ગુરુ ઇષ્ટ હૃદય ઠાનો ।
ઇસ્ત વિન બ્રહ્મ હો જગ માય । ઇષ્ટ લખિ શ્રેષ્ઠ આપ હો જય ॥

દોહા—જેઇસ્ઠી જિસ રૂપકા, ધ્યાન ધરે સિધ હોય ।

મૂલ ધ્યાન ધર ભૂલ નિકાલો, નિર્ભય હોકર સોય ॥
ધૂમે નહીં પંચ કોષકા ગામ ॥૪॥

૧૬. લાવની

આપના ઇસ્ત આપહી જન । ઔર સખ કુઠે ઇસ્ત પિછાન ॥૧॥
તુહા હૈ સખ ઇસ્તન કા ઇસ્ત । ભૂલ કર કયોં હોતા હૈ બ્રહ્મ ।
તેરી તો એસી મતિ મારી । ફિરે જયોં નારી વ્યભિચારી ॥

દોહા—અપને પતિ કો છોડિ કર, કરૈ ઓર કા સંગ ।
સો પામર જિત તિત ડોલત હૈ, હો ગઈ હૈ મતિ ભંગ ॥

ભૂલિ ગઈ અપને પતિ કા જ્ઞાન ॥ ૧ ॥

જખી દૂજે કો સમજા ઇસ્ક । જ્ઞાન સખ હોગયા હૈ નષ્ટ ।
જખી તૂહો ખૈઠા હૈ દાસ । ઇસ્ક પડી ગલે મેં ફાંસ ॥

દોહા—ઇસ્ક આપનો આતમા, જકો કીનો ત્યાગ ।

ઝૂંઠે ઇસ્ક ખનાય કર, સર ન એક હુ કાજ ॥

ઉલટ કર અંતર લાવો ધ્યાન ॥

છોડ સખ ઇસ્ક દેવકી આસ । કરો નિજ અંતર અપને વાસ ।
ઝૂંઠ જનો બુદ્ધિ ચિદાભાસ । જ્ઞાન સે હૌવે ધનકા નાસ ॥

દોહા—આપ રૂપ કુટસ્થ કા, નહીં બ્રહ્મ સે ભેદ ।

ભેદ ભાર જખસે ધર્યો, તખસે પાયો ખેદ ॥

સમજ એસા કયોં હુવા અજન ॥ ૩ ॥

આપસે ભિન્ન જનતે ઇસ્ક । વહી નર પાતે હૈં બહુ કસ્ક ।
ગુપ્ત ગલિયારે મેં આવે । ઇસ્ક કહિં દૂંઠા નહિં પાવે ॥

દોહા—આપના આપ પિછાનિ કે, તજે ઇસ્ક કી ખાત ।

વૃક્ષ ખીજસે ન્યારા નહીં, મૂલ ફૂલ ફૂલ પાત ॥

ધુરુ કો પાઈ સુખ કી ખાન ॥ ૪ ॥

૧૭. લાવણી

યહા કોઈ નહીં રામ નહીં શ્યામ । સદા યક તૂહી પૂરણ કામ ટેકા
આપહી રચતા સખ વિસ્તાર । જિસકા કછુ નહીં વાર નહીં પાર ॥
રચિ કર ભૂલિ ગયા હૈ આપ । તજી ફિર તપતા તીનોં તાપ ॥

દોહા—દેવ ખનાયા ઇશિ કો, આપ ખના હૈ દાસ ॥

આપહિ અપને ગલે મેં, ઘાલિ લઈ હૈ ફાંસ ॥

ક્રિયા હૈ તુજને હી સખ કામ ॥ ૧ ॥

તુજે યહ કલિય લઈ માયા । ફેર ઉસે તુજ કો ભર માયા ॥
આપ કો માનન લગા શરીર । મિલા જ્યોં જલ કે માહીં ક્ષીર ॥

દોહા—ખડુત કાલ ભરમત ફિર્યો, અખ તો સમજ ગંવાર ।

ઔસર ચૂકા જાય હૈ, ફિર પડેગી યમકી માર ॥

તભી તૂ રોયેગા ઉસ ધામ ॥ ૨ ॥

અખ તૂ સમજ અપને કો આપ । છોડ સખ રામ કૃષ્ણ કો જાપ ॥
સદા યક તૂહી આપહિ આપ । કહાં સે લાયા ભેદ કા પાપ ॥

દોહા—જન્મ મરન તોમેં નહીં, નહિં સુખ દુખ કી ગંધ ।

જીવ ભાવ કો છોડીદે, તુહિ પૂરણ પરમાનંદ ॥

જહાં પર નહીં ધ્યાન નહીં જ્ઞાન ॥ ૩ ॥

જખ તૂ પાવે ગુપ્તાનંદ । તખી હોય તેરે કો આનંદ ।
વહાં પર કોઈ નહીં દુખ દ્રંદ્ર । જહાં નહિં પરકાશત હૈ ચંદ ॥

દોહા—વહાં પર ગોવર્ધન ખસે, લાગી બ્રહ્મ સમાધિ ।

કહન સુનન મેં હૈં નહીં, ગતિ કછુ અગમ અગાધ ॥

જહાં પર સખ સિધ હોતે કામ ॥ ૪ ॥

૧૮. લાવની

રમ્યા સખ જગહ મેં રાધેશ્યામ । શ્યામ ખિન ના કોઈ ખાલી કામ રો
હુઈ ઇચ્છા કીના વિસ્તાર । ગુન તીનોં મેં સખ સંસાર ॥
સભી કા એક આપ આધાર । જૈસે માલા મેં સૂત્ર કા તાર ॥

દોહા—અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય દેખ લો, વ્યાપક નંદકિશોર ।

પંચ ભૂત તીનોં ગુણ માહીં, પૂરણ હૈ સખ ઠોર ॥

મિટા તુજા કો જલાવો કામ ॥ ૧ ॥

કોઈ બન પરવત મેં જાવે । કોઈ તન ઉલટા લટકાવે ।
કોઈ કાશી ગંગા ન્હાવે । દ્વારિકા છાપ લે હરખાવે ॥

દોહા—ચિત ચંચલ ઈંદ્રિય મન રોકે, વન મેં ધારે ધ્યાન ।
ધ્યાન મિટા ચંચલતા વ્યાપી, યહ તો કચ્યા જ્ઞાન ॥

ઇસસે સરે નહીં કહુ કામ ॥ ૨ ॥

પ્રથમ નિષ્કામ કર્મ કરના । પુનઃ ચિત ઇશ્વર મેં ધરના ।
ચતુષ્ઠય સાધન હોય સમ્પન્ન । ગુરુ કી લેવે જાય શરન ॥

દોહા—પ્રેમ ભાવ ગુરુમેં કરે, ધારે ભક્તિ સુજન ।
ગુરુ પ્રસન્ન ઉપદેશ કરે, જખ છૂટે તન અભિમાન ॥

સભી મેં સુઝત આતમરામ ॥ ૩ ॥

ગુપ્ત ગુરુ કૃપા મિલા આરામ । લખાયા સખમેં સુન્દર શ્યામ ।
મિટા જગ ખેદ હુવા ખુશિયાલ । મૂલસે ગઈ અવિદ્યાજાલ ॥

દોહા—ગોવર્ધન યોં કહે કૃષ્ણ વિન, ઓર નહીં કર ગૌર ।

સત ચિત આનન્દ શુદ્ધ રૂપમેં, ચલે ન કિસકા જોર ॥

ગુરુ મેં નહીં રૂપ નહિ નામ ॥ ૪ ॥

૧૯. લાવની

હમહૈં ઉન સંતન કે દાસ । જિનેં સખ તણ જગત કી આસ ॥ ટેકા ॥
કિયા હૈ વિજન દેશમેં વાસ । જગત સે રહતે સદા ઉદાસ ।
કારિ દમ સખી કર્મકી કાંસ । આપકો જના ચિદ આકાસ ॥

દોહા—ઇસ ધારા પર વિચરતે । સદા રહે નિરદ્વંદ્વ ।

જનત હૈ કોઇ જનન હારે, કયા જનેં યે અંધ ॥

કિસી કો દેતે નહીં તરાસ ॥ ૧ ॥

નહીં કંઈ દંભ કપટ માયા । ઉલટિ મન આતમ મેં લાયા ।
જગત સખ ચેતન કી ગયા । કભી તિન વ્યાપે નહિં માયા ॥

દોહા જગ કે માહીં યોં રહે, જ્યોં પદમ પત્ર જલ ખીચ ।

નહાયે નિરમલ જ્ઞાનસે, સખ છુટી અવિદ્યા કીચ ॥

नहीं कुछ रखते अपने पास ॥ २ ॥
जिन्हों के ज्ञान बनिब वेपार । और नहीं करते कृष्ण कार ।
जगत में लिपते नहीं विकार । सली जुटा जना आकार ॥

होहा—येतन निरमल शुद्धमें, ना कुछ हुवा न होय ।
ऐसी जकी दृष्टि है, साध कडावे सोय ॥

जिनें सख काटी मजहूष की क्षंस ॥ ३ ॥
संत विचरत धन पथमें । आत गार्ह सह ग्रंथन में ।
गुप्ते जिन भोजि लिया जग में । इरि नहीं आवत है लग में ॥

होहा—गोवर्धन सों कहत है. संतो लक्षण उल ।
धूनिश्चय जिनका लया, तिनके देह न गेह ॥

सर्ध है मूल अविद्या नास ॥ ४ ॥

२०. लावनी आल हून.

सख बलो सुहागिन साज आज घर पी के ।
अख अख पिया के भोगि जुलार्ध है ।
बलना पडे जर सवारी साख कर आर्ध ॥ टेक ॥
तेरे वारि अडे लनिहार तयार अख हो ले ।
अख उल जरा अख अभियां तो भोलो ॥
कर प्रीतम घर की सुर्त शब्द कुछ भुष सेति भोलो ॥
अख घर प्रीतम का ध्यान मान मद तल के ।
अख अख मोह भमता के सख त्यागो ॥
गृह छोडि पिता का बलो बरख अख प्रीतम के लागो ॥

शेर—भूली किरे उस सजन के कर अंदरुनी ज्वाल के ।
बल ज्ञानरूपी दे ऐसी, कटे अविद्या जल के ॥
शुभ गुन के भुषण पहिरि के छांडो सली धनमाल के ।
तू उससे परदा मत रखे वोह जने तेरे सख डाल के ॥

અખ કર આગે કા સૂલ મૂલ ગહિ રાખો ॥
 અજી એજી પિહર મેં ઉમર ગમાઈ હૈ ॥ ૧ ॥
 અખ તજો કુટિલ પરિવાર ભાર કો પટકો ।
 અજી એજી છોડિ કર મમતા મોઈ કો ॥
 પરિછિન્ન પિતા હંકાર વિષય તજ પાંચો ભાઈ કો ॥
 તૃષ્ણા ચિન્તા અરુ ચાહુ મુહેલી ત્યાગો ।
 અજી એજી કુસંગતિ સખ અશનાઈ કો ।
 રાગ દ્વેષ અરુ હર્ષ તજો સખ માન ખડાઈ કો ।

શેર—જલ શીલ કા અશનાન કરકે તિલક તત કા કીજયે ।
 ભકિત પરેમા માલ ગલ મેં સાજ યહ સજી લીજયે ॥
 કરની કે કપડે પહિર કે નિષ્કામતા રંગ દીજયે ।
 સોલહ કરો શૃંગાર અખ જસે દેખિ પીતમ રીઝિયે ॥

પીતમ કો પ્યારી લગી ફેર ડર કિસકા ।
 અજી એજી સભી કે મન કો ભાઈ હૈ ॥ ૨ ॥
 યહ પાયા અટલ મુહાગ ભાગ પિછસે સે,
 અજી એજી સોહાગિન મુખભર સોઈ હૈ ।
 જો હોના હોય સો હોય વૃત્તિ જન અંતર મોઈ હૈ ॥
 અંતરમુખ મુખ કો અનુભવ કરકે જાન્યા.
 અજી એજી ભેદ જન તોડિ દિયા જડદા ।
 જખ ખુલિ ગયે જ્ઞાન કપાટ ભરમ કા ફાંટિ ગયા પડદા ॥

શેર—પંચકોષત્રય દેહ કા પડદા પડ અજ્ઞાન તે ।
 શમશેર સતગુરુ કો દર્ઘ કાટયા નિજતમ જ્ઞાન તે ॥
 તોડિ બંધન વિચરતી કુછ કામ નહીં ધન ધામ તે ।
 આદૃષ્ટ તે વ્યાહાર હોય નાતા નહીં કષ્ટ ચામ તે ॥

યાં હોય એકમએક મૌજ મેં રહતી,
 અજી એજી જીવનમુક્તી કો પાઈ હૈ ॥ ૩ ॥

હુઈ વિરતી અમ્હાકાર ચાર સે મિલિ કે ।
 અજ એજ ઉસીને ભેદ જનાયા હૈ,
 પડા ગભી લોહે પર લવ જલ માંહિ સમાયા હૈ ॥
 દિયે સિંધુ બિંદૂ ત્યાગિ ભેદ જલ કા,
 અજ એજ ઉપાધ સખ હી દૂરિ ડારી ।
 હુઈ શુદ્ધ સચ્ચિદાનન્દ આજ યહ પ્રીતમ કી ખ્યારી ॥

શેર--સિંગાર સોલહ સાજ કે પાયા પતિ કે રૂપ કો ।
 તજ કર પિતા કે ધામકો તિર ગઘ ભવ કે કૂપ કો ॥
 ગુપ્ત સૈન પિછાનિ સજની પાવે રૂપ અનૂપ કો ।
 સમજે ચતુર પરખીન કોઈ સમજાવે કો બેકુફ કો ॥

જન ક્રિયા આપના કાજ લાજ સખ તજ કે,
 અજ એજ ચતુર કી યહ ચતુરાઈ હૈ ॥ ૪ ॥ ચલના પડે જરૂર ॥

દોહા--ત્રય કાલે દો ઉજરે પતલે પંચ પ્રકાર ।
 સુભર ચાર કઠોર દો ચે સોલહ સિંગાર ॥
 ॥ ઈન ષટ્દસ શ્રંગારોં કો જિજ્ઞાસુ મેં ધરાતે હૈ ॥
 દોહા--આવરણ દોષ કાલે ત્રય, ઉજલે દો કર્મ ઉપાસ ।
 પંચ પાતલે કામાદિક કર, મન મેં હાય હુલાસ ॥
 પુષ્ટ ક્રિયે હૈં જસુ ને, વિવેકાદિક જે ચાર ।
 સતશાસ્ત્ર સતસંગ દો કાઠે, ચે અધિકારી કે શ્રંગાર ॥

૨૧. લાવની ચાલ ડૂન.

મત પડે ભરમ કે કૂપ રૂપ લખ અપના,
 અજ એજ મનુષ તન તુઝકો પાયા હૈ ।
 કર દેખો તત્ત બિચાર કૌન તુહ કહાં સે આયા હૈ ॥ ૨૬ ॥

यह तन धन सब्या जानि जेल में लागा,
 अल अल विसरी गया अपनी सुधि सारी ।
 जान पान में लग्या विषयों की अति गर्भ भीमारी ॥
 इस चमक्याम को देखि फिरत है कूट्या,
 अल अल कुंहर के पलते में छूट्या ॥
 अकने लग्या तुझान, जमा सभ अपनी को लूट्या ॥

शेर—माया के भद कोपी के, फिरता अविद्यारात में ।
 यशम अंदर के भिये, कंस गया नतजमात में ॥
 जैसे करनी देखि के, उस्ती पड्या है जात में ।
 अंकुश जाता शीश में, अंधि के विषों की जात में ॥
 यों मोह जल में कसा ज्व भरता है, अल अल कष्ट कष्टां-
 तर पाया है ॥ १ ॥ यह विषय लोग सभ भिजली का चमकारा ।
 अल अल पसारा भिगडी जय छिन में ॥ मुक्ती हिन युक्ती कहे
 जात मनकी रह जय मन में ॥ औसर के यूके होय केर पछताना,
 अल अल काज अण कर लीजे अपना छोडो सभ परमाद, जगत
 यह रैन माहि सपना ॥

शेर—अण छोडो वाद विवाद को याद कर निज रुपको ।
 आकार दृष्टी छांड़ि के समजो न रुप अरुप को ॥
 ने परकाशता है सर्व को, सो सर्व में भरपूर है ।
 यह रमज समजो आरिझों की वोहि तेरा निज नुर है ॥

जस को कहुते हैं वेद अर्थ को ले के, अल अल सो अपना
 आप भताया है ॥ २ ॥ कर वेद गुरु से प्रीति रीति को पावे ॥ अल
 अल धश को ऐसी है नीति ॥ यह लोभों करो उपाय और विधि पावे
 नहीं रीति ॥ अण मुनिये करिके ज्वाल डाल कहुं सगरा ॥
 अल अल अतुष्ट साधन को करना ॥ सभ त्यागो करम उपास
 केर ले सतगुरु की शरणा ॥

શેર-વિધીસે ગુરુદેવ કે બક્તિ સે પરસન કરે ।
 જતા આતા કૌન હૈ જન્મતા અરૂં કે મરે ॥
 વિધિ ઔર નિષેધ દોનોં કર્મ કે કહુ કે કરે ।
 ફલ તાસ કે પુન્ય પાપ કા કૌન સુખદુખ કે ધરે ॥

સતગુરુ સે પરસન કરે વિધી સે જાકે, અણ એસી સખ
 સંદેહ મુનાયા હૈ ॥૩॥ જખ મુનિ કે શિષ્ય કી બાત હાથ કે
 ઠાયા ॥ અણ એણ કહ્યા સો હમ કે સખ જાન્યા ॥ મન બુદ્ધિ
 કર સમાધાન લગા કે દોનોં કાના ॥ તુઝ મેં નહીં આવન
 જાવન જન્મ ઔર મરના ॥ અણ એણ વિધી નિષેધ નહીં
 જાગડા ॥ પૂન્ય પાપ કે સુખ દુઃખ ફલ કા તુઝમેં નહીં રગડા ॥

શેર-યે ધરમ સુક્ષ્મ સ્થલ કે બુદ્ધિ સહિત આભાસ મેં ।
 તૂ તો હૈં સખકા સાક્ષી રહતા હૈ ઇનકે પાસ મેં ।
 ચેતન્ય જ્ઞાન સરૂપ હૈ હસ્તી છિપે નહીં ઘાસ મેં ।
 તુઝ મેં ક્રિયા કર્મ એસા જિમિ નીલતા આકાશ મેં ॥

મુન ગુપ્ત ગુરુ સે જ્ઞાન ખુલ ભ્રમ તાલા । અણ એણ
 ભરમ કા મૂલ ઉડાયા હૈ ॥ ટેક પ્રતિ ॥

૨૨. અથ લાવની: ચાલ દૂન ॥

અખ લખી નિશચલ કી રીતિ પ્રીતિ સોં પ્યારે । અણ એણ
 જગત મેં ઔર નહીં દુજા ॥ હુયે જ્ઞાનરૂપ ઔતાર ભરમ કા
 ફેડિ દિયા ફૂજા ॥ ટેક ॥ સાગર કાઠ કરિ દિયા સેતુ જગત કે
 માહીં । અણ એણ જીવ ચઢિ ચઢિ ઉતરે પારા ॥ દિનમેં સૌ
 સૌ વાર તિનોં કે નમસ્કાર મહારા । અચરજ જગમેં હુયે
 ઔર બહુતેરે ॥ અણ એણ સહી કે સિર પૈ મૌર સાજા ।
 તજિ વિદ્યા કા હંકાર લિખી જિન ભાષા નહિં લાપા ॥

11 Լ Զ ԶԻԽԵ ԻԿԻԿ ԻԿՏ ԼԵԿՏ ԻՏ ԽԱՆՏ ԶԵՏ ԿԱԶ
1 ԻՏ ԶԻԿԵ Լ ԻՏ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
1 ԽՍ ԶԻԽԻ ԶԻ Զ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

11 Զ ԶԻԽԻ ԶԻ Զ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

11 Զ ԿԱԶ Զ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
1 Զ ԿԱԶԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
11 Զ ԿԱԶԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
11 Զ ԿԱԶԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

1 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
1 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ
ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

11 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

1 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

11 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

1 ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ ԽՍԻ

ક્રિયા કર્મકાંડ કો ધુરિ ધુરતા કરકે । અણ એણ છુટા દર્ધદર્શવર
કી પૂજા ॥ ૩ ॥ જિસે અપની અપની ઠોર કાંડ સખ રાખે । અણ
એણ વિદુત કી યહ વિદતાઈ હૈ ॥ નિશ્ચલ કા કથન હૈ અચલ
અચલ કો દિયા દિખાઈ હૈ । નહિં લક્ષ માંહિ કોઇ પક્ષ દક્ષ
યહ કહતે । અણ એણ પક્ષ મેં કુખ્યા સંસારા ॥ વે કિસકી
કરતે પક્ષ વેદ વેદાંગ ભયે પારા ।

શેર—ધન્ય હૈં ઉસ પુરુષ કો સાજ જસકો યહ સજયા ।

ઉસીને સંસાર મેં વિદ્યા કા પાયા હૈ મન ॥

નિષ્કામ હોકે વિચરતે રાજ રહે ઉસકી રત્ન ।

તીનોં ભુવન કે બીચ મેં ઉંચી ગડી તિન કી ધન ॥

૨૩. અથ લાવની : ચાલ દૂન.

અખ કરો કુંભ અશનાન ઘાટ તિરખેની, અણ એણ કાલ
અખ તુઝકો પાયા હૈં, મત કુંસે ભરમ કે જાલ સખી યહ જૂઠી
માયા હૈ ॥ ૧૮૬ ॥ તર તીવર ધાર વૈરાગ યહી તિરખેની । અણ
એણ આતમા તીરથ મેં નહાવો ॥ કર વિષય દેશ કા ત્યાગ
કિનારે તિરખેની આવો । નિજ આતમ તત જ્ઞાન અક્ષય વટ
પરસો ॥ અણ એણ સરસ્વતી સાર વેદ ટાહો । મલિન વાસના
મેલ સલી અખ મલિ મલિ કે ધોવો ॥

શેર—અંતઃકરણ કે કપડે કો સાફ કરકે ધોધયે ।

સાખુન કર્મ નિષ્કામ ભક્તિ દોનુ વો કર સોહિરે ॥

લક્ષણ કહે હૈં શાસ્ત્ર મેં એસે ગુરુ કો બેધયે ।

મૂલ અવિદ્યા મેલ કો ગુરુ ચરણે સંગમ ખોધયે ।

જખ તિરખેની કા નહાન સફલ હોતા હૈ । અણ એણ ભ્રમ
કો ધોય બહાયા હૈ ॥ ૧૧ ॥ ભમરા આતમા ચેતન પૂરણ સખ
મેં અણ એણ રતી અખ તિસ માંહી કીજે ॥ દ્વાજ દેત કર

દ્વાર અર્થ આશ્રમ કા મુનિ લીજે । આશા તૃષ્ણા કરિ ત્યાગ
આસરમ પાવે ॥ અજી એજી યાત્રા જખ હોવે પૂરી । ફિર રહા
ચોરાસી લાખ કર્મ કી પડી કંઠ ઘૂરી ॥

શેર—યહ પર્વ અખ તિસકો મિલ્યા પાચા હૈ અપને આપકો ।
આત્મા તીરથ શાંત મેં ખોયા હૈ તીનોં તાપ કો ॥
મેલા મિલોની કો ગઈ ફિર જપૈ કિસકે જપ કો ।
દરશન હુયા દીયાર કા ખોયા હૈ પુન્યરૂ પાપ કો ॥

સોઈ તિરખેની કે તટ પર વૈઠે ડટકે । અજી એજી મજા કુછ
તિસકો પાચા હૈ ॥ ૨ ॥ દારાગંજ દારા ત્યાગ ધલાહી પાવે ।
અજી એજી ધલેહુ આમાદ ક્રિયા જિસને ॥ જીની મેં ઝલક રહા
આપ ભેદ કી ગંધ નહીં જિસમેં । સતસંગતિ નૌકા ઉતર
ભવધારા ॥ અજી એજી નહીં હૈ જિસમેં વાર પારા । વ્યાપક
એક અખંડ સભી શામિલ સખસે ન્યારા ॥

શેર—ઇસ વિધિ સે તીરથ ક્રિયા તિસયોગ યજ્ઞ સખહી ક્રિયા ।
સ્વયં પિત્ર કો ઉધાર કે સખ દાન અવની કા ક્રિયા ॥
સંસાર મેં ઉસ પુરુષ કા સફલ હૈ દિયા લિયા ।
રૂપ અપના નીર ગંગા છનિ કે જિસને પિયા ॥

કોઇ સમજે સૂરમા રમજ હમારા દેશી । અજી એજી માયા
કા જાલ ઉડાયા હૈ ॥ ૩ ॥ માયા કે જાલ મેં ફંસે મૂઢ અજાની ।
અજી એજી ધર્મ અપને સે ભાગે હૈ ॥ પકડી લોભ કી નાડિ
ભાડ ઝાંકન કો ભાગે હૈ । તજિ દિયા જ્ઞાન અધ્યયન લોભ કે
ફંદ મેં ॥ અજી એજી કર્મ અપને કો ત્યાગા હૈ । વ્યભિચારિન
જ્યોં ફિરે ચાટ વિષયોં કી લાગ્યા હૈ ॥

શેર—ધર છાડિ કે કયોં નીકસે કાહે કો મુખ કારા ક્રિયા ।
ભૂલે શબ્દ સંન્યાસ કો કલદાર મેં મન કો દિયા ॥

વિરથા હૈ સંસાર મેં એસે સંન્યાસી કા જિયા ।

કોડી ફિરત હૈ માંગતા ખાતા હૈ ઉલટા ક્રિયા ॥

નહીં યુક્ત સૈન કો સમઝે મૂઢ અનારી । અજ એજ અખજ
ખાજે કો ખાયા હૈ ॥૪૧॥ ટેક ॥૪૧૧॥

૨૪. અથ લાવની : ચાલ દૂન.

અખ હુયા કુલ કા અન્ત સન્ત યહ કહતે । અજ એજ સોમ-
વતી સમતા કો ધારો ॥ માવસ મમતા કો ત્યાગ રાગ અરુ
દ્વેષ સહી મારો ॥૪૨॥ સ્વાહી સંશય કો કાઢિ મૂલ સે પ્યારે ।
અજ એજ જ્ઞાન કી ધારા નહાવો ॥ નિષ્કામ નિશાન હિલાય
ધાય ગુરુ સંગમ પર આવો ॥ સતગુરુ સે કરો મિલાપ સુક્લ
હોય મેલા । અજ એજ કર્મ કી કાલિખ કો ધોવો ॥ કરિ કે
એસે અશનાન ફેર નિરભય હોકે સોવો ॥

શેર—એસા ક્રિયા અશનાન જિસકો ગોતા લાય કે ।

સો નિરભય હોકે સોવતા વિરતી થકી હૈ જય કે ॥

પાયા અમોલક વસ્તુ કો વહ ક્યોં મરે ફિર ધાયકે ।

અંતર કી અગ્ની ખુઝગઈ નિજ રૂપ અપના પાયકે ॥

હર હાલ હંસી હર હાલ ખુશી મેં રહતે । અજ એજ મૂલ
સંસૃતી કા જરો ॥૪૩॥ સખ જૂઠા યહ પરપંચ રંચ નહીં સચ્યા ॥
અજ એજ ફેર કયા મજબૂત ગીત ગાવે ॥ શાસ્ત્ર વેદ પુરાણ
સહી યહ કહિ કે સમઝાવે ॥ નહીં સમઝે મૂઢ ગંવાર વેદ કા
આશા । અજ એજ ચાલ વહી ભેડાં કી ચલતે ॥ ફંસિ ગયે
મજહૂબ કે જલ અવિદ્યા અગ્નિ મેં જલતે ॥

શેર—મરુસ્થલ કો દેખિ કે મિરઘા ફિરત હૈ ધાવતા ।

ભટકિકે મર જત હય નહીં ઉસકી પ્યાસ ખુઝાવતા ॥

तेसे ही यह जब मूर्ख विषय सुन को याहता ।

तिन हेतु धनके काज जग में नाना स्वांग बनावता ॥

सब कहते संत पुकार विषय दुख रूपा । अल अल तने
अपने को तारे ॥२॥ ने किया तुझे संन्यास आश करे
किसकी । अल अल काम क्या क्षेत्र तुझको ॥ यही भडा अह-
सास पात सुनि सुनि होता मुझको ॥ कोई अपने वैरागी भाकी
भाक रमावे ॥ अल अल अर्थ वे तिसका भूले हैं । समुझावे
को तिसे लोल के जले जूले हैं ॥

शेर--कहे वेद पुकारी के सो वैरागी नहीं ।

सो ही वैरागी हय सही तिरलोकी से राज नहीं ॥

कहते वैरागी आपको सब पात हय तिनकी वही ।

माल मंदिर में लरे पुडियों की चढी रही है तध ॥

जिसे वेद कहे वैराग अजर नहीं उसकी, अल अल रात
दिन भैं भूरो भूरो ॥३॥ तल कर अपनी भयाई स्वाद क्या
आया । अल अल लोल की अजर झंस लारी । क्या गिरही
क्या संन्यास लोल को आ लिया अहचारी ॥ जब छोड दिया
घर पार पार क्यों होता । अल अल मागि कर दुकडे को
भावे । अपनी अनुसार यह जगे यह सो जवे ॥

शेर--यही मता हय संत का नित जपे अपने आपको ।

स्वतंतर होके विचरता तलकर परतंतर पापको ॥

गुद्दार में क्या काम है घर छोड दिना आपको ।

गुप्त अपना आप है फिर जपे किसके नप को ॥

पथा में संत नहीं पडें पडें सोध कहते, अल अल ज्ञान
के अंजन को सारे ॥४॥

૨૫. અથ લાવની: ચાલ દૂન

શેર—હાલ દોરે કા લિખે સુન લિખે ચિત લાયકે ।

જે આયા દેખન સુનન મેં સખહી કહતે ગાય કે ॥

યે જીવ દોરા કરત હૈ જંગલ આય કે ।

ભૂલ્યા હુકુમ સરકાર કા રહા રૈયત મેં ઉલઝાયકે ॥

હાકિમ પતિ હાકિમ જીવ કરે જગ દોરા । અજી એજી ખેડી
કે માયા અસવારી ॥ જખ કરકે દેખિ જાંચ તણી ગલતી નિકલી
સારી ॥ ટેકા ગલતી ગિરદાવરજન પરદા પઢવારી । અજી એજી
સણી યહ વેદ જાલ વસ્તા । સતસંગી સડક જાન યહિ સીધા
રખ્યા રસ્તા ॥ સખ હાલ યહિ એક હવલદાર તુમ જાનો ॥
અજી એજી કાયદા કર્મકાંડ ભાસ્યા, નાનાપન નંખરદાર હુકુમ
ભુગતન લાગ્યા સારા ॥

શેર—વૈર વલાઈ ચલે તડવિ તામસ ધાય કે ।

ન્યાવ નાઈ મન માનકર હાકિમ પે પહુચે જાયકે ॥

ચિત્ત ચૌકીદાર સે હાકિમ કહે સમુઝાયકે ।

પ્રારબ્ધ જગીર ખાવો સરકારી કામ ખનાયકે ॥

રૈયત રજેગુણ જીલવાય કહા સમઝાય કે ॥ અજી એજી
ખઝાયા દીજે સરકારી ॥ ૧ ॥ યે માન અમીન જીલાય હુકુમ દિયા
તિસકો ॥ અજી એજી માપ જલદી કીજે ખ્યારે ॥ જે પડ જગી
ચૂક ફિરો જગ જંગલ મેં મારે ॥ સુનકે હાકિમ કા હુકુમ ચલા
કુરતી સે ॥ અજી એજી માપ કા સાજ લિયા સારા । ઝગડે કી
ઝંડી ગાડ શિસ્ત જિને જાંધી એકતારા ॥

શેર—વેદ કે કાનૂન મૂજિબ કામ તિસકો સખ કિયા ।

કર્મ ફલ કો ત્યાગ કે મુક્તિ રિશવત સે હુયા ॥

કરકે સફાઈ કામ કી સખડી તિસે દિખલા દિયા ।
સંતિ લીજિયે સરકાર અખયહ કામ હમ નિસ વિધિ કીયા ॥

સખ ઉંચ નીચ લઈ માપ રહી નહીં ખિસ્વા । અજી એજી
નહીં છોડી હલકી ભારી ॥૨૧॥ હમ જેરી યતન જરીખજાન કા
ગઠા ॥ અજી એજી કાયા ભૂમી કો માપ ગિરી । જખ નિકલી
પંચલિ કોંપ ખેત તીનોં મેં દખલ કરી ॥ નિસ ચોરાસી લાખ
ખેત તીનોં મેં ॥ અજી એજી ચાર હિસ્સે કિની સારી, ઇક્કિસ
લાખ ચઢી કાગજ કે મંજારી ॥

શેર—સત રૂપ જે સરદારપુર તિસસે યહ દૌરા ચલ્યા ।
ભવાનપુર તાંડા પડયા બાગ મેં ડેરા ઢલ્યા ॥
પાપ પાંડવ ગુફા દેખી આસપુર મેં જ રલ્યા ।
ભય ખડે ભીલાવાડ મેં ફેર કાંગલી લૂ મેં જલ્યા ॥

ફિર દેખ્યા લોભ લંગૂર ડાક બહિ મારે । અજી એજી કરી
જખ મુદ્દા ઘાટ ત્યારી ॥૩૧॥ જહાં નામ નરમદા નહાય મૈલ સખ
ધોયા ॥ અજી એજી હવા હુરમત કી ખૂબ ઉડી । તિસતે આગે
ચાલ સવારી વાકાનેર બડી ॥ વહ વંકા મારગ જન પહુંચતા
કોઈ ॥ અજી એજી માન કી મનવર મેં આયે । કામાદિક રસ્તા
વિકટ કાટ અમઝેરે કો પાયે ॥

શેર—આમનાય અમઝેરે મેં ધી, અખિકા દેવી રહે ।
જે સમઝે યાકે અર્થ કો પાપ જન્મોં કે દહે ॥
સત રૂપ જે સરદારપુર હૈ ઉરમેં ઉલટા આ રહે ।
ફીર દૌરે કા ઝગડા ચુકયા નિજ ધામ અપના પારહે ॥
ઇસ ગુપ્ત દૌ કા સાર ચાર કોઈ સમઝે, અજી એજી પાર
સખ હોવે નરનારી ॥૪૧॥ટકા॥

દોહા—મુસ્તાજર માયા મેં કુંસે બહ ગયે વહીવટદાર ।
 છુટિ ગયે માયા જલ સે સોઈ ઉતરે પરલે પાર ॥
 લેવે સાર સુગંધ કો તજ દુરગંધ અસાર ।
 પાવે અપને રૂપ કો સખ છૂટે ભરમ વિકાર ॥

૨૬. અથ લાવની: રંગત ખ્યાલ

કાયા મંદિર માહિં પિયારે આતમ જોતી લિંગ રહે ।
 મનીરામ હૈ તિસકા પુજારી તરહ તરહ કે ભોગ ધરે ॥૧૮૬॥
 ગોણુ પુજારી ઔર આઠ હૈં અપને અપને કાજ ચલે ।
 શબ્દ, અરૂ સ્પર્શ, રૂપ, રસ ગન્ધ કો લેકે હાજિર ખલે ॥
 નૌ તો પૂજા કરે જ્ઞાન સે મન બુદ્ધિ ચિત્ત હંકાર મિલે ॥
 દસ પુજારી હૈં કર્મકાંડ કે કરતે અપને કર્મ ભલે ।
 સખ મિલિ પૂજા કરે હૈં દેવ કી જનમ જનમ કે પાપ દહે ॥૧૮૭૬॥
 ધૂપ દોપ હૈં સાધન સારે અરૂ જિતને પતરા પોથી ॥
 નિજ આતમ વિતિરેક જો કિરિયા ઔર સભી જાને થોથી ॥
 સત ચિત આનન્દ તીન પુખ્ત ધરિ નિશ્ચય મેં બુદ્ધિ સોતી ।
 મન બાણી કી ગમ્ય નહીં જહું મંદ હોય સખહી જોતી ॥
 આપ સ્વયં પરકાશ બિરાજે નેતિ નેતિ કર બેદ કહૈ ॥૧૮૮॥
 જોતી સરૂપ હૈ આપ તુ હી ફિર કિસ જોતી કી આસ કરે ।
 અંતર બાહર ભન કાલમેં સખહી કા પરકાશ કરે ॥
 બુધી અરૂ અજ્ઞાન મેં આકે તુહી રૂપ આભાસ ધરે ॥
 અહું બ્રહ્મ યહુ વિરતી કરકે તુહી આવરણ નાશ કરે ॥
 સખ તેરી ચમક કી દમક પડી હૈ પવનરૂ પાની સભી વહે ॥૧૮૯॥
 ગુપ્તરૂપ પરગટ આપ બિરાજે તેરે તો મર્યાદ નહું ॥
 આદી અનાદિ શબ્દ કહે દો તેરે તો કોઈ આદિ નહીં ॥
 વેદ શાસ્ત્ર મેં નાના ઝગડે તુઝ મેં તો કોઈ વાદ નહીં ॥
 માયા અવિદ્યા બ્રહ્મ ઈશ મેં તુઝમેં કોઈ ઉપાધિ નહીં ॥
 કાલ કા ભય નહીં જરા ભી તુઝ મેં કાહે કો વૃથા દુખ સહે ॥૧૯૦॥

૨૭. લાવની: રંગત ખ્યાલ (પ્રશ્ન ૩૫)

ખબર નહીં હૈ અપને ઘર કી ઔરોં કે ઘર કી ખાત કરે ।
કૌન પુરુષ ઈસ કાયા નગર મેં રાતદિના પરકાશ કરે ॥૮૬॥
ચંદ્ર સૂર તારાગણ અગ્ની વિદ્યુત વાયક સખ ભાસે ।
જાત સ્વપ્ન સુષોપતિ તુરિયા ચાર અવસ્થા પરકાસે ॥
તુરિયેતિત અરૂ અધકાર કો યા કાયા મેં કૌન લહે ।
લિયા દિયા અરૂ ખાયા પિયા પહિલી વાર્તા કૌન કહે ॥

શેર—સખ હાલ કા હોય ખ્યાલ જિંસમેં કૌન કુવત પાયકે ।
કહને મેરે પર ગૌર કર મન આપને કો લાયકે ॥
અંતર મેં કરો વિચાર કયોં મરે ખાહર ધાયકે ।
જાતા આતા કૌન હૈ સખહી કહો સમજાય કે ॥

તન શહર કા ખોજ કરો કૌન જન્મે અરૂ કૌન મરે ॥૧॥
ધર્મ જીવ કહત હૈ કિસ કો ભેદ કા કારણ દિખલાવો ।
કયા સ્વરૂપ ઔર દેશ કાલ હૈ વસ્તુ તિનકી બતલાવો ॥
ગુણ શક્તિ અરૂ વાચા કૌન હૈ કયા કરતે અરૂ કયા ખાતે ।
કૌન દેશ તિનકે વિચરન કો જહાં પે ચે આતે જાતે ॥

શેર—ચેતન નિત સમાન હૈ ફિર ધર્મ ઉલટે કયોં કહે ।
એક તો સર્વજ્ઞ હૈ અદ્વૈત દૂજ કયોં ચહે ॥
એક તો કરતા નહીં અરુ એક કર્તા કયોં રહે ।
એક તો આનન્દમય હૈ એક દુઃખ કયોં સહે ॥

જખ વહુ ભજન કરે ઈશ્વર કા ફિરકૈસે ઉસે આજાદ કરે ॥૨॥
તત્ત્વ પદ કા વાચ્ય કહા હૈ કૌન લક્ષ કહલાવે હૈ ॥
મહાવાક્ય મેં વૃત્તી કૌનસી જો તિનકા ભેદ મિટાવે હૈ ॥
અહું બ્રહ્મ યહુ જ્ઞાન કહાવે સો યહુ હોતા હૈ કિસકો ॥
યા તન મેં રહે કૌન અજ્ઞાની હમને બતલાવો ઉસકો ॥

શેર—પ્રક્રિયા સખડી કહો વેદાંત કે સિદ્ધાંત કી ।

જીસે જાનિ કે જ્ઞાની પુરૂષ ખાત કરતે જ્ઞાન કી ।

જિસ કરકે કરતે ધ્યાન કો વહ કૌન ખાતા ધ્યાન કી

સમાધિ કે વિધન સાધન ખાત કહ અષ્ટાંગ કી ॥

કે પ્રકાર કી હૈ વહ સમાધી જિસકર ચોગી ચોગે કરે ॥૩૧॥

કાલ કા લય કિસકો રહતા હૈ કૌન બંધ અરૂ કયા મુક્તિ ॥

મુક્ત હોય અરૂ બંધ સે છૂટે સભી કહો તિનકી ચુકતી ॥

જ્ઞાન કે સાધન કૌન પિયારે કિસકો કહતે હૈ ભક્તિ ॥

કે પ્રકાર કી કેસે કરતે બતલાવો કરકે સકિત ॥

શેર—પંચકોશ અતિતઆતમ કૌન કારણ સે રહે ।

સખકે શામિલ મિલ રહા કેસે અકરતા હો રહે ॥

ગુપ્ત પરગટ એક હૈ કયોં અપની લજજત ખો રહે ।

ફંસિ કે અવિદ્યા જલ મેં ઈસ જગત મેં કયોં મોં રહે ॥

વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ કહતે હૈ કેસે હૂમે કેસે તિરે ॥૪૧॥

ધૃતિ પ્રશ્ન

૨૮. પૂર્વ પ્રશ્નોં કે ઉત્તર : લાવની ચાલ દૂન

કર ઘર અપને કી ખબર સખર સે સોવે ॥ અજી અજી આતમા
સખકા પરકાસી ॥ સત ચિત આનન્દ રૂપ સ્વયં પ્રકાશ હૈ અવિ-
નાશી ॥૨૯॥ જખ સ્વપ્ન અવસ્થા હોય નહીં કોઈ જોતિ ॥ અજી
અજી ભાસતા જગત જલ સારા । સખ જોતિ જવાભાસ નહીં
તુઝ દૃષ્ટા સે ન્યારા ॥ જો કહી અવસ્થા ચાર જાગ્રત અદિ ॥
અજી અજી પંચમી તુરિયેતીત જાનો ॥ ઈન સખ કા વ્યભિચાર
એકરસ આતમ પહિયાનો ॥ જિસે અંધકાર પ્રકાશ ભાસતે દોનોં
અજી અજી ઉસે આભાસ બતાયા હૈ ॥ લેના દેના જાન બૂલ
સખ ઉસમેં હી ગાયા હૈ ॥

શેર-ચેતન્ય ને ફૂટરથ હૈ તિસકી શક્તિ પાયકે ।

આભાસ અન્તઃકરણ મેં સખ ખ્યાલ ખરતેં આયકે ॥

ખ્યાલ કી પહિલી કલી મેં કહે પરસન ગાય કે ।

પુરી અષ્ટિકા મેં ગવન હોય સુન લીજિયે ચિત લાયકે ॥

જન્મે મરતા સ્થૂલ વિહારી પટકા । અણ એણ આતમા
જાવે નહીં આસી ॥૧॥ માયા મેં પડ્યા આભાસ ઈસ કહલાવે ।
અણ એણ અવિદ્યા માહિ છવ કહિયે યહિ કહતે તિનકા રૂપ
બેઠ ઉપાધી સે લહિયે ॥ અણ દેશ કાલ વસ્તુકા હાલ કહું
સગલા અણ એણ ઈસ કે ત્રીન દેશ ભાળે ॥ સૂત્રાતમ વૈરાટ
ત્રીસરે અવ્યાકૃત રાળે ॥

શેર-ભૂત ભવિષ્યત વર્તમાન કાલ તિસકે હૈં સહી ।

સમિષ્ટી સ્થૂલ સૂક્ષ્મ કારન યે વસ્તુ કહી ॥

આઠ ગુણ હૈં માયા શક્તિ ઓંકાર વાચા હુઈ ।

અણ છવ કે સુન લીજિયે દુક સમઝ કે મેરી કહી ॥

હૈં નેત્ર, દંદ, કંઠ, દેશ યહ ત્રીનાં । અણ એણ અવસ્થા
ત્રીન કાલ ભાસી ॥૨॥ ઈંદ્રી અરૂ સ્થૂલ હૈં તિસકી વસ્તુ । અણ
એણ ચતુર દશ ગુણ જિસમેં રહતે ॥ ધિરિયા શક્તિ જાન વૈખરી
ખાનીકો કહતે । સો કર્તા પુન્યપાપ સુખ દુખ ખાતા । અણ
એણ લોક લોકાંતર કો જાવે ॥ દૂન રહે અસંગ નહીં કંકુ કરે
નહી ખાવે ॥

શેર-ચેતન નિત્ય સમાન હૈ ધરમ ઉલટે યોં કહે ।

માયા અવિદ્યા બેદસે કરતા અકરતા ખનિ રહે ॥

કરતા મતીકે બેદ સે સુખ અરૂ દુખ કો સહે ॥

નિષ્કામ હોય ઈશ્વર કો ભજતા આનંદતામેં હો રહે ॥

ત્વં પદ વાચક જીવ ઈશ તત્ પદ કા અજી એજી અસી
પદ લક્ષણે સુખ રાસી ॥૩૧॥ હોય ચિદાભાસ કો જ્ઞાન વહી
અજ્ઞાની ॥ અજી એજી સભી પ્રક્રિયા કો જાની ॥ નહિં પ્રક્રિયા
કા અંત વાત જિસકી કરતે જ્ઞાની ॥ વિધિ, ઈચ્છા, હઠ, વિસ્વાસ,
ધ્યાન ઉપયોગી ॥ અજી એજી આદિ મેં વિધન ચાર રહતે ।
સાધન હૈં તિસકે આઠ યોગી જિસે નિરવિઠલપ કહતે ॥

શેર—અભ્યાસ કી કર તારતમ્યતા ભેદ તિસકે બહુત હૈં ।
ભય રહતા અંતઃકરન મેં અળ બંધ મુક્તિ કહત હૈં ॥
બંધન વિષે કી વાસના ત્યાગ કો મુક્તિ કરે ।
તજ રાગ કી મુક્તિ યહી ફિર મુક્ત આપે હો રહેં ॥

જ્ઞાન કે સાધન અજી ભક્તિ બહુ રંગા અજી એજી ભક્તિ
વહી કાઠે સખ કાંસી ॥૪૧॥

શેર—નોંધા પ્રેમા પરા ભક્તિ કરતે હૈં ક્રિયા ભેદ સે ।
દૃષ્ટા હૈ પંચો કાયો કોષ તેં ન્યારા કહેં ॥૧॥
જૈસે મિલા આકાશ સખમેં ગુન દોષ નહિં ધારન કરે ।
તૈસે નિજતમ દેહ કે ધર્મોં સે નહિં જન્મે મરે ॥૨॥
ભરમ કે વશ કરમકર ભૂલ્યા હૈ અપને રૂપકો ।
નિદ્રામેં કંગાલ હોઈ સ્વપના બે આવે ભૂપકો ॥૩॥
આતમ તો પ્રભરવરૂપ હૈ પરકી ઉપાધી કો ધરે ।
ઈસ હેતુસે યહ ઈપતા તજકર ઉપાધીકો તરે ॥૪॥
ગુપ્ત આતમામેં ભરમ કરકે અંતૂર વો બાહર ભાસતા ।
એક રસ રહતા સદા આપહી આપ ઉજસતા ॥૫॥

२६. लावनी यास हून.

ह्या सुने कि दोषू को ज्यास की सीता. महाराज ये मूरत किशने
जगत्त है । अजय जगत्त की सुरत सभी यह कदां से आर्ष
पतिता कही गिन जगत्त निष्क हो के वरण पुजवे, महाराज
कही सुर अमुर जगत्त है । जन के मोहनी सुरत मुखा हित
की जगत्त है ॥ कही जने देव कही जने पुरंदर राजा, महा-
राज सत्ता गवर्न जगत्त है । करे अपसरा नृत्य तास सुरसे
कही गार्त है ॥

येर-कही पद्मासन जयि मुनिजन ध्यान तेरा करि रहे ।
जगत्तानंद में हो के भजन कोर मुक्ति छवन जन रहे ।
तीर्थ वाराहिक करे कोर दानमें मन दे रहे ।
कोर लोचन प्रेम से दे कोर भिक्षा ले रहे ॥
कोर पदित जनके वेदपाठ पढते है ॥
महाराज हरिजन हर गुन गार्त है ॥१॥॥॥

कही ये जगत्त सनी कही रक्षित है, महाराज चार हा पर
जगत्त है । कही जय कही कृप शत्रु कही करे बलाठ है । यह
जगत्त को ज्यास की ज्यास निरासी, महाराज देधि देधी नहीं
जगत्त है । कही गान हर गान ओर नहीं भिसे भिलाठ है ॥

येर-कही ऐसी गान है दुर्गमान आवम हो रहे ॥
दुर्ग निजवीसी यमक में चित्त जनके मो रहे ॥
देम जगत्त सुरत कही ये मुहसे पदा ले रहे है ॥
तारिक निदा गान की अपनी लप्यां से कहि रहे ॥

कोर कही देम के सुरत जुदी ये मन जले जावे, महाराज
नहीं ये हो जगत्त है प्रपठिता ये जिय रये है ओर से ओर
जगत्त है । महाराज ये भावा से कपलठ है ॥२॥ पतजर में हो

નાશ નહીં કશું પૈરે દિખાઈ છે ॥ તૂ કોતુક કરકે દેખે ખલક તમાશા
મહારાજ ચતુર ભૂલે ચતુરાઈ છે ॥ સ્વરૂપ કો વિસારિ રૂપ મેં
રહે હુભાઈ છે ॥

શેર—માયા જે એસી આપકી નિકસે નહીં યોગી યતી ॥

ત્યાગ બંધનકી ક્રિયા કો ઉસમેં ફિર કરતે રતી ॥

ત્યાગ સંગ્રહ કે વિષય મેં બેખબર જિનકી મતી ॥

નીર ખિન સંસાર મેં રૂખે હૈં અચરજ સી ગતી ॥

મી૦ ॥ ઈન ખુલે નયન સે ખવકત પૈરે દિખાઈ ॥ મહારાજ
નૈન ખિન સખ મિટિજાઈ છે ॥ ૩૧ ॥ ઈશ્વર માયા જીવ અવિદ્યા
દોનોં, મહારાજ જહાં લોં શ્રવણ સુનાઈ છે ॥ ઇન્દ્રિય મનકા વિષય
તત્વજન કહ સમુગ્રાઈ છે ॥ નહીં અંદર બાહર નહીં દૂર નહીં
નેરે ॥ મહારાજ વેદ નેતિ કહિ ગાઈ છે, સ્વયં સચ્ચિદાનંદ સદાઈ છે ॥

શેર—શુદ્ધ હૈ ચતન્ય હૈ વહ નિત્ય પ્રહ્લાનન્દ હૈ ॥

નિર્મલ નિજતમ હૈ સદા ન કોઈ માયા ગંધ હૈ ॥

પ્રકાશ ન પહુંચે કોઈ જહાં સર્વ જ્યોતિ મંદ હૈ ॥

ગુપ્ત હૈ સો પ્રગટ દીખે ગુપ્ત ગુપ્તાનંદ હૈ ॥

મિ૦ ॥ યે વિષય વાસના મય દુખરૂપ સદાઈ ॥ મહારાજ યે મહરમ
ગુરુ સે પાઈ છે ॥ ધ્રુવ નિશ્ચય હો ગયા આપ અપને ધ માહીં
હૈ ॥ ૩૨ ॥

૩૦. લાવની ચાલ દૂન

તુહીં વ્યાપક પ્રહ્લ અખંડ નહીં જહાં લીલા, મહારાજ અપન
મેં આપ હુલાયા હૈ ॥ સ્વપ્ને કા પરપંચ જાગીકર કહું ન પાયા હૈ
॥ ૩૩ ॥ સખ તેરેહી કુરને કા હૈ વિસ્તારા, મહારાજ નહીં કુછ તુઝ
સે ન્યારા હૈ ॥ કર દેખો તત્વ વિચાર સભી મિથ્યા સંસારા હૈ ॥
કહિં નહિં અશિક માશૂક સભી યહ ઝુઝા મહારાજ નહીં કોઈ મરે
ન મારા હૈ ॥ સુન ગીતા કો જ્ઞાન કૃષ્ણ કો યહ નિરધારા હૈ ॥

શેર—અબ શેર યામેં લિખત હૈં, સમઝે સોઈ નર શેર હૈ ॥
 સમઝે સો પાવે આપકો, બિના સમઝે ફેર હૈ ॥
 સખ ફેન તરંગ તુષાર જલ મેં પડત ધૂમર ઘેર હૈ
 યક તોય સે કુછ બિન્ન નાહીં, દષ્ટિ માંહી ફેર હૈ ॥

કર દેખો દિલ મેં જ્યાલ હુયા નહીં હોગા । મહારાજ નહીં
 કોઈ જપ જપાયા હૈ ॥૧॥૨૬॥

જૈસે સુખરણ મેં ભૂષણ બને અનેકા । મહારાજ એક નહીં મિલે
 મિલાયા હૈ ॥ કંઠે, કુંડલ, અરૂ નાથ, કંદોરા, જુખ બનાયા હૈ ॥
 જખ દેખે નાના રૂપ ભૂલિ ગયા સોના મહારાજ મોલ તિસકા
 કરવાયા હૈ ॥ જખ કાંટે ધરા સરાફ તલી એક સુવરન પાયા હૈ ॥

શેર—તૈસેં જગત હૈ આતમા મેં, કનક મેં ભૂષન યથા ।

નીર માહી લહર જૈસે, સીપીમેં રુપા તથા ॥

આકાર દષ્ટિ છોડિકે, ટુક સમઝ લે ઉસ યાર કો ।

યાર હૈ દિલદાર દિલ મેં, દેખિ અજબ બહાર કો ॥

તૂ નહીં રક્ત નહિં સ્વેત ન કાલા પીલા । મહારાજ નહીં ખોયા
 નહીં આયા હૈ ॥૨॥૨૭॥ જૈસે નલ માહીં દીખત નીલા કાલા ।
 મહારાજ જનોં તંબૂ તનવાયા હૈ ॥ ધૂલિ ધૂમ અરૂ મેઘ ગગન
 નહીં લિપે લિપાયા હૈ ॥ એસા હૈ આતમ અદભૂત રૂપ તુમહારા ।
 મહારાજ તિપે નહિં દેહ ચિકારા હૈ જો દેખન મેં આવે સલી
 યહ જૂઠ પસારા હૈ ॥

શેર—રહેતા સદા તુહીં એક રસ, દૂજે કા તુઝમેં લેશનાં ।

આરંભ અરૂ પરણામ નાહીં, દેશ અરૂ પરદેશ ના ॥

સાદી અનાદિ કો નહીં, સખ કલ્પના કા અંત હૈ ।

તુહીં સદા બિખરત રૂપ હૈ, કોઈ સમઝે વિરલા સંત હૈ ॥

કરતા કિરિયા ઓર કર્મ સભી હૈ જૂઠા । મહારાજ જનોં સ્વપને
કી માયા હૈ ॥૬૧॥ યોં હોય જગત કા અંત, સંત યહ કહતે ।
મહારાજ વેદ ને એસે હી ગાઈ હૈ ॥ નેતિ નેતિ કહિ શબ્દ તુઝે
યહ સૈન લખાઈ હૈ ॥ ચે ચારયું બૈઠહાર ચલ્યા નહિં ચારા ॥
મહારાજ સભી જૂઠી ચતુરાઈ હૈ । પઢિ પઢિ વેદ પુરાણ કરી જગ
માહિં ઠગાઈ હૈ ॥

શેર—કોઈ ગુપ્ત સે પરઘટ કહે, પરઘટ જો ગુપ્તાનન્દ હૈ ।

કોઈ ધુરો ચલતા કહે, સો ચલતા પરમાનન્દ હૈ ॥

વસ્તુ મેં કછુ ભેદ નહીં, કહન માહીં ફેર હૈ ।

જૈસે વન કે પશુ કો, કોઈ બાધ કહે શેર હૈ ॥

કોઈ કહે બ્રહ્મ કોઈ કહે ઉસી કે માયા ॥ મહારાજ ભેદ તસમેં
નહીં લાયા હૈ ॥૪૧॥

૩૧. ખ્યાલ રંગતી દૂન

મત પડે ભરમ કે જાલ ખ્યાલ સુન મેરા । મહારાજ વાત
વેદોંને ગાઈ હૈ ॥ તુહી સન્નિધાનન્દ સભી તેરી રોશનાઈ હૈ ॥૧૦॥
જબ હુવા ભર્મ તો લગા બેલ કે માહી, મહારાજ સુધી અપની
વિસરાઈ હૈ । તરહ તરહ કે રંગ રંગ મેં સુરતિ લગાઈ હૈ ॥ ઉસ
સૂરત મેં મૂરત કા હો પ્રતિ બિંબા ॥ મહારાજ વહી આભાસ
કહાઈ હૈ । સોન કરે કરતા વનિકે માને મન માહીં હૈ ॥

શેર—ભર્મ કે વશ કર્મ કાર ફિરતા હૈ માયા ઠાઠ મેં ।

વો અવિદ્યા હોકે તેરે મારે, સીરકી ટાટ મેં ॥

તૂં ખુશી કરિ માનતા, લાગતા વિષય કી ચાટ મેં ।

અજબ નુમા ચીજ કો, દેખન લગા હૈ હાટ મેં ॥

મી૦ ॥ ઈન સખી ચીજ કા બીજ નજર નહિં આવે, મહારાજ
વિજય બિનુ ફિરે ભુલાઈ હૈ ॥૧૧॥ ચક્ર સુન્નલીંત પર ચિત્ર રંગ

બહુ ભાર્ય, મહારાજ બિના કર લિખા ચિતેરને । ધોયજ ના
મિતે મારતા નાહી તેરને । શાં ભમ વશ હોઈર ફંસા સત્ય માને
હે ॥ મહારાજ કરે હૈ કર્મ બે ઉતનાઈ । જ્ઞાન કે જી ચાહે,
મયર વાહીમે ઉત્તરાર્થ ॥

શેર—નિરબધ મેં બંધન સમજ, કરતા બે ડોલે કર્મ કે ।

ધર્મ ધર્મી સે જુદા સો માનતા હૈ ધર્મ કે ॥

દેશ કાલા તીત આતમ, દેખતા કયા ચર્મ કે ।

પર કે અપના જનતા સખ છોડિ દિની શર્મ કે ॥

મી૦ ॥ શાં શર્મ છોડિ કે ફિરતા મારા મારા, મહારાજ હુવા
મક્ષત કે માંહી હૈ ॥૨૧॥ અધિજ્ઞાન કે જ્ઞાન બિના બિના જગ
ભાસે । મહારાજ સર્પ રજ્જુ મેં પરકાસે ॥ રજ્જુ જ્ઞાન સે સર્પ
તલી વહ વાહી મેં નાસે । બે અજ્ઞાનતે ઉપજત હૈ બે જામે,
મહારાજ જ્ઞાન હોતા હી મિટિજાઈ ॥ ઠંઠ જ્ઞાનતે તસ્કર કા ભય
હોવત હૈ નાહી ॥

શેર—પાપ પુન્યોં સે અલહિદા, કૃષ્ણ ગીતા મેં કહા ।

અજ્ઞાન વશ હો જીવ, યે ખુદ આપ સંકટ સહ રહા ॥

વાશિષ્ઠ મેં શ્રીરામ સે પરસંગ એસા ચલ રહા ।

અજ્ઞાન અપને આપકે સે, વૃથા હી નર જલ રહા ॥

મી૦ ॥ વહ વિધિ સભી કરને કાહૈ વિસ્તારા । મહારાજ દેખ
અનુભવ કે માહી હૈ ॥૩૧॥ બે સત ચિત આનન્દ વ્યાપક બ્રહ્મ
કહાવે મહારાજ વેદ નિત અભેદ કહિ ગાઈ ॥ નેતિ નેતિ કહિ
થકિ શ્રુતિ નહીં ઉસકા થાહ પાઈ ॥ ફિર કૌન ઈલહિદા શામિલ
કિસ કે કહિયે ॥ મહારાજ ભેદ કી ગંધ નહીં રાઈ ॥ જ્યોં
વંધ્યા કા પુત્ર કિસી ને દેખા હૈ નહીં ॥

શેર—ચેતન નિરમલ શુદ્ધ હૈ, સો કભી છિપતા નહીં ।

સર્વ કા પરકાશ હૈ, વહ સર્વ મેં લિપતા નહીં ॥

આનન્દ શુભાનંદકા, વહ પ્રકટ મેં જતા નહીં ।

એક રસ વહ ખસ રહા, પકડે સે કહીં આતા નહીં ॥

મીઠા ॥ હૈ સ્વયં સચ્ચિદાનંદ નહીં કહુ કરતા, મહારાજ સમજ
ધ્રુવ વાત જનાઈ હૈ ॥

૩૨. કવ્વાલી

નજરોં સે કિસ કો દેખે, તૂઝ સે નહીં ન્યારા ।

જો દેખને મેં આવે, સખ જૂઠ હૈ પસારા ॥૧૬૥

કરતા હૈ જૂઠા ધંધા, ફિરતા હૈ વંધ્યા વંધ્યા ।

પહિ ગયા કરમ કા ધંધા, દેખા ચહત હૈ ન્યારા ॥૧૭૥

જખ આપને કો ભૂલ્યા, મુખ મેં પડા હૈ ધૂલા ।

સહતે ફિરે વહુ શૂલા, સમજે નહીં ઇશારા ॥૧૮૥

કાયા કા કોટ કાયા, જૂટે હૈ મન અર વાચા ।

તૂંહીં આપ ઈન મેં સાંચા, કહુ કીજિયે વિચારા ॥૧૯૥

તન કો બનાકે સુથરા, વાંચત હૈ પોથી પતરા ।

કરતા ફિરે બહુ યત્રા, ઠગી ખાયા જગ સારા ॥૨૦૥

કરતા હૈ કાવ્ય કથની, કરતા ખખર નહિં અપની ।

ભૂલ્યા હૈ દેખિ પતની, મંદિર કો ખૂબ સંભાર્યા ॥૨૧૥

ખોજો ગુપ્ત ઇસ તન મેં, ફિરતા હૈ કયા વન વન મેં ॥

ધ્રુ નિશ્ચય કીજે મન મેં એસા હૈ રૂપ તુમહારા ॥૨૨૥

૩૩. કવ્વાલી

ગફલત મેં દૈસે સોવે, શિર કાલ કા નગારા ।

વિપયોં કો મુખ મેં ભૂલ્યા, કરતા નહીં વિચારા ॥૨૩૥

જિસ દિન દુની મેં આયા, સંગ મેં કહુ નહીં લાયા ।

યહાં દેખ્યા માલ પરાયા, કરતા હૈ મહારા મહારા ॥૨૪૥

વિપયોં કો વિપવત જાની. ઇશ્વર કો સત પિછાનો ।

યહુ સીખ હુમારી માનો, મૃગ નીરકા યહુ ગારા ॥૨૫૥

સંસાર હૈ યહ સ્વપના, ઇસમેં નહીં કોઈ અપના ।
 જૂઠી સભી યહ રચના, મુત માત તાત દારા ॥૩૥॥
 વચતા ન રાજ રાના, સખ કાલ કા હૈ ખાના ।
 એસા કયા લયા દિવાના, સમઝે નહીં ગંવારા ॥૪૥॥
 અખ કીજે કામ એસા, કહતા હૈ વેદ તેસા ।
 તજ દીજે એસા વૈસા, કયોં કરતા હૈ મુંહ કારા ॥૫૥॥
 પાવે ગુપ્ત હોવે મુક્તા, લિપતા નહીં કહિં છિપતા ।
 ધુ ખ્યાન મેં નહિં રૂકતા, વ્યાપક હૈ રૂપ અપારા ॥૬૥॥

૩૪. કંવાલી

રંગ દેખિ કર દુનિયાં કે, અપને કો આપ ભૂલા ।
 જૂઠી સભી યહ માયા, ફિરતા કયા ફૂલા ફૂલા ॥૭૬૥॥
 યહાં પર નહીં જખ આયા, તખ કિસકી થી યહ માયા ॥
 અખ કાહે મેં મન લાયા, કયોં ખોવતા હૈ શુલા ॥૮૥॥
 મન વિષયોં મેં નહીં દીજે, ઇશ્વર કા નામ લીજે ।
 અખ કાજ યહીં કર લીજે, છીજે અવિદ્યા મૂલા ॥૯૥॥
 ઇસમેં ન ગલતી કરની, કર રામ નામ કી તરની ।
 ભવ જલ સે પાર કરની, સુખ ધામ કા હૈ જૂલા ॥૧૦૥॥
 જખ ગુપ્ત ગોવિન્દ જાને, સખ હી કરમ કો ભાને ।
 જો લાવે ચોટ નિશાને, પાવે મુક્તિ દ્વાર ખુલા ॥૧૧૥॥

૩૫. કંવાલી

કયા સોવે રૈનિ અંધેરી, યહ જગત જાલ સ્વપના ॥
 દેખો ન ખોલિ અંખિયાં, ઇસમેં નહીં કોઈ અપના ॥૧૨૬૥॥
 ધન માલ ઘોડા હાથી, સંગ મેં બહુત હૈ સાથી ।
 માતા પિતા મુત નાતી, જૂઠી સભી હૈ રચના ॥૧૩૥॥
 જેતા કછુ માલ ખજના, સંગ મેં ચલે નહીં આના ।
 ફિર હોયગા પછતાના, જખ સ્વાંસ કા હોય ખિયાના ॥૧૪૥॥
 રાજ ધની અરૂ કંગલા, કરે ચાલે ખાલી ખંગલા ।
 આખિર મિલા હૈ જંગલા, ઇસ કાલ સે નહીં ખચના ॥૧૫૥॥

પહિરો સત સંગતી ચોલા, ગુપ્ત જ્ઞાન કા લે ગોલા ।
પાયા વક્ત અનમોલા, ધ્રુવ ધ્યાન મે નિજ જ્યના ॥૪૮॥

૩૬. કંવાલી

લાખોં કરોડો દેખે, હુમ નંગે પૈરોં જાતે ।
ધન જોડિ જોડિ રખતે, કોડી નહીં વે ખાતે ॥૪૯॥
અખડી તો સખડી જાની, હુમ કહતે ખાત પુરાની ।
નૌ શેર બાદશાહ જાની, અસી ગંજ ખજાને લાતે ॥૫૦॥
પૈસા ન ખૈરાત દિયા, તમ કોપ ખુદા ને કિયા ।
અગ્ની કો સંભાલા લિયા જલ બલ ભસમ હો જાતે ॥૫૧॥
ઇસ દેશ માલવે માહીં, યક ભિક્ષુ બેરહુમન આહી ।
કોડી ન ધર્મ મેં લાઈ, સખ લુટિ ગયે માલ અંધાતે ॥૫૨॥
તન ધન કા ગર્ભ ન કરના, સખ હી કે સિર પર મરના ।
અખ ગુપ્ત ધ્યાન કો ધરના, જાતે સભી અરૂ આતે ॥૫૩॥

૩૭. કંવાલી

સુનિલ મુસાફિર પ્યારે, દો દિન કા હૈં યહુ ડેરા ।
કરની કરો કોઈ એસી પાવે સ્વરૂપ તેરા ॥૫૪॥
ચોની છુટે ચૌરાસી, યમ કી કટે ફાંસી ।
પાવે તુઝે અવિનાશી, હોવે નહીં ફિર ફેરા ॥૫૫॥
નિષ્કામ કર્મ કો કિજે, ભક્તિ કે રસ પીજે ।
ફિર જ્ઞાન તિલક કો લિજે, કહના કરો અખ મેરા ॥૫૬॥
પાકર કે અપના રૂપા, હોજ ભૂપન કા ભૂપ ।
સો સખસે અજબ અનૂપા, કછુ દુરિ નાહિ નેરા ॥૫૭॥
યહુ જ્ઞાન લખો ગુપ્તાઈ, સુન લિજો આખૂ માઈ ॥
હુમ કહતે હૈં સમઝાઈ છુટિ જાય પાપ કા ઘેરા ॥૫૮॥

૩૮, કંવાલી

કાયા નગર મેં ખસિ કે, કયા હો રહા દિવાના ।
લાખોં કરો ચતુરાઈ, આખિર કો તુઝકો જાના ॥૫૯॥

ભૂદયા હૈ ધામ ધન મેં, ફિરતા અવિદ્યા વન મેં ।
 કુછ સોચતા નહિં મન મેં, ખાતા વિષય રસ ખાના ॥૧૧॥
 કયા સોતા રૈનિ અઘેરી. લગતી નહીં કછુ દેરી ।
 કરતા હૈ મેરી મેરી, છિન હોય માલ વિરાના ॥૧૨॥
 ઇસ માનુષ તન કો પાયા, નહીં ધ્યાન ધની સે લાયા ।
 ફિર અંત મેં પછતાયા, મિયા કર ચલે પયાના ॥૧૩॥
 કહતા હૈ ગુપ્ત પુકારી, સમઝો ન મૂઠ અનારી ।
 કરિ રામ ભજન કી ત્યારી, જંઠા હૈ સભી જમાના ॥૧૪॥

૩૯. શબ્દ પદ, ભજન, હિતકારી

કહતા હું તોહે સનઝાય કે અબ્ધ સુન જ્યાતી કી રીતિ ॥૧૬૬॥
 અંતઃકરણ સે નિકસી વૃત્તી, ઈન્દ્રિય દ્વાર વિષય મેં ચરતી ।
 ભંગ આવરન જિસકા કરતી, ફલ દેતા તિસે જનાય કે ।
 યહ અઝત વાદ કી નીતિ ॥૧૧॥
 જિસ સ્થલ મેં ભર્મ જો હોવે । વૃત્તિ જાય વિષય કો જોવે ।
 નહીં આવરણ ભંગ જો હોવે । દયિ તિમિર જાય કે ॥
 ફિર હોય પન્નગ કી ભીતી ॥૧૨॥
 સોધ નિમિત્ત હૈ તિસકે જ્ઞાનમેં । દોનોં કદિપત અધિષ્ઠાન મેં
 અનિર્વચની યહ સુનો કાન મેં । ચિત્ત અપને કો લાયકે ।
 મન મેં હોવે મજબૂતી ॥૧૩॥
 અધિષ્ઠાન દોનોં કા ચેતન । રજજી વૃત્તી જડ આચેતન ॥
 પર રજજી જ્ઞાન સે હોવે વિલેપન । ઉપજે અજ્ઞાન સે આયકે ।
 ચીઠી આચરજ ચીતી ॥૧૪॥
 માયા કે પરિભામ હૈં જોધ । ચેતન કે વિવર્ત હૈં સોધ ॥
 સમ સ્વભાવ વિપરીત જો હોધ । રૂપ અન્યથા જાહિં કે ॥
 યહ લિખા ભજન અવદતી ॥૧૫॥

૪૦. ભજન

જિનોં કે ઉડ ભરમ કે કોટ, યહ રમજ સમઝ મેં આધ ॥૧૬૭॥
 જૈસે સર્પ જ્ઞાન હૈ મિથ્યા, તૈસે જગો જગ કી સત્તા ॥

આતમ મેં નહિં હિલતા પત્તા, નહિં શુદ્ધ મેં ખોટ ॥
 યહુ બાત વેદને ગાઈ ॥૧॥
 સો વિચરત હૈ હોય નિશંકા, કાલ બલી કા કરગયે ફંકા ॥
 ફિર કયા તીનકો રાજ રંકા, નહિં ખાતે યમકી ચોટ ॥
 સખ શંકા ધોય વહાઇ, ॥૨॥
 જાપ તાપ અરૂ કંઠી માલા, દુટા સખી ભસ્મ કા તાલા ॥
 કર મેં લિયા જ્ઞાન કા ભાલા, મુખ હાલત નહીં હોંઠ ॥
 ફિર કયોં કરતે કઠિનાઈ ॥૩॥
 ફિકિર નહીં જાને આનેકા, શોચ નહીં પીને ખાનેકા ॥
 માલ નહીં રખતે આનેકા, ગિંની રખે ન નોટ ॥
 ખાતે હૈં દૂધ મલાઇ ॥૪॥
 ગુપ્ત જ્ઞાન હિરદૈ મેં રખતે, જોમન માને સોઇ બકતે ॥
 કંગલા ધની બરાબર લખતે, નહીં બડાઈ છોટ ॥
 જિન વસ્તુ અમોલક પાઇ ॥૫॥

૪૧. ભજન

ભૂલ્યા નિજ અપને આપકો, હોગયા માયા કા ચેહરા ॥૬॥
 માયા કારણુ અહુ નિશિ ડાલે, જૂઠું તુફાન બહુત સે બોલે ॥
 હિરદે કી અંથી નહીં બોલે, કરને લાગ્યા પાપકો ॥
 ઘટ અંદર હુવા અંધેરા ॥૧॥
 ગૃહસ્થી છોડી મૂંડ મુંડવાયા, તૌ ભી તુઝકો તત્ત્વ ન પાયા ॥
 દંભ પખંડ બહુત સા લાયા, તજિ દિયા હરી કે જાપકો ॥
 ચેલા ચેલી ને ઘેરા ॥૨॥
 ઔષધ ગાલી કરને લાગે, ગાંઠિ લગાય બાંધતે તાગે ।
 મૂરખ લોગ પૂજને લાગે, બડા સિદ્ધ મિલા હૈ તાસુ કો ॥
 ચોફિર દે રહે ફેરા ॥૩॥
 કોઠી બંગલા ખૂબ બનાવે, ખાના વસ્તર અચ્છા લાવે ॥
 કહૈ ઔરતેં ઔર કમાવે, ખાયે હૈં તીનોં તાપકોં ॥
 કરતે હૈં મેરા મેરા ॥૪॥
 પાને નિકસે ગુપ્ત રૂપ કો, ઉલટે જાય પડે ભવકે કૂપકો ॥

કો સમજાવે બેવકૂફ કો, જાને લગે રિસાત કો ॥
કહના માનત નહિં મેરા ॥૫૫॥

૪૨. ભજન

સમજત નાહિં ગુરુ સૈનકો, લગિ ગયા હગનીકે ચારે ॥૧૬૫॥
હોય રૂપ ધરી જગ કો હગતી, કનક કામની હોકર લગતી ॥
સ્પર્શ દિયે શેર જ્યો જગતી, સખ દૂરિ કરે સૂખ ચૈનકો ॥
તોહિં પઘડિ પઘડિ કર મારે ॥૧૬૬॥
બરે તપસ્વી મારે બન મેં, કામ રૂપ હોય તિન કે મન મેં ॥
ચતુર બચે નહિં લાખોં જન મેં, ભરમાવત બાંકે નૈન કો ॥
ફિર ગભી વાસ મેં જરે ॥૧૬૭॥
કનક ભલ્યોં કા કરતા નાસા, ગલ મેં ગરિ લોભ કા ફાંસા ॥
ત્યાગી કો ઉપજાવે આસા, લગિ ગયે કોડી લેન કો ॥
કયા ભવ સાગર તે તારે ॥૧૬૮॥
આમ ધામ સખહી તજિ દીને, વન મેં જાય વસેરે કીને ॥
લોભ બલી ને બાંધિ મેં દીને, ભૂલિ ગયે જ્ઞાન અધ્યયન કો ॥
ફિરતા હૈ ધની કે લારે ॥૧૬૯॥
બોજત નાહી ગુપ્ત જ્ઞાન કો, ધન હિત બોજત સખ જહાન કો ॥
દેખો તમાશા બેઈમાન કો, દિન કહને લાગ્યા રૈનિ કો ॥
બાનિ રહે મહંત બરે ભારે ॥૧૭૦॥

૪૩. ભજન

અબ દેખો ધ્યાન લગાય કે, ઘટ ભીતર જગ તમાશા ॥૧૭૧॥
નેત્ર રૂપ દેખને જાવે, શ્રવણ શબ્દ મુનન કો ધાવે ॥
ગંધ નાસિકા નિત ઉડી ચાહે, ત્વક ખુશ હોય સ્પર્શ ખાયકે ॥
રસના કર રસ કી આસા ॥૧૭૨॥
મન સંકલ્પ આર હો જતા, ચિત ચિતવન મેં તત્પર પાતા ॥
અહંકાર અહે મેં રાત્યા, બુદ્ધિ નિશ્ચય મેં જાય કે ॥
જલ અશન પ્રાણ ચહેં આસા ॥૧૭૩॥
વાયક કહે બૈખરી બાની, વસ્તુ અહણુ કરત હૈ પાણી ॥

રતી ભોગ અરુ મલ ત્યાગાની, ગુદા શિસન હરશાય કે ॥૩૧॥
 ચલતે હૈં ચરણ ખુલાસા ॥૩૨॥
 કામ કોથ અરુ અશા તૃણા, સખાહી રચિ રહે અપની રચના ॥
 સુષોપતિ અરુ જાગ્રત સ્વપના, ગુણ વરતે તીનોં આયકે ॥
 પડિ ગયા માયા કા ફાંસા ॥૩૩॥
 ગુપ્ત જંગ હોતા દિન રાતી, દેવ અસૂર તિનકી દ્વય જાતી ॥
 રાજા મંત્રી લે લે સાથી, ફોજ લઈ સજવાય કે ॥
 દોનોં કા રૂપિ ગયા રાસા ॥૩૪॥

૪૪. ભજન

જંગ મચ્યા કાયા કોટ મેં, લડતે હૈં શૂર લડાઈ ॥૩૫॥
 જિયા રામ હૈં જિસકા રાજા, મનીરામ કો અપ્સર સાજા ॥
 દિયા હુકમ અખ કીજે કાજા, મત રહે મન કી મોટ મેં ॥
 અખ જલદી કરો ચઢાઈ ॥૩૬॥
 ખુલે કોટ કે નૌ દરવાજે, જિનકે માહીં દેવ વિરાજે ॥
 અપને સાજ સહી ઉન સાજે, લડને લગે ગોલક ઓટ મેં ॥
 સજા ચાલે પંચ સિપાહી ॥૩૭॥
 અસુર સેન કા બજા નગારા, દેવન કા ગઢ ઘેરા સારા ॥
 હોતી આવે મારો મારા, દે લિયે વિષયોં કી લોટ મેં ॥
 ચાલે હૈં દેવ પરાઈ ॥૩૮॥
 મનીરામ અપ્સર જખ બોલા, મુનોં શીલ તુમ કૈસે ડાલા ॥
 ઉલટી કરો સસતર કા ઝોલા, અખ શત્રૂ આગયા ફેટ મેં ॥
 ગુરુ વિષ્ણુ કરે સહાઈ ॥૩૯॥
 ઉલટી શીલ ને શસતર મારા, પકડી કામ ધરની પર ડારા ॥
 દેવ લિયે નિજ નિજ હથિયારા, ચૂકત નાહીં ઓટ મેં ॥
 જખ દેવન કો જય પાઈ ॥૪૦॥
 સુર અસુરોં કી હુઈ લડાઈ મનીરામ અપ્સર હૈં ભાઈ ॥
 જિયારામ કી હુઈ સહાઈ, ઇસ ગુપ્ત જંગ કે ફેટ મેં ॥
 ધ્રુવ દેખો ધ્યાન લગાઈ ॥૪૧॥

દોહા-કાયા ગઢ કે નગર મેં, રાજ આતમ રામ ॥
 મન દિવાન જસકા રહે, કરે શુભાશુભ કામ ॥
 જસ રાજ કા મંત્રી, નીતિ નિપુણ જો હોય ।
 દુષ્ટ ચોર તિસ રાજ મેં, રહન ન પાવે કોય ॥
 કામાદિક જે અસુર હૈં, શીલાદિક હૈં દેવ ।
 દંડ દેત તિનકો સદા, તખ કરૈ રાવ કી સેવ ॥
 અસુર સભા કે ખીચ મેં, તીન બડે સરદાર ।
 કામ ક્રોધ અરુ લોભ જો, તીનોં નર્ક દુવાર ॥

૪૫. ભજન

મત કસેં કર્મ કે કીચ મેં, તૂં ચેતન સદા અકરતા ॥૧॥
 કરમ વિકરમ કા લેશ નહીં હૈ, અકરમ કા કોઈ દેશ નહીં હૈ ।
 મજબ પંથ કોઈ લેખ નહીં હૈ, યોં કહા વેદ કે ખીચ મેં ॥
 તૂં જન્મેં નાહીં મરતા ॥૨॥
 જિસકે પડા કર્મ કા ફંદા, સો નર હુવા જગત મેં અંધા ।
 છિપ ગયા આતમ પૂર્ણ ચન્દા, પડિ ગયા અંધેરી ખીચ મેં ॥
 દુખ ચૌરાસી કે ભરતા ॥૩॥
 વિધી નિષેધ લગે દો કાંસા, સમજત નહીં વેદ કા આસા ॥
 કેસે છૂટે યમ કી ત્રાસા, ફંસિ ગયા ખીચમ ખીચ મેં ॥
 ફિર જન્મ જન્મ કે મરતા ॥૪॥
 પઠિ પઠિ વેદ હુયે અભિમાની, ગુપ્ત મતે કી બાત ન જાની ।
 કરતા બુદ્ધિ તજતા જ્ઞાની, નહિં વહતા ઉદક મરીચ મેં ॥
 સો ભવ સાગર સે તરતા ॥૫॥

૪૬. ભજન

જિન જાન્યા અપને આપકો, સો નિર્ભય હોકે સોવે ॥૧॥
 હિરદે કી અંધી જન તોડી, સંસોં કી સખ મટકી ફોડી ॥

વિધિ નિષેધ કી ઉઠિ ગઈ જોડી, ફિર જપૈ કૌન કે જાપકો ॥
કરમન મેં કૈસે રોવે ॥૧॥

મૂલ અવિદ્યા ગઈ મૂલ સે, આતમ મેં ભાસી થી ભૂલ તેં ॥
કર્મ લોગ સખ હોત તૂલ સેં, ફિર તપૈ કૌન કે તાપ કો ॥
જો હોના હોય સોધ હોવે ॥૨॥

સંસૈ વિષયર્થ મિટિ ગયા સાંસા, આતમ બ્રહ્મ રૂપ કર ભાસા ॥
હર વક્ત દેખતે વહીં તમાશા, ચેતન શુદ્ધ પ્રકાશ કો ॥
ફિર મૈલ કૌન કા ધોવે ॥૩॥

ગુપ્ત હોય જખ ગુપ્તહિ પાવે, મિલતેહિ ધ્રુવ અચલ હો જાવે ॥
જો કોઈ ઇસ સાગર નહાવે, સો ખોવે તીનાં તાપ કો ॥
જખ એક બ્રહ્મ જોવે ॥૪॥

૪૭. શબ્દચૌસર

તૂં કઈ ખેર ચૌસર હારા, જરા ખેલ સમજ કર બાજી ॥ટેકા
માયા ચૌપડ જીવ ખેલારી, લોક બ્રહ્મડ બને સખ કચારી ॥
દેવ મનુષ્ય જહં ફિરતી સારી, જખ તિરગુણ પાસા ડારા ॥
ફિર એસી રચના સાજી ॥૧॥

લગા ખેલ મેં આપન ભૂલા, સ્વયં સરૂપ સે ભયો પ્રતિકૂલા ॥
નખ સિખ છાઈ અવિદ્યા મૂલા, જખ ભૂદયો રૂપ અપારા ॥
બનિ ખૈઠા પંડિત કાજી ॥૨॥

બ્રહ્મ ભૂલિ કર જીવ કહાયો, આપ માન તન મેં મન લાયો ॥
ઈશ્વર કો જખ જીવ બનાયો, જખ જાન્યો આપકો ન્યારા ॥
ફિર બના ઈશ કા પાજી ॥૩॥

હરી નરદ કો ફેર પિયારા, જખ આવેગા દાવ તુમહારા ॥
પકિ ઘર આવે સોલોં સારા, નહીં ગર્ભ વાસ મહં જારા ॥
ધુટે જન્મ મરન હૈ રાજી ॥૪॥

ગુપ્ત ગુરુ અરુ ગુપ્તહિ ચેલા, ગુપ્ત ભયા હૈ જિન કા મેલા ॥
ગુપ્ત જ્ઞાન સે જગત ઢકેલા, ભયો મૂલ ચંદ ઉજ્યારા ॥
યહુ છન્દ રચા હૈ તાજી ॥૫॥

૪૮. ભજન

તું સદા સ્વયં પરકાશ હૈ, ફિર કિસકા ધ્યાન ધરે હૈ ॥૧૬૥॥
 ક્યા હૈ બ્રહ્મ કહાં હૈ માયા, કૈસે તિનકો જગત ઉપાયા ॥
 ઈશ્વર જીવ કહાં સે આયા, તૂં જપૈ કૌન કા જાપ હૈ ॥
 જન્મે અરુ કૌન મરે હૈ ॥૧૭॥
 બ્રહ્મ નપુંસક જડ હૈ માયા, કહાં જગત સ્થાન બનાયા ॥
 જીવ ઈશ સખ તેરી છાંયા, તૂં પરકાશન કા પરકાશ હૈ ॥
 કહી જન્મે નહીં મરે હૈ ॥૧૮॥
 ગુરુ વેદકા પટકો પકડા, કહાં સે લાયા ઝૂંઠા ઝગડા ॥
 બિના પંથ કી વાટ હૈ દગડા, જહાં નહીં ધરની આકાશ હૈ ॥
 હૂંબે અરુ કૌન તરે હૈ ॥૧૯॥
 ત્રીન શરીર કહાં સે આયા, કૈસે પંથોં કોષ બનાયા ॥
 કહાં સે પંચ કલેશ લગાયા, જહાં નહીં બુદ્ધિ ચિદાભાસ હૈ ॥
 ચિત્ત મન સે સદા પરે હૈ ॥૨૦॥
 ગુપ્ત મતેકા પંથ નિરાલા, જહાં નહીં કોઈ કંઠી માલા ॥
 બંધ મોક્ષ કા તોડો તાલા, તૂં સખ સ્વાસન કા સ્વાસ હૈ ॥
 કછુ મૂલ સે નહીં પરે હૈ ॥૨૧॥

૪૯. ભજન

તું આપ સન્નિયતાનન્દ હૈ, ફિર કિસકી ફેરે માલા ॥૨૨૥॥
 સત્ત પદ તુમ જાનો સોઈ, ત્રીન કાલ મેં બાધ ન હોઈ ॥
 ચેતન તે ન્યારા નહીં સોઈ સો, પરકાશક નિસપંદ હૈ ॥
 દુક તાર થશમ કા જાલા ॥૨૩॥
 મુખ્ય પ્રીતિ કા વિષય હૈ જોઈ, આનન્દ રૂપ પિછાનો સોઈ ॥
 ચેતન તાસે જુદા ન હોઈ, સો સદા મુખ્ય કો સિંધ હૈ ॥
 દુક છોડ જગત કા નાલા ॥૨૪॥
 માલા કા મતલબ સુન પ્યારે, જૈસે મણિકે ન્યારે ન્યારે ॥
 તૈસે દેવ મનુષ્ય હૈં સારે, ચેતન સદા સુછંદ હૈ ॥
 તું સખ કાલન કા કાલા ॥૨૫॥

ત્રીન શરીર અરુ ત્રીન અવસ્થા, ત્રીન કાલ અરુ સભી વ્યવસ્થા ।
તુઝ ચેતન કી સખ મેં અસ્થા, જહાં કોઈ નહીં દુખ દ્રંદ હૈ ॥
ફિર કયોં કરતા મુહ કાલા ॥૪૧॥
ગુપ્ત મતે કી ખાત જનાઈ, સો તુમ સાંચી જાનો ભાઈ ।
યામેં ઝૂંઠ નહીં હૈ રાધ, તું સખ સિંધન કા સિંધ હૈ ॥
કર દેખો મૂલ ઉજલા ॥૪૨॥

૫૦. ભજન મોટર

ઈસ તન કે અંતર ભાગ મેં, યક મોટર અજબ ચલી હૈ ॥૪૩॥
પાંચોં ભૂત રજોગુણ મિલકર, હુધ તયાર જબ મોટર બનકર ॥
મનુવા હાવર બૈઠા સંભલકર, ફિર બૈલ વજાયા સાગ મેં ॥
ફિરને લગી કલી કલી હૈ ॥૪૪॥
નાભી કંઠ સડક બનવાઈ, જસ પર મોટર આનિ થઢાઈ ॥
શબ્દ કા ભોંપૂ દિયા બજાઈ, લગી વીજલી જઠરા આગિ મેં ॥
ચિમકી જબ નલી નલી હૈ ॥૪૫॥
જિસમેં ચેતન આનિ વિરાજ, સો કહિયે રાજન પતિ રાજ ।
દિયા હુકુમ જબ મોટર સાજ, જાય બિડચા હૈ બાગ મેં ॥
જહે ખિલ રહી કલી કલી હૈ ॥૪૬॥
એસી મોટર અજબ ચલાઈ, મીલ ઘડી કી ગિન્તી લાઈ ।
ઇકીસ સહસ્ર છઃ સો ભાઈ, ઇસ મોટર કે અંદાજ મેં ॥
ફિર ઉડન લગી ધુલી હૈ ॥૪૭॥
તૂં નહીં મોટર બૈઠન વાલા, ફિર કયોં કરતા હૈ મુંહ કાલા ।
અંધ મોક્ષ કા તોડા તાલા, ઉલજા કયોં કરમ વિભાગ મેં ॥
કયા કુવેં ભાંગ ધુલી હૈ ॥૪૮॥
ઇસ મોટર કા બેલ નિરાલા, સમુદ્ર નદિ ગિને ન નાલા ॥
પિછે લાગ્યા વૈરી કાલા, ફૂંક દેત હૈ આગ મેં ॥
બચતા કોઈ ગુપ્ત બલી હૈ ॥૪૯॥

૫૧. ૫૬

ફલ ગુપ્ત પ્રગટ સત સંગ મેં, ફિર કયા કરના બાકી હૈ ॥૫૦॥

ભોગ અદૃષ્ટ દૃષ્ટિ મેં આવે, બિના રાગ સખ મેં વરતાવે ।
 બાલક વત સવ ખેલ બનાવે, નિત ચેતન સદા અસંગ મેં ॥
 યહ સખ ચેતન ઝાંકી હૈ ॥૧॥
 શબ્દ સ્પર્શ રૂપ રસ ગંધા, ઇન્દ્રિય કા ઇન્દ્રિય સંબંધા ।
 નિત ન્યારા આતમ નિરબંધા, જ્યોં અનુભવ શબ્દ પ્રસંગ મેં ॥
 યહ ખુદ અપના સાખી હૈ ॥૨॥
 વિન કરતા કરતા કહલાવે, સો કરતા નહિં ચલે ચલાવે ।
 જૈસે પતિ પુત્ર કહલાવે, સખ રંગ ઉસીકે રંગ મેં ॥
 નહિં સ્વેત રક્ત ખાકી હૈ ॥૩॥
 ગુપ્ત મુક્ત કી યહી નિશાની, મૂરત મેં સૂરત લાસાની ।
 અહં બ્રહ્મ યહ બોલો બાની, જ્યોં વ્યાપક અંગી અંગ મેં ॥
 ધ્રૂ મૂલ જગત નાખી હૈ ॥૪॥

પર. ભજન

જિસકો પાયા અમોલક લાલ, વહ કિસકી આસ કરેગા ॥૧॥
 મુખભર સોચે તત્ત તખત પર, જ્ઞાન ગલીયા લાય બખત પર ॥
 ફિર ક્યો મમતા કરે જગત પર, ખુશ રહે તીનાં કાલ ॥
 ક્યોં પય પય જગત મરેગા ॥૨॥
 જિનકો નહીં કુછ લેના દેના, હુવા નહીં કુછ આગે હોના ॥
 વરતમાન મેં વર્તે ક્યોં ના, તોડ ભરમ કા બલ ॥
 ચોં કારજ સભી સરેગા ॥૩॥
 પરારખ્ય સે જો કુછ વર્તે, તિસમેં હુર્ શોક નહીં કરતે ॥
 વે કખહૂ જન્મેં નહીં મરતે, નહીં રખતે ધન માલ ॥
 ભવજલ સે પાર તિરેગા ॥૪॥
 ગુપ્તરૂપ મેં હૈ મસ્તાને, ટૂટે સભી કુફર કે ખાને ॥
 જાનન યોગ્ય સભી જિન જાને, નહીં કસે વેદ કે બલ ॥
 ક્યોં ઝૂઠી સાખ ભરેગા ॥૫॥

ભજન ૫૩.

જિસકા બહુત કરે હંકાર, યહ પાની કે સા પાલા ॥૧॥

પંચ ભૂત કરકે જકડી હૈ, કર્મ યોગ સે આટ જડી હૈ ॥
 રજ વીરજ કી ગાંઠ પડી હૈ, કરકે દેખ બિચાર ॥
 નિત બૃહૈ મૈલ કા નાલા ॥૧॥
 જસકે જાહિં બડાપન માન્યા, ઔરન કો નીચા કરિ જાન્યા ॥
 હુરિ તજિ ખાય વિષય રસ ખાના, ભક્તિવિન ચારેં વર્ણુ ચમાર ॥
 લખ તુલશીદાસ હવાલા ॥૨॥
 જિસકે માહિં બહુત મન લાયા, ધન ચોવન; સ્વપ્ને કી માયા ॥
 ચિર નહિં રહે કિસી કી કાયા, ઝૂંઠા સખ પરિવાર ॥
 અખ તોડ ભરમ કા તાલા ॥૩॥
 અપને મન બુદ્ધિ કો લાવો, ગુપ્ત ગલી સે જલદી આવો ॥
 જખ કુછ આગમ ભેદ કો પાવો, છૂટે સખ વિસ્તાર ॥
 કર પકડ જ્ઞાન કા ભાલા ॥૪॥

૫૪. ભજન

ખેલત હૈ ખેલ ખિલારી, જગ મેં લિપતે નહીં વિકાર ॥ટેકા॥
 નાના વિધિ કરત હૈં કિરિયા, જિનકો પદ પાયા હૈ તુરિયા ॥
 ઉનકે સખહી કારજ સરિયા, આશા તૃષ્ણા દર્ધ માર ॥
 ચઢિ ગયે જ્ઞાન અસવારી ॥૧॥ ધ્યાન યોગ નહીં કરે સમાધી,
 પાર બ્રહ્મ હૈ અનંત અનાદી ॥ વાદ કરૈ તો આતમવાદી
 સખ જાના જગત અસાર ॥ ચઢિ ગઇ હૈ જ્ઞાન ખુમારી ॥૨॥
 સખ કુછ કરતે કુછ નહીં કરતે, ના કલ્મી જન્મે ના કલ્મી મરતે ॥
 કાલ અગિની મેં વહ નહીં જલતે, વ્યાપક રૂપ અપાર ॥
 કુછ નહીં હલકે નહીં ભારી, ॥૩॥ ગૂપ્ત ગલી મેં ફાગ ખેલતે ॥
 રંગ પિચકારી માંહિ મેલતે, જો કોઈ મિલે તિસી પે ઝેલતે,
 નર હો ચાહે નાર ॥ કરતે અપને અનુસારી ॥૪॥

૫૫. ભજન

રચા હૈ બાજીર કા ખેલ, ભૂલે હૈ દેખિ તમાસા ॥ટેકા॥
 ક્ષિતિ જલ પાવક ઔર સમીરા, ગગન રચા હૈ અતિ ગંભીરા ॥
 જિનકે ખીચ મેં ચેતન હીરા, બિન ખાતી બિન તેલ ॥

કસલુ દિશિ હુયા ઉજસા ॥૧॥ જાગે અંદ સૂર પરકાસે ॥
અનલ વિદુત તારાગન ભાસે, અંધકાર પરકાસે ન નાસે,
દોનો કા મિલા દિયા મેલ, ॥ કોઈ કરે ન કિસી કા નાસા ॥૨॥
પહિલી સૂક્ષ્મ શ્રુતિ સ્વાર્થ, મન મિલા સ્થૂલ બનાઈ ॥
પંચ બંધ દિયે જિસમેં લગાઈ કરને લાગે સેલ ॥
ફિર પાપ પુન્ય હોય ભાસા ॥૩॥ ગુપ્ત રૂપ સે ઝાંક વિશાળે,
બુદ્ધિ ભેદ કરે નાના સાળે ॥ આગે દોલ જ્ઞાન કા બાળે,
બિગડ જાય સખ જેલ, જખ સમઝે વેદ કા આસા ॥૪॥

૫૬. ભજન

ઈસ રાજા આતમ રામ કો મન નરવા જેલ દિખાવે ॥૧॥
મન નરવે ને જેલ બનાયા, બિના હુયા સખ કર દિખલાયા
રાજા કો તિસને ભરમાયા, કરતા અચરજ કે કામ કો ॥
બિના હાથ પૈર ભગ જાવે ॥૨॥
જાગ્રત મેં સ્થૂલ તમાસા, વિષય દેહ ઈંદ્રી પરકાસા ॥
દેવ ત્રિપુટી કરે ઉજસા ॥ રથે પંચ ભૂત કે ગામ કો,
વિષયો કે બંધ લગાવે ॥૩॥
દેહ ઈંદ્રી કો છિટકાવે, સ્વપને માહી ઝૌર બનાવે ॥
કંઠ દેશ નાહી મેં જાવે, તજ કર નેતર ધામ કો ॥
દેર કઈ કઈ જેલ ખિલાવે ॥૪॥
મુસોપતિ મેં ગુપ્ત જો હોવે, જાગ્રત ઝૌર સુપન કો ખોવે ॥
કારણ માહી મુખ સે સોવે, તજ ગયા રૂપ ઝૌર નામ કો,
દુક અપને રૂપ સમાવે ॥૫॥

૫૭. ભજન

જિનોં કે ઉડિ ગયે નામ નિશાન, રાજા થે ચક્રવર્તી ॥૧॥
બલ પૌરુષ જિન કે વિખ્યાતા, સિખી પુરાનત મેં સખ ગાથા ॥
જિનકી સમતા કોઈ ન પાતા, બહુત કરે થે અભિમાન ॥
હાથોં સે તોલતે ઘરતી ॥૨॥
જિનકે તુંગ અગાર બને હૈં. દોર કિલા અરુ બહુત તને હૈં ॥

સેનાપતિ અરુ કોપ ઘને હૈ ॥ જિનોં કે બંદીજન કરે ગાન ॥
 ચંદ્ર મુખી મહલોં ચરતી ॥૨૧॥
 તિનકા ખોજ રહા નહી રાઈ ॥ ઔર કિસી કી કહા ચલાઈ ।
 જિનકો સુર્ત હરી સે લાઈ ॥ સોઈ ઉભરે સંત સુજન ॥
 પાયે આપ રૂપ મેં થિરતી ॥૩૧॥
 જો નર ગુપ્ત જ્ઞાન પાતા હૈ । ઉસકો કાલ નહી ખાતા હૈ ॥
 સો કહિં આવે નહીં જતા હૈ ॥ યોં કહતે વેદ પુરાન,
 સખ મૂલ અવિદ્યા મરતી ॥૪૧॥

૫૮. ભજન

એક દિન જંગલ હોય મુકામ, છુટિ જાયગેં મહલ અટારી ॥ટેકા॥
 ભૂલિ ગયા વિષયોંકે સુખ મેં, હડહડ હંસે કાલ કે મુખ મેં ।
 હા હા કાર કરત હૈ દુખ મેં ॥ નહીં જયે હરિ કા નામ ॥
 ચઢિ આઈ કાલ અસવારી ॥૧॥
 મૂરખ નોંદ ભરમ કી સોવે । શિર પર કાલ ખડા નહિ જોવે ॥
 અંતઃકરણ કો ક્યોં નહીં ધોવે ॥ સખ સિધ હોવેં કામ ॥
 હોય નાસ અવિદ્યા સારી ॥૨॥
 જ્ઞાન રવિ ઘટ મેં પરકાસે । જગત જાલ સ્વપના સા ભાસે ॥
 અંધકાર અજ્ઞાન જો નાસે ॥ જખ હોય બ્રહ્મ મેં ધામ ।
 ચઢિ જાવે જ્ઞાન ખુમારી ॥૩॥
 ગુપ્ત પરઘટ જો કછુ ભાસે આપ રૂપ સે સખ પરકાસે ॥
 કલિપત અધિબાન મેં નાસે ॥ હૈ કિસકે દરમિયાન ॥
 નહીં રજત સીપ સે ન્યારી ॥૪॥

૫૯. ભજન

લગા દધ સત ગુરુ ને તાલી, ખુલ ગયે બજર કે તાલે ॥ટેકા॥
 રસ્તા સાફ નહિં કોઈ ભાટા, કાલ કર્મ કે જલિ ગયે કાંટા ॥
 સોદા હુઆ સીસ કે સાટા, જ્ઞાન કી અગ્નિ કો જાલી ॥
 જલિ ગયે અવિદ્યા જાલે ॥૧॥
 અંતર કી વસ્તુ પરકાસી । મેં ચેતન યહ દશ્ય વિનાસી ॥
 મૈ હી હૂં સખકા કા પરકાસી, ॥ ખિલી સખ મોંસે હરિયાલી ॥
 ઘોચે દાગ દિલોં કે કાલે ॥૨॥

ज्ञान भाखिं ऐसा दिया भंतर ॥ तुल्य चेतन रहता है स्वतन्त्र ॥
 तब सबी उद्विग्न तुल्य अंतर ॥ देव क्या बेशी और काली ॥
 तुल्य करै सखी उजियाले ॥३॥
 गुप्त रूप से अकलि रहता, ना कष्ट करता ना कष्ट रहता ॥
 काल अग्नि को तूली दहता; उमर तेरी बृद्ध नहीं पाली ॥
 छुटि रहे ज्ञान के नाले ॥४॥

६० राग भिलावल

निज आत्म आनंद में जे जन नित राते ॥
 आठ पहर तिस अमल में रहते हैं भाते ॥१॥
 मोह जल झंसी कटी दुर्ध अंध भुलासा ॥
 निरलय होकर देखते सख अलक तमासा ॥२॥
 दूरा घट अज्ञान का लाया ज्ञान का उंडा ॥
 काम कर्म आलास का हो गया सत अंडा ॥३॥
 धृति, भाया, जगत, की सख मिटी उपाधी ॥
 पार अहं से परसिया सो सुद्ध अनादी ॥४॥
 काल जल यमराज का दहते सख झंडा ॥
 अहं रूप मैदान में अंडा जिन गाडा ॥५॥
 अज्ञानंद आनन्द में आनंदित रहते ॥
 अहं लोक वैकुण्ठ लो नाही कष्ट रहते ॥ ६ ॥
 सर्व मित्र निष्कपना त्यागी संतोषा ॥
 पिना आपने आपके और नहीं लरोसा ॥१॥
 गुप्त गलिये सोवते लाया ज्ञान का तडिया ॥
 उन मुन ताली लगी रही अधि जगी अंजिया ॥ ८ ॥

६१. राग भिलावल

सख देवन के शीघ्र में यक आत्म जेती ॥
 सदा दिवाली संत की तिस भाही होती ॥ १ ॥
 लिपना पढ़ना यातुरी, अरु पत्रा पोथी ॥
 निज आत्म जने पिना, सखी है थोथी ॥ २ ॥

ગાંધર કી પૂજા કરે, પકવાન મિઠાઈ ॥
 પૂજે નહીં આતમ દેવ કો, સખ ઉમર ગમાઈ ॥ ૩ ॥
 દેવી દુરગા પૂજતે, ઔર લૌરોં કાલી ॥
 દેહી અન્દર દેહરા, જહાં દેવ દેવાલી ॥ ૪ ॥
 શૂન્ય સિંહાસન લગ રહા, પરદા નહીં પહેરા ॥
 ખસ્તી ડોંગર દેહરા, નહીં જંગલ સહેરા ॥ ૫ ॥
 વ્યાપક હૈં સખ ઠોર મેં કર દેખ વિચારા ॥
 ભૂલે ભરમ આચાર મેં, નર મૂઢ ગંવારા ॥ ૬ ॥
 સખ કે શામિલ મિલિ રહા, અરુ સખ સેં ન્યારા ॥
 રુપ રેખ જાકે નહીં, પીલા અરુ કાલા ॥ ૭ ॥
 ગુપ્ત રુ પરઘટ એક હૈ, જહાં નાહીં દૂજા ॥
 પૂજા પૂજક પૂજ્ય કા, તોડા ભ્રમ ફૂજા ॥ ૮ ॥

૬૨. શિષ્ય શંકા કી ખિલાવલ

ભગવન આતમ એક હૈ, યહ આપ મુનાયા ॥ પૂજા પૂજક ભાવ
 કો, સખ ભરમ ખતાયા ॥ ૧ ॥ નાના વિધિ જગ ભાસતા, કહો
 કહાં સે આયા ॥ આતમ મેં કિરિયા નહીં, યહ કિસે ખનાયા
 ॥ ૨ ॥ ત્રીન કાંડ હૈં વેદ મેં, યહ કહિ સમુઝાયા ॥ કર્મ ઉપાસન
 જ્ઞાન કા સાધન ખતલાયા ॥ ૩ ॥ કૌન સત્ય કો જૂઠું હૈ, દોઢ
 કહતા વેદ ॥ કહીં તો ઉત્પત્તિ કહે, કહિં કહે નિપેધા ॥ ૪ ॥ કથન
 ક્રિયા હૈ કર્મ કા, મરને પરયાંતા ॥ કહીં ત્યાગ સખકા કહા, ભજિયે
 ભગવન્તા ॥ ૫ ॥ ઈશ્વર કરતા વેદ કા, સખ કહે પુકારી ॥ દ્વિવિધિ
 વચન સમજો નહીં, યહ શંકા મહારી ॥ ૬ ॥ સમર્થ આપ
 દયાલુ હો, મેં બુદ્ધિ ખોયા ॥ ભરમી રહા સંસાર મેં, જન્માન્તર
 રોયા ॥ ૭ ॥ ગુપ્ત ભેદ સમજાય કે, કહિ દિજે સારા ॥ આપ
 ખિના યા જગત મેં, કોઈ નહીં ઉદ્ધાર ॥ ૮ ॥

૬૩. પૂર્વ પ્રશ્નો કો ઉત્તર (ખિલાવલ)

આધિકારી કે ભેદ સે, સખ વેદ કહાની ॥ ગૂઢ વચન હૈં વેદ કે,
 સમજત નહીં પ્રાની ॥ ૧ ॥ અજ્ઞાની સહ કામ કો, કરને કો

કહતા ॥ જો જિજ્ઞાસુ જ્ઞાન કા, તિસકો નહીં ચહતા ॥ ૨ ॥ કહ્યું
તજન કે વાસ્તે, સખ કર્મ કરાવે ॥ કામ્ય કર્મ છુટવા કે, નિષ્કામ
બતાવે ॥ ૩ ॥ કર્મ ઉપાસન સો કરે, જા કે મલ વિદ્યેપા ॥ અન્તર
કો શુદ્ધી ભઈ ફિર કરે ન એકા ॥ ૪ ॥ પરમતીમેં વેદ કા, મત
સમજો આસા ॥ સદા નિવ્રત્તિ કહત હૈ દૂરે ભવ પાસા ॥ ૫ ॥
વિવિધ ભાંતી જગ ભાસતા તિસકો સુનિ લીજે ॥ યહ સખ માયા
જલ હૈ નહીં ભૂલિ પતીજે ॥ ૬ ॥ જૈસે સોયા નીંદ મેં ભાસતા
હૈ સ્વપ્ના ॥ કોઈ અપના કોઈ ઓર કા મિથ્યા સખ સ્વપ્ના
॥ ૭ ॥ ગુપ્ત આતમ અજ્ઞાન તે સખહી કુછ ભાસે ॥ જ્ઞાન હોત
નિજ રૂપ કા ફિર સખહી નાસે ॥ ૮ ॥

૬૪. ખિલાવલ

મંદ અંધ કે બીચ મેં, રજજુ સર્પ મેં ભાસે ॥ અરુ સીપી કે
અજ્ઞાન તેં રુપા પરકાસે ॥ ૧ ॥ જૈસે મરુસ્થલ ભૂમિ મેં, હોય
જલ પરતીતિ ॥ તૈસેં તસ્કર ઠૂંઠ મેં યો જગ કી રીતિ ॥ ૨ ॥
જૈસે નભ મેં દેખિયે ઘટ મઠ બહુ નામા ॥ ગગન એક કા એક
હૈ, નાહીં કુછ નાના ॥ ૩ ॥ જ્યોં જલ માહીં કલપતે, બુદ બુદ
તરંગા ॥ જલ સે કુછ ન્યારે નહીં જલ હી સખ અંગા ॥ ૪ ॥
અગ્ની માહીં કહત હૈં, બહુ દીપ મસાલા ॥ લાલ ટેન અરુ
ખિજલી, વિષ ફુલી ઉજલા ॥ ૫ ॥ લોહ મેં શસતર ઘને, સખ
ઘડે લોહારા ॥ જ્યોં કા ત્યોં લોહા રહૈ, કલ્પિત હથિયારા ॥ ૬ ॥
સોનેમેં ભુષણ બહુત, સખ ઘડે સોનારા ॥ સોના સોના હી
રહે, નહીં ધરે વિકારા ॥ ૭ ॥ પરજા પતિને ઘટ ઘડે; માદી બિન
કાહી ॥ ગુપ્ત આતમ મેં જગત કો, ઐસે લખ ભાઈ ॥ ૮ ॥

દોહા—સીપી રૂપ રજજુ સર્પ મરુસ્થલ જલ કા ભાસ
વહ કાટે નહીં વહ બિંકે નહીં ખાવે પ્યાસ ॥

૬૫ ચાલ બનબર

સમજે નહીં મૂઠ ગંવારા, તન સુખા સુખા કે મારા ॥ ૨૬ ॥
રખતે ઉપાસરુ રોજ, અંતર સે નહીં ખોજ્યાજી ॥ ઉપર કે કો

અચારા ॥ ૧ ॥ પચ તીરથ મેં અશાનાના ॥ ખાતા હે સૂક્ષ્મ
ખાના છ, કરને લાગે સંધારા ॥૨॥ કુછ સમજતા નહીં મનને,
કયા કમુર કયા તનને છ ॥ કરને કા કામ વિસારા ॥ ૩ ॥
મુનિ કર ગુપ્ત જ્ઞાન કી ખાતા ॥ કર્મો મેં કરતે માથા છ ॥
હો ગયા આતમ હુત્યારા ॥ ૪ ॥

૬૬ ચાલ બનનરો

મન મરે નહીં તન મારે, કરિ યતન બહુત સે હારે ॥ ૧ ॥
બાંબી કો ફૂટે કોઇ, નહીં દુઃખ સર્પ કો હોઈ છ ॥ વહુ રહતા
બાંબી મંઝારે ॥ ૧ ॥ પગ બાંધિ વૃક્ષ મેં લટકે ॥ મન કે
ચલને કો અટકે ॥ કરતે હૈં યતન બરે ભારે ॥ ૨ ॥ મન
કારન તન કો મારે, ઉપવાસ વૃત બહુ ધારે ॥ સખ અંગ
અગ્નિ મેં જરે ॥ ૩ ॥ મન ગુપ્ત રૂપ હો રહતા ॥ નહીં
ખાત કિસીસે કહતા છ ॥ સખ મન કો જલ પસારે ॥ ૪ ॥

દોહા—મનરે મિહીં પીસિ કે, ઉપર લાઢૂં આગ ॥

તો ભી ચંચલ નામિટે, ઊઠ ઊઠ જવે ભાગ ॥

૬૭ ચાલ બનનરો ।

સમજે કયોં ના મન મેરા, મત કરે વિષયોં કા ફેરા ॥ ૧ ॥ યહ
યહ નિશી તોહી જરાવે, ફિર અંત સમય ઉઠિ જવે છ, તખ
હોવે દુઃખ ઘનેરા ॥ ૧ ॥ જૂઠા ધન બહુત કમાયા વિરથા હંકારે
બઢાયા છ, ફિર અંતકાલ ને ઘેરા ॥ ૨ ॥ કૈદી સા પકડા જોવે
કયા જખાખ વહાંપે સુના છ કુછ ચલે નહીં બલતેરા ॥ ૩ ॥
જો કિયે કર્મ ગુપ્તાર્થ લેખા હોય રાઈ રાઈ છ મુખ કાલા કીજે
તેરા ॥ ૪ ॥

દોહા:—ચલે નહીં બાલસ્ટરી, નહીં રિશખત કાનૂન ॥

વહુ સચ્ચા દરબાર હૈ, કરૈ અન્યથા કવન ॥

૬૮ ચાલ બનનરો ।

આતમ ચેતન અવિનાસી નહીં પડે કાલ કી ફાંસી ॥ ૧ ॥
અસા હૈ રૂપ તુમહારા, જિસમેં કલિપત સંસારા છ કરકે દેખા

તલ્લાસી ॥ ૧ ॥ નિરાકાર નહીં આકાશ જિસમેં કુછ નહીં
પસારાજી કહિં આવે ના કહિં જાસી ॥૨॥ એસે નિશ્ચય કો ધારો
યમ કી ફરદી કો પારેજી ગટ ઘટ મેં આપ નિવાસી ॥૩॥ સુનિ
ગુપ્ત મતે કીવાની વેદાને સાખિ બખાનીજી આતમ ચેતન
સુખરાસી ॥ ૪ ॥

૬૯. ચાલ બનજારા ।

દેખો નિજ રૂપ તમાસા, નિજ અંતર કીજે વાસા ॥ ટેક ॥ ઇંદ્રિય
અરૂ તિનકે દેવા, કુછ જાનત નાહીં લેવાજી, તુહુ કરે સખકા
ઉજિયાસા ॥ ૧ ॥ તુહીં સખ દેવન કો જાને, તુઝકો કોઈ નાહીં
પિછાનેજી, તુહીં આપ સ્વયં પરકાસા ॥ ૨ ॥ કોઈજીવ ઈશ નહીં
માયા, તુહુ આપ નિરંજન રાયાજી, કોઈ નાહીં સેવક દાસા
॥ ૩ ॥ હૈ ગુપ્ત રૂપ અવિનાસી, અખ તોડિ દેવ કી ફાંસીજી,
ફિર હોય અવિદ્યા નાસા ॥ ૪ ॥

દોહા :- જે સમજે ઈસ સૈન કો, લખે આપ
નિરખાન । કર્મ કીય છુટે સભી, દિલ મેં હોય
આરામ ॥ સખ વેદાન્ત કા સાર યહુ, લખે પ્રભ
નિજ આપ । માયા ઈશ્વર જીવ જગ, છાંડિ
ભર્મ સન્તાપ ॥

૭૦ અસાવરી

યક ચતુર નાટકી આઈ, જિન દિયા અખાડા. લાઈ ॥ લિયે
દેવ મનુષ ભરમાઈ, તિરયક કી કિને ચલાઈ ॥ ટેક ॥ ઓલે સે
સૂત નિકાલા, સો તીન તાર કરડાલા ॥ બટ અહંકાર કા ઘાલા.
ડોરી મજબૂત બનાઈ ॥ ૯ ॥ તિસ ડોરી મેં સખ અન્ધે, કિયે દેવ
મનુષ સખ અન્ધે ॥ સખહી ગલ ડારે ફન્દે, માનન લગે છોરે
બડાઈ ॥ ૨ ॥ તીનન કો દેવ બનાયા, જખ અપના હુકુમ સુનાયા ॥
કાહુ પર કરની ન દાયા, જૈસા કરે તૈસા ભુગતાઈ ॥ ૯ ॥ જખ
હુકુમ કિયા હૈ જારી, તીનોં ને ખાત વિચારી ॥ રચિ દીની ચોંદ

ક્યારી, તિરલોધી અજળ બનાઈ ॥ ૪ ॥ ક્ષિતિ પાવક જલ અરુ
પવના આધાર માહી સખ ભવના ॥ જિનમે હોય આવા
ગવના, યહ દિના પંથ ચલાઈ ॥ ૫ ॥ વિપયોં કી ઠાલક બાજી,
મુન મુન દે હુયે સખ રાજી ॥ મન મોહન રચના સાજી, દેખન
લગ લોગ લુગાઈ ॥ ૬ ॥ કર્મોંકા ટિકિટ જૈસા લિયા, ઉતે વૈસા
દરજા દિયા ॥ સખ પાતે અપના કિયા, કજી નહીં ચતુરાઈ ॥ ૭ ॥
જિસે નાટક મેં મન લાયા, તિસે ગુપ્ત ભેદ નહીં પાયા ॥ વેઢોં
મેં સભી સમજાયા, ઠગની કી ધુલિ ઉડાઈ ॥ ૮ ॥

૭૧. અસાવરી

હમેં નગર કુંઢિ લિયા સારા, પાયા નહીં મીત હમારા ॥
દસહું દિશ પડા. અન્ધારા સખ અંગ વિરહ ને જારા ॥ ૧ ॥
મેં તો પહિર ગલે બિચ સેલી, વન પરવત ફિરી અકેલી ॥ સખ
દેખી હાટ હવેલી, કુંઢે હૈં શહર બજારા ॥ ૨ ॥ તીરથ વરતાદિક
કરતી, નિત ધ્યાન મીત કો ધરતી ॥ બડે દુર્ગમ દેશોં ફિરતી,
સખ અંગ અગ્નિ મેં જારા ॥ ૩ ॥ સખ તજિ દિયા ઘર કા ધંધા,
નિત પઠી ગાયત્રી સંધ્યા, ઉલટા ગલે પડિ ગયા ફંદા, કર્મોં કા
ગહન વન ભારા ॥ ૪ ॥ હમ દોનોં કાન ફડાયે, શિર લમ્બે
કેશ બઢાયે ॥ સીંગી અરુ નાદ બજાયે, સહી કઠિન છૂરી કી
ધારા ॥ ૫ ॥ હમ બને યતી સન્યાસી, ઘર છોડિ હુવે બનવાસી
નહીં કઠી લોભ કી ફંસી, કાહે કો કિયા મુખ કારા ॥ ૬ ॥ યમ
નિયમ પ્રાણાયામા, કરતે હૈં આઠો યામા ॥ પાયા નાહિં નિજ
ધામા, ફિરી ચૌરાસી કી ધારા ॥ ૭ ॥ કરિ દેખી નાના કિરિયા,
પદ પાયા નહીં હમ તુરિયા ॥ પ્રથા હી પય પય મરિયા, ખોયા
હૈં જમાના સારા ॥ ૮ ॥ જખ ગુપ્ત ગલી મેં આયા, સતગુરુ
ને ભેદ બતાયા ॥ સખ હી ચેતન કી છાયા, વ્યાપક હૈં રુપ
તુમારા ॥ ૯ ॥

૭૨. અસાવરી

જખ ગુરુ મિલે બ્રહ્મ જ્ઞાની, તખ ખોલે અમૃત ખાની ॥
બતલાઈ નૂર નિશાની, સખ જૂઠી દ્રેત કહાની ॥ ૧ ॥ જખ મુને

યથારથ વચના, સખ મિટી કર્મ કી રચના, નિજ બોધ રૂપ મે
 જચના. યહ બાત સુની રસ સાની ॥ ૧ ॥ જિસ કારન ભટકત
 ડાલે, વહ ઘટ ઘટ માહી બોલે ॥ જખ ધરી કાટે પર તોલે,
 તખ પાવે પદ નિરબાની ॥ જિમિ બ્યાલ દામ મે ભાસે ॥ એસાહી
 જગત પ્રકાસે ॥ ૨ ॥ અધિષ્ઠાન જ્ઞાન તે નાસે ॥ જે શેષ રહે
 સો જાની ॥ ૩ ॥ જૈસે નત્ર મેં ઘઠ મઠ નામા ॥ ચોં શુવ બ્રહ્મ
 મેં જાના ॥ સખ ભેદ ભરમ કો ભાના ॥ જહ મન પહુંચે નહી
 બાની ॥ ૪ ॥ જખ તીર લક્ષ મેં તાના ॥ માયા કે ભર્મ કો
 માના ॥ તખ ભેદ અગમ કો જાના ॥ સખ મિટી ગધ બેંચાતાની
 ॥ ૫ ॥ દિની ગુરુ જ્ઞાન સીરોહી ॥ સખ મૂલ અવિદ્યા બોઈ ॥ જે
 હોના હોય સો હોઈ ॥ કછુ લાભ રહા નહીં હાની ॥ ૬ ॥ કિયે
 જપ તપ નેમ ઉપાસા ॥ છુટિ નહીં મન કી અસા ॥ દેખા નિજ
 રૂપ તમાસા ॥ તખ પાધ સુખ કી દાની ॥ ૭ ॥ છુટા ગુપ્ત જ્ઞાન કા
 ગોલા ॥ સખ ઉડા ભર્મ કા ટોલા ॥ હોગયા મેહર કા ઝોલા,
 નહીં પડતે ચારો બાની ॥ ૮ ॥

૭૩. અસાવરી

કહતે હૈ વેદ સિમરિતી ॥ યહ શુવ કલા નહીં મરતી ॥ નહીં
 જન્માદિક કો ધરતી ॥ કયોં ભૂલિ ભર્મ મેં ફિરતી ॥ ૧ ॥ જૈસે
 મદ પી હો મતવારા ॥ કચુ તનકી રહે ન સંભારા ॥ ગીરી જવત
 મૈલી ગારા ॥ તખ લોટન લાગે ધરતી ॥ ૨ ॥ જખ વિધિયન મેં
 મન દિના ॥ કરતા અંહકાર જે દિના ॥ તખ શુવ આપકો ચીન્યા ॥
 ભૂલ્યા નિજ અપની સુરતી ॥ ૩ ॥ સ્વપને મેં બહુત ધન પાયા ॥
 પુત્તર પોતે અરૂ માયા ॥ કછુ અર્ચ ક્રિયા નહીં બાયા ॥ જૂંઘી
 સખહી પર વિરતી ॥ ૪ ॥ કર્તા કર્મ અરૂ ક્રિયા ॥ તજિ તિતકો
 પાવો તુરિયા ॥ સખ કર્મ ઈસી સે જરિયા ॥ જખ પાવે આપ
 નિરવતી ॥ ૫ ॥ નિજ આતમ રૂપ અપારા ॥ જિસમેં મિથ્યા
 સંસારા ॥ સો માહી નહીં કછુ ન્યારા ॥ કરો બ્રહ્માકાર અખ
 વિરતી ॥ ૬ ॥ યહ સુન સતગુરુ કી બાની ॥ સો અતિશય સુખ
 કી બાની ॥ યાતે ચિર હોવે પ્રાની ॥ છુદ્ધ નહીં બાહર ચરતી
 ॥ ૭ ॥ જખ હોય દદ અલ્યાસા ॥ પાવે નિજ રૂપ બલાસા ॥

ફિર યમ કી રહે ન ત્રાસા । સખ મૂલ અવિદ્યા જરતી ॥ ૭ ॥
 ગુરુ ગુપ્ત બેઠ બતલાયા । સખ જૂઠા જાલ ઉઠાયા ॥ શિષ્ય સેવક
 ભાવ મિટાયા । જળ છવ દલા પાવે ચિરતી ॥ ૮ ॥

૭૪ અસાવરી

યહ દેખ્યા બ્રહ્મ તમાસા । સખ દયા ભરમ ઠા ઠાંસા ॥ પાયા
 નિજ રૂપ જુલાસા । દસ હું દિશિ હુયા ઉજાસા ॥ ૧ ॥ ઐસા
 હું રૂપ હમાસા । નહીં ભૌતિક ભૂત પસારા ॥ સખ શામિલ સખ
 સે ન્યાસા । નહીં આગમ નિગમ ઠા રાસા ॥ ૨ ॥ કોઈ આતમ
 દેહ બતાવે । મન ઈન્દ્રિય પ્રાણ સુનાવે ॥ કોઈ જુદિ કો સમજાવે । યો
 પાયો બહુત તિરાસા ॥ ૩ ॥ ક્ષમી તોન દેહ મેં અરકયા । ક્ષમી
 પંચ કોપ મેં ભરકયા ॥ પાયા નહીં નિરગુણ લરકા । સખ ક્રિયા
 ઉમર ઠા નાસા ॥ ૪ ॥ કોઈ પૂજા તિલક બતાવે । કોઈ ગાયત્રી
 જપવાવે ॥ કોઈ માલા કો હલવાવે । કોઈ કહતે સેવક દાસા
 ॥ ૫ ॥ હમેં મિલે બહુત અલગેરી । ગલ ગેરે મજબ કી બેરી ॥
 કરતે હું આંખ બરી રેરી । બતલાતે હું પરદાસા ॥ ૬ ॥ કોઈ
 મિલે અગમ કે ભેદી । જિન મૂલ અવિદ્યા છેદી ॥ રચિદ્ધ બ્રહ્મ
 કી વેદી । ઘર અંદર હુયા હુલાસા ॥ ૭ ॥ જળ સુને યથારથ
 બચના । તમ રૂપ પિછાના અપના ॥ મિટિ ગર્ભ કુતર્ક કી રચના ।
 જળ દાસ નરગુણ પાસા ॥ ૮ ॥ અખ સોચે ગુપ્ત ગલીચે ।
 નહીં જાના ઉપર નીચે ॥ આનંદ મેં ઉમરિયા બીતે । સખ દુરિ
 હુયા હું સાંસા ॥ ૯ ॥

ટીકા—બ્રહ્માનંદ આનંદ મેં, આનંદ રહે હમેશ ।

જા આનંદ ઠા જગત મેં, આનંદ હૈ લવલેશ ॥

૭૫. અસાવરી

યહ તન મેંના મેંના । સખ છોડા ફેરક ફેના ॥ ૧ ॥ જા ગાયર
 મન જહલગ જાવે । સો યહ કુછ ભી હેના ॥ માયા કલિપત વિદ્યે
 બન્યા હૈ । મૃગ જલ જાનિ બાંહેના ॥ ૨ ॥ સોવત રંક સ્વપ્ન હોય
 રાજ । રાજ કરત સંગ સેના ॥ જગત ભીખ ઘરે ઘર માંગે ।

તખડું પેટ ભરેના ॥૨૧॥ તન તિરિયા સુત અપને માનત ચે સખ
કાલ ચવેના ॥ ઈન સંગ તજ સંગ હરિ કા કરિયે । હરિ હરિ
મુખ સે કહના ॥૩૧॥ સો હરિ ગુપ્ત પ્રગટ સંતન સંગ । ઉનકા
સુનિયે કહના ॥ ધ્રુવ વહ કૃપા કરત ખિન કારણ । મુખ કે કહિ
કહિ ઐના ॥૪૧॥

૭૬. દાદરા

જાના તુઝે જરૂર હૈ । કર્મોં કે ધામ કો ॥ સૌદા કરો નેકી કા ।
ભજિકે રામ નામ કો ॥૧૦૬॥ કયોં ભૂલતા હૈ દેખિકે । ચમક
ચામકો ॥ ચલના પડેગા યાર । તજિકે ધામ વામ કો ॥૧૧॥ બાજે
નગારા કૂંચ કા સુખહ વ શામકો ॥ લેને ન પાવે સંગ મેં ।
કૌડી છદમ કો ॥૨૧॥ સમજા હૈ સત્ય તૈને । ઇસ જૂઠે લિજામ
કો ॥ કૈદીસા પકડા જાયગા ॥ યમ કે મુકામ કો ॥૩૧॥ કહતા
હૈ ગુપ્ત પુકારિકે । મન બેઈમાન કો ॥ બિગડા અનાદિ કાલ કા ।
કરતા ન કામ કો ॥૪૧॥

૭૭. દાદરા

સ્વપ્નેમેં સ્વપ્ના દેખિકે । હોતા ફિરૈ ખુવાર ॥ બઠિકે અવિદ્યા-
રન્ય મેં કયોં ભુલતા હૈ યાર ॥૧૦૭॥ જૈસે નદી મેં ગિર ગયા ।
બહને લાગ્યા મજબાર ॥ તખ તક નહીં આરામ હૈ । પકડે નહીં
કિનાર ॥૧૧॥ દેહી મિલી હૈ મનુષ્ય કી । કછુ કિજિયે વિચાર ॥
ડારો અવિદ્યા જાલકા । સિર આપને સે ભાર ॥૨૧॥ કરના બે
આજ હૈ । કલ કી નહીં ઉધાર ॥ નાહીં ખખર છિન એક કી ।
કખ આનિ પકડે કાર ॥૩૧॥ ગુપ્ત ગોવિન્દ કો જપો । અખ રાગ
દોષ જર ॥ છોડો અખાડા લોભ કા । ઇસ મારહી કો માર ॥૪૧॥

૭૮. દાદરા

મેહંદી કે જૈસે પાત મેં । લાલી રહી સમાય । કાયા મેં તૈસે
બ્રહ્મ હૈ બોજન કો કહાં જાય ॥૧૦૮॥ વૃથા હી બાહુર ભટકતા ।
બોજે નહી સતભાવ ॥ બાહુર સે ઉલટી મોટી કે । અંતર કો
વિરતી લાય ॥૨૧॥ ઢુંઢન વાલે કો ઢુંઢિલે । ઇસ ઢુંઢાહિ કે માય ।

અંતર વ બાહર એક રસ । કયોં મરતા ધાય ધાય ॥૩૧॥ યદ્યાપ
અપના આપ હૈ । સતગુરુ બિના નહીં પાય ॥ ગહેના ગલે કે
બીચ મેં । કોઈ દેત હૈ બતલાય ॥૩૨॥ ગુપ્ત આપના આપ હૈ ।
દષ્ટિ ન મુઠિ આય ॥ જબ તક ન જાને આપકો । બન બન મેં
ભરકે ખાય ॥૩૩॥

૭૯. દાહરા

દિલ દીજે ન સંસાર ચાર છાંડ જાતે હૈ ॥ લાખોં કરો ઉપાય ફિર
કુંઢે ન પાતે હૈ ॥૧૮૬॥ પ્રીતિ મેં જો મુખ હુયે હમકો જલાતે હૈ ।
ખાન પાન ધામ ચે નાહીં સુહાતે હૈ ॥૧૯॥ જિનખીન ઘડી નહીં
ખીતતી અબ દિવસ જાતે હૈ ॥ કોઈ ચન્દ રોજ બીચ મેં હમ
ભી સમાતે હૈ ॥૨૦॥ દિલ માહીં દિલ કો દેય કે મુહબ્બત લગાતે
હૈ ॥ એક દિન વિયોગ કો । અવશ્ય પાતે હૈ ॥૨૧॥ જાને બિના
નિજ ગુપ્ત કે ચોં દુખ પાતે હૈ ॥ ચાર મિત્ર દોસ્તી । સબ ઝૂંઢે
નાતે હૈ ॥૨૨॥

૮૦. દાહરા

ગાના મુનાના ચાહિયે । જો જૈખી ખ્યાલ હૈ ॥ ગંધર્વ હુવા તો
ક્યા હુવા । વાકિફ ન હાલ હૈ ॥૧૮૭॥ તાનારીરી મેં ફંસ મરયા ।
કરતા કમાલ હૈ ॥ દાતઓ અનુદાત । નહીં સ્વર કી સંભાલ
હૈ ॥૧૮૮॥ નહીં તાર કાઢ ચામ લોહા । તરમા ન ખાલ હૈ ।
અનહદ કે બાજે બજ રહે । તબલા ન તાલ હૈ ॥ મુરસદ કી
ઠોકર ખાયકે । હોતા નિંહાલ હૈ ॥ કથની કથી તો ક્યા હુવા ।
કોરા કંગાલ હૈ ॥૨૩॥ ઉસ ગાને કો જાન્યા નહી, જો ગુપ્ત માલ
હૈ । ધન કાજ આયુ જો મરયા ઘર માહી લાલ હૈ ॥૨૪॥

૮૧. દાહરા

મથન ક્રિયા હૈ વેદ કા કથિ કથિ કે કહતે હૈ ॥ જાને બિના નિજ
રૂપ કે ભવ જલમેં બહતે હૈ ॥૧૮૯॥ લોલ કી અગ્નિ લગી તિસ
માહિ દહતે હૈ । તજિ લાજ કો અકાજ કર દમડી કો ચહતે હૈ
॥૨૫॥ મિત્ર નીવ્રતી નહીં મુખ હોય કયોં દુખ સહતે હૈ । અષ્ટા-

દસ પ્રસ્થાન જે વિદ્યા કે સહતે હૈ ॥૨૦॥ ધન ધામ કાજ રાજ મેં
હુકુમતિ કે સહતે હૈ, કથની કરે વેદાંત કી હમ અસંગ રહતે હૈ
॥૩૦॥ જાન્યા હૈ ગુપ્ત જ્ઞાન સો આમાન રહતે હૈ, તજિ કે વસ્તુ
સાર નહીં અસાર ગહતે હૈ ॥૪૦॥

૮૨. દાદરા

હરહાલ મેં કર ખ્યાલ કે, તુહ કોન તેરા હૈ, યહ જગત માયા
જાલ યહાં તેરા ન મેરા હૈ ॥૧૦॥ બૂલ્યા ફિરે કયા ભર્મ મેં સ્વપ્ને
કા ડેરા હૈ. ધન ધામ ખામ અર તનય જૂઠા બખેરા હૈ ॥૨૦॥
સખ ફીકે રંગ જહાન કે જહાં મન કે ગેરા હૈ, કુછ સમજિકે
કર કાજ નહીં ચૌરાસી ફેરા હૈ ॥૩૦॥ ગુરુ વેદ મેં વિશ્વાસ કરિ
જે ભેદ હેરા હૈ, કહતે અખંડિત આતમા નહીં દૂર નેરા હૈ ॥૪૦॥
સમજો ન ગુપ્તજ્ઞાન કયોં હૈરાન હોરહા હૈ, જિસકો તૂ સમજે દૂર
મેં તેરા હી ચેહરાહૈ ॥૪૦॥

૮૩. દાદરા

જેસે કેસે કે થાલ મેં, પાતા નહીં હૈ સાર ॥ તેસેહી દેખો ખોજકે
મિથ્યા સભી સંસારા ટેકા પકડ્યા હૈ તેને આયકે, યહ માયા કા
વિકાર ॥ પચિ પચિ કે મરતા રાત દિન, કરતા નહીં વિચાર
॥૧૦॥ છોડે બિના છૈ નહીં, જૂઠા ભી યહ આસાર ॥ અખ જાનો
અપને રૂપ કે, પટેકો ન સિર તે ભાર ॥૨૦॥ છોડો સભી પરમાદ
કે, લાવો ધની સે તાર શિર ઉપર કાલ ગાજતા, કરતા નહીં
ઉધાર ॥૩૦॥ દેખૈ હૈં અપની આંખસે લગતી નહીં કછુ વાર,
લાખોં ફિરોડો ચલિ ગયે, કહતા હૈ ગુપ્ત પુકાર ॥૪૦॥

૮૪. દાદરા

કયા તો અપની હૈ નહીં, માયા કહાં તે હોય, સમજો ન અપને
રૂપ કે, ઈન દોનોઉં કે ખોય ॥૧૦॥ બીતી જે ભૂત કાલ મેં,
નિસકો ન મનમેં જોય, ભાવી કા સોચ મત કરો, જે હોની હોય
સો હોય ॥૨૦॥ વરતે જે વર્તમાન મેં, દેખો ન આપ સોય ॥
પૂછે કયા પડિત જોશિયોં, નહીં ટારી સકતા કોય ॥૩૦॥ નિશ્ચિત

હોકર ક્રિજિયે, કરને કે યોગ સોય, તજિદે કરતા હંકાર કો, કરના
રહે નહીં કોય ॥૩૦॥ ઈસ ગુપ્ત ભેદકો લખો, દેખો ન એક દોય,
સાચુન લગા કે જ્ઞાન કા, કરતા મતિ કો ધોય ॥૪૧॥

દોહા—વૈદ ઔષધી દેત હૈ, પથ કો દેય બતાય ।

કુપથ છોડિ સેવન કરૈ, તખ્તી ખ્યાધી જાય ॥

જીવ આત્મા કે લગ્યો, બડો રોગ અજ્ઞાન ।

ગુરુ વેદ બતલાવતે, ઔષધ તિસકી જ્ઞાન ॥

જ્ઞાન દવાઈ જામ લગે, કુપથ તજે વિષ ભોગ ।

પથવિવેક સેવન કરે, તખ્ત આતમ હોય નિરોગ ॥

૮૫. દાદરા

બંદા ન બન તૂં દેખ અજબ તેરી શાન હૈ, અપને કો આપ
ભૂલિયર હોતા હૈરાન હૈ ॥૧૦૦॥ સાક્ષી હૈ વહ સર્વ કા જો ઉર
મેં બસ રહા, બેદ ભેદ બિન સદા કરતા જો ગાન હૈ ॥૧૧॥ તેરી
ચમક પાય કે ચમકતા જહાન હૈ, નામ રૂપસે જુદા ઉસ કી પિછાન
હૈ ॥૧૨॥ અનેક એક હૈ નહીં, ક્યા કહો બખાન હૈ, આયને દિલ
મેં હમેશ હોતા ભાન હૈ ॥૧૩॥ ગુપ્ત સેન જાન તૂં, કરદે મુકામ
હૈ, ધ્રુસ્વય સરૂપ મેં ન હોત હાનિ હૈ ॥૧૪॥

૮૬ દાદરા

ચામ કે ઇસ ગાંમ મેં રહના કિસી કા નાય, ધન ધામ બામ નાશ
વંત કયોં રહા લુભાય ॥૧૦૦॥ નામ રૂપ સે રહિત આપ સખહી માય
સ્વ સરૂપ, જાનને સે જગત જાલ જાય ॥૧૦૧॥ દૂધ મેં ઘત દેખલે
ખાને સે સ્વાદ આય, વિશ્વ માહી વિશ્વ નાથ સખ મેં રહ્યો
જાય ॥૧૦૨॥ અપની આખ મંદતા સે ચંદ દો દિખાય. હાય હાય
હાય કબ્ત ઇસ કી ભૂલ ખાય ॥૧૦૩॥ ગુપ્ત રૂપ હૈ અનૂપ ઉસકો
લેવે પાય, ધ્રુ ઉસી આનંદ મેં ચિત્ત દીજિયે ઠહરાય ॥૧૦૪॥

૮૭. દાદરા

જાને વિના સરૂપ કે નાહીં આરામ હૈ, પાયા હૈ જન્મ મનુષ્ય
તો કર ચેહી કામ હૈ ॥૮૬॥ સમજા હૈ સત્ય તેને જૂઠા મુકામ હૈ,
આખિર ફના ચે હોયગા, ખલકત તમામ હૈ ॥૮૭॥ કર વિચાર
દેખિયે, જો મોક્ષ ધામ હૈ, દિન વ્યતીત હોગયે, અખ કુછ કયામ
હૈ ॥૮૮॥ ખ્યાલ જલ કા વના, યહ ચમક ચામ હૈ, ફંસિ કે
અવિદ્યા ફંદ મે ખનતા ગુલામ હૈ ॥૮૯॥ આનન્દ ગુપ્ત હો રહા,
અનામ નામ હૈં ધ્રુસ્વયં સરૂપ મેં ન લગતા દામ હૈ ॥૯૦॥

૮૮. દાદરા

મેહમાન સુખહ શામ કા, કિસ ખ્યાલ મેં ખેલે, માન કહી માન
કુછ સામાન તો ખેલે ॥૯૧॥ ખાને કો તુઝે ચાહિયે, કયા જાય કે
ખાયગા, ખન પડે સો હાથ સે કુછ દાન તો દેલે ॥૯૨॥ અપના
જિસે તૂં માનતા સ્વપ્નસા જમાના, સંત વેદ કહ તુઝે ઉનકી તો
માનલે ॥૯૩॥ કર્મ કે વસ ફંસતા હૈ ધુસતા ખુશી સે જા, ચલતે
સમય મેં સામને, સખ કર સે કર મલે ॥૯૪॥ ધ્યાન ધર ઉસ રામ
કા તેરી ખબર જો લે, ધ્રુ ગુપ્ત ઔર ના ખને તો નામ તો લે
લે ॥૯૫॥

૮૯. દાદરા

ચલ ઉઠ સંભલ કે દેખ, કયા બાકી હિસાબ હૈ, લેખા ધની જો
લેવેં, કયા દેવે જવાબ હૈ ॥૯૬॥ ભૂત કા યહ પૂત મૂત સે બના
હુવા, અપના ધસે તું માનતા ચે હી અજબ હૈ ॥૯૭॥ ચમક દમક
ચાંદની, બિજલી સી હૈ, છટા ખુટ્ટા હુવા સમજેં નહીં. કરતા બિજબ
હૈ ॥૯૮॥ અકડ મકડ છોડા, જોડાં નેહ રામ સે, યહ પ્રપંચ એસા
હૈ, જસા વો ખવાબ હૈ ॥૯૯॥ મન કોં લે તન સે ચલો સત ગુર
શરણ મેજા, ધ્રુ ગુપ્ત મિલે મુક્ત હો ચેહી સવાબ હૈ ॥૧૦૦॥

૯૦. કંવાલી ઔર પ્રકારકી

જબ અપને આપ કો જન્યા શહી, સખદિન દુની પલ માહીં બહી
જબ આપહી આપ ચિરાજ રહા, તખ ઔર કિસી કા તો ખોદ નહીં

પાંડેશા જળ માયા અવિદ્યા કા પાપ કરા તળ ક્રિયર જળ કા
 બેઠ મિટા, સળ કરતા કિરિયા કર્મ છુટા, કહીં કરના તો હુવા
 સફરહી નહીં પાશા અપ્કાંગ ન યાગ સમાધી કરે નહીં રામ
 રહીમ કા ધ્યાન ધરે, નહીં તસવી માલ્લા રો જાપ કરે, મમ રૂપ
 અક્રિયા મેં ક્રિયા નહીં પાશા સળ દ્વેત અદ્વેત મિટા જગદા, અપન
 મેં જના ન કષ્ટ બિગદા, ભ્રમ બેઠ કા દાર દિયા પગદા, સળ
 વેઠ કતેવ કી જાત વહી પાશા નહીં શુદ્ધ મૂલ અરૂ મૂલ નહીં
 ઉસ ગુપ્ત ગણી મેં તો ભૂલ નહીં, વહાં પુન્ય અરૂ પાપ કી શૂલ નહીં,
 તહાં એક અરૂ કોય કી ગમ નહીં પાશા

૯૧. કંવાલી

મુઝે નિદ્રાલગી જળ સૂતા પરા, ઉસ સ્વપ્ને મેં કોય હનરોં કિરા,
 જળ જાગી ઉઠા તળ કેળન લગા, કહિં આયા ગયા ન વહાં હી
 પરા પાંડેશા જૈસે ચલતે દીશા કા ભર્મ દોઝતય, જાનો પૂરળ
 તજકર પશ્ચિમ જાય, જળ જાનિ પરી તળ કયા વિરમાય. જહાં
 જાના વહાં મેં ન ભૂલજરા પાશા કોઈ વાર હલે કોઈ પાર હલે,
 કોઈ નહીં હલે કો વાર હલે, કોઈ બીચ હલે કોઈ કિનાર હલે, બકિ
 બકિ કર વૃથા હી મૂઠ મરા પાશા કોઈ કેશ હલે પરકેશ હલે, કોઈ
 બાકી હલે કોઈ શેપ હલે, કોઈ શિવજી હલે કોઈ મહેશ હલે, નામોં
 કા બેઠ હૈ વસ્તુ જરા પાશા તેસે આતમ એક હી નામ ધને.
 કોઈ જીવ હલે કોઈ બ્રહ્મ જને, સળ બેઠ ઉપાધિ હી કૃત જને ।
 સો ન આતા ન જાતા ન જન્મ મરા પાશા

૯૨. કંવાલી

જૈસે અંધકાર મેં રજજૂ પરી, તિસે કોળિ આહી કા ભરમ હુવા.
 જળ દીપક લેકર કેળ લઈ, તળ રજજૂ કી રજજૂ હી સર્પ ગયા
 પાંડેશા તેસે આતમ અકરતા શુદ્ધ સદા, અજ્ઞાન રો માનત કરતા
 જુદા જુદા વેઠ રો કતાંરુ બેઠ છિદયા. તળ એક અદ્વેત ન જન્મા
 મુયા પાશા જૈસે સીપી મેં રૂપ પ્રકાશત હૈ. તેસે આતમ મેં
 જગ ભાસત હૈ, અધિષ્ઠાન જ્ઞાન તે નાશત હૈ, સો તો તીનાહી
 કાલમેં જુઠા કહા પાશા જૈસે નાભી કમલ કસ્તૂરી અલે, વહ

મૂરખ મિરઘા દર લહે, તેસે આપહી ચેતન શુદ્ધ થહે, જાને જોજિ
રહા સોતો નાહિં ખુયા ॥૩૧॥ જિસ આનંદ કી તુલિ ચાહુ હુઈ,
વહુ ગુપ્તાનંદ તુહુ આપ સહી, તેરેતે બિના લવલેશ નહીં, યહ
વેદ વિચારે ન દેરી કહ્યા ॥૩૨॥

૯૩. કંવાલી

હમ ચારિઉ પુકારિ પુકારી કહેં, તિસપર લી સમઝત મૂઠ જુદા,
યુગ યુગ મન્વન્તર કદપ કદપ, કહુતે આવેં હમ એક સદા ॥૩૩॥
નહીં ત્યાગે કરમ સદા કરતા, તિન કે બસિ વહે જનમે મરતા ॥
તિસ બોઝેકા સિર પર ધરતા ॥ ફિરતા કર્મોંકી લાદ લદા ॥૩૪॥
હમને બહુતા સમઝાયે લિયા ॥ તુહુ પાવેગા વૈસાહી જેસા કિયા,
ઈન કામાદિક કો ખાયલિયા ॥ સમઝે નહીં મરત વૈસાખ્યા ગદા
॥૩૫॥ હમ તત્ત્વમસી સે આદિ કહે ॥ જાને જોજિ લિયે તાકે પાપ
દહે ॥ સો ભવસાગર મેં નાહિં વહે ॥ જાને જાને તત્ત્વ દાનોં
પદા ॥૩૬॥ જિન માયા અવિદ્યા કો દૂરિ કયા ॥ સખ ધર્મ તિનોંકા
ચૂર કિયા ॥ ઈસ વાચ્ય અરથ કો ધૂર કિયા ॥ પાયા ગુપ્ત લક્ષ
તવ હુયે મુદા ॥૩૭॥

૯૪. કંવાલી

જિન આતમ તત્ત્વ વિચાર લિયો ॥ તીન ઔર વિચાર કિયો
ન કિયો ॥ જે જીવન મુક્ત ભયે જગ મેં ॥ વોહ બહુતે કાલ
જિયો ન જિયો ॥૩૮॥ જૂંઠે ધન હિત ઉપાય કિયા ॥ ચલતી વર પૈસા
ન એક લિયા, જિન આતમ ધન કો ત્યાગ દિયા તો લિયા કિ લિયા
કિ લિય લયા ॥૩૯॥ ધન દાન કિયા બડા માન લિયા ॥ ઈશ્વર કા નામ
કહી ન લિયા ॥ જે કર્મ કિયા સહુ કામ કિયા ॥ તો કિયાકિ કિયા
કહા કિ કિયા કે કિયા ॥૪૦॥ પિવે ગાંજી ચરસ ઔર ભાંગ કહી ॥
કહીં પિવે શરાબરૂ દૂધ દહીં ॥ જખ પ્યાલા અમીરસ નાહીં
પિયા ॥ તો પિયા કે પિયા કે પિયા કે પિયા ॥૪૧॥ કહી સ્યાલ
હુયા કહી શેર હુયા ॥ યજ્ઞાદિક કરકર દેવ હુયા ॥ માનુષ તન પાકર
શેર મુયા ॥ તો હુયા કિ હુયા કિ હુયા કે હુયા ॥૪૨॥ કહી નીચ
કર્મ દેરી ગદા હુયા ॥ યોગાદિક કર કર સિદ્ધ હુયા ॥ નર કા

તન પાકર ફેર મુયા । તો મુયા કે મુયા કે મુયા કે મુયા ॥૫॥
 તન તેલ ફુલેલ લગાય લિયા । કપડે તન ઘોઘર ખાઢ દુયા ॥
 નહીં અન્તઃકરન કો સાફ દિયા । ઘોયા કે ઘોયા કે ઘોયા કઘોયા
 ॥૬॥ જખ ધામ તજ ધન માલ જોયા । ડર ડારી સભી બન
 મેં સોયા ॥ વહ મૂલ અજ્ઞાન નહીં જોયા । તો જોયા કે જોયા
 કે જોયા કે જોયા ॥૭॥ જખ પલંગ નેવાડ પેં શયન કિયા તકિયા
 બિછોના ખુખ દિયા ॥ વહ ગુપ્ત ગલીચા નાહિં કિયા । તો સોયા
 કે સોયા કે સોયા કે સોયા ॥૮॥

દોહો—કરમ પરાયે આપમે, માનત સોઈ અજ્ઞાન ॥

જિસકે હૈં તિસકે લખે, સોઈ જ્ઞાની જન ॥

જ્ઞાન ઉસી કો કહત હૈં, સુનિયે કરકે કાન ॥

જેસી હોવે વસ્તુ જો, તેસી લેવે જન ॥

જિન પકડયા હૈ મૂલ કો, શાંખા તજ અનેક ॥

લાભ બહુત થોડા સરમ, કરિકે દેખ વિવેક ॥

ત્યાગ કિયા જિન એક કા, વસ્તુ ગહી અપાર ॥

તાકો એક અનેક નહિં, ચાહે જોવો વરસ હજાર ॥

૯૫. કંવાલી ઔર પ્રકારકી

મજા જગ લેતે હૈં વોહી ચાર । જો હુરિ નામ કમાને વાલે ટેકા
 દયા કરિ દેતે દ્રવ્ય લૂટાય । સંગ દુરજન કા મન સે હટાય ।
 સંગ હુરિજન કે વો ચલિજાય । શુભ ગુણ ઠાઠ જમાને વાલે ॥૧॥
 કરતે કર્મ કરેં નિષ્કામ । ચરન સે જાતે સન્ત કી ધામ । દેખતે
 સળઘટ આતમ રામ ॥ રંગ હુરિ રંગ રમાને વાલે ॥૨॥ વિન્દ્ય
 કો દેખેં સ્વપ્ન સમાન ॥ તન કા ત્યાગ કિયા અભિમાન ॥ ન
 કરતે કિસી જીવ કી હાન । માન મદ મોહ નસાને વાલે ॥૩॥
 ચિત્ત સે ચિન્તા દીની ટાર । આપ ખુશ રહતે હૈ હરવાર ॥ ગુપ્ત
 ગાવિંદ જપેં આરમ્બાર । ધ્રુવ નિજ રૂપ સમાનેવાલે ॥૪॥

૯૬. કંવાલી

શિવ શિવ હરહર હો હર વાર, હર ભવપાર લગાને વાલે ॥૧૬૬॥
 શિવ ચિત્તા ભરમ હૈ અંગ, વામ કર ગૌરા અરધંગ ભાલપૈથ'ક
 શીસ પર ગંગ, ભૂષણ વ્યાલ હૈ કાલે કાલે ॥૧૬૭॥ ડમરુ તિરશ્ચલ
 લિયે ઝોલા, પહિને વાઘાંબર સોલા ॥ મુંડ રૂદ્રાક્ષ સોલે ભોલા,
 ધ્યાન લગાને વાલે ॥૧૬૮॥ આપકે કુરને કા વિસ્તાર, ઉત્પત્તિ પાલન
 ઔર સંહાર ॥ કરતા બિનુ કરતા કરતાર, પી ભંગ ભર્મ ભગાને
 વાલે ॥૧૬૯॥ ગુપ્ત ગિરજાપતિ ગિરિજા સાથ, જૈઠે ઈશ વિશ્વ કે
 નાથ ॥ જિન કે સુમિરન સે અઘળત, ધ્રુ, દે દર્શન દી ગનવાલે
 ॥૧૭૦॥

૯૭. કંવાલી

કાશી વિશ્વેશ્વર દાતાર, દાતા જ્ઞાન કે દેને વાલે ॥૧૭૧॥ શિવ
 અવિનાશી તન મેં પરકાશત સખ હી કે મનમેં ॥ વહી ચીટી વહી જન
 મેં સંગ શક્તિ કે રહને વાલે ॥૧૭૨॥ શિવ સર્વ રૂપ હોકે, અંતર
 બાહર સખ દેખે ॥ દર્શન ભક્તોં કો દેકે, પાતી બિલ્વ કે લેને
 વાલે ॥૧૭૩॥ સત્ત ચિત્ત આનંદ માયા પાર, માયા કલિપત યહ
 સંસાર યોગિયોં કર તત્વ વિચાર, નૌકા ભક્ત કી બેનેવાલે ॥૧૭૪॥
 અંતર ગુપ્ત ધ્યાન ધારે, શિવ સંકલ્પ સહી જરે ॥ કેવલ ભોક્ષ
 મૂર્તિવારે ॥ ધ્રુમુખ આપહિ કહનેવાલે ॥૧૭૫॥

૯૮. કંવાલી

જૈઠે શિવ સર્પ હો આપ ॥ મુક્તી મોજ કે લેને વાલે ॥૧૭૬॥
 સંગ મેં શાંતિ મુદિતા નાર ॥ ચેતન બોધ રહે હર બાર ॥ સંસૃતિ
 મૂલ દિયા જિન ડારે ॥ વાની સત્ય કી કહનેવાલે ॥૧૭૭॥ જિનને
 દેત કિયા સખ દૂર ॥ વ્યાપક બ્રહ્મ લખા ભરપૂર ॥ કીના કરતા
 મતિ કા ચૂર ॥ દાની જ્ઞાન કે દેનેવાલે ॥૧૭૮॥ પંચ ભૂત ત્રીન ગુન
 માહિ ॥ કિસી સે રાગ દ્રેષ કુછ નાહિ ॥ સમ દૃષ્ટિ સખ કે માહ
 ત્રીનો તાપ મિટાને વાલે ॥૧૭૯॥ એસે આપ તિરે તારે ॥ સખ સે
 મિલે રહે ન્યારે ॥ આપહી ગુપ્ત પ્રગટ સારે ધ્રુનિજ ધ્યાન લગાને
 વાલે ॥૧૮૦॥

૯૯. કંવાલી

કયા કહે' કહી ના જાય । રચના અજળ રચાને વાલે ॥૧૮૬॥ કિના
 સૃષ્ટિ કા વિસ્તાર । જિસકા નહીં પાર નહીં પાર ॥ જિસમેં
 હૂબ રહે નર નાર । તેરે સખ સે ઢગ નિરાલે ॥૧૮૭॥ તેને એસા
 બેનાયા ખેલ । જિસકે પરદે અતિ કમાલ ॥ ઉસમેં કુછ ના રહે
 સંભાલ । ભૂલે ચતુર કહાનેવાલે ॥૧૮૮॥ કુછ હૈ નાહીં અતલાય ।
 બિન રૂપ રૂપ દિખલાય ॥ સચમાન સભી ભરમાય । બિન બંધ
 લગા દિયે તાલે ॥૧૮૯॥ કોઈ છાયા ગહને જાય । વો હાથ કભી
 ના આય ॥ ધ્રુ ખુદી સમજ રહજાય । યોં ગુપ્ત પ્રગટ ભ્રમ
 ડાલે ॥૧૯૦॥

૧૦૦. કંવાલી

પાય કે નર તન ઋતુ વસંત । ફાગ ખેલત હૈ ખેલન વાલે ॥૧૯૧॥
 ઉદય હુયે પૂરન પિછલે બાગ । જાસે ઉપજા હૈ વૈરાગ ॥ કિયા
 હૈ સભી જગત કા ત્યાગ । રાગ અરૂ દ્વેષ નશાને વાલે ॥૧૯૨॥
 ઉપજા સ્વયં સરૂપ કા જ્ઞાન । યાતે દૂરિ હુવા અજ્ઞાન ॥ છુટે
 હૈં સભી મોહ મદ માન । ખુલે અજ્ઞાન બજર કે તાલે ॥૧૯૩॥
 રહતે હૈં બ્રહ્મા નંદ આનંદ । કટૈ હૈં સભી કર્મ કે કંદ ॥ ખિલે
 રહે પૂનમ જૈસે ચંદ । દાગ સખ ઘોચે કાલે કાલે ॥૧૯૪॥ ગુપ્ત મેં
 રહતે હૈં ગર ગાય । જિસમેં નહીં જગત કા પાપ ॥ સદા પૂરન
 હૈ આપહિ આપ । મદ પી હોગયે મતવાલે ॥૧૯૫॥

૧૦૧. કંવાલી

શુભ કર્મ કરે નિષ્કામ રામ ભજિ ઉતરે પારા ॥૧૯૬॥ જિનોં
 કો સુમિરા હરિ કા નામ, ઉનોં કે સખ સિધ હો ગયે કામ ॥
 લગ્યા નહીં કોડી એક છદામ, છૂટિ ગયા સભી કર્મ કા ગારા
 ॥૧૯૭॥ જગત મેં પાપી તિરે અનેક, લેકર રામ નામ કી ટેક ॥
 જિનોં કી નહિં ધારા કોઈ ભેખ, નામ નૌકા ચઢિ ઉતરે ધારા
 ॥૧૯૮॥ રરા સખ માહીં રમતા, મમાકર સખ મેં મમતા ॥ જબ
 ભાવ ઉદય હો સમતા, આપને ચિત્ત મેં કરે વિચારા ॥૧૯૯॥

ગુપ્ત પ્રગટ મેં એકહિ જાન, સીખસે ગુપ્ત ગુરુ સે જ્ઞાન ॥ અખ
તો મત ના રહે અજાન, માન મદ તજિદો સભી વિકારા ॥૪॥

૧૦૨. ડંવાલી

ભૂલો કે સત ચિત આનંદ રૂપ પડા હૈ જન્મ મરણ કે રૂપ ॥૧॥
કહત હોં તોસો સખહી હાલ, ભર્મ કા દૂટિ જાય સખ જાલ ।
જરા દુક સુનિયે કરકે ખ્યાલ, તુહીં ઇસ કાયા માહીં ભૂપ ॥૨॥
સ્થૂલ સૂક્ષ્મ જેતા વિસ્તાર, સભી રહતા તેરે આધાર ॥ ઇનોં કા
આપસ મેં વ્યભિચાર, તુંહી તો વ્યાપિ રહા અનુસૂત ॥૩॥ જન્મતા
મરતા હૈ સ્થૂલ. આપ મેં માનત હૈ યહી ભૂલ ॥ ઇસી સે સહતા
હૈ બહુ શૂલ, નહીં તુઝ મેં હૈ ઇયા ધૂપ ॥૪॥ તું હી હૈ ગુપ્ત
રૂપ નિજ સાર, દેહ તીનોં કો જાનિ વિકાર ॥ પટક અખ ઇનકા
શિરતે ભાર, જીત અખ કયોં હારત હૈ જૂપ ॥૫॥

૧૦૩. તરજ તાન

નિરલૈ હો ડર કો ડારી કે હંસ ખેલ ખેલ ખેલ ॥ ૧ ॥
અખ દૂષ્ટ સંગ કો તજના, એક નામ હરિ કા ભજના ॥ કોઈ
મિલે આપના સજના, તિસ મેલી સે કર મેલ મેલ મેલ ॥ ૨ ॥
ઇસ જગત જાલ કો ડારો, નિજ અપના જન્મ સુધારો ॥ અખ
મૂલ અવિદ્યા હારો । ઉર મલો જ્ઞાન કા તેલ તેલ તેલ ॥ ૩ ॥
તન મન સે દૃષ્ટિ ઠાવો । નિજ એક બૃહ્મ મેં લાવો ॥ તખ રૂપ
આપના પાવો । જન્માદિક દુખ કો પેલ પેલ પેલ ॥ ૪ ॥ યહ
ગુપ્તજ્ઞાન ગહિ રાખો ॥ અખ સ્વાદ ઇસી કા ચાખો ॥ વાયક સે
વાની ભાખો । નિજ આતમ સુખ કો ઝેલ ઝેલ ઝેલ ॥ ૫ ॥

૧૦૪. તરજ તાન

ઇસ નર તન કો પાય કે । કર કાજ કાજ કાજ ॥ ૧ ॥
અખ કાજ યહી કર લીજે । ઇશ્વર મેં ચિત્ત કો દીજે ॥ કલ પરસોં
પર નહીં ધીજે । શુભ કારજ કો કર આજ આજ આજ ॥ ૨ ॥
બહુ યોની મેં ફિરિ આયા । યહ નર તન દુરલભ પાયા ॥ ઝૂઠી

है सखी माया । अथ साज लजन का साज साज साज ॥१॥
जिसको मानत है अपना । यह जगत रैनि का स्वपना ॥ २ ॥
है सख ही रचना । इस ओठे जग से लाज लाज लाज ॥ ३ ॥
निज गुप्त रूप है सख्या । और सखी जनो कख्या ॥ स्वपने
में अच्छी अच्छी । इस मोह जल को त्याग त्याग त्याग ॥ ४ ॥

१०५. तरंग तान ।

दिल में वैराग जँयाय । लजिले राम राम राम ॥ टेक ॥
तन की ममता तजि दीजे । निष्काम कर्म को कीजे ॥ तूँ लज्जि
सुधारस पीजे । दुःख चित अपने को थाम थाम थाम ॥ १ ॥
करता हँकार न करिये । निज शुद्ध रूप उर धरिये ॥ सख पाप
धँसीसे जरिये । तूँ पावेगा सुख धाम धाम धाम ॥२॥ निश्चय
में राम हँसरे । मन हर्ष शोक मत लावे ॥ सख दैत लाव
छिड़कावे । ना लागे इस में दाम दाम दाम ॥३॥ यों निज
जन्म सुधारो । अपने को लव से तारो ॥ लख गुप्त गर्भ को
जरो । द्रु कर लीजे यह काम काम काम ॥४॥

१०६. तरंग तान ।

क्यों कसै विषय की जल । कहना मान मान मान ॥ टेका ॥
ये विषय सदा दुःख रूपा । तिनके संग से लव कूपा ॥ यों
संतभार कहूँ रूपा । मत विषय आक को छान छान छान ॥१॥
यह जगत जाल है स्वपना । इस में नहिं कोई अपना ॥ जैसा
करना वैसा लरना । सुन कथा लगा कर कान कान कान ॥२॥
तन से सत संगति करना । सुख से हरि नाम सुमरना ॥ मन
निजनंद में धरना । प्रभू रूप जन जन जन ॥३॥ जम गुप्त
रूप को पावे । तथ माया मल मिटि जावे ॥ नहिं गल वास
में आवे । ध्रुव तीर लक्ष में तान तान तान ॥४॥

१०७. तरंग तान ।

सत गुरु ने मारा आन । शिष्य के तान तान तान ॥ टेका ॥
जैसी जय ज्ञान कमाना । फिर लाया शब्द निशाना ॥ सख
विधि भरम स्थाना । लया आप रूप का ज्ञान ज्ञान ज्ञान ॥१॥

શિષ્ય ઘાયલ કરકે ડારા । ફિર ક્યા કરે વૈદ વિચારા ॥ કોઈ માંસ
ખાલ નહિ ફાડી । કોઈ ઘાયલ લેવે જાન-જાન જાન ॥૨॥ ઘાયલ
કી ઘાયલ જાને । દૂજ કોઈ નહિ પિછાને ॥ જિસ તન મેં લગી
કરાસી । દુક ધરિ કે દેખો ધ્યાન ધ્યાન ધ્યાન ॥૩॥ જમ ગુપ્ત
રૂપ ફો પાવે । સખ ઘાવ દરદ મિટિ જાવે ॥ શિષ્ય અપને મુખ
સે ખોલા । છુટી ગઈ ચૌરાસી ખાન ખાન ખાન ॥૪॥

૧૦૮. તરજ તાન ।

તુઝ મેં ના મૈલ પાપ । તુહ તો સાફ સાફ સાફ ॥૩૬॥ અખ
ભાવ મિટાવો દૂજ । કિસકી કરે સેવા પૂજ ॥જખ એક નહિ રૂપ
સૂઝા । ફિર કિસકા કરતા જાપ જાપ જાપ ॥૧॥ સ્વપ્ને મેં દેખે
જૈસા । ઇસકો લી જાનો તૈસા કોઈ કોડી લગે ન પૈસા । લખ
તીનોં કાલ મેં આપ આપ આપ ॥૨॥ મન રચતા ઝૂઝી રચના ।
કાહે કો માનત અપના ॥ પર ધર્મ આપ ક્યોં રખના । ઇસસે
નહિ લાગે પાપ પાપ પાપ ॥૩॥ જખ ગુપ્ત ગલી મેં આવે ॥
તખ ગુપ્ત ભેદ કો પાવે । સખ ભર્મ કર્મ જલિ આવે । ધ્રુવ કરે
કોન કા તાપ તાપ તાપ ॥૪॥

૧૦૯. તરજ તાન ।

સત ગુરુ કે શરને જાયદે ॥ લખિ સૈન સૈન ॥૩૭॥ ખચનોં
મેં શ્રદ્ધા કીજે । સખન કે રસ કો પીજે ॥ ફિર મનન ઉસી કો
કીજે । તખ પાવેગા સુખ ચૈન ચૈન ચૈવ ॥૧॥ ગુરુ કરે બ્રહ્મ પર-
કાસા । જખ હોય અવિદ્યા નાસા ॥ તખ મિટે જીવ કા સાંસા ।
રસ પ્યાયા અમૃત જૈન જૈન જૈન ॥૨॥ ઘટ અંદર હુઆ ઉજાલા
ખુલિ ગયા ભરમ કા તાલા ॥ દરિયાવ મિલ્યા જિમિ નાલા ।
જૈસે જલમાહીં ફેન ફેન ફેન ॥૩॥ જખ ગુપ્ત રૂપ કો જાન્યા ।
સખ ભેદ ભર્મ કો ભાના ॥ તખ લાગ્યા લક્ષ નિશાના । ધ્રુવ
વચય કરે નહીં નૈન નૈન ॥૪॥

૧૧૦. કકા ખતીસી વૈત સેહરફી કર્મ નાશક ।

ક, કાલ અરુ કર્મ નહિ આતમા મેં । દુક જામિ કે દેખ
ક્યા પડા સોવે ॥ દેશ અરુ કાલ લેશ નાહિ । સદા એક

અખંડ ક્યોં ખંડ જોવે ॥ એક શુદ્ધ પરકાશ સરૂપ તેરા । ફિર
કર્મ સે કૌન કા મેલ ધોવે ॥ ગુપ્ત નિરખન્ધ સમ્બન્ધ નાહિં ।
ધસ કર્મ કે જલ ક્યોં ફંસા રોવે ॥૧॥

દોહા—કાકા જારો કર્મ કો, જ્ઞાન અગ્નિન કે સંગ ॥
આતમ મેં કિરિયા નહિં, પુરણ શુદ્ધ અસંગ ॥

ખ, ખોજિ કર દેખ નિજ આતમા કો । જામેં કર્મ અરુ
ભર્મ કા લેશ નાહિં ॥ નહીં પંચ કલેશ કી ગંધ જામેં । સુખ
રૂપ પરકાશ લખ આપ તાહીં ॥ કોઈ જાગ્રત સ્વપ્ન નહિં નીંદ
તામેં । નહિં વિદ્ય તેજસ્વ પ્રાણ આહી । ગુપ્તાનંદ આનંદ દ્રુ
અચલ હૈ તુહ । જામેં ચૌથિ અરુ પંચમી નાહિં કાહીં ॥૨॥

દોહા—ખખા ખોજ્યા આપકો, તીન દેહ કે માહિં ॥
કર્તા કિરિયા કર્મ સખ, કુછ ભી પાયા નાહિં ॥

ગ, જ્ઞાન પરતાપ પાવે આપ તાહિં । નાહિં ઔર પ્રકાર યહ ફંધ છૂટે ॥
ચહૈ કર્મ ઉપાસના લાખ કીજૈ । જહાં જાયગા તહાં અજ્ઞાન ફૂટે ॥
યહી જ્ઞાન સ્વરૂપ પિછાનિયોછ । જખ દ્વૈત અદ્વૈત કા ભર્મ ડુટે ॥
ગુપ્ત રૂપ હૈ આપ અનૂપ પ્યારે । દ્રુવ પાચ કે બખત યહ મૌજ લૂટે ॥

દોહા—ગગા ગુરુ ભવ તરન મેં, ઔર ન કોઈ ઉપાવ ॥
છાંડો કિરિયા કીચકો, યક ચઢો જ્ઞાન કી નાવ ॥

ઘઘા, ખોજિ ધર માહિં ક્યોં બાહર જાવે. ગુરૂ વેદ સે ચાર
તહકીક કીજે । સોખત કીજિયે જાય કે આરિકોં કી । મન વચન
અરૂ દેહ સે પ્રીત કીજે ॥ નૈન સે ઐન સે સૈન સે પરખિ કર ।
આપને ચિત્ત મેં જાનિ લીજૈ ॥ હૈ ગુપ્ત પ્રગટ તુહીં એક વ્યાપક
સદા । દ્રુજાનિ કે રૂપ અજ્ઞાન છીજૈ ॥૪॥

દોહા—ઘઘા ધર ધર મેં રમા. સત ચિત આનંદ રૂપ ॥
રંક બન્યા ભરમત ફિરે. તુહિં ભૂપન ભૂફા પ ॥

જ, ગંધ અરુ રસ નહીં રૂપ જામે' । સ્પર્શ અરુ શબ્દ કયો' પામ્યેલા
સોતો શુદ્ધ સરુપ નહીં ગંધ માયા । મહત્તાવહકાર કયો' ગામ્યેલા ॥
જમે' જીવ અરુ ઈશ કી ઠીર નાહી । સોઈ આપ મેં આપ સમાયેમળા
ગુપ્ત જ્ઞાન સે દેખિ જખ ભેદ જાને । ધ્રુઅચલહે અચલ કો પામ્યેલા ॥
દોહા—ડગાલિખ મેં ગૈખ હૈ, દીખે સુને અપાર ॥

મીતર બાહર એક રસ, લિપતાં નહીં વિકાર ॥

ચ, ચમક તેરી કા પાય કે જી, યહ ચમકતા પિંડ બ્રહ્મંડ
સારા ॥ જૈસે સૂર પરકાશ તે કિરન બહુ ભાસતી; તિસ સૂરતે
નહીં કછુ કિરન ન્યારા ॥ સખ જોતિકા જોતિ હૈ આતમા તુહા
તુહીં જનતા ચાંદના અંધિયારા ॥ નહીં ગૈખ હૈ ગુપ્ત પરકાસ
સખ કા કરે, ધ્રુદોખિયે આપ મિદયા નહીં ન્યારા ॥૬॥

દોહા—ચચા ચામરુ હાડ કો, કરતા હૈ પરકાસ ॥

દમક પડી ફૂટસ્થ કી, જિસે કહે જીવ આભાસ ॥

જ, જાર મેં લાલ મિલિ રહા પ્યારે, તિસ જાનિ કે લાલ કો
કાઢિ લીજે । અખ ગુરુ વેદ કી કરો છાંણિ, ઘી જાનને વાલી કો
લાય દીજે ॥ પંચ કોષ વપુ ત્રીન ચે જાર સખહી લખ, શુદ્ધ રૂપ
નિજ આતમા લાલ લીજે ॥ સોઈ ગુપ્ત અતોલ નહીં મોલ જાક,
ધ્રુવ કૌન બજાર મોલ કીજે ॥૭॥

દોહા—છછા છાડિ અસાર કો, સાર લખો નિજ રૂપ ॥

પંચ કોષ ત્રય દેહ મેં, તુહી વ્યાપક વ્રત્ત સરૂપ ॥

જ, જાનિ કે આપને આપ કો જી, સખ જાપ અરુ તાપ કા
કા ભર્મ માંજે ॥ ગુરુ અરુ વેદ સવ ખાંડિત હુયા, જહાં એક
અદ્વૈત કા ઢોલ બાજે ॥ ફિર ઢોલ અરુ વાજ સખ ગાજ થકિ
જાત હૈ, નહિં દ્વૈત અદ્વૈત કી ફોજ સાજે ॥ હૈ ગુપ્ત ગલતાન
નહિં માન અમાન કો કહુ, ધ્રુઅરુ અચલ તહાં સભી લાજે ॥૮॥

દોહા—જન્મ જોઈ જગત ગુરુ, જગ સે રહે ઊદાસ ॥

ગુરુ શિષ્યભાવ મિટાયકે, સખ જાને ચિદ આકાસ ॥

ઝ, ઝગડા સકલ ચુકાય કે જી, હુએ અચલ નિહતાપ મુખ
સંગ સોયા ॥ ઉસ મૌજ કી ફોજ સે શત્રુ સખ જય કિયે, વૈર
અરુ ભાવ કા મૂલ ખોયા ॥ જાન્યા અપના આપ સખ ઠોર માહી
તખ રાગ અરુ દ્વેષકા મૈલ ધોયા ॥ મૈંહી ગુપ્ત પ્રગટ નિરખંધ
ખંધન નહીં ધ્રુખંધ અરુ મુક્ત સે હુયા ॥૯૮॥

દોહા-ઝમા ઝોલી પેટ કી, નહીં સેઠ સે કામ ॥

રાવ રંક નહિં દેખતે, ચહે હોય રામ કા રામ ॥

ઝ, યાદ સે વાદ ઉઠાય દીજૈ, નિરવાદ મેં સ્વાદ કો પાઈયેજી ॥
કટે આસ કી ફાંસ હુલાસ હોવે, ફેર હસિયે ખેલિયે ગામ્ધયેજી ॥
ચહે રંગ રામ સુન ખાગ માહીં, ચહે રાગ વેરાગ કો ત્યાગિયેજી ॥
જખ જાનિયા ગુપ્ત જખ મુક્ત જીવન હુયે, ધ્રુખેલ યા ખેલિના
લીજિયેજી ॥૧૦૧॥

દોહા-મમા યાકે ખીચ મેં તુહ તો રહે અસંગ ॥

જૈસે કાલી કામલી, ચહે ન દૂજા રંગ ॥

ઝ, ટારિકે મૂલ અજ્ઞાન સાયે, ફેરિ તૂલ સે કૌનસા કાજ
ખિગડે ॥ જૈસે સ્વપ્ન મંઝાર ભયે શત્રુ અરુ ચાર, ખુલૈ આંખિ
તખ મિત્ર કહાં શત્રુ ઝગડે ॥ જૈસે ભીતિ કે શેર સે ભીતિ નહિં
હોત હૈ, નહીં ચિત્ર કી આગિ સે તિમિર નિવડે ॥ ગુપ્ત મેં જગત
અરુ જગત મેં ગુપ્ત હૈ, ધ્રુજગત કે માહિં ફેરી કૌન ખડે ॥૧૧૧॥

દોહા-ટાટા ટાટી ભરમ કી, સતગુરુ દર્ષ ઉઠાય ॥

દરસાયા નિજ આતમા, પૂરણ અચલ સુઝાય ॥

ઝ, ઠીક ઠીકાને કો પાય કે જી, ફેરિ ઉલટિ અરુ પલટિ કે
નહીં આના ॥ ઉસ ધામ કે ગામ મેં હાડ અરુ ચામ નાહીં, પૈર
સે ગમન કર નહીં જાના ॥ ઘટ ફૂટિ કે ઘટ આકાસ જૈસે, મહા-
કાશ મેં આગવન ગવન ભાના ॥ એક ગુપ્ત સરપ અનૂપ વહ
ધામ લખિ, ધ્રુવ વાચ્ય કો ત્યાગિ કે લક્ષ જાના ॥૧૨૧॥

દોહા-ઠઠા ઠાકુર જગત મેં જો ઠાઠે નિજ રૂપ ॥

લક્ષ રાખિ નિજ આપકો, વાચ્ય ફટકિદયાસૂપ ॥

૩, ડારિ કે મૂલ અજ્ઞાન કો જી, જિસ મૂલ કો જાનિ લીજે ॥
જિસ મૂલ મેં ડાર અરુ ફૂલ સખહી રહેં, સો સદા અક્ષર હૈ
નાહિં જીજે ॥ સોતો આપના આપ હૈ જાપ કિસકા કરે, તોરિ
કુર અજ્ઞાન યહ રાહ લીજે ॥ ધસ ગુપ્ત ગલિયાર મેં જગત
નાહીં, ધ્રુવ જાનિકે મૂલ ફેરિ કહા કીજે ॥૧૩॥

દોડા-ડડા સખ ડર ડારિકે, નિરભય હોફર સોય ॥

મૂલ તૂલ કા મૂલ નિજ, લિયા આપકો જોય ॥

૪, ઢારિ કે પાસ જગ ચૌપટે પૈ, ગુણુ ત્રીન સે આપ કો
જુદા કરના ॥ સખ જન્મ અરુ મરન ગુણુ ત્રીન મેં હૈ, તોમૈં
કર્મ અરુ બન્ધ નહીં મોક્ષ કુરના ॥ ગુણુ ત્રીન કે પાસ કો ઢાલ
દીજે, અખ ગરિ પોહ્યાર નહીં જન્મ મરના ॥ હૈ ગૂપ્ત સખ
ઠાર કહાં જાયે દૌરિ કે, ધ્રુજ્ઞાન અરુ ધ્યાન કો કહા કરના ॥૧૪॥

દોહા-ઢઢા ઢોલ બજાય કે, કહે વેદ દિન રાત ॥

ગુણુ ક્રિયા સમ્બન્ધ સેં, આતમ સદા અજાત ॥

૫, અણુ અરુ મહત નહીં આતમા મેં, તિસે અનુ અરુ
મહત યહ વેદ ગાવે ॥ તિસ વેદ કે ભેદ કો સમજિ પ્યારે, તિસે
જાનિ સૂક્ષ્મ યહ સૈન લાવે ॥ ફેરિ એક અરુ દોય નહીં ઘના
થોરા, નહીં થાપ અથાપ કો બતલાવે ॥ હૈ ગુલજર કછુ પાર
નાહીં, ધ્રુનેતિ કહિ આપહી નિત્ત ગાવે ॥૧૫॥

દોહા-ણુણા લેના દેન ન જસ મેં, ખાન પાન નહિ કોય ॥

ફેન તરંગ અરુ બુદ્ધબુદ્ધ, ભિન્ન નહીં કછુ તોય ॥

૬, ત્યાગિ કે રાગ કો જાગિ દેખો, જામે દોષ અરુ રોષ કો
લેસ નાહીં ॥ સો તુહ આપ નિરવાણુ નહિં બાણુ માયા, દુક સમજિ
કે દેખિયે આપ તાહીં ॥ ચૌર લાખ ઉપાચ નહિં પાક હોવે,
તોમૈં શુદ્ધ અશુદ્ધ નહીં મૈત્ર કાહી ॥ તુહી ગુપ્ત પરકાસ ફેરિ
આસ કિસકી કર, ધ્રુવજ્ઞાન અરુ ધ્યાન નહીં પરે છાંહી ॥ ૧૬ ॥

દોહા—તતા તોડો જગત સે, નાતા સભી બહાય ॥

તુંહી એક ભરપૂર હૈ, દૂન ભાવ ઉઠાય ॥

થ, થાપ અથાપ નહીં આતમા મેં, કોઈ જાપ અરુ તાપ કા
નહીં રાસા ॥ પુન્ય અરુ પાપ નહીં સાક અસાક નહીં, નહીં
રાગ અરુ દોષ કા પડા કાસા ॥ ઉલ્લુ લાખ હજાર બેકાર કદી,
નહીં સૂર મેં અન્ધ અરુ ઉજિયાસા ॥ ગુપ્ત નિરવયવ મેં અવયવ
કા લેશ ના ધ્રુવ ખોજિ કે દેખ હોવે હુલાસા ॥ ૧૭ ॥

દોહા—થયા થાકે ઉરે મેં, મન બુદ્ધિ ચિત હંકાર ॥

પૈડી પંથ ન પગ ટિકે, નિરાકાર આકાર ॥

દ દૂરિ તેં દૂરિ કહ આતમા કે, સોતો આપના નૂર નહીં
દૂર નેરા ॥ જૈસે ઉલ્લુ કી આંખી કે દોષ બલસે, પરકાસતા સૂર
કહૈ તે અધેરા ॥ તેસે મલ વિક્ષેપ અંતર પડા જીવ કે, સોકાલ
અરુ કર્મ સ્વભાવ ઘેરા ॥ હૈ આપ અપાર નહીં પાર વારા જિસે,
ધ્રુગુપ્ત ને પિંડ બ્રહ્મંડ હેરા ॥ ૧૭ ॥

દોહા—દદા દિલ કે બીચ મેં, ઉમંગિ રહા દરિયાવ ॥

મન મલાહ ચલાવતા, ચલતી બુદ્ધિ નાવ ॥

ધ, ધારના ધ્યાન કે દૂરિ કીજ, તુંહી એક અખંડ વિરાજતા
હૈ ॥ યમ નેમ આસન ક્યોં પ્રાણ બેંચે, કરે નેતી અરુ ઘોતી
નહીં લાજતા હૈ ॥ આતમ નિત પ્રાપ્ત સખ સહિત કિયા, નિર-
વયવ મેં કર્મ ક્યોં સાજતા હૈ ॥ નિજ ગુપ્ત મેં યોગ કા રોગ
લાવે, શૂ આપ અસંગ ક્યોં ભાજતા હૈ ॥ ૧૮ ॥

દોહા—ધંધા ધન ધર મેં ધના, સમઝત નાહીં મૂઢ ॥

યોગ કર્મ મેં હુંડતા, આતમ રહે અગૂઢ ॥

ન નામ અરુ રૂપ નહીં આતમા મેં, દૈરિ અસ્તી અરુ
ભાંતી કે કહા કહિયે ॥ ઈસ રમજ કે સમઝિ સમઝાવતે હૈં,
આગે અંસ અરુ નામ કોઈ નહીં પાઘયે ॥ કોઈ વાચ્ય અરુ લક્ષ
નહીં લક્ષ જામેં. સો તુંહી લક્ષ કા લક્ષ દૈરિ કહા ચહિયે ॥ હૈ ગુપ્ત
સરુપ સખ ઠોર આપક, ધ્રૂહુંદને વાસ્તે કહાં જઘયે ॥ ૨૦ ॥

દોહા—નના ન્યારા માહીં નહીં, વ્યાપક બ્રહ્મ સરૂપ ॥

જો સમજે ઇસ રમજ કો, તેન પરે ભવ રૂપ ॥

પ, પાપ કે આપને આપ કો જી, ઔર પાવને યોગ કોઈ નહીં
જૂઠા ॥ જ્ઞાન અરુ ધ્યાન ફેર કૌન કા કીજિયે, ધૂપ અરુ દીપ કરે
કૌન પૂજા ॥ વહ એક અખંડ નહીં ખંડ જામેં, જખ પિંડ
બ્રહ્મંડ મેં એક સૂઝા ॥ ગુપ્ત જ્ઞાન કો પાપ મસ્તાન હુવે, ધ્રુજનિ
યહ મર્મ સખ કર્મ છીજા ॥ ૨૧ ॥

દોહા—પપા પાપ ન પુન્ય હૈ, નિજ આતમ કે માહિં ॥

લાભ હાનિ જામેં નહીં, અગમ અગોચર ઠાહિં ॥

ફ, ફેર હૈ આપકી ભૂલ માહીં, તિસ ભૂલ કે મૂલ કા ખોજ
કરના ॥ ભૂલ નિજ આપકી શૂલ બહુતે સહે, યાતે લોક પરલોક
મેં ગમન કરના ॥ કરે પુન્ય અરુ પાપ કો દુઃખ સુખ ભોગતા,
ફેરિ ગર્ભ કી અગ્નિ કે માહિ જરના ॥ તજે કર્મ હંકાર ઉદ્ધાર
હોવે, જપે ગુપ્ત ગોવિંદ ધ્રુવ હોય તરના ॥ ૨૨ ॥

દોહા—ફફા ફારિગ હોત હૈ, કર્મ કરે નિષ્કામ ॥

છૂટે મલ વિક્ષેપ સખ, દિલ મેં હોય અરામ ॥

ખ, બ્રહ્મ સરૂપ નિજ આતમા હૈ, તિસ આતમા સે નહીં
બ્રહ્મ ન્યારા ॥ મિલે નીર અરુ ક્ષીર કોઈ ધીર જાને, હૈં એક
મેં એક સખ ભેદ જારા ॥ ઘટાકાશ મહાકાશ કા દુટ નાહિં;
ઘટાકાશ સે નહીં મહાકાશ ભારા ॥ વહીં ગુપ્ત પ્રગટ નિજ
આપના આપ હૈ, ધ્રુવ ભેદ કો છેદ હલકા ન ભારા ॥ ૨૩ ॥

દોહા—ખખા ખાહર અંતર મેં, બ્રહ્મ આતમા એક ॥

જૈસે કુટ કાંચ કે, ટૂક ટૂક મેં દેખ ॥

ભ, ભર્મ કે ભાર કો તારિયેજી, તિસ ભાર કો ધાર ખડે
સર્મ પાયા ॥ ત્રીન દેહ અરુ પંચહી કોપ યે ભાર હૈ, માના
આપકો પિંડ અરુ પ્રાણ કાયા ॥ તુહ તો શુદ્ધ સરૂપ

ਪਰਕਾਸ਼ ਸਭਕਾ ਕਰੇ, ਖਸ ਵਹੁੰਮ ਮੇਂ ਅਛੁੰ ਕੋ ਕਥੋਂ ਘਣਾਯਾ ॥ ਗੁਪਤ
ਮੇਂ ਸੁਕਤੀ ਅਰੁ ਜਗਤ ਕਾ ਮੂਲ ਨਹੀਂ ਧੁਘਧ ਕਾ ਮੂਲ ਅਜ਼ਾਨ
ਠਾਯਾ ॥ ੨੪ ॥

ਦੋਹਾ—ਲਭਾ ਭਾਰ ਉਤਾਰਤਾ ਕੇ, ਐਠੋ ਸਤਸੰਗ ਖਾਹਿੰ ॥

ਪਾਨੀ ਪਿਯੋ ਵਿਚਾਰ ਕਾ, ਸਰਮ ਰਹੇ ਕੋਧ ਨਾਹਿੰ ॥

ਮ, ਮਾਨ ਅਰੁ ਤਾਨ ਕੇ ਮਾਹਿੰ ਭੂਲਾ, ਨਹੀਂ ਮਾਨ ਅਰੁ ਤਾਨ
ਕਾ ਲੇਸ਼ ਕੋਧ ॥ ਕਿਸੀ ਲੇਖ ਅਰੁ ਮਯੁਭਯ ਕੀ ਰੇਖ ਜਮੇਂ ਨਹੀਂ,
ਐਸਾ ਜਾਨਿ ਨਿਯ ਰੂਪ ਹੈ ਆਪ ਸੋਧ ॥ ਸੋ ਤੁਛੀ ਸਦਾ ਅਰੂਪ
ਸਰੂਪ ਹੋਯ ਵੇਖਤਾ ਨਹੀਂ ਵੇਖਨੇਹਾਰ ਸਰੂਪ ਹੋਧ ॥ ਜੈਸੇ ਗੁਪਤ
ਅਪਾਰ ਦਰਿਆਵ ਮਾਹੀਂ, ਧੁ ਲਛੇਰ ਕੇ ਕਛਰ ਨਹੀਂ ਜਾਯੇ ਤੋਧ ॥ ੨੫ ॥

ਦੋਹਾ—ਮਮਾ ਮਾਯਾ ਰੂਪ ਹੈਂ, ਦੀਯੋ ਸੁਨਿਯੇ ਸੋਯ ॥

ਤੁਛ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਾ ਨ੍ਯਾਰਾ ਰਹੇ, ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਰੂਪ ਨਹਿੰ ਹੋਯ ॥

ਯ, ਯਾਰ ਵਹੀ ਦਿਲਦਾਰ ਮੇਰਾ, ਜੋ ਸਾਰ ਅਸਾਰ ਅਤਲਾਵਤਾ
ਹੈ ॥ ਖਸ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟ ਅਸਾਰ ਕੋ ਦੂਰਿ ਕਰੇ, ਨਿਯ ਆਪ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਾ ਅਤਲਾ-
ਵਤਾ ਹੈ ॥ ਸਭ ਜਨਮ ਅਰੁ ਕਰਮ ਗੁਣੁ ਦੋਖ ਜੇਤੇ, ਖਨ ਸੇ ਰਹਿਤ
ਨਿਯ ਰੂਪ ਲਭਾਵਤਾ ਹੈ ॥ ਧੁਘ ਜ਼ਾਨ ਅਰੁ ਘ੍ਯਾਨ ਕੀ ਯੁਕਤਿ ਸਭਾਹੀ
ਕਛੇ, ਖੁਸ਼ਾ ਘ੍ਯਾਮ ਗੁਪਤ ਗਾਮ ਅਸਾਵਤਾ ਹੈ ॥ ੨੬ ॥

ਦੋਹਾ—ਯਯਾ ਯਾਰ ਲਭਾਵਤੇ, ਨਿਯ ਆਤਮ ਕਾ ਧਾਮ ॥

ਭਾਉ ਘ੍ਯਾਮ ਕੇ ਰਾਗ ਕੋ, ਕਰੋ ਧਾਮ ਵਿਸਰਾਮ ॥

੨, ਰਮਾ ਸਭ ਠੀਰ ਮੇਂ ਸਰਵ ਸੋਧ, ਤਿਸ ਸਰਵ ਸੇ ਨਹੀਂ ਜਤ ਵਰ੍ਹਾ
ਨ੍ਯਾਰਾ ॥ ਵੈਸੇ ਦੂਧ ਮੇਂ ਧੂਤ ਅਰੁ ਤਿਲੋ ਮੇਂ ਤੇਲ ਹੈ, ਜਲ ਪਿੰਡ
ਸੇ ਨਹੀਂ ਕੁਛੁ ਭੁਫਾ ਘ੍ਯਾਰਾ ॥ ਰੰਗ ਅਰੁ ਰਾਵ ਕੀਰ ਉਮੀਰ ਮੇਂ, ਉਘ
ਅਰੁ ਨੀਘ ਮੇਂ ਐਕ ਸਾਰਾ ॥ ਗੁਪਤ ਪ੍ਰਗਟ ਮੇਂ ਧੁ ਅਰੁ ਅਘਲ ਮੇਂ,
ਨਹਿ ਆਪ ਸੇ ਮਿਲਾ ਕੋਧ ਭੁਫਾ ਪਾਰਾ ॥ ੨੭ ॥

ਦੋਹਾ—ਰਰਾ ਰੰਗ ਲਾਗੇ ਨਹੀਂ, ਰਹਤਾ ਸਦਾ ਅਸੰਗ ॥

ਸਭ ਵਿਕਾਰ ਸੇ ਰਹਿਤ ਹੈ, ਉਤਪਤਿ ਪਾਲਨ ਭੰਗ ॥

લ, લક્ષ અલક્ષ કોઈ દક્ષ જાને, નિજ આપને માહિં નહિં
પાવતા હૈ ॥ સ્થાન અરુ પાન નિત ધ્યાન કરતા, નહિં સોવતા
જાગતા ધાવતા હૈ ॥ કોઈ જીવ અરુ ઈશ અજ્ઞાન નાહીં, જખ
જ્ઞાન શમશેર હલાવતા હૈ ॥ એસા ગુપ્ત નિજ આપ નહીં માપ
અમાપ, ધ્રુવ જાપ અજ્ઞાપ નહિ પાવતા હૈ ॥ ૨૮ ॥

દોહા—લલા લાખ કિરોડ કી, પલ મેં હોવે રાખ ॥

નિજ આતમ અજ્ઞાન તેં, કરૈ જુઠ પરલાપ ॥

વ, વહી હૈ તુહીં દુક સહી કીજૈ, જૈસે સ્વપ્ન કે માહિં નહિ,
ઔર દૂજ ॥ સ્વપ્ન કે દેવકી સેવ બહુ કરતે હૈં, ખુલી આંખિ જખ
દેવ ઔર નહીં સૂઝા ॥ તેસે આપ મેં પુન્ય અરુ પાપકો કલિપ-
કર, બના દેવ કા દાસ કરે સેવા પૂજા ॥ ઉસ ગુપ્ત ગલિયાર મેં
દેવ પૂજા નહીં ધ્રુવ એક આપ હૈ કોઈ નાહિં બૂઝા ॥

દોહા—વ વાહી કો ધન્ય હૈ, દેવ લખૈ નિજ આપ ॥

દેવાદાસ ઝગડા ચુકા, તખ મિટા ભેદ કા પાપ ॥

શ, સ્વપ્ન સમાન જહાન સારા, નાના રંગ અરુપ હોય
ભાસતા હૈ ॥ ફહીં ચતુર મુખ હોકે રચે જગત કો, કહિં પાલ
સંહારકર શાસતા હૈ ॥ નિજ ગુપ્ત સરુપ અનૂપ માહીં, ધ્રુવ આપહા
રૂપ ઉઝસતા ॥ ૩૦ ॥

દોહા—શશા સકલ શરીરમેં, કરૈ આપ પરકાશ ॥

બ્રહ્મરૂપ ફૂટરચ તુંહ, નહીં જીવ આભાસ ॥

પ, ખાન અરુ પાન કે બીચ માહીં, પડા સોવતા આપકો
નાહિં જાને ॥ વાચ્ય અરુ લક્ષ કી ખબર નાહીં, તિસ વાચ્ય કે
ધર્મ કો આપ માને ॥ વાચ્ય અરુ વાચકા ધર્મ તોમે નહીં, લક્ષ
તુહી આપ કયા ના પિછાને ॥ સો ગુપ્ત ચેતન હૈ સાર તૂહીં,
અસાર જડ દેહ ધરુ ભર્મ ભાને ॥ ૩૧ ॥

દોહા—પપા ખાલી મત રહો, બરો બ્રહ્મ નિજ ખેપ ॥

કરિ ભક્તી કર્મ નિષ્કામહો, તખ છૂટે મલવિક્ષેપ ॥

स, मेरे हा साजकर स्याल हथों होत है, उस हाल हा गाज
पादी रहा जारी ॥ जज स्याल हा आवत है हाल हा हाव है,
मुज भारि बधि जदि धरे ज्यारी ॥ जल आपना देर तुह मेरे
है केसरी, हाल पीजरा तोहि धरि मोक्ष त्यारी ॥ गुप्त आतमा
अस सउप जनो प्रजनि के हाल शिर थापभारि ॥३१॥

होहा—मुखा सांभ आपतुह, अनि रहा लूलमें छव ॥

जज गुरु वेद जल पायके, समझ आपको सिव ॥

ह, होरिया आप तज ताप त्रय साध होय, न्दाय ज्ञान के नीर
अज्ञान घोषा ॥ होठ अरु वेद मे मैल भाषा कुरा, निज शुद्ध
सउप मन तार घोषा ॥ तिस तार से सारहा सारे जन्या, निज
सार हो पाया असार घोषा ॥ गुप्त मे गुप्त अरु जगत सारा
जमे, प्रज्याप मे आप गुप्त सभ मोषा ॥३२॥

होहा—हाहा देव न गृहलु है, नाहोई हाज अडाज ॥

होठ वेद अरु जेद नहीं, नुहोई लाज अलाज ॥

ह, होज अरु होज अहोस सारे, मुन नीर ज्यों पीरको
आमता है ॥ सग १५ तो अरुण आपदि है, मुठ सत्य से
जर्म उजसता है ॥ जने जर्म हो जर्म जज शर्म नहीं होत
है, जज आपना आप दुतासता है ॥ गुप्त है ह अरु धूही
गुप्त है, प्रामाण होय आप निवासता है ॥३३॥

होहा—सला छाया जगत में, आपठ अज सउप ॥

हपमा होजेहीनकी, जहं नहीं रंठ नहीं भूप ॥

ह, तीनों ही तापको साध दीना, गुरु ज्ञान कुनैन जज घोरि
प्यार्थ ॥ जन्यो अजस निहताप धिरे जप हिसा धरे सछवनी
भूरि बर बोदि पार्थ ॥ हर हाल मे भस्त हरज्याल मे भस्त,
हर आलमे भस्त अज भस्ती जार्थ ॥ है गुप्त निरन्ध्र नहीं
मोक्ष सम्बन्ध होई, हु ज्ञान अरु प्यान ही गज दार्थ ॥३४॥

होहा—त्रा तीनों हाल नहीं, नाहीं तीनों ताप ॥

तीन देह नहीं अवस्था नहीं तीन छव हा पाप ॥

ज्ञ, ज्ञान का ज्ञान अरु ध्यान का ध्यान है, ज्ञान का ज्ञान
जहान सारा ॥ एव का एव है सीव का सीव है, अज्ञ का अज्ञ
छु नाहि न्यारा ॥ अपना आप है पुन्य नाहि पाप है, जप
अजप नही भवुर आरा ॥ गुप्त से गुप्त प्रगट से प्रगट
धुव से धुव बलता अपारा ॥३६॥

दोहा-जज्ञा ज्ञान सऽप ते, नही इप अऽप ॥

सो तो अपना आप है, किसकी दीनै उप ॥

सोराठा- ठका वरुं जत्तीस, बाल सेहरकी वैतकी ॥

लिजै छन्द छत्तीस, पिओ सन्न अति प्रीतयुत ॥

१११. गजल हकीकी

छोड सज मिलन की आशा. कहां पर मिलोने जाई ॥
मिलनको के नही हूँ, आत यह समझले जाई ॥ २६ ॥ मिलन
सज है नही है, वहां पर है नही राई ॥ हमी नही कहत है
प्यारे, आत यह वेद ने जाई ॥ १ ॥ तुझे यह जर्म कर जासी,
जे बित में है बपलताई ॥ किया शक्ति नही जिसमें. ज्ञान-
शक्ति ही जतलाई ॥ २ ॥ करो हूँ विचार जल का जेर, न
पावे हूँ नही चार ॥ समझ तुझ से नही कुछ और, तेरा
यह जर्म हूँ जाई ॥ ३ ॥ छोड सज जर्म का आजार, तेरा है इप
अपरपार ॥ समझले गुप्त की बे चार, तुझे बे सैन जतलाई ॥ ४ ॥

११२. गजल

स्वर्ग पाताल अन्तर में, यह कुछ आपस निहारा है ॥
अर्थ औठिई दश हूँ बिसि, यह कुछ मेरा पसारा है ॥ २६ ॥
मैं ही दो दीन में रहता न कुछ से कुछ निहारा है ॥ मैं ही सज
और में व्यापक, नही कुछ आर पारा है ॥ १ ॥ मैं ही रयता
हूँ कुछ अज्ञात, मैं ही करता हूँ संहारा ॥ मित्या ज्यों हूँ नही
धी, सभी यह जोर सारा है ॥ २ ॥ रम्या यह ज्याल मुझही
को, सभी मेरे आधारा है ॥ जर्म में जल मत प्यारे सभी

મૂઠા બજારા હૈ ॥ ૩ ॥ મૈંહી હું સત ચિત આનંદ રૂપ, યહ કલ
આલમ બે ધારા હૈ ॥ ગુપ્ત મમ રૂપ. મેં એસે રજજૂ સે ન
સર્પ ન્યારા હૈ ॥ ૪ ॥

૧૧૩. ગજલ

બિના નિજ રૂપ કે જામેં, નહીં આરામ દારી હૈ ॥ યતન-
કર આપ કો જાનો, તભી છુટે બિમારી હૈ ॥ ૧ ॥ આપકો
માનતા કરતા, ઇસી સે દુઃખ કો ધરતા ॥ તભી ફિર જન્મતા
મરતા, ભરમ કા ફેર ભારી હૈ ॥ ૨ ॥ જીવકર આપ કો જાને,
પડે ફેર ફેદ કે ખાને ॥ લગ્યા હૈ અધો કો જાને, ભુગતા બહુત
જવારી હૈ ॥ ૩ ॥ બડ્યા અજ્ઞાન કા આજર, ધર્યા ત્રય
દેહ કા સિર ભાર ॥ ચામ મેં ફંસિ હુયા ચમાર, ચાહ ઘર મેં
ચમારી હૈ ॥ ૪ ॥ લેવે સતસંગતી કી ઓટ, લગે કિસી મુર-
શિદોં કી ચોટ ॥ તભી સખ દૂર હોવે ઓટ, રેખ કર્મોં કી મારી
હૈ ॥ ૫ ॥ હરી કી ભકતી કો ધારે, નીચ સે ઉંચ કર ડારે ॥
પાપ સખ જન્મ કે જારે, હોય શુદ્ધ બ્રહ્મચારી હૈ ॥ ૬ ॥ સુને
સત ગુરૂ કે મુખ સે જ્ઞાન, રાત દિન કરે તિસકા ધ્યાન ॥ તભી
છુટે સભી મદ માન, અવિદ્યા ઠોક જારી હૈ ॥ ૭ ॥ બજે જખ
જ્ઞાન કે બાજે, કામ અરૂ ક્રોધ સખ ભાજે ॥ શીલ સતોંધ આ
ગાજે, જ્ઞાન કી મહિમા ન્યારી હૈ ॥ ૮ ॥ મારી ગુરૂ જ્ઞાન કી
ગુપ્તી, ધરી હૈ હાથ પર મુકતી ॥ રહી નહીં જનમનકી શકતી,
તભી સોવે મુખારી હૈ ॥ ૯ ॥

સોરઠા-નિજ જાન્યા નિજ રૂપ. પાર હુયે ભવ સિંધ સે ॥

વ્યાપક બ્રહ્મ સરૂપ. છૂટિ ગયે યમ કુંદ સે ॥

૧૧૪. ગજલ

નહીં તકદીર કે આગે, કોઈ તદબીર ચલતી હૈ ॥ કરો ચહે
લાખ ચતુરાઈ એક દિન મૌત ગિલતી હૈ ॥ ૧ ॥ હુયે બડે સિદ્ધ
અરૂ સ્યાને, કાલ વહ દોનો કો જાને ॥ ચોટ લાવે થે નિશાને,

भौत तिनको ली गलती है ॥ १ ॥ वैद्य मन्वन्तरी होई, नही
 ब्रह्म रोग ही जोई ॥ कर्म भुगते है सभ कोई, ईस नीति न
 हिलती है ॥ २ ॥ दुये है जगत में औतार, दुःख तिनको
 सहै अपार ॥ और टारे कोन नर नारि, कर्म की जेलि इसती
 है ॥ ३ ॥ जिनों को काल वशि दीना, कैह अपनी में भर लीना ॥
 धोआतिन को लो देहीना, वक्त पर पड़ी गलती है ॥ ४ ॥ दुये
 आली जली मुक्ते, कि जल वह योगुना रहते ॥ क्रिये है काल
 ने मुक्ते, अग्नि बडुं और जलती है ॥ ५ ॥ योग की युक्ति
 को जाने, समाधी काल जडुं ठाने ॥ पडे है काल के पाने, पकोडा
 तेल तलती है ॥ ६ ॥ शीस पर पृथ्वी धरते, उत्पत्ती पाल
 संहरते ॥ अन्त में वेही सभी भरते, और की कड़ा पिलती
 है ॥ ७ ॥ गुप्त आत्म है अविनाशी, पडे नहीं काल की झांसी
 काल तीनों परकाशी लिखावट तिस से जिलती है ॥ ८ ॥

११५. गजल

लज्जा किस ज्वाल में जेले, तुझे क्या मस्ती छाई है ॥
 काल का छुटि गया गोला, तोप तेरे सिर पै लाई है ॥ १ ॥
 करे कल्पान्त का अलिमान, सुअल वा शाम का मेहिमान ॥ तेरा
 तो कड़ा है उनमान, जडों पर घात लाई है ॥ २ ॥ ज्ये नहि
 राना और राज, सभी है काल का आज ॥ ज्ये तिलुं लोक
 में आज द्विरी तिस की दुहाई ॥ ३ ॥ लोक अरु लोकों के पासी,
 करत है सज्जि को आली ॥ संग में रहती है काली, करे सभ
 की सज्जि है ॥ ४ ॥ जेल की आज जिन लाई, जगत औपट
 को भिजवाई ॥ दिशा है चार घरवाई, पाशा अल निशि बनाई
 है ॥ ५ ॥ चार आनी सभी गोटा, तिनों पर भारते चोटा ॥
 ज्यत नहिं छोटा अरु मोटा, चटनी सभ की बनाई है ॥ ६ ॥
 काल से वही ज्यता है, इय अपने में ज्यता है ॥ नहीं उसे
 काल का कुछ लय अविद्या धो अडाई है ॥ ७ ॥ क्रिया कर्मों का
 तिसने चूर, लज्जा है आप को भरपूर ॥ वरसता जिनके भुज पर
 नूर, मुद्रल तिसकी कमाई है ॥ ८ ॥ काल परघट को आता,

है, गुप्त हंदा न पाता है ॥ वेद सूक्ष्म बताता है, सैन तूज को
लगाव है ॥ ८ ॥

११६. गजल

गती है कर्म की रेही, बिना बोझ न लगती है ॥ अकल
कोई काम नहीं होती, वज्र पर आय जगती है ॥ १॥ धर्म
नीति को पहिचाने, अविषयत काह की जाने ॥ पकड़ के तिनको
भी ताने, सभी के पीछे लगती है ॥ २॥ दुये नल, राम, से
आदि, बुद्धिधर धर्म के वादी ॥ करे है कथा तिलक, अरु गांधी
तिनो की कला शक्ति है ॥ ३॥ लावी को जनते बीषम, अकल
जिनकी नहीं कुछ कम ॥ पडा है तिनको आके गम, सदा व्याध
ज्यों तकती है ॥ ४॥ गुप्त आत्म रहने निरन्ध, नहीं कोई कर्म
का है इंद ॥ सदा वह रहता है आनंद, लर्म से पडी गलती है ॥ ५॥

सोरठा जिनको कहे अवतार, भार उतारे जगत का ॥
तिन पर भी पडी भार और किसकी क्या चले ॥
ज्या न तिस ते किय डोनाहार जलवान है ॥
निज पह सुर्त समोय, जिस करके कारज सरे ॥

११७. गजल

दशदश केजलो दिलमें नेमके नेवरते करके ॥ शील संतोष
को धारो, काम और क्रोध परिलहर के ॥ १॥ जगत से नाता सभ
तोउ, यदो अथ ज्ञान के घोडे, ॥ निशाना नेमका जेउ, लगा
हुरि हाथ पे धरि के ॥ २॥ सभी शुभगुन के ले हथियार, करे
अथ दुशमनों पै वार ॥ लगावो अक हुरिसे तार, लोउ धस
मारये अरि के ॥ ३॥ जूते सूरमे रजुमे मरनका शाय नहीं मनमे
नहीं अलिमान है तनमे हटे संग्राम ते भरि के ॥ ४॥ शूर क्षत्री
वही जगमे चलत है वेदके भग मे ॥ आस नहीं करत है संग
मे, वही दिखलाता है तिरके ॥ ५॥ छुट्या है ज्ञान का गोला
उडा अज्ञान का टोला ॥ किया दुशमन का सिर पीला, भारता

તોપ ભરભર કે ॥પા॥ ગુપ્ત નહીં ધર્મ ક્ષત્રી કે, કહે છે ગીતામે
નીકે ॥ કાયરો કે લગે છે ફીકે, ભાગતે રણસે ડરે ડરિકે ॥પા॥

૧૧૮. ગજલ

મુઝે જગ ટોહ લિયા સારા, લાલ ઘટ માહિં પાયા હૈ ॥
ફિરા બન પરવતોં માહીં, પતા નહીં જિસકા ભાયા હૈ ॥ટોકા
મિલે જબ સત ગુરુપૂરે, લાલકા ભેદ લાયા હૈ ॥ ગિરેહ કે
ખોલકર પરખ્યા, તલી આનંદ છાયા હૈ ॥૧॥ ભયે ધનવાન
તવહી સે, જભી યહ માલ પાયા હૈ ॥ દરિંદ્ર દુખ સખ નાસે,
કંગાલી કે બહાયા હૈ ॥૨॥ નિરખિ તિસ લાલકી છવિકે, ન દૂખ
ઔર પાયા હૈ ॥ ઔર સખહી લગે નકલ, અસલી ઘટમેં ઠહ-
રાયા હૈ ॥૩॥ જિસે હમ જાનતે થે દૂર, વો પાયા સખહિ મેં
ભરપૂર ॥ ચરેં અખ મોજ અપની મેં ગુપ્ત ને એસે ગાયા હૈ ॥૪॥

૧૧૯. ગજલ

તમે સખ જ્ઞાન ચતુરાઈ, ખખર લખ મહલ કી ભાઈ ॥
ખાત યહ વેદને ગાઈ જૂટ ધસમેં નહીં રાઈ ॥ટોકા ॥ યહ નહીં યહ
નહીં હોઈસત્ય યાતે પરેસોઈ ॥ અપના રૂપ હૈ વોહી,
કુંઠ ધસમેં નહીં પાઈ ॥૧॥ જિરમેં નહીં સાધ ઔર સાધન,
નહીં કોઈ વાદ ઔ વાદન ॥ નહીં કોઈ રાધ ઔ રાધન લક્ષણ
વૃત્તિ ઠહરાઈ ॥૨॥ લખ્યા જવ આપ અવિનાશી, કટી સખ કાલકી
ફાંસી ॥ જગત ખેશક કરે હાંસી, પ્રતિ જબ ઉલટિ કર લાઈ ॥૩॥
કોટિ પરકાશ સૂરજ ચન્દ, જહાં પર આપ ગુપ્તાનન્દ ॥ દેખિ
છવિ ભયે હૈ આનંદ, જહાં કોઈ આવે ના જાઈ ॥૪॥

૧૨૦. ગજલ

ભક્તજન જગત મે આયે ધર્મ સંતોષ ધારા હૈ ॥ ખડગ
જિન ભક્તિ કા લીના, કામ ઔ ક્રોધ મારા હૈ ॥ટોકા ॥ કાટિ દઈ
આસા ઔ તૃષ્ણા, લોભકા મૂલ ફાડા હૈ ॥ નિરભય હો રહત હૈ
જગમેં સલી ડર દૂર ડારા હૈ ॥૧॥ વનજ હૈ ભક્તિ કા જિનકે
ઔર નહીં કે વેપારા હૈ ॥ આસ સખ લોકકી ત્યાગી, એક પ્રભૂકા

સહારા હૈ ॥૧॥ ઉઠતે યૈઠતે એક રામ, રહા નહીં ઔર સે કોઈ
કામ ॥ મસ્ત રહતે હૈ આઠો યામ, સદા સુખ રૂપ ધારા હૈ ॥૩॥
લગા હૈ એક હરિ સે તાર, જૂઠા સમજતે ઘરમાર ॥ ધ્રુ નિશ્ચય
ભયા જિનકા, હુમસે કછુ નહિ ન્યારા હૈ ॥૪॥

૧૨૧, ગજલ

નહીં કિસી લેષકે યોગી, નહીં કોઈ પંથ ધારા હૈ ॥ તોડ-
દિયા જગતસે નાતા, ન યહાં પર કુછ હમારા હૈ ॥૧॥ પંથ સે પંથ
અલસહિદા, પડા હૈ ભેષાં મેં વેદા ॥ હુમો યહુ દેખકર સોદા,
પંથ અપના સિંધારા હૈ ॥૨॥ ટુટી સખ મજબકી ફાંસી નવસતે
મથુરા ઔ કાશી ॥ હુમી ઉસ ધામ કે વાસી, અન્ધ નાહીં ઉજારા
હૈ ॥૩॥ ન કોઈ વર્ણ હૈ મહારા, હુમેં સખ આસર મજારા ॥
છુટી જખ જ્ઞાનકી ધારા, વહાં સખ વેદ ભારા હૈ ॥૪॥ ગુપ્તધન
પાયા હૈ જખ સે, હુમી આનન્દ હૈં તખસે ॥ મિત્ર કા ભાવ હૈ
સખસે, દશોં દિશિ મેં ઉજારા હૈ ॥૫॥

૧૨૨. ગજલ

ધુતી જિન વાસના મનકી, વહી અવધૂત જગમાહી, ચરત હૈ
મૌજ અપની મેં, વિધી નિષેધ કછુ નાહીં ॥૧॥ કટા સખ મોહ
કા ફંદા, જાન્યા જખ આપકે તાંઈ ॥ જગત મેં કો નહીં ધંદા
અતિ જખ લીનહો જાઈ ॥૨॥ કટી સખ આસકી ફાંસી, લખા
જખ આપ અવિનાશી ॥ નહીં કોઈ દાસ અરુ દાશી નહીં ધન
માલ પ્રભુતાઈ ॥૩॥ ખસે નિજ રૂપમેં જાઈ મહુજખ દૂકાન સખ
ઢાઈ ॥ જિનહેં શંકા નહીં રાઈ, કહીં સો આવે ના જાઈ ॥૪॥ તત્વ
જિનકો લખ્યા એસા, ન રખતે કૌડી અરુ પૈતા ॥ ગુપ્ત ધન
પાયા હૈ એસા, ગોવંધન ખચે અરુ ખાઈ ॥૫॥

૧૨૩. ગજલ ।

સોઈ હૈ ફકર જગ માહી, ફિર જિન મૂલ સે ખોયા ॥
ઉલટ કર સર્વ સે વૃત્તી, અપને આપ કો જોયા ॥૧॥ ફે ફરકે
સદાહી ફાકા, તોડા અજ્ઞાન ગઢ વાંધા ॥ નહીં કોઈ સાક અરુ
સાખા, સભી ઉરડાંર કે સોયા ॥૨॥ કે કરે ફરકે કાટ દઈ આસા

ઉપજા નિરવેદ જો ખાસા ॥ ક્રિયા હૈ બ્રહ્મ મેં ખાસા, હોના સો
આનિ કર હોયા ॥૨૧॥ રે કરકે રહમ કો ધારા, કામ ઔ ક્રોધ
સખ મારા ॥ મૂલ સખ જગત કા જરા, જીવ કો બ્રહ્મ મેં પોયા
॥૩૧॥ વિધિ નિષેધ નહીં જિનમેં, ચિચરતે મૌજ અપની મેં ॥ ધ્રુવ
પાયા ગુપ્ત તનમેં, મૈલ અજ્ઞાન સખ ધોયા ॥૪૧॥

૧૨૪. ગજલ ।

મિલો દિલદાર સે પ્યારે, જહાં ઉલકત હો રહને મેં ॥૨૬૧॥
તજો સખ જગત કી ચારી, કરો સ્વયં સરૂપ કી ત્યારી ॥ નહીં
તો હોયગી ખવારી, વિધોગે તીર પૈને મેં ॥૨૧॥ જિનોં કો કહતે હૈ
મેરા, તિનોં મેં કો નહીં તેરા ॥ હોગયા જંગલ મેં ડેરા, સમઝ
દુક અપને જોહને મેં ॥૨૧॥ સમઝ દુક આપ અપને કો, તજો સખ
જગત અપને કો ॥ લગો યહ જાપ જપને કો, આજ દુક
મેરે કહને મેં ॥૩૧॥ સજન પરિવાર સુત દારા, ઉસી વે રોજ હો
ન્યારા ॥ વજે શિરકાલ નકારા, દેખ દુક મન કે અયતે મેં ॥૪૧॥
ન કિજે રાજ કી મસ્તી, કિ સિર પર મૌત જો હંસતી ॥ છુટે
સખ ઘોડા અરુ હસ્તી, ઐઠ ચલ કાઠ મ્યાને મેં ॥૫૧॥ પલક મેં
છૂટિ જા ડેરા,....હુકમ કોઈ માને ના તેરા ॥ હો જાના ગુપ્ત કા
ચેહરા, યહી કિસ્તી તિરાને મેં ॥૬૧॥

૧૨૫. ગજલ

જરા દુક ખોજ તન મન કો, તુહી હૈ આપ અવિનાશી
॥૨૬૧॥ જિસે તું જાનતા હૈ દૂર, સોઈ હૈ સકલ મેં ભરપૂર ॥
સમઝ દુક વહી તેરા નૂર, કરે હૈ કિસકી તલ્લાશી ॥૨૧॥ બસી
હડ ચામ કી નગરી સોઈ જડ જાન તૂં સગરી ॥ પટક દે ભરમ
કી પગડી, તુહી હૈ સખ કા પરકાશી ॥૨૨॥ તુહી હૈ રામ ઔકૃષ્ણ
તૂ હી હૈ બ્રહ્મા ઔ વિષ્ણુ ॥ તુહી વહ ખોજતા જિસ નૂં તુહી હૈ
ઈશ કૈલાશી ॥૩૧॥ કહા દુક માનલે મેરા, તજો સખ દૂર ઔ
નેરા ॥ બહુરિ નહીં હોયગા ફેરા, છુટે ચમરાજ કી ફાંસી ॥૪૧॥
જિસે તૂં ખોજતા જગ મેં, સોઈ ભરપૂર હૈ સખ મેં ॥ ભુલા
ક્યા જગત કે મગ મેં, ફિરે ક્યા દ્વારિકા કાશી ॥૫૧॥ નહીં તલ-

માસે સૂરજ ચન્દ, તુહી હૈ આપ ગુપ્તાનન્દ ॥ જહાં પર કો નહીં
દુખ દ્વન્દ, હોજ ઉસ ધામ કા વાસી ॥૬॥

૧૨૬. ગજલ ।

બિના તન આપ તન ધારી, ઉધર ક્યા હૈ ધધર દેખો ॥
સભી સૃષ્ટી હૈ દૃષ્ટી સે, ચહેં તુમ વેદ કો દેખો ॥૭॥ જલ્લી
દૃષ્ટી કો ફેલાવે, તભી સૃષ્ટી નજર આવે ॥ ફિરે દૃષ્ટી નસે સૃષ્ટી
ચે કૌતુક આપકા દેખો ॥૮॥ જો ચેતન ચેતતા જાવે, જિસે ચેતે
સો બન જાવે ॥ સમાવે આપકે માહીં, સ્વતઃ નિજ રૂપ કો
દેખો ॥૯॥ સર્વ વ્યાપી હૈ પર માતમ, ઉસી કો કહતે હૈં આતમ
શુદ્ધ આનન્દ અવિનાશી, કિ અનુભવ કરકે તુમ દેખો ॥૧૦॥ ગુપ્ત
જાને સે હો મુક્તી, બતાતે સંત યોં યુક્તી ॥.....ધ્રુવ અન-
મોલ અવસર કો, નિગ્રહ કો ખોલ કર દેખો ॥૧૧॥

૧૨૭. ગજલ ।

ઉદય હુઆ જ્ઞાન કા ભાનૂ, ઉડા અજ્ઞાન અન્ધિયારા ॥
સમાધી શુદ્ધ મેં લાગી. ભયા ઘટ માહિં ઉજિયારા ॥૧૨॥ દેખ્યા
નિજરૂપ તમ્માશા, ભરમ કા ભૂત જગ નાશા ॥ મિટા શશિ મન
કા પરદાશા, છિપગયે ઇન્દ્રિગણ તારે ॥૧૩॥ છિપે શિશુમાર પંચોં
પ્રાણુ, છુટ્યા સખ દેહ કા અભિમાન ॥ ભઈ હૈ તસ્કરોંકી હાન,
કામ ઓ ક્રોધ સખ મારા ॥૧૪॥ કરતે હૈં ભેદ કા નિત ગાન.
સોઈ ઉલ્લુ કો નિશિ મેં જાન ॥ ન હોવે રાત માયા હાન, ધરા
શિર ભેદ કા ભારા ॥૧૫॥ અંધેરી રાત્રી મંઝાર, જગાવે વેદ ચૌકી-
દાર ॥ સમજલે ગુપ્ત કી યહ ચાર, સોવે ફિર ચૌકી રખવાર ॥૧૬॥

૧૨૮. ગજલ ।

દિવાલી દેખલો દિલ મેં, કિ દિપક જ્ઞાન કા બાલો ॥ મિટા
કર આશ ઓ તૃષ્ણા, કામ અરુ ક્રોધ કો જાલો ॥૧૭॥ મૈલ વિશ્લેષ
સખ ધોવો, સફાઈ મહલ કી કિલ્લે ॥ ગલતી ઇસમેં નહીં દીજે
મૈલ સખ મહલ કા ગાલો ॥૧૮॥ કરો અન્તઃ કરણ દીપક, પ્રીતિ
કે તેલ કો ભરના ॥ વત્તી અખ ગૈરે નિષ્કર્મા, હોય મન્દિર મેં
ઉજિયાલો ॥૧૯॥ કરુણા મૈત્રી મુદિતા, કરેં મન્દિર મેં શુભ ગાના ॥
મિટૈ સખ આના ઓર જાના, શીલ સન્તોષ કો પાલો ॥૨૦॥ ઇસી

કાયા દિવાલી મેં ગુપ્ત એક ગાવર્ધન પૂજા ॥ મિટા કે ભાવ સખ
જન, તિમિર અજ્ઞાન કો ટાલો ॥૪૦॥

૧૨૯. ગજલ ।

જગત સે તોડ ચારી, લગ્યા દિલવર મેં દિલ જિનકા ॥
કાન દેકર સુનોં પ્યારે, કહુત હું હાલ સખ તિનકા ॥૪૧॥ જૈસે
આશિક હુયે મજનૂ ધરક લૈલી સે લાયા હૈ ॥ તલ્લી લૈલી કો
પાયા હૈ, ફિર નહીં કીન જલને કા ॥૪૨॥ ધરક અખ કહુત
હક્કાની, ખાત સખ લોક મેં જાની ॥ પિતા કી જિસને નહીં
માની, કિયા હુટ આપને મનકા ॥૪૩॥ મુસિખત કો સહા ભારી ॥
ટેક નહીં અપની ટારી ॥ અસુર ને ખડગ કી મારી કટા નહીં રોમ
તનકા એક ॥૪૪॥ માત કા વચન સુન મનમેં લગી ધુવાલ સે તન
મેં ॥ રાજ તજકર ચલે વન મેં, મજા તિસ કો મિલા વન
કા, ॥૪૫॥ ધરક મંસૂર ને કિયા, અનલહક માહીં મન દીયા ॥
શીશ સૂલી પર ધર દીયા, સુધર ગયા કાજ સખ ઉનકા ॥૪૬॥
ફરિદા કૂપ મેં લટક્યા માંસ સખ કાગિલોં ઝટક્યા ॥ ઉસી દિલ-
દાર મેં અટક્યા, લાલ જિસે ઠાયા દરશન કા ॥ ૪૭॥ હુયે ધક
શાહ સુલતાની, તજ થી વલખ રજવાની ॥ પિયા જિન ધરક
કા પાની, નશા સખ તજ દિયા ધનકા ॥૪૮॥ દિલ લગા ધામ
ધુન અરુ વામ, ચહે ફિર મુક્તી હી કો ધામ ॥ ગુપ્ત સુમિરે
નહીં નિષ્કામ, ખના હૈ દાસ સખ જન કા ॥૪૯॥

૧૩૦. ગજલ ।

ફૈલાયા જાલ માયા ને, કોઈ સમજે ખિલારી હૈ ॥ જૈસે
ખાજર કે માહીં ગાયખ ખાજ પસારી હૈ ॥૫૦॥ કોઈ ધન ધામ
મેં ભૂલે, કોઈ ખડગેર મેં ફૂલે ॥ કોઈ મદ કામ મેં ઝૂલે, કહી
મુત બ્રાત નારી હૈ ॥૫૧॥ કોઈ તો કર્મ કે સાજ કોઈ હૈ ભક્તિ
મેં રાજ ॥ કોઈ પંડિત કોઈ કાજ કરે ઉપદેશ ભારી હૈ ॥૫૨॥
કોઈ તો નિગમ આગમ મેં, કોઈ તો ગ્રહણ ત્યાગન મેં ॥ કોઈ
દિન રાત જાગન મેં, કિસી કો ધૂની જારી હૈ ॥૫૩॥ કોઈ તપ દાન
કો કરતે, કોઈ તો મોજ મેં ચરતે ॥ કોઈ કાશી મેં જા મરતે
ધારના એસી ધારી હૈ, ॥૫૪॥ કોઈ નિર્ગુણ મે, અટકે હૈ ॥ કોઈ

સગુણ મેં લટકે હૈં । કોઈ દોનોં સે સટકે હૈં, તમાશા ખેલ
જારી હૈ ॥૫॥ ક્યૈ કોઈ જ્ઞાન કો દિન રાત, કરહિં વેદાન્ત
કી બહુ બાત ॥ ધ્યાના કરૈ સન્ધ્યાઓ પરભાત, નૈનન
સે નીર જારી હૈ ॥૬॥ કહું કબ તક યહ જૂઠા ખ્યાલ,
કોઈ ગાતે હૈં દે દે તાલ ॥ કોઈ કપડે કો રંગતે લાલ
કોઈ તો બ્રહ્મચારી હૈ ॥૭॥ ગુપ્ત પાયા નહીં ખોયા કહી જગા
નહીં સોયા । નહીં હંસતા નહીં રોયા, નહીં હલકા ન ભારી
હૈ ॥૮॥

૧૩૧. હોલી ।

હોલી રંગ મહલ મેં હોતી, કહા નીંદ ભરમ કી સોતી ॥૧॥
યા હોલી કા ખેલ અજબ હૈ, દેખત મનકો મોહતી ॥ કોઈ કોઈ
ખેલત મુઘર સયાને, મૂલ અવિદ્યા ખોતી ॥ ચિમક રહી આતમ
જોતી ॥૨॥ ઇસ હોલી કી રંગત ન્યારી, પાપ જનમ કે ધોતી ॥
મૂરખ કો પંડિત કરૈ છિન મૈં. પતરા પકના ન પોથી ॥ નહીં
પાતી નહિં ખોતી ॥ ૨ ॥ બારોં માસ વસન્ત ઉડત હૈ, છઃ
ઋતુ હોલી હોતી ॥ તાકી મહિમા વેદ કરત હૈ, કહિ સમજાવત
નેતી ॥ જલક રહા આતમ મોતી ॥ ૩ ॥ ઇસ હોલી કો જો નર
ખેલત ફગવા ઉસકો દેતી ॥ ગુપ્ત જ્ઞાનકી હોલી મચી હૈ. ઓર
સખ હોલી ધોથી ॥ કરત કદા નેતી અરુ ધોતી ॥ ૪ ॥

૧૩૨. હોલી ।

લખિ આતમ રૂપ અપારા, હોલી ખેલિ હુયે બહુ પારા ॥૧॥
યાગ્યવલ્ક્ય જનકાદિક ખેલે, લાગ્યા નહીં લગારા ॥ જ્યોં જલ
કમલ રહે જગ માહીં, છીંટ લગ્યા નહીં ગારા ॥ સભી કામાદિક
જારા ॥ ૧ ॥ બામદેવ શુકદેવ ખેલારી, વચન પિતા કા ટારા ॥
ધારા વૈરાગ જગત સે ઉખરે, લેકર જ્ઞાન સહારા ॥ ઓર હુયે અનન્ત
હજારા ॥ ૨ ॥ ઇસ હોલી કા યહી મહાતમ, જો ખેલા સો તારા ॥
હિંચ અરુ નીચ ધની અરુ કંગલા, હલકા ગિનતી ન ભારા ॥ પાર
હુયે ભવ કી ધારા ॥૩॥ ગુપ્ત ભાગ મેં હોલી મચી હૈ, નાના રંગ
પસારા ॥ વિવેક વૈરાગ કી કેસર ધોરી, ફૂલી જ્ઞાન ફૂલવારા ॥
મોક્ષ એક ફૂલ હજારા ॥૪॥

૧૩૩. હોલી ।

એકે કૃષ્ણ આતમા હોરી, બનિતા ધરિ રહી બરજોરી ॥૧૩૩॥
 અન્નાદિક અન્ન આરામ વૃષ્ટા, એસી કેસર ચોરી ॥ ભરિ પિયકારી
 વિષયન કી મારી, બુદ્ધિ ભઈ હૈ હોરી ॥ જ્ઞાન મુખ મુરલી ચોરી
 ॥૧૩૪॥ કૃષ્ણ આતમા ગદિધર પકડો, દહે નચાવે હૈ દોરી ॥ ધામ
 કા કાલ નૈન ગિય ગાલા, ચુંદરી ચાહ ઉઠોરી ॥ નેહ કી નાથ
 નેકોરી ॥ ૨ ॥ તુમ કનની મેં આરા ભોરા, નિત ઉઠ માહિં કોરી ॥
 પૂરખતા પોતાખર ચોરા, અમ બની સખ ચોરી ॥ મેહિં લાયત
 બહિં ચોરી ॥ ૩ ॥ ગુપ્ત ગલીમેં પકડેં તુમકો ક્યા ફિરતી હો
 રોરી ॥ તલ્લપ માખન કો ખાલિ, માન મરકિયા ઠોરી ॥ તોર
 નથ દુલરી તોરી ॥ ૪ ॥

૧૩૪ હોલી ।

હોલી બ્રહ્માદિક કો ગચી, ઝોર સખ હોલી ધચી ॥ ૧૩૪ ॥
 આર વેદ કા મહાપ રોધા, બાત કહી જિન સાચી ॥ પુરુષ પ્રકૃતી
 બેલન આવે, ઉઠિ પર ફિરતી નાચી ॥ પુરુષ સખ રચના બચી
 ॥૧૩૫॥ મહાત્મ્ય અન્ન હંકાર માયા, સાતોં કી ઠોલક ખાંચી ॥
 પંચમૂલ દસ ઇંદ્રી મન લે, તાન લગાઈ આઢી ॥ તિનોં કે સંગ મેં
 રાની ॥ ૨ ॥ પુરુષ અસંગ દેખન લાગા, તાકી બુદ્ધિ ખાંચી ॥
 દેખ તમાશા આપકો ભૂળા, માનત હૈ કૃત બતી ॥ એસી વહ
 હોલી માચી ॥ ૩ ॥ બુદ્ધિ કા ધર્મ આપમેં માનત, થોં ભુગતે
 ચોરાચી ॥ ગુપ્તરૂપ પરગર જમ હોવે, અન્નકાર ઉઠિજસી ॥ ભાવ
 નેમે કીમ પરાચી ॥ ૪ ॥

૧૩૫. હોલી રંગપંચમી

જમ રંગ પંચમી હોવે, પાંચો નારી રંગમેં લિગાવે
 ॥૧૩૬॥ સત સંગતિ મેં રંગતિ લાગી, તામેં પકડિ કુબોવે ॥ મન
 સંસિયા કો ખૂબ રિઠાવ, પાપ જન્મ કે ખોવે ॥ દાગ સખ દિલકે
 ધોવે ॥ ૧ ॥ દર સિંગાર વૈરાગ જ્ઞાનકા તત કી તાલ સમોવે ॥ સાધન
 મગદિ અગત્યત આજે ॥ મૂલ આપના જોવે ॥ ફિર નિરભય
 હોઈ સોવે ॥ ૨ ॥ અહં બ્રહ્મ વહ ભરિ પિયકારી, રાગ અખગિત
 હોવે ॥ આપ મેં વસિયા સોઈ હૈ સંસિયા ॥ ઝટ વસંત મેં સોઈ

તાર નિજ અંતર પોવે ॥૩૧॥ વિધિ નિષેધ કી ધૂલિ ઉડાકે, પુન્ય
પાપ નહીં જોવે ॥ ગુપ્ત ગલીમેં હોલી ખેલત ॥ હોના હો સૌધ
હોવે ॥ અહં પરિછિન્ન વિગોવે ॥૩૨॥

૧૩૬. હોલી ।

મન રસિયા ને હોલી મચાઈ ॥ એસી રચના અજળ્ય રચાઈ
દ્રષ્ટા દર્શન દૃષ્ય રચેજન, ચેતન સત્તા પાઈ ॥ દેશ અરુ કાલ રચી
સખ વસ્તુ, જીવ રુ ઈશ ખનાઈ ॥ અવિદ્યા માયા લગાઈ ॥૧॥ નાના
વિધિકે કર્મ ખનાયે, પુન્ય રુ પાપ પશારા ॥ જનકે કૃત સુખ દુખ
દો કીના ॥ સ્વર્ગ નર્ક ભુગતાઈ ॥ એસી યહ નીતિ ચલાઈ ॥૨॥
જ્ઞાન ધ્યાન અષ્ટાંગ યોગરુ, સાધન સાધ્ય સિધાઈ, ત્યાગ વેરાગ
દેવ અરુ પૂજા કર્મકી કાલુપ લાઈ, ફિરી હૈ કાલ દુહાઈ ॥૩॥ જો
કછુ કૃત ક્રિયા સખ મન કા, આતમ મેં નહિં કાહી ॥ દ્રષ્ટા દૃષ્ય
કલી નહિં હોતા ॥ ગુપ્ત જ્ઞાન લખિ લાઈ ॥ આત યહ ખેદો
ને ગાઈ ॥૪॥

૧૩૭. હોલી ।

અખ વસન્ત પંચમી આઈ, યામેં લોજે રંગ ચઢાઈ ॥૧॥
પંચ ભૂતકી રચના રચિ યહ માનસ દેહ ખનાઈ ॥ તાસ સમાન
ઓર નહિં દેહા, દેવન કે મન લાઈ ॥ કરો યામે સુઘડ કર્માઈ
અન્તઃ કરણ કા મૈલા કપડા યાકી કરો સફાઈ ॥ નિર નિરંતર
ભાકિત મસાલા સાધન શિક્ષા ખનાઈ ॥ મૈલ સખ ઘોઈ વહાઈ ॥૨॥
સત ગરુ રંગિયા સે રંગ ચઢાયો, પૂરી દેકે ગાઈ ॥ સરથા
કી દેગ મેં જ્ઞાન રંગ ભરિયા મેં દેહ હુખાઈ ॥ ચઢે કુછ જખ
રોશનાઈ ॥૩॥ ગુપ્ત ગલી મેં ફાગ મચાવો, કરિકે નિરભેતાઈ ॥
ફાગન કે દિન સુખસે ખીતે, હોલી અવિદ્યા જલાઈ ॥ ભર્મ કી
ધૂલિ ઉડાઈ ॥૪॥

૧૩૮. હોલી ।

ઋતુ આઈ વસંત મુહાની, જામેં ફાગન ખેલતે જ્ઞાની ॥૧॥
જીવન મુક્તી ખજવત ખાજે રાગ ગાવેં બ્રહ્માની ॥ વૃત્તી વ્યાપતી
તાલ લગાવે નૂર ધ્વજ ફહરાની ॥ છુટ્ટે દુખ ચારેં ખાની ॥૨॥

આપ રૂપ કે રંગમે રાતે લાલ રહા નહીં હોની ॥ નાચત નાચ
કર્મ અનુસારી ॥ કુશલ મિલા નિરવાની ॥ છુટી સખ ખેંચાતાની
॥૨૧॥ સો રસિયા આનંદ મેં બસિયા જિન યહ હોલી જની ॥
કાલ નગારે કે સિરમે ડંકા, જગદી ધુલ ઉડાની, જ્ઞાન પિથકારી
તાની ॥૩૧॥ ગુપ્તરુ પરઘટ ખેલ કરતે હૈં જિનકી અકથ કહાની ॥
લોક વેદકા ભય નહીં માનત મૂલ અવિદ્યા ભાની ॥ નહીં કોઈ
તાહીં સમાની ॥૪૧॥

૧૩૯. હોલી ।

હોલી જલગર્ધ અવિદ્યા સારી ॥ રાખે નિજ ભક્ત મુરારી
॥૧૬૬॥ ભક્તોં કે કાજ સાજ બહુ સાજે, તિનકો લેત ઉભારી
॥ યાહી ટેક જાકે પરપરા સે નર હો વો ચાહે નારી ॥ કરે ભવ
જલ તેં પારી ॥૧૧॥ જૈસે જન પ્રહલાદ કો રાખ્યા હોલી ભધ
જલ છારી ॥ હિરનાકુશ અજ્ઞાન કો મારા ખંભ દિયો જિન
ફારી ॥ દેહ નરસિંગ કી ધારી ॥૨૧॥ જખ પ્રહલાદ અવિદ્યા હોલી
તૃષના અગિનિ પજારી હિરન કશિપ મૂલી અજ્ઞાન હૈ ॥ નરસિંહ
જ્ઞાન કટારી ॥ ઉદર તાકો દેત વિદારી ॥૩૧॥ કામ કોધ સખ ભયે
હૈં પહુરવા મારો રાવ બલ ભારી ॥ ગુપ્તરુ પરઘટ એક લખ્યો
જખ એસી ધરના ધારી ॥ સોઈ હૈં સુઘડ ખેલારી ॥૪૧॥

૧૪૦. હોલી ।

લાગી ગુપ્ત જ્ઞાન કી ગોલી, સખ ઉડી ભરમ કી ટોલી ॥
ટેકા ॥ સત ગુરુ ભેદીને ભેદ બતાયા, બુદ્ધિ બંદૂક ટોલી ॥ ભકિત
કરમ સે મંજન કીની, સાર શબ્દ સે ખોલી ॥ હુઈ હૈં તખ અન
ખોલી ॥૧૧॥ અહં બ્રહ્મ યહ રંજક ભરીકે, મનકે કાંટે તોલી ॥
મત્તી નિરંતર બાંધિ નિશાના, શબ્દ અહં કો ખોલી ॥ કરમ કી
ઉડિ ગઈ ટોલી ॥૨૧॥ કામાદિક મિરઘા સખ ભાગે, તૃષ્ણા હિરની
ટોલી ॥ ઋતુ વસન્ત આઈ જીવન મુક્તી, ખેલત ભર ભર ટોલી ॥
કર્મ કી ઉડરહી રોલી ॥૩૧॥ ગુપ્ત ગલીમેં જો નર આવે, પાવે
વસ્તુ અનખોલી ॥ વેદ પુરાન કાવ્ય અરુ કથની, ચે સખ લાગત
ખોલી ॥ દૂરિ ગઈ અન્તર ચોલી ॥૪૧॥

૧૪૧. હોલી ।

ઘટ અંદર હોલી મચાઈ, કહા દેખત બહાર જઈ ॥૧૬૬॥
 જાત્રાત માહિં વિધિ જૈલે હોલી જૈઠિ નયન કે માહિં ॥ દશધંદ્રિય
 વનિતા લિયે સંગમેં, ભોગત ભોગ અઘાઈ ॥ કરૈ અપની મન
 ભાઈ ॥૧૭॥ સ્વપ્ન માહિં તેજસ જૈલે હોલી, કંઠ દેશ મેં જઈ
 સૂક્ષ્મ ભોગ મનો મય વાચા, સંગ લિયે મન ભાઈ ॥
 એસી રચના રચવાઈ ॥૧૮॥ સુખપતિ માહિં પ્રાણ જૈલે હોલી,
 પુરીતત્વ મેં જઈ ॥ અજ્ઞાન કી વૃત્તિ લિયે સંગ વનિતા, સુખ
 કા ભોગ કમાઈ ॥ રહાતિસ માહિં ભુલાઈ ॥૧૯॥ ત્રીન દેશકી
 હોલી જૈલ કર, ચૌથે દેશ મેં જઈ ॥ ઔર સખ હોલી લગી
 હૈ હલકી, ચૌથી સમાધી લગાઈ ॥ સોઈ હોલી સુખદાઈ ॥૨૦॥
 ચતુરથ જૈલી ગયો પંચન મેં તુરિયા તીત કહાઈ ॥ મનવાની
 કી ગમ્ય નહીં જહુ, સો હમરે ભાઈ મનો ગૂંગા ગુડ
 ખાઈ ॥૨૧॥ બાહર કી હોલી સખ તજકર, ભીતર દેખહુ
 જઈ ॥ ગુપ્ત હોલી હોય ઘટકે અંદર જૈલત સુઘર જૈલારી ॥
 ખાત તોહિં કહિ સમુઝાઈ ॥૨૨॥

૧૪૨. હોલી ।

હોલી જૈલત સુઘર જૈલારી, કહા જૈલત મુઠ અનારી ॥૨૩॥
 મલ વિશ્લેષ દોષ નહીં જકે, વિષય વાસના જારી ॥ નિત્ય અનિત્ય
 વિવેક કિયો જિન, વિષ સમ જની નારી ॥ ચાહ ચિંતા સખ ટારી
 ॥૨૪॥ સમ દમ શ્રદ્ધા સમાધાન જૈ, ઔર ઉપરતી ધારી ॥ દ્વંદ્વ
 ધરમ સખ સહન કિયો હૈ, સહી હૈ તિતિક્ષા ભારી ॥ સોઈ હોલી
 કા અધિકારી ॥૨૫॥ અસંભાવના દુરી કરી સખ, સરવન મનન
 વિચારી ॥ વિપરીત ભાવના કી ધૂલ ઉડાઈ, નિદિધ્યાસન સે જારી ॥
 ખાત જિન એસી વિચારી ॥૨૬॥ તત્ત્વ પદકા શાધન કીના, માયા
 અવિદ્યા ડારી । અસિપદ માહીં આસન મારા, લાગી સમાધી
 સુખારી ॥ ચઢી હૈ બ્રહ્મ ખુમારી ॥૨૭॥ જીવન મુક્ત ભયે યા
 જગમેં, વિચરત ઇચ્છા ચારી ॥ લોક વેદ કી શંકા ન માને વસિકર
 પાંચો નારી ॥ એસી નિજ ધારન ધારી ॥૨૮॥ ભોગ અદૃષ્ટ અદૃષ્ટ

ભયે હૈ, વ્યાપક રૂપ મંઝારી ॥ ગુપ્ત રૂપકો પ્રાપ્ત હોકર, કબજું
ન હોય દુખારી ॥ જિન હોલી ખેલી હૈ સારી ॥૬॥

૧૪૩. હોલી ।

દેખો દુક હોલી કા અજબ તમાશા, જાસે હોય અવિદ્યા
કા નાશા ॥ ૧ ॥ એસી હોલી તોહિં ખેલાડી, દૂરિ હોય સખ
આસા ॥ ચંચલ મનુવાં અચલ હોય જાતે, દૂરિ જાય ભવ પાસા ॥
હોય ઉર જ્ઞાન પ્રકાશા ॥ ૨ ॥ સાહે તીન કિરોડ જાપ હોય, એક
એક હી સ્વાસા ॥ તિનકે અંદર સુરત સંભોવો, રોમ રોમ પર-
કાશા ॥ પાવે નિજ રૂપ ખલાશા ॥ ૩ ॥ સોકો લેકર ચલત
નાભિસે, હુંકો લેકર આવે ॥ દોનોં પદકા અર્થ વિચારો, જવ
યાકા ફલ પાવે ॥ હોવે સુખ રૂપ નિવાસા ॥ ૪ ॥ સો પદ બ્રહ્મ
રૂપ કરિ જાનોં, હું પદ આપ પિછાનો તત્ત્વમસિ કર એક રૂપ હૈ,
ભાગ ત્યાગ કર માનોં ॥ સમજ યહુ વેદોં કા આશા ॥ ૫ ॥
અહું બ્રહ્માસ્મિ વાયુ ચલાઈ, જ્ઞાન અગ્નિ પ્રગટાઈ ॥ મુલ સહિત
તન મન સખ હોલી, ઠોકિ ઠોકિ કે જલાઈ ॥ હુયો ફિર અગ્નિ
કા નાશા ॥ ૬ ॥ જો કોઈ હોલી ખેલિ ચુકા હૈ, ગુપ્ત ગલી કે
માહી ॥ જ્ઞાન ગુલાલ કે ખરસત બદલા, કર્મ કે કીચ બહાઈ ॥
કટા સખ કાલ કા ફાંસા ॥ ૭ ॥

૧૪૪. કુણડલિયા ।

નિજ સરૂપ અજ્ઞાનતે, દીખત હૈ બહુ ભેદ ॥ સ્વરૂપ જ્ઞાન
કે હોતહી, મિટિ જાવે સખ ખેદ ॥ મિટિ જાવે સખ ખેદ, વેદ યોં
નિતહી ગાવે ॥ મૃગતૃષ્ણા જગ નીર, સુનકર ભેદ મિટાવે ॥ લખ
નિજ ગુપ્ત સરૂપ, કુપ જગ ગિરો ન ખ્યારે ॥ અવસર ચૂકે મૂકે
ફિરે વિષયન કે મારે ॥

૧૪૫. કુણડલિયા ।

ભેદ જો પંચ પ્રકાર કા, તાકો કરું બખાન ॥ જીવ ઈશ કા
ભેદ, યક ઈસ જગત કો જાન ॥ ઈસ જગત કો જાન, તીસરા
જીવે જીવન કા ॥ ચતુરથ ભેદ પિછાન, જીવ અરુ જડ હૈ તિનકા ॥
પંચમ ભેદ જડ જડન કો, યહી ભેદ આકાર ॥ ધ્રુવ સખ જી
ભેદ જખ, તખ હોય ભેદ સે પાર ॥

૧૪૬. કુણ્ડલિયા ।

બિના ભેદ જોને બિના, છુટે ન ભેદ કો પંથ ॥ શ્રુતિ સિદ્ધાન્ત
યહ કહત હૈં, ઔર કહે મુનિ સંત ॥ ઔર કહે મુનિ સંત, ભેદ
કો અન્ત જો કીજે ॥ ભેદ પાપ કો મૂલ, તાસુ કો ન ઉર મેં
દીજે ॥ ગુપ્ત રૂપ જખહી લખે, છુટે ભેદ કી બાત ॥ ભેદ જો
પાંચ પ્રકાર કા, તાપર મારે લાત ॥

૧૪૭. કુણ્ડલિયા ।

અનાદિ વસ્તુ કો કહત હૈં, તિનકો સુન અખ ભેદ ॥ બ્રહ્મ
ઈસ જીવ અરુ માયા, સમ્બન્ધ ભેદ કહે બેદ ॥, તિનમેં કછુ
ભેદ બતાયા ॥ બ્રહ્મ હૈ અનન્ત અનાદિ, પાંચ ચે શાન્તહિ ગાયા ॥
કહ ગોવર્ધન વિચાર; અનાદિ વસ્તુ ગાર્હ ॥ ગુપ્ત બાત ભઈ
પ્રગટ કુણ્ડલિયા દેખી ભાર્હ ॥

૧૪૮. કુણ્ડલિયા ।

ભૂદયો જખ નિજ આપકો; તખહી ભયો કંગાલ ॥ અપની
સુધ લાવે નહીં, ઘર મેં હૈ સખ માલ ॥ ઘર મેં હૈ સખ માલ,
ખ્યાલ દૂજે કા મેટો ॥ ગુપ્ત રૂપ કો પાય, પલંગ પર સુખ સે
લેટો ॥ ધ્રૂવ નિશ્ચય યહ જાન, શહનપતિ શાહ હૈ તુહી ॥ લીનો
આપ નિહાર, વસ્તુ હૈ જ્યોંકી જ્યોંહી ॥

૧૪૯. કુણ્ડલિયા ।

લોટ લગાઓ પલંગ પર, કરકે સૂધે પાંચ ॥ આસન કીજે
ફેર કી ફેર ન એસા દાવ ॥ ફેર ન એસા દાવ નાવ મેં ચઢ
કર બેઠો ॥ હોળ પટલેપાર; ગિરેહ સે દમડે કાટો ॥ જખ પામે
ગુપ્તાનન્દ તહાં કીજે વિશ્રામ ॥ ધ્રૂ નિશ્ચય તખ ભયો. સોવતે
ચદર તાન ॥

૧૫૦. કુણ્ડલિયા ।

જેસે હમ સોચે પલંગ પર, એસા સોવો સવ કોચ ॥ લાયા
ગલીયા જ્ઞાન કા, હોની હોય સો હોય, હોની હોય સો હોય
મોહ વ્યાપે નહિં માયા ॥ નિત પ્રાપત અપના રૂપ, નહીં બોયા

નહીં પાયા ॥ ગુપ્ત ગલી મેં આય કે, નિરભય ભયે આનંદ ॥
ધૂ નિશ્ચયકર સેવતે કોઈ કે વિરલા સાધ ॥

૧૫૧. કુણ્ડલિયા ।

ચિદાકાશ નિજ રૂપ મેં, નહીં કાલ નહિં દેશ ॥ પાંચ તત્ત્વ
ગુણ ત્રીન કા, જામેં નાહીં લેશ ॥ જામેં નાહીં લેશ, એક નિર-
જન રાયા ॥ જામેં નપંચ કલેશ, મોહ વ્યાપો નહિં માયા ॥
ગુપ્તરૂપ કો પાયકર, જામેં લાભ ન હાન ॥ ચિદાકાશ નિજ રૂપ
લખિ, સોતે ચદર તાન ॥

૧૫૨. કુણ્ડલિયા ।

માત તાત સુત બ્રાત્ર સખ, રસ્તે કૈસા સાથ ॥ મેલા જગત
સરાય મેં, સખ ઉઠિ જાત પ્રભાત ॥ સખ ઉઠિ જાત પ્રભાત, જાત
કષ્ટ દેર ન લાવે ॥ ચહૈ લાખો કરૈ ઉપાય, ફેર દૂંઢ નહિં પાવે ॥
જખ ભૂલ્યો ગુપ્ત સરૂપ, પડી મમતા કી ફાંસી ॥ કયા રોવે મત્થા
કૂટ, તુહી ચેતન અવિનાશી ॥

૧૫૩. કુણ્ડલિયા ।

અપને અપને કર્મ કા, ભોગન આયે ભોગ ॥ પૂર્વલે કિસી
કર્મ સે, આન મિલા સંયોગ ॥ આન મિલા સંયોગ, સોચ
ફિર કિસકા કિજૈ ॥ સ્વપ્નો સો જગ જાન, નામ એક હરિ કા
લીજૈ ॥ જખ પાયે ગુપ્ત સરૂપ, અવિદ્યા સખહી છીજૈ ॥ સખ
મિથ્યા સંસાર શોક ફિર કિસકા કિજૈ ॥

૧૫૪. કુણ્ડલિયા ।

લગે રહો હરિ નામ સે છોડો જગ કી આસ ॥ ખખર નહીં
હૈ ઘડી કી, નિકલ જાયેગે શ્વાસ ॥ નિકલ જાયેગે શ્વાસ, ॥
કાલ ને સખ કોઈ ખાયા ॥ રાજ રંક ફકીર, કાલ કે હાથ બિકાયા ॥
પરાંરખ્ય કે ભોગ મેં, હોના નહી, ઉદાસ ॥ ગુપ્તરૂપ ઘટ માહિં
લખ, સખ તજે જગત કી આસ ॥

૧૫૫. કુણ્ડલિયા ।

ના કષ્ટ હુયા ન હૈ કષ્ટ, ના કષ્ટ આગે હોય ॥ મૃગતૃષ્ણા
કે નીર મેં, કયોં બહા જાત બિન તોય ॥ કયોં બહા જાત બિન

તોય, મોહ કા છાડ અખાડા ॥ સુષુપતિ અવસ્થા માંહિ, જગત
કા પોલ નિકાલા ॥ ગુપ્ત ગલી મેં બૈઠિ કે, કીજે સદા વિચાર ॥
તું ચેતન ભરપૂર હૈ, જૂઠા જગત અસાર ॥

૧૫૬. કુણ્ડલિયા ।

ભોગન મેં સુખ હૈ નહીં, સખ તજે જગત કે ભોગ ॥ ભોગ
શોક કા રૂપ હૈ, યોં કહેં સયાને ભોગ ॥ યોં કહેં સયાને ભોગ
ચોંગતા આપ નિહારો ॥ કર્મ ઉપાસન જ્ઞાન માંહિ ચિત અપના
ધારો ॥ ગુપ્ત રૂપ કો સો લહે, જોચાલે ધન પંથ ॥ શ્રુતિ સિદ્ધાન્ત
યહ કહત હૈ, ઔર કહેં સદા અંથ ॥

૧૫૭. કુણ્ડલિયા ।

કોટિ જન્મ ભરમત ફિરો, કછુ ન પાયા સાર ॥ મનુષ દેહ
અખ કે મિલી, કરકે દેખ વિચાર ॥ કરકે દેખ વિચાર, યાર કયા
ભયા દિવાના ॥ સિર પૈ વૈરી કાલ, હાથ લે રહા વાના ॥ અચો
ન તાસોં કોય, કાલ ને સખ કોઇ ખાયો ॥ જિન જાન્યા ગુપ્ત
સરૂપ કાલ નેરે નહિં આયો ॥

૧૫૮. કુણ્ડલિયા ।

જેની સો નર જાનિયે, જો જીવમાર માર કે ખાય ॥ દ્વૈત
ભાવ જાકે નહીં, રહી એકતા છાય ॥ રહી એકતા છાય દિગમ્બર
રહે ઉદાસા ॥ સ્વ સ્વરૂપ લિયો ચિન્હ, મિલન કો મિટિ ગઈ
આસા ॥ જખ જાન્યો ગુપ્તાનન્દ, કર્મ કા સંગલ દુટયા ॥ ઢહ
ગઈ મજહૂબ દુકાન, ભરમ કા ભાંડા ફુટયા ॥

૧૫૯ કુણ્ડલિયા ।

ગુપ્તાનન્દ આનન્દ મેં, સદા સર્વદા કાલ ॥ હાની લાભી ના
રહી, પડે ન યમ કી જાલ ॥ પડે યમ કી જાલ ખ્યાલ કોઈ રહા
ન કરના ॥ અખ કે એસે મેરે બહુરી હોવે નહીં મરના ॥ ગુપ્તાનન્દ
કો પાય, રહા નહીં કરના બાકી ॥ સખ જૂઠા પરપંચ, સત્ય તો
આપૈ આપી ॥

૧૬૦ કુણ્ડલિયા ।

કોઈ કછુ કહે કોઈ કછુ કહે, ના કીજે શોક ન હર્ષ ॥ જૈસી
જાકી બુદ્ધિ હૈ, તૈસી તાકી પરખ ॥ તૈસી તાકી પરખ, બહુત વિધિ

કહે સમાર ॥ જોહરી પરખે લાલ, ચામ કો ગહે ચમાર ॥ ગુપ્તા-
નન્દ કો પાય, મસ્ત રહે આઠોં ચામ ॥ કુંછી બકો સંસાર, નહીં
કાહુ સે કામ ॥

૧૬૧ કુણડલિયા ।

કાલ ત્રય ઉપજે નહીં, કહા ભયો સંસાર ॥ વ્યાસ વષિષ્ઠ
મુનિ કહત હૈ, તુહી સદા એક તાર ॥ તુહી સદા એક તાર, અપને
મેં આપ ભુલાયો ॥ સ્વપને કો પરપંચ, જાગિકર કહૂં ન પાયો
॥ તૂં આપે ગુપ્તાનન્દ, સર્વ ભૂતન કા મૂત ॥ નભ મેં ભયો ન
સુમન, ન જાયો બન્ધ્યા પૂત ॥

૧૬૨ કુણડલિશા ।

હોતા તો હોતા કહા, બિના હુયે યહ કીન ॥ બિના હુયે કે
કારણે, હોતા ફિરતા દીન ॥ હોતા ફિરતા દીન, બાત યહ સચ્ચી
ભાખી ॥ તાપર એક દૃષ્ટાન્ત સુનો ચોરોં કા સાખી ॥ જખ જાને
ગુપ્તાનન્દ, મિટૈ યહ તખહી શૂલ ॥ નિશ્ચય હોવે આપ, રહે નહીં
રંચક ભૂલ ॥

૧૬૩ કુણડલિયા ।

ભૂલહોત હૈ ભરત સે, ભરમ મૂલ અજ્ઞાન ॥ અજ્ઞાન તભી લગ
જાનિયે, જખલગ હોત ન જ્ઞાન ॥ જખલગ હોત ન જ્ઞાન. ન
તખ લગ હોવત દૂર ॥ નિશા રહે ફિર નાહિં, પરગટ જખહી સૂર ॥
જખ જાન્યો ગુપ્તાનન્દ, વસ્તુ જ્યોંકી ત્યોં ભાસી ॥ સંશય ઓર
વિપરીત, ભાવના સખહી નાશી ॥

૧૬૪ લાવની બિના દોહૈ કી કલ્પવૃક્ષ ।

હમ ખુદ મસ્તી મેં મસ્ત, મૌજ મેં રહતે ॥ જો હમે કહે
અપવચન, ઉસી કે સહતે ॥ ટેક ॥ હમ અપને આપ મેં મગન
રહા કરતે હૈ ॥ જાતે દિલ કો હમ ચૂર ક્રિયા કરતે હૈ ॥ હમ આપી
આપના દરસ ક્રિયા કરતે હૈ, ભર ભર કે જ્ઞાન કા ખ્યાલા પિયા
કરતે હૈ ॥ ઇસ જગત જાલ કો દેખિ નહીં હમ બહતે ॥ ૧ ॥
હમ અપને આપ કા જાપ ક્રિયા કરતે હૈ ॥ ઇસ તનકે અંદર માપ
ક્રિયા કરતે હૈ ॥ પંચ કોપ વપુ ત્રીનકો સાફ ક્રિયા કરતે હૈ ॥
અપને આતમ મેં આપ જિયા કરતે હૈ ॥ હમ જીવ ભાર કો

બ્રહ્મ છાડિ અગિન મેં રહુતે ॥ ૨૧ ॥ તોડા માયા કા જાલ ખ્યાલ
હમ દેખા ॥ કુછ બાકી રખ્યા નાહિં પુરા ક્રિયા લેખા ॥ અખ
આગે કો વન જ નહીં હમ કરતે ॥ જો કરતે હૈં વન જ વહી
નર મરતે ॥ હમ કાહૂ સે કુટીલ વચન નહીં કહુતે ॥ ૩૧ ॥
હમ પાયો ગુપ્ત સ્વરૂપ ભૂપકે ભૂપા ॥ નહિં પડે કાલ કે જાલ માર
કહે રૂકા ॥ એસા નિશ્ચય ભયા ધુર ગુરુ હમ પાયા ॥ જિનકી
કૃપા સે ભયે નિરંજન રાયા ॥ જો નર કરતે સત સંગ, સૈન વહ
લહુતે ॥ ૪ ॥

૧૬૫. લાવની ।

હમ જ્ઞાન સુધા કા પિયા પિયાસા પ્યારે ॥ માયા નાગિન કે
જહર મરે નહિં મારે ॥ ૧૦૬ ॥ સતગુરુ કો મંતર દિયા જહર સખ
ઝાડા ॥ માયા નાગિન કા જીત લિયા સખ ખાડા ॥ માયા કે મુત
હે પાંચ બેડે બલકારી ॥ અહુ નિશિ આઠોં યામ મારે ફિલકારી ॥
જિન બેડે બેડે પકડે વીર કૂપ ભવ ડારે ॥ ૧૧ ॥ અહું બ્રહ્માસ્મિ મંત્ર
ગુરુ દીના ॥ માયા નાગિન કા જહર દૂર કર દીના ॥ માયા કા
ઉતરા જહર કહર સખ નાશે ॥ જખ કટ ગયે દીરઘ રોગ જ્ઞાન
પરકાશે ॥ પરઘટ હુવા પૂરણ જ્ઞાન શત્રુ સખ જારે ॥ ૨૧ ॥ છૂટા માયા
કા પાપ જાપ કરે કિસકા ॥ હમ નિરભય હોકર રહે ખોદ નહીં ઉસ
કા ॥ હમ વ્યાપક બ્રહ્મ અખંડ નહીં જહુ માયા ॥ જહાં નહીં કર્મ
નહિં ધર્મ ન જન્મી જાયા ॥ હમ ચેતન શુદ્ધ પ્રકાશ કાલ નહિં ખારે
॥ ૩ ॥ સતગુરુ કે પરસાદ સાધકી સંગત ॥ સત સંગતિ કી રેની
ચઢી લગી હૈ રંગત ॥ હમ પાયો ગુપ્તાનન્દ ભર્મ સખ નાશે ॥
ધ્રુ નિશ્ચય ભયો અગાધ જ્ઞાન પરકાશે ॥ અજર અમર અખ ભયે
જરે નહિં જારે ॥ ૪ ॥

૧૬૬. લવની ચૌમાસા ।

બરસન લાગે દિનરાત જ્ઞાન કે બદલા ॥ બુદ્ધી પૈ છાયો
સોહાગત યાગ ક્રિયા સગલા ॥ ૧૦૬ ॥ ચારોં સાધન એક ચાત્ર માસ

તુમ જાનો ॥ જળ ઉમડી ઢાલી ઘડા આવળ પહિચાનો ॥ જળ
પાને લાગી બૂંદ મનન સોઇ કહિયે ॥ જળ જરસન લાગ્યો મેહ
નિદિધાસન લહિયે ॥ જળ ચલી પ્રેમડી લોર શુદ્ધ ઉર યુગલા
॥ ૧ ॥ સ્વાન બૂંદ આનક દો લગત હૈ પ્યારી ॥ તિસ આનક દે
દે સાદસ્ય જાનો અધિકારી ॥ પથિક રહે હૈ બેઠ જરખા મનુ
આર્ષ ॥ જિમિ મન ઇંદ્રી રહે થાકિ દે સમ દમ પાર્ષ ॥ જળ
જુટિ ગઈ મન કી દૌડ જાય કહાં પગલા ॥ ૨ ॥ બદલ કી ઉઠી ધોર
બોલતે મોરા ॥ અહાં અક્ષાસ્મિ ધોર મેં જોરા ॥ વન માહિં ઉઠા
ખિજલી કા ચમકાર ॥ જળ પંચકોષ વધુ તીન સે કીના ન્યારા ॥
જો આશિક હૈ મજબૂત ચહે ચૌમજલા ॥ ૩ ॥ સખ નદિયા ચાલી
ઉમડ સમંદ દો ધાર્ષ ॥ જિમિ ઉઠે વૃત્તિ પરવાહ અક્ષ મેં જાઈ ॥
જળ ગુપ્ત ઔપચી પ્રગટ ભઈ હૈ પ્યારે ॥ કામ જવાસા કોવ
આક સખ મારે ॥ ઇસ આવમાસ કી રમજ સમઝે ક્યા કગલા ॥ ૪ ॥

૧૬૭. લાવની ।

નહિં માંગે કિસી સે કામ ન રખતે રંઘી ॥ તિસ પર ભી
લોગ થોં કહેં બડે પાખંડી પાટલા ॥ તીન લોક દે ભોગ તણુ સમ
ત્યાગે, જિસ પરમી હમેં થોં કહેં ફિરે ચે ભાગે ॥ ઊપર સે
બનાયા સ્વાંગ કહેં હમ ત્યાગી ॥ યહ રખતે મોહર નોઝ બડે હૈં
રાગી ॥ ગેઝ કા લગાતે રંગ બને હૈં દંડી ॥ ૧ ॥ જો કોઈ કુછ
કહે ઉસી કી સહતે ॥ અપને આપકે માહિં ગઈ હમ રહતે ॥
વહતી દુનિયાં દો દેખિ નહિં હમ બહતે ॥ કહતી દુનિયાં દો દેખિ
નહીં કુછ કહતે ॥ હમ દેખિ જાડી પછાડિ યહ દુનિયાં લંડી
॥ ૨ ॥ હમ કિલવર કા દીકાર કિયા કરતે હૈં ॥ મરને કી ગૈલ
હમ મરા નહીં કરતે હૈં ॥ તપતી દુનિયાં દો દેખિ તપસ્યા કરતે હૈં ॥
જલતે કી ગૈલ હમ જલા નહીં કરતે હૈં ॥ હમ અપને આપ કી
સદા ફરતે ઝડી ॥ ૩ ॥ હમ કરતે ગુપ્ત વિચાર કહેં બડે જ્ઞાની ॥
સમ હસતે હમકો દેખિ બડે બક ધ્યાની ॥ કો જાને મહુરમ કાર
હમારી બાતા ॥ હમ નહિં રખતે સંસાર સે કુછ ભી નાતા ॥
હમ ચલતે સીધી ગૈલ કહેં આફંડી ॥ ૪ ॥

१६८ लावनी ।

हमें गुप्त रूप का देखा अजय्य तमाशा ॥ जैसा कुछ दुरना
होय वैसा उसे लासा ॥ टेक ॥ येतन के आसरे कदिय किसी ने
माया अनादि अेक पुनि शांत तिसे षतलाया । नहिं कहिये सत्य
असत्य विलक्षण गार्ध ॥ येतन से अनादि स'य'य कहके समझा
जे येतन रहा समान करै नहिं नासा ॥ १ ॥ माया में पडा
आलास और अधिष्ठाता ॥ कोध तीनों मिलि धंधर का रूप
षतलाता ॥ मलिन सत्य आलास और अधिष्ठाता ॥ कोध तीनों
मिलिके लय रूप दिखलाता ॥ तिनमें कहे अेक स्वतंत्र अेक गल
झंसा ॥ २ ॥ कोध कहे षिंष्य प्रतिषिंष्य अेकही रूपा उपाधी के
बेद सिन्न सहरूपा ॥ प्रतिषिंष्य वाद में बेद और ली माना ॥
पर षिंष्य रूपही प्रतिषिंष्य के गाना ॥ छाया और प्रतिषिंष्य
का उलट रासा ॥ ३ ॥ कोध माया येतन मिले धरि षतलावे ॥
अज्ञान अरु येतन मिले लय के गावे ॥ किसी ने प्रकृती पुरष
तत्व के बोधा ॥ कोध सात पदार्थ मान त्वं पद बोधा ॥ कोध कहे
कर्म से मोक्ष जूट नहिं भासा ॥ ४ ॥ किसी ने तत्त्वम् दोनो पद के
छाना माया रू अविद्या छोडि लक्षके जना ॥ लक्षणावृत्ति करदेअ तत्त्व-
भसि भाहि । यह लाग त्याग की सेन तुजे समुझा ॥ कोध समुजे
यतुर सुजन वेद का आशा ॥ ५ ॥ रंगत दूसरी वेद गुरु कहते
यही पुकार ॥ जूठे हृम जूठा सय स'सार ॥ गुप्त के समझ देअ
हुक यार, कल्पना का भेटो विस्तार ॥ सली जूठा जनो जगडा,
आप में अन्या न कछु भिगडा ॥ कल्पना जूठीते जूठी, गहो यह
गुप्त ज्ञान भूही ॥ तुहिं येतन शुद्ध स'य' स्वयं परकाश ॥ ६ ॥

१६९ लावनी ।

हमें गुप्त वाग की देणी अजय्य हरियाली ॥ मिले तरह तरह
के कुल यमकी रही लाली ॥ टेक ॥ कोध काला हरा कोध रक्त स्वेत
केध पीला ॥ धन प'य इल से रयी आग की लीला ॥ माया का अय्या
कोट ओट है जिनकी ॥ जहां दोध वक्त के भाहि यौकि रहिभन
की ॥ माया में पडा आलास सोध है माली ॥ १ ॥ मालिन
अरु माली भिजे करी जय त्यारी ॥ यह तभते रयि दिये तीन

ચૌદહ રચિ ક્યારી ॥ માલિન ને મચાચે શોર જોર દિખલાયે ॥
 એક ક્ષણમાત્ર કે માહિં પેડ સખ લાયે ॥ ચારો ખુરજો પર ચાર
 રહે રખવાલી ॥ ૨ ॥ ચાર કિસિમ કે પેડ રચે તિસ માહીં ॥ બીજન
 કે અનુસાર ખિલી કુલવાઇ ॥ કિસી મેં નિકલી કલી કોઇ ખિલિ
 જાવે ॥ કોઇ નીચે ગિરતે દૂર કોઇ મુરઝાવે ॥ ફૂલોં પેં લગાતે
 ચોટ કાલ અરૂ કાલી ॥ ૩ ॥ છઃ ઋતુ ખારહ માસ ચક્ર એક ફિરતા
 ચે રાત દિન કો દીપ બાગ મેં જલતા ॥ માલી ને રાખે ત્રીન
 કામ કે કરતા ॥ કોઇ ઉતપતિ પાલન કરે કોઇ સંહરતા ॥ જહ
 પક્ષી કરે કુલાહલ બજાતે તાલી ॥ ૪ ॥ ઇસ બાગ માહિં ત્રય કૂપ
 છુટે જલધારા ॥ બિચ બિચ મેં કુહારે છુટે બાગ પિવે સારા ॥
 કોઈ પૌધે ઉપજે નયે પુરાને જલતે ॥ કોઇ કાલ પાય કે વેલી
 અગિન મેં બલતે ॥ એસી રચના કા ખ્યાલ દેખતા ખ્યાલી ॥ પા
 દેખન જનનવાલે કા કરો વિચારા ॥ સો ગુપ્ત આપના રૂપ સાર
 કા સારા ॥ માલી અરૂ સખ બાગ નહિં કછુ ન્યારા ॥ જૈસે
 સ્વપ્ને કે માહિં સાક્ષી આધારા ॥ તુંહ ચેતન શુદ્ધ સરૂપ તોડ
 ભ્રમ જાલી ॥ ૬ ॥

૧૭૦ લાવની ।

હૈ કલ્પવૃક્ષ સતસંગ જગત કે માહીં ॥ મહિમા નહિં શારદ
 શેષ સકે કછુ ગાઈ ॥ ટેક ॥ હૈ વેદ પત્ર શાન્તિ જિસ કી ડાલી ॥
 અરુ જ્ઞાન પુષ્પ નિજ તત્ત્વ સે સખ હરિયાલી ॥ ખુશબૂ હૈ
 પ્રગટ સખ જગહ ન કોઈ ખાલી ॥ જો દેખા ચાહે સેવે બન
 કર માલી ॥ સ્વધર્મ ધારા શ્રદ્ધા સે પહુંચે જાઈ ॥ ૧ ॥ જિન
 પાયા તત્ત્વ પાગચે પાયંગે જિતને ॥ ઉપાય ઇસ સે ઓર કહા
 નહિં કિસને ॥ સતસંગતિ કર કલ્પવૃક્ષ કો સેવો ॥ માનુષ તન કો
 મત વૃથા જગત મેં ખોવો ॥ યહ પન્થ સંત સે મિલે જો હોય
 સહાઈ ॥ ૨ ॥ જો પ્રેમ નેમકર સતસંગતિ કો સેવે ॥ જખ શુદ્ધ ભાવ
 હો પ્રગટ અવિદ્યા ખોવે ॥ જીવ ભાવ ઉઠિ જાય બ્રહ્મ કો જાને ॥
 કર્મ ભકિત નીતિ કો ઠીક પહિચાને ॥ શીલ સત્ય સન્તોષ સ્વતઃ
 આજર્ઠ ॥ ૩ ॥ જિન કલ્પવૃક્ષ કા લિયા સહારા જગ મેં । વો
 ખુસ હો લૂટેં મૌજ ન આવે ભગ મેં ॥ લખ ગુપ્ત રૂપ હૈ સખ

પ્રગટ ઘટ ઘટ મેં ॥ જો દેખા ચાહે દેખે ધસી તન મઠ મેં ॥
ધ્રુવ યહ વકત એમોલ ન આવે સદાઈ ॥૪॥

૧૭૧ અથ સપ્તવ્યસન લાવની (મદિરા)

હમ આપ રૂપ કી મય કા પિયા પિયાલા ॥ જો જૂંઠી મય
કો પિવે તિન કા મુખ કાલા ॥ ટેકા ॥ હમેં સત ગુરુ મિલે કલાલ
દઈ ભર પ્યાલી ॥ અન્તર કે ખુલ ગયે ચશમ છાય રહી લાલી ॥
હમ પિયા પ્રેમ કે સાથ અમલ જખ છાયા ॥ સખ મિટે ભર્મ
ઔર કર્મ રહી નહિં માયા ॥ હમ કરે ન કોઈ જાપ રહેં નહિં
માલા ॥૧॥ જો ગોડી માધવી ઔર પેસટી પીના ॥ તિન કા હૈ
વૃથા જગત મેં છુના ॥ કોઈ ભર કે ખોતલ પિવે કોઈ પિવે
અધા ॥ ફિર ફિરિયા કરતે નીચ હોય મુખ ભદા ॥ હો ગયા કલેજ
ભરમ નયન મેં જાલા ॥૨॥ જખ જાગે પરખલ કામ ખોજતા
નારી ॥ ચાહે મિલો વેશ્યા નીચ ચહે મહતારી ॥ ભોગે નહિં
ગિનતા દાષ ગઈ મતિ મારી ॥ ઇસ નીચ અમલ ને કરી જગત
કી ખવારી ॥ આપસ મેં બકતી ગાલ સસુર ઔ સાલા ॥૩॥
એસા નહિં કીજે કર્મ ભરમ સખ ત્યાગો ॥ અખ મોહ નિશા
કી નીંદ ત્યાગ કર જાગો ॥ તુમ ગુપ્તરૂપ કા ભરકર પિવો પિયાલા ॥
જિસ કર કે છુટે જનમ મરન કા નાલા ॥ કયા દુનિયા કે રંગ
દેખ હુવા મતવાલા ॥૪॥

૧૭૨. માંસ ।

જો નર ખાતે હૈં માંસ સોઈ કરસાઈ ॥ હમ નહિં કહતે
યહ ખાત શાસ્ત્રને ગાઈ ॥ ટેકા ॥ સખ કહેં ખુદા કી રહ ગતિ અરુ
મુરગે ॥ બકરા ભેંસા ઔર ભેડ કિયે ક્યોં મુરદે ॥ નેત્ર સે
નેત્ર મિલે તિલ્લી સે તિલ્લી ॥ જખ મારે રહકો રહ બડી ફર-
જુલ્લી ॥ કરે ખુદા સે ખેર સમુઝે નહિં રાઈ ॥૧॥ દિન ભર તો
રોજ કરે પઢે કુરાના ॥ ફિર મારે રાતકો રહ કરાહ હલવાના
જિસકી તુમ પઢે નવાજ પાંચ વેર દિન મેં સો સખ રુહન મેં
રહે સોચ કુછ મન મેં ॥ જાને નહિં ન્યાય ઇન્સાફ હુયે અન્યાઈ
॥૨॥ કાટિ ખાયા ઔર કા માંસ ત્રાસ નહિં તુઝકો ॥
ફિર તેરા ભી ગલે કટે સોચ યહ મુઝકો નિકસેગી જહાં

द्विताम्य ज्ञान नहि आवे ॥ मत आय और हा भांस
 देर पछितावे ॥ रचना के वश होगया भीन ही न्याय ॥ १८॥ आय
 हा पाया जन्म शिखरी जती ॥ पिर आते भांस शराय जटे है
 पापी ॥ जन्म शिखी वरु के पाय हा म यह करते ॥ नीचों के
 मिर हाय हाहे हो करते ॥ आते जटे पंडित लोग राजे गुप्तार्थ ॥ १९॥

१७८. वैश्या ।

हाम निशा से जग पदा मत आवे ॥ मत कर वैश्या हा
 सुग रंग ह्यो आवे ॥ १८॥ वैश्या हो विपयत जन करे मत रंग
 तिस वैश्या के सुग होय धर्म हा जग ॥ आहो हैसा ही हो वनी
 हैसा हो रंग ॥ सुग तन धन हो हुरि लेत जनादे नंगा ॥
 हन हहते है समझाय गजिहा मत जेवे ॥ १९॥ जय तय संयम अरु
 दान सुखी नशि जेवे ॥ जेसे हिर हुं हा वृक्ष जहा रहितवे ॥ कोर
 लागत ना हल हल होय जह हानी ॥ हन सय नरकनही आनी
 वैश्या जनी ॥ मन वैश्या तावे भाहि मजिया मत पावे ॥ २०॥
 वैश्या से जूझि करे मति बारी ॥ यह लटवा लेय जनाय करे
 जरी ज्यारी ॥ करे धन अरु जलहा अंत करे वसहावे ॥ तुजे
 से वेर हही जयार यहा ह्यो आवे ॥ सुग जाय लोक परलोह
 भूरणा रोवे ॥ २१॥ जेसे नर तनहा पाय अक्षरज आवे ॥ नाहि
 सुने गुप्तही जात जन्त मे रोवे ॥ जे हहे धर्म ही जात करे
 वे हांसी ॥ जे जे भू पंडित गुरु आय हात ही हांसी ॥ जन्म
 जन्त समय के भाहि कोर नाहि होवे ॥ २२॥

१७९. दूत ।

सहे हा अला राजगार जह सादुहारी ॥ यह आय हराभी
 भात जह मति बारी ॥ २३॥ नहि करे और राजगार हाय यह
 हानी ॥ यह हल होवे लाज यह होवे हानि ॥ जे हल हीना था
 भात जे ने हल ॥ निश से जन्म जलन जने जिलाभी सहा ॥
 नहि आवे आह जिलाय होय जन्म ज्यारी ॥ २४॥ सहे ही
 जय हुं हा रुपया जावे ॥ जटे जेय रहे है वाट आह हन
 आवे ॥ जेसे वरणा जट पाय जले जयासा ॥ जेसे जलते
 सादुहार लोक ही आसा ॥ जे आगतवे हसी भात यह जरी

ત્યારી ॥૨॥ જખ આવત નાહિં આંક ખાક મેં મિલતે ॥ તખ
રોવત મથાફૂટ હાથ દોઉ મલતે ॥ સખ લુટિ ગયા ઘર કા માલ
ખાત સખ ઘિંગડી ॥ દૂડા જૂતા હૈ પૈર ફટી શિર પગડી ॥ તખ
ચોરી કરને લગા લાજ ખોઈ સારી ॥૩॥ ફિર લેવે મૂડ મુડાય
ખને હૈ સાધૂ ॥ લોગો કો ખતાવે આંક કરે ખડિ જાદૂ ॥ નાહિં
ગુમ ખાત કો ખોજત મૂઠ અનારી ॥ કોઈ સંન્યાસી અનિજય
કોઈ બ્રહ્મચારી ॥ લોગોં સે ઠગિકર માલ કરે ફિર જારી ॥૪॥

૧૭૫ નારી

પરનારી સે પ્રીતિ ભૂલિ નાહિ, કરની ॥ પરનારી એસી જાન
પાવક કી અરની ॥૧૬॥ અપના રખિ ખાલી ખેત ઓર કા ખોતે
કછુ ફલ નહીં પ્રાપ્ત હોય મુઠ ફિર રોતે ॥ ઘરકી કો દીના ત્યાગ
શેવે પરનારી ॥ તખ ઘરકી કરતી જાય ઓરતેં ચારી ॥ જખ ઉર
મેં હોય કલેશ લગે ખડિ જરની ॥ પરનારી પૈની છુરી અંગ
સખ કાટે ॥ જૈસે કોઈ ડાકિન ખૂન માંસ કો ચાટે ॥ સખ તન
ધનકો હરિલેત કરે તુઝે ખાલી ॥ સખ ભદ્રા પડજાય અદન રહે
નાહિં જ્ઞાતી ॥ નર કો નિશ્ચયકરે ખાય કહે જિસે નરની ॥૨॥
નારિ સખહી હૈ જુરી વેશ્યા પરકી ॥ યહુ તીજી કહિયે નરક
નિશેની ઘરકી ॥ યહુ એક વિષય કે સંગ પાવતે નાશ ॥ યહુ
જાનો સમ્બધી ખાત હૂઠે નાહિં માસા ॥ પરત્રિયા સે કરૈ ગમન
તિનકી દશા અરની ॥૩॥ નહિં દેખૈં ગુમ સરૂપ વિષન મેં
ભૂલે ॥ ફિર અન્ત સમય કે માહિં ખાટ મેં ફૂલે ॥ જખ ચલે
કંઠ મેં પ્રાણુ ઉઠા ઘર્યાટા ॥ નેતર મેં છુટા નીર હિલાવે માથા ॥
અખ કીજૈ કૌન વિચાર પડા વૈતરની ॥૪॥

૧૭૬. હિંસા ।

મતકરે જીવ કી ઘાત ખાત મુન પ્યારે ॥ સખ પરમેશ્વર કી
રૂહ નહીં કુછ ન્યારે ॥૧૬॥ જૈસા દુખ તુઝકો હોય ઉસે ભી
હોવે ॥ કુછ મન મેં કરો વિચાર પડા મત સોવે ॥ બિન કારણહી
દે દુખ ઓર કો ભારી ॥ અપને કો ચાહે આરામ ગઈ મતિ
મારી ॥ જિસ કરે કુટુમ્બ હિત પાપ હોહિં સખ ન્યારે ॥૨॥
હિંસા હૈ ત્રીન પ્રકાર કહોં સમુઝાઈ ॥ કાયક વાયક માનસ

વેદને ગાઈ ॥ દૂજે કો દેવે દુખ સોઈ કન્સાઈ ॥ દૂજે કો દેના
 સુખ સોઈ ધરમાઈ ॥ સુખ સે સુખ તુઝકો હોય દુખ સે દુખ
 ભારે ॥૨૧॥ જૈસા કુછ દેના દાન વૈસા મિલ જાવે ॥ જવ બેલી
 બોલે કટૂ દાખ કૈસે આવે ॥ જો સુખ ચાહે જીવ તજો અખ
 હિંસા ॥ કરના ચલિયે વહી કામ વેદ પરસંસા ॥ જિસ કરે
 હોય આરામ દુખ છૂટે સારે ॥૨૩॥ તુમ છોડો કર્મ નિષેધ વિધિ
 કો કરના ॥ ફિર તીન મેં ભી સહકામ દેત હૈં મરના ॥ જસે
 પાવે ગુપ્ત સરૂપ કહો નિષકરમા ॥ સખ છૂટે જનમ કે પાપ
 હોય નહિં મરના ॥ અખ કિજૈ એસા કામ કાલ નાહિં ખારે ॥૧૪

૧૭૭. ચોરી ।

જો પર ઘર ચોરી કરત મરત હૈ તે જન ॥ આગે પડે યમ કી
 માર હરયા ક્યોં પર ધન ॥૨૦૬॥ કોં ભલ પર પકડા જાય માર
 લગ ગાઢા ॥ જૈસે કોઈ રખ્યડ લોગ કાટતેં પાડા ॥ ફિર પકડ
 લેત સરકાર શોચ કરે મન મેં ॥ સખ ચોરી કો લે કાઢિ એકહી
 દિન મેં ॥ જખ લગે દુતરફી માર બિગડ જાય સખ તન ॥૧૧॥
 જો હરે પરાયા માલ હાલ યહ જિનકા ॥ કલિ નાશત નાશત
 નાહીં શોક તિનોં કે મન કા ॥ ચોરી કે સંગ મેં રહે ઝુંઝ દિન
 રાતી ॥ જૈસે દીપક જખ જલે તેલ અરુ બાતી ॥ સખ દેખેં
 એસે હાલ ડરે નાહીં મન ॥૨૨॥ ચોરી જીવે કા કામ બુરા હૈ
 પ્યારે ॥ જો કરતે એસા કામ ફિરત હૈ મારે ॥ આગે વિગડે
 પરલોક લોક મેં નિંદા ॥ જો કરતે એસા કા પડે ગલફંદા ॥
 એસી હોવે દુરગતી મિલે નાહિં અન્ન ॥૨૩॥ છોડો ચોરી કી
 બાત હાથ ક્યા આવે ॥ ફિર અન્ત સમય કે માહિં બહુત પશિ-
 તાવે ॥ કીજે નહિં એસા કામ મનુષ તન પાકે ॥ લખે ગુપ્ત
 અપના રૂપ કહું સમઝાકે ॥ મત ફિરે ઉલ્લૂ કી તરહ અવિદ્યા
 બન બન ॥૨૪॥

દોહા—ધન્યવાદ ઉસ પુરુષ કો, જોકો વ્યેસન ન એક ॥

સો ઉત્તમ સખ નરન તેં, વાકેહિ વિમલ વિવેક ॥

એક એક ને મારિયાં, બડે બડે ઉત્તમ મૂપ ॥

જામેં સાતોં વ્યસન હૈં, ક્યોં ન પડે ભવ કૂપ ॥
 માનુષ તનકો પાય કર, ક્રિયા નહીં શુભ કામ ॥
 તિસતે અચ્છા જાનિયે, ઢોર પશૂ કા ચામ ॥

૧૭૮. લાવની ।

દેવન કો પૂજા કરો આર્થ દીવાલી ॥ ચક્ર સખ દેવન કા
 દેવ આતમા વાલી ॥૧૮૬॥ યહ કાયા દેવલ જન આતમા દેવા ॥
 તિસકી અખ સેવા કરો ખતાઉં મેવા ॥ કરો શીલ અશનાન
 પહિર સત શોલા ॥ પ્રેમ કે પાત્તર માંજ રહે નહિં મૈલા ॥
 આશા તૃષ્ણા કા ત્યાગ બનાવો થાલી ॥૧૮૭॥ જપ તપ તીરથ
 ઔર દાન ઘંટા વજવાવો ॥ નિષ્કામ કર્મ કી ધૂપ પ્રેમસે લાવો ॥
 જત સત કા કરો સિંગાર લગા સિંહાસન ॥ તિસકે ઊપર લગ
 રહા દેવ કા આસન ॥ ઉડતે શુભ કર્મ ગુલાલ ચમકિ રહિ
 લાલિ ॥૧૮૮॥ ચિત કે ચન્દન કો ચરચ પ્રીતિ કી પાતી ॥ દિલ સે
 દીપક કો વારિ ધારોં દિન રાતી ॥ કરની કા કીટ બનાય મુકુટ
 મન કીજૈ ॥ ફિર ચઢે પ્રેમ કે ફૂલ દેવ જખ રીઝે ॥ એસા પરિ
 પૂરણ દેવ નહિં કછુ ખાલી ॥૧૮૯॥ એસા નહિં પાવે વક્ત ગુપ્ત
 તુઝે કહતા ॥ જો એસી પૂજા કરે જગ મેં નહિં બહતા ॥ કલિ
 કાશી સેવે જાય કલ્પી સેવે મથુરા ॥ સેવે નહીં ચેતન દેવ પૂજે
 કયા પથરા ॥ કયા પૂજત ફિરેં ગવાર ભેંરૌં અરુ કાલી ॥૧૯૦॥

૧૭૯. લાવની ।

ભરમ ક્યોં બિના બિચાર દૂસરે મન્દર ॥ ઇસ તન કે અન્દર
 દેખ મૂરતી સુંદર ॥૧૯૧॥ જિસકે નાહીં રંગ રૂપ ઊપકયા કહિયે ॥
 તિસકે દરશન કો પાય પરમ પદ લહિયે ॥ નહિં સમુઝત મૂઠ
 ગવાંર ફિરત હૈ ભારા ॥ દેખા ચાહત હૈ મૂઠ આપસે ન્યારા ॥ ખાતા
 ડાલત પરસાદ હોગયા બંદર ॥૧૯૨॥ નહિં કારણ સૂક્ષ્મ થૂલ મૂલ હૈ
 સખ કા ॥ ધરની જલ પાવક પવન સમઝલે નભકા ॥ હમ કહે તોહિં
 સમઝાય દેવ હૈં એસા જાકિ સેવા હોય નિષ્કામ ચઢે નહિં પૈસા ॥
 ઇસ ઘટકે ભીતર દેખ ચમકી રહા ચંદર ॥૨॥ કરલે તિસકા
 દીવાર પાર હો ભવ સે ॥ કયા દેખે ઝૂઠે દેવ તિરે નહિં તિનસે ॥

પૂજત હું જુઠું જુત ગઈ મતિ મારિ ॥ ચેતન વડે જડ સે કહે
રક્ષા કર હમારી ॥ કુછ કરતા નહીં વિચાર આપને અન્દર ॥ ૩૩ ॥
દેવન કા દેવ હું આપ દેખ અરુ જાને ॥ કુછ દેવ ન પૂછે જાત
નહીં પહિચાને ॥ શાસ્ત્ર ને કહા હું દેવ એક પુરુસારથ ॥ દૂજ
નહિં કોઈ દેવ કહો યથારથ ॥ વહેજતે હું નર મૂઠ જગત સમન્દરાશ

૧૮૦. લાવની

કરતે હું બહુત અચાર વિચાર ન કરતે ॥ તિસ અહંકાર કે
માહિં દૂબકર મરતે ॥ ૧ ॥ યહ કાયા સદા મલીન શુદ્ધ નહિં
હોવે ॥ જિસકી શુદ્ધિ કે અર્થ કાલ કો જોવે ॥ યહ બંધી મૂતકી
ગાંઠ જિસે બડા ધોવે ॥ કિતનેઈ અન્દન લેપ શુદ્ધ નહિં હોવે ॥ જળ
તક ઇસ મેં હંકાર તબી તક મરતે ॥ ૧ ॥ જોકે નવ દારન કે
માહિં નઈ નિત ઝરતા ॥ સ્થાન બીજ દો બ્રહ્મ શુદ્ધ દૈસે કરતા ॥
ઇસ તન કી શુદ્ધી લાગિ જન્મ કો જોવે ॥ કિતનેઈ મજજન કરો
શુદ્ધ નહીં હોવે ॥ સોઈ નર મૂરખ જાન કામ યહ કરતે ॥ ૨ ॥
બડે લાતે તેલ કુલેલ બને હું અન્દર ॥ ભીતર સે જોજત નાહિં
આમ કા મન્દર ॥ એસેહી સખ નર નારિ ભૂલિ ગયે તન મેં ॥
કુછ કરતે નહીં વિચાર આપને મન મેં ॥ નિત આતમ ચેતન
શુદ્ધ જોજ નહિં કરતે ॥ ૩ ॥ સો સદા આપના રૂપ શુદ્ધ કા શુદ્ધ ॥
જગત સ્વપ્ન સુષુપતિ સદા પર બુઝા ॥ સતસંગત કો પાપ ભેદ
કહ્યુ જાને ॥ જળ છુટત સર્વ મલીન શુદ્ધ પહિચાને ॥ વહે શુદ્ધ
રૂપ પરકાશ કર્મ સખ જરતે ॥ ૪ ॥

૧૮૧. લાવની ।

કહુને કો સભી ને કહા ન રખા બાકી ॥ બિન જવા કહે
કયા આપ આપના સાખી ॥ ૧ ॥ જો ઘર રખે સો આપને ઘર કો
પાવે ॥ જો ઘર જોવે વહ ઘર ઘર વધકે જાવે ॥ કહિં પુણ્ય કરે
તો પાપ તુરત બનિ જાવે ॥ કહિં પાપ કિયે તે સ્વર્ગ વાસ મેં જાવે ॥
જો કરે શુવ કી ઘાત વહ દેખે ઝાંકી ॥ ૧ ॥ જો લોભ કરે તો
ક્ષોભ તુરત મિટિ જાવે ॥ દયા તજે સે દિલ કા દરદ હટિ જાવે ॥
યોગ તજે વહ યોગ કે માહિં સમાવે ॥ જ્ઞાન તજે તે વિદ્યાવાન
કહલાવે ॥ તન જલા બસ્મ મલને સે હોવે જાખી ॥ રાજો પરકો

પીઠા કરે સો હોવે પૂરા ॥ જો વિષય ગહે વોહ ઇન્દ્રિ જીતહે
સૂરા ॥ જો ભોગ કરે વહ જન્મ રોગ કો ધોવે ॥ તૃષ્ણા કરને સે
તિનોં તાપ કો ખોવે ॥ વેદ શાસ્ત્ર કા ચૂરણ બના કર ફાંકી
॥૩૥ ત્યાગ કિયે સે રાગી બન ઐઠે હૈં ॥ ઊપર જાને સે આપ
ગિરે રેઠે હૈં ॥ યહ ગુપ્ત જ્ઞાન સમજે સો બેખરકે હૈં ॥ બિન સમજે
નર ચોરાસી મેં ભરકે હૈં ॥ દ્રુવ ત્યાગ અહણુ કી સભી બાસના
નાકી ॥ ૪ ॥

૧૮૨. લાવની ।

બિન યતન રતન યક બન મેં ભોગતા ભોગી ॥ મુન કથન
સજન તજ વતન હોગયે યોગી ॥ ૨૬ ॥ બિન પૃથ્વી પરવત હૈ
યક ઊંચા ભારી ॥ પગૂ ગિરવર પર ચઢા ગઈ મતિ મારી ॥
બિન નેત્ર દેખવે દિલ સે ખુશી હુઈ ભારી ॥ કર બિન સે અહણુ
કર કરે નૃત્ય દે તારી ॥ બિન મર્મ શર્મ તજિ દઈ સો જાનો
રોગી ॥૧॥ બિન પતી સતી ને તન બિનુ પુત્ર જાયા ॥ જન્મતે
પુત્રને સભી કુટુંબ કો ખાયા ॥ બિન અંગ સંગ વો પિતાસેં જાકે
કરતા ॥ બિન બદન પિતા મુખ ચૂમ અકં મેં ધરતા ॥ એસી
અચરજ કી બાત હુઈ અરુ હોગી ॥ ૨ ॥ બિન નીર સંમદર
બીચ કુવાં પનિઘટ કા ॥ દિલ મિલ કે સખી જલ ભરેં ન
હૂમે મરકા ॥ યક પથિક મુસાફિર આન કુવે પર અટકા ॥ વો
જલ માંગે વો કરે સેન ઘૂંઘટ કા ॥ જખ ચઢા વારી તો પથિક નાર
ભય સોગી ॥૩॥ યહ ગુપ્ત જ્ઞાન વિનુ શ્રવણ સે જો મુનિલેવે ॥
બિન બુદ્ધિ સે સમજ રમજ મેં રહવે ॥ યહ વચન કહે વિપરીત
મળા તુઝે દેવે ॥ ઉલટ કો મુલકા ચીન્હ ઓર ક્યા કહવે ॥ ધ્રુ
જનમ મરન કી સભી અવિદ્યા બોગી ॥૪॥

૧૮૩. લાવની ।

બિના મૂલ યક ફૂલ ગગન બિનુ દેખા ॥ તિસ ગુલમેં ગુલ
બિલ રહે ગિનતિ નહિં લેખા ॥૨૬॥ યક બિન અચરજ કી બાત
કહે વિનુ બાની ॥ કોઈ મૂરખ લેવે સમજ સમજે નહિં જ્ઞાની ॥
અમૃત કા બના તલાવ અગિન ને ફૂંકા ॥ યક ખાતા હૈ દિન રાત
મરે નિત ભૂકા ॥ ધારે સૂક્ષ્મ સ્થૂલ રૂપ નહિં રેખા ॥૧॥ ધરની

સે બિનુ સરિવાવ પદા યક બહુતા ॥ વિન પાની કા હુવાખ તિમુમે
નિત સહુતા ॥ શીતલ અગ્ની ને કૂંકે દિયા જગ સારા ॥ વિન
કેવન લકરી જલા સભી વિસ્તારા ॥ બિન નેત્ર યહ ખ્યાલ સમી
હમ પેખા ॥ ૨ ॥ બુદીબિન કરે વિચાર પડિતા કહિયે ॥ બુદી સે કરે
વિચાર મૂરખા લહિયે ॥ વિનુ પર સે પક્ષી ઉડે પર સે ગિર જાવે ॥
વિનુ ચેચ ચુમેકો ચુમે કેર મરજાવે ॥ યક ગગન માહિ નિત
ઠોંઠા યાસત મેખા ॥ ૩ ॥ કોઈ સમઝે મૂઢ ગંવાર ચતુર કયા
બને ॥ પરચ કો કહતે ગુપ્ત નહિ પહિચાને ॥ સો સદા એક હૈ
શ્રુકહે જિસે ચલતા ॥ સો કહિયે શીતલ રૂપ દેખે તિસે જલતા ॥
સો કરે વહુત સે રૂપ એક કા એકા ॥ ૪ ॥

૧૮૪. લાવની ।

મેં આશિક હું અલમસ્ત દીદ તેરે પૈ ॥ દેદરશ કૃપા કર
નિગાહ હાલ મેરે પૈ ॥ ૧ ॥ આલિમાં મેં તારીફ મુની જિયા
વવરાયા ॥ ઉસ દિન સે મેરા હોશ હવાસ બુલાયા ॥ ધન માલ
હુ ઇસ જગસે ખ્યાલ ઉઠાયા ॥ કર ખરાખ અપના હાલ તેરા
કહલાયા ॥ શૈર ॥ ઇશક મેં બીમાર તેરી શાન પર ફરમાનહૂં ॥
મુહબ્બત જિગર મેં વસિગર્હ, યહ હાલ મેં કિસસે કહું ॥ તુઝસે
બુદાઈ કા યહ સદમા, આપ ખુદ દિલ મેં સહું ॥ સીડી પાગલ સવ
કહે મેં ધ્યાન તેરે મેં હું ॥ અખ આસન મૈને કિયા તેરે ચેહરે
પૈ ॥ ૨ ॥ જવ અહા અહા કર મરને લગા યક દમસે ॥ તવ દિલ
મેં રોશન હુવા ચાંદ પૂનમ સે ॥ દિલવર સે દિલ મિલ ગયા વો
આપ સનમ સે ॥ માશુક ને હંસકર કહા ન રખ દિલ ગમ સે ॥ શૈરા
માશુક મેરા મુઝકો મિલા દિલ મેં વહી દિલદાર હૈ ॥ મિલતા હૈ
મુઝકો પ્રેમ સે દેતા દરશ હરવાર હૈ ॥ તવિયત સે વહ જતા
નહી, કરતા વો મુઝસે ખ્યાર હૈ ॥ સૂરત વો મન મેં વસ રહી,
માશુક મેરા દિલદાર હૈ ॥ જેસે ઢાલા નાગ મસ્ત લહેર પૈ ॥ ૩ ॥
માશુક યે મેરા જિસકી નિગાહ અજાવે ॥ ઉસ નિગાહ સે સારા
જગત પ્રલય હોજાવે ॥ વો ફેરે નિગાહ તો સવ રોશન હોજાવે ॥
પલ પલ મેં ખ્યારા અજવ ખેલ દિખલાવે ॥ શૈરા જિસકી ચમક
કો પાયકર યહ ચમકતા સંસાર હૈ ॥ સવ રોશની રોશન હૈ
ઉસસે, યોં કહત મસ્ત પુકાર હૈ ॥ ઉસકી રોશની પાય કે, ફિરતે

સહી નર નાર હૈ ॥ સવ કે શામિલ મિલ રહા, સવસે જુદા યક
તાર હૈ ॥ વો મુઝમેં હૈ મૈં હું ઉસકે ચેહરે પે ॥ ૩ ॥ દુનિયાં સે
ધોકર હાથ સનમ કો પાયા ॥ વો મિલા મુઝે મહમૂવ રંજ
વિસરાયા ॥ ઇસ વિદ્યમેં વોહિ વિદ્યભર કહલાયા યહ નામ
રૂપ સવહી હૈ ઉસકી માયા ॥ શેર ॥ સર્વ મેં સર્વજ્ઞ હૈ, વો સર્વ
મેં ભરપૂર હૈ ॥ જ્ઞાન દૃષ્ટી સે મિલે અજ્ઞાન સે વો દૂર હૈ ॥
આશિકે હો કે હુટતા નહીં, મિલતા ઉસે વો જરૂર હૈ ॥ સત્ય
આનન્દ કંઠ મેરા ગુપ્ત અસલી નૂર હૈ ॥ ધ્રૂ રહતા હૈ હરવખ
તેરે સહરે પે ॥ ૪ ॥

૧૮૫ લંગડી લાવની

ઇશક આશિક પૂરે કરતે, ઘરકો કર બરબાદ કદમ માશૂક કી
તરફ ધરતે ॥ ૧ ॥ લૌ માશૂક સે લગી રહતી ચરમ સે જલ
ધારા બહતી ॥ ઈંદ્રિ નહીં ઔર વિપય ગહતી, તખિયત માશૂક કો
ચહતી ॥ દોહા, દુનિયાં સે હો તર્ક, ગર્ક યક માશૂક કે માહી ॥
દમપૈ દમ ચે નિકલા જતા, સૂઝત કછુ નહીં ॥ સનમ ક્યોં અલગ
ર હુટતે ॥ ૨ ॥ ઇશક કા જોશ હુવા ભરપૂર, દીખને લગા સનમ કા
નૂર ॥ જિસપૈ મૈં ગિરા હું હોકર ચૂર, ઉસી કા રહતા મુઝે ગરૂર
દોહા, મુઝકો મુસિબત દેતે હો, ક્યોં હસતે હો મુખ કેર ॥ ગલે
લગાકર મિલો આપ, અબ ક્યોં કરતે હો દેર ॥ હુયે દિન અલગ
બહુત રહતે ॥ ૩ ॥ દયાકર દિયા દરશ મુઝકો, કહું મૈં કયા કયા
અબ તુઝકો ॥ સમઝ આતી હૈ સમઝે કો, પહુંચા અબ તેરે દરજે
કો ॥ દોહા, જબસે માશૂક મિલા, શોચ અબ રહા ન મિલાને
કા ॥ દોનોં કી તખીયત એક હુઈ નહિં જિગર હૈ હિલને કા ॥
દૂર અબ ઉલટ નહિં ફિરતે ॥ ૪ ॥ આશિક માશૂક કી એકહી જાન
જૈસે ઘી ચિકનાઈ લે માન ॥ ઇશક યહ હકકાની પહિચાન ॥ શીખલે
ગુપ્ત ગુરુ સે જ્ઞાન ॥ દોહા, ગોવર્ધન ઘનશ્યામ કૃષ્ણ કી દિલ સે
રખિયો યાદ ॥ જન્મ ધરેકા સાર યહી હૈ, જગકો કર બરબાદ ॥
ધુરૂકર ઇશક વિના સિરતે ॥ ૫ ॥

૧૮૬ લાવની

શિકારી હમ હૈ પૂરે યાર, જિસ તન કે વન મેં ચંચલ મિરઘા
ખેલત વહી શિકાર ॥ ૧ ॥ ચરે જહું મિરઘન કી ટોલી ॥ મારતે

બિન કાશ ગાલી ॥ મિરથી દસ યક મિરઘ દાસા ॥ ૬ ॥ જિસકે સિર
પર હો બાલા ॥ દોહા, ધરની બિનુ મિરઘા ચરે, બિન જમી ખેતી
ખાય ॥ સૂરદાસ કો બાસતે નેત્રસે દીખે નાય ॥ ખાતે નહીં ચારા
ન્યાર ॥ જગત સખ તિનકો કિયા ખુવાર ॥ ૧ ॥ મિરઘા કે નહીં
બદન નહિ ગાત ॥ ખાતે કો ખાતા હૈ દિન રાત ॥ ગિને નહિ
સંધ્યા અરુ પરભાત ॥ પૈર બિન મારે સખ કે લાત ॥ દોહા, બિનુ
અચરજ કી ખાત, યહ કરકે દેખો ખ્યાલ ॥ સોઘ પૂરા પારથી,
જિન ગેરા મિરઘ પર જાલ ॥ બિન કર પકડે દો સીંગ, પટકિ બિનુ
ધરની દિયા પછાર ॥ ૨ ॥ બિના કર પકડી હમે કમાન, ખેચિ
મિરઘા કે મારા ખાન ॥ લગા બિન સરકા જિસકે તીર ॥ મિટી
મિરઘા કી સગરી પીર ॥ દોહા, સુખી ભયા મિરઘા ચરે, ન કહિ
રાગ ન દોષ ॥ મારે તે સો અમર ભયા હૈ, કરિકે દેખો હોસ ॥
અજર અમર અખ ભયા તિસે નહીં સકતા કોઈ માર ॥ ૩ ॥
ગુપ્ત કા એસા હી પરભાવ, ચલે નહિ જિસ પર કોઈ દાવ ॥
કહી મિરઘ મારન કી યુક્તિ, ઇસીસે પાવત હૈ મુક્તી ॥ દોહા, બેદરદી
વહે મિરઘા મારે, જખ હોવે આનન્દ ॥ જો કોઈ રક્ષા કરે જીવકી
સો પડે કાલ કે ફંદ ॥ ઇસ વિધિ સુધરે સખ કાજ, આજ હમ
કહુતે યહી પુકાર ॥ ૪ ॥

૧૮૭ લાવની ।

માન કહિ તજિદે ભરમ વિકાર ॥ ઇન નર કે તન કો પાવ
કીજિયે ઇસ મેં કછુ વિચાર ॥ ૧ ॥ કિયાહ તન એસા હૈ નીકા ॥
દેવ બ્રહ્માદિક કા ટીકા ॥ યહી ઉધારન હૈ જીકા ॥ ભક્તિ વિનુ
ક્યોં રખતા ફીકા ॥ શૌર ॥ યહ માનુષ તન તોકો મિલા, કુજ
કરકે દેખ વિચાર ॥ ૨ ॥ યક પલક માહીં નાશહો પછતાયગા ફિર
યાર ॥ ૩ ॥ દિલ અન્દર કરો વિચાર, ફેર તુઝે મિલે ન ફૂલ વાર
॥ ૪ ॥ કરો અવ ઇસ મેં કછુ વિચાર, કૌન મેં કો યહ સખ
સંસાર ॥ કિસ કે યહ રહતા હૈ આધાર ॥ યહી હૈ સવ સારન
કા સાર ॥ શૌર ॥ માલા મેં મનકા રહે, સવ સૂત્ર કે આધાર ॥
સૂત્ર તિન મેં એક હૈ, સવ મનિકો કા વ્યભિચાર ॥ ૫ ॥ એસો
જાગ્રત અરુ સ્વપ્ન સુષોપતિ, આતમ કે આધાર ॥ ૬ ॥ સોઈ હૈ
વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ, ફેર નહીં પડતે હૈ ભવ રૂપ ॥ શૌર ॥ અગર

જો તૂં ચાહે એક તાર્થ, તો જુદાર્થ તોડદે ॥ યક આવ દિલ મેં
સમઝ કે, સવ બુદ બુદાર્થ છોડદે ॥ અવ પંચ કોષ અરુ, તીન
દેહ કા પટકો સિર તેં ભાર ॥ ૩ ॥ રોગ કી ઔષધિ વતલાર્થ
સેવન પથ સે કીજે ભાર્થ ॥ દૂરિહો મન કી સવ કાર્થ, વાત યહ
વેદોને ગાર્થ ॥ શેર ॥ યહ વક્ત બીતા જાત હે, કર લિજિયે ધસ
કાજ કો ॥ અવ ગુપ્ત સાગર માર ગોતા, છોડ જગ કી લાજ કો
॥ ધસ તન કા તજ હંકાર, ચપરિ કે મત ના વને ચમાર ॥ ૪ ॥

૧૮૮ લાવની ।

પડા ક્યા ગફલત મેં સોવે ॥ કાચા કા કાચા કોટ કાલ કી
પડે ચોટ રોવે ॥ ૧ ॥ કાલ કા જગ મેં માચા શોર, કિસી કા ચલે ન
ઉસ પર જોર ॥ ગિને નહિં સાહુકાર અરુ ચોર, અપના પર કા
ગિને ઔર ॥ શેર ॥ ધસ કાલ ને ખાલી કિયે, સખ લોક અરુ
લોકાપતી ॥ નિરભય હોકર મારતા, અચતા નહીં યોગી યતી ॥
કછુ ઘાલિ રહા મુખ માહિં, કછુક તો રાંધે કછુ પોવે ॥ ૨ ॥ તજે
જો અધિ ભૌતિક હંકાર, કાલ કી પડે ન ઉસપર માર ॥ સોઈ હૈ
સખ કાલન કા કાલ, કાલ કા પડે ન ઉસ પર જાલ ॥ શેર ॥ અગ્ની
સે વહ જલતા નહીં, જલ નહિં સકતા ગાલ વે ॥ હવા સે સૂખે
નહીં, ક્યા કરે તિસકા કાલ વે ॥ કર દેખો દિલ મેં ખ્યાલ, લાલ
કો ક્યોં વિરથા પોવે ॥ ૩ ॥ લીજિયે સતસંગતિ કી ઓટ, દૂર
હોવે સવ તેરે ખોટ ॥ પહિરલે જ્ઞાન કવચ કા કોટ, વહાં પર ચલે
ન યમ કી ચોટ ॥ શેર ॥ ચારોં કહે પુકાર કે, જ્ઞાન વિતુ મુક્તિ
નહીં ॥ તૂં સમઝ અપને જહન મેં, યહ વાત હમ તોસેં કહી ॥
મન તાગા કર વારીક બ્રહ્મ મેં ક્યોં ના અવ પોવે ॥ ૪ ॥ જ્ઞાન
કે મુન લીજે સાધન, વિવેક વૈરાગ હોય સમ્પન્ન ॥ વિષય તેં રોકે
ધન્દ્રી મન યહી હૈ સવ પુનન કા પુન ॥ શેર ॥ જવ સાફ અન્તઃ
કરણ હો, નહિ રહે મલ વિદ્વેષ કો ॥ સાધન કહે યહ જ્ઞાન કે
ફિર પોવે તિસ સે મોક્ષ કો ॥ યહ પાયા તુઝ કો વક્ત, ગુપ્ત કો
પાય મૈલ ધોવે ॥ ૪ ॥

૧૮૯. લાવની ।

નીર વિનુ ચલે કૂપ દિન રાત, બિનુ બૈલ ચર્ષ બિનુ લાવ
 નહીં, કોઈ હાકનવાલા સાથ ॥૧૮૬॥ કુવે પર પનઘટ લાગે ચાર,
 નીર ભરને કો ચલી હૈ નાર મારગ મેં પડતે વિધન અપાર, કૂપ
 ચૈ પહુંચે કોઈ પનિહાર ॥ શેર ॥ જિસ મારગ મેં વિષયર સર્પ
 હૈ, દન્ત બિનુ સખ કો ડસે ॥ જહુર સખ તન મેં ચઢે પ્રાણ કાયા
 સે નસે ॥ બિનુ જલ નહિં જાવે પ્યાસ, પાસ કુવે કે કૈસે જાત
 ॥૧૮૭॥ મિલે કોઈ વાજગર સૂરા, સર્પ કામન્ત્ર દે પૂરા ॥ કૈર જળ
 ઉસ મન્તર કા જાપ, કૈર નહિં ચઢતા વિષ કા તાપ ॥ શેર ॥ વહ
 મન્ત્ર જિસ કે પાસ હૈ ફિર સર્પ કા કુછ ડર હી નહીં ॥ ઉસકો
 કછ સંશા નહીં, વહ કૂપ પર પહુંચે સહી ॥ દૂજ નહિં સકતા
 જાય, સમઝ હમ સકતે સચ્ચી ખાત ॥૧૮૮॥ કોઈ નર આવે નાર
 કે પાસ દેખકર મિટિ જાવે સખ પ્યાસ ॥ પિવે સે હોવે જીવ કા
 નાશ, ઝૂંઝ જાને બુઢી ચિદાભાસ ॥ શેર ॥ એસા જો અદ્ભુત નીર
 હૈ, પીવે સોઈ મરજાત હૈ ॥ જિસ ને ન પીયા નીર વહ, સો
 જગ મેં ગોતા ખાત હૈ ॥ કોઈ મૂરખ સમઝે રમજ, વચન વાની
 સે કહી નહિં જાત ॥૧૮૯॥ કૂપ હૈ બિના ધરણી આકાશ, જહાં પર
 નહિં સંતાપ, ॥ સદા રહતા હૈ ગુપ્ત પ્રકાશ, જગત સે હોકર
 દેખા ઉદાસ ॥ શેર ॥ કૂપ અપને પાસ હૈ, સતગુરુ વિના સમઝે
 નહીં ॥ સખ કહતે સન્ત પુકાર કે, વહ ખાત વેદાં મેં કહી ॥
 અખ કરો વતન કા ચતન, નીર યોં વહી ઉમર સખ જાત ॥૧૯૦॥

૧૯૦. કવિત્ત અલૌકિક ।

પાયો નરતન યાર યામેં કીજિયે વિચાર કહુ, સાર ઓર અસાર
 કહા દેખિયે વિચાર કે ॥૧૯૧॥ વૃથા મત જોવે મૂઢ અન્ત માહિં
 રાવે કૈસે બ્રમ માહિં સોવે તુઝે કહત પુકાર કે ॥ બાર બાર તોં સો
 કહી આયુ જાત સખ વહી, માનિલીજે મેરી કહી ડુક ખાત કો
 નિહાર કે ॥ જળ પાવેગા ગુપ્ત તવ હોવેગા મુક્ત ઝૂંઝ જાનિયે
 જગત ચિત લીજે વહી ધાર કે ॥

૧૯૧. કવિત્ત ।

કાલ વિકારલ સો તો કરત હૈ બુરો હાલ, કાહુ સે ન કરે
દાલ સોચિયે વિચાર કે ॥ અજ ચીંટી પરચન્ત કરે સવહુ કો અન્ત,
એસે કહે સવ સન્ત કાલ ગેરત હૈ માર કે ॥ યહ કાલ ભલા
પાયો નરતન યામે આયો, તજ મોહુ ઓર માયા વૈરાગ ધાર
લીજિયે ॥ જવલો નાહીં નિરવેદ તવ લો પાવત હૈ એદ, ચો
પુકાર કહે વેદ ગુપ્તરૂપ જાન લીજિયે ॥

૧૯૨. કવિત્ત ।

કષ્ટ કીજિયે વિચાર નરતન કો યહ સાર, આપ રૂપ કો સંભાર-
કર અમિય રસ પીજિયે ॥ તત્ત્વભસિ કો વિચાર દેખ સાર વા
અસાર, સાર કો વિચાર વા અસાર દૂર કીજિયે ॥ પાવે વસ્તુ
અનૂપ તાકી દીજિયે ન ઊપ કોઈ આપનો સ્વરૂપ સોઈ ઓર ના
પતીજિયે ॥ દ્વૈત મન ધરે સો તો ગભાં માહિં જરે, દ્વૈત દૂર કરે
સો તો પરમપદ પાકયે ॥

૧૯૩. કવિત્ત ।

જમેં હાડ ઓર ચામ એસો વસો હૈ યહ ગાંમ, કરના જો
કામ સો તો યાહી માહિં કીજિયે ॥ મુત દારા પરિવાર સવ જાનિયે
અસાર, તોસોં કહી વાર વાર છિન એકહી મેં છીજિયે ॥ કીજે
કામ કોઈ એસા જામેં લાગત ન પૈસા, છોડ દીજે એસા વૈસા
એક ધંશ ચિત્ત દીજિયે ॥ કહે ગુપ્ત જો પુકાર એસા નિશ્ચય
ધુર ધાર, એક વા હજાર વાર યહી મુન લીજિયે ॥

૧૯૪. કવિત્ત ।

પાંવ સે ચલત વસ્તુ કર સે ગહત, મુખ સે કહત શબ્દ શ્રવણ
સુનત હૈ ॥ રૂપ નયન સે લખત રસ રસના અખત, ત્વચા શીત
કો સેહત મન રાગ કો ધરત હૈ ॥ દેહ કો સંધાત કૃત્ય દેહ સે
કરત આપ, દેહી તો અસંગ રંગ ઓર ના લહત હૈ ॥ દૃશ્ય તો
અસત્ય આપહી કો જાને સત, વિચાર ચોં કરત જગ રૂપ ના પરત
હૈ ॥ આસ જો તજત ગુપ્ત રૂપ કો મિલત, હોકે નિજનનન્દ વન્ધ
વિનુ વિચરત હૈ ॥ વેદ ચોં ભનત સ્વરૂપ માહિં હોય ગત, કુરુ
લક્ષ પાય ચુપ આપહી રહત હૈ ॥

૧૯૫. કવિત્ત ।

માન મહિમાન રુપઆપનો પિછાન, દૃશ્ય નાશવાન જન
હાટ કેસો મેલા હૈ ॥ કર્મહી કે યોગ આપ વનો હૈ સંયોગ, કર્મ
કે વિયોગ ભોગ ત્યાગ લેત ગેલા હૈ ॥ યાતે તૂતો નિષ્કર્મ સવ
દેહ ધર્મ, સ્વ કર્મ પાય કે કરત નાહિં હેલાહૈ ॥ એસો તત્વ
જ્ઞાન ગુપ્ત જામે નાહીં વંધ મુક્ત, ધુરુ નિશ્ચય મુક્ત જહાં અંધ
ના ઉજેલા હૈ ॥

૧૯૬ કવિત્ત ।

જ્ઞાન સાગર મેં નહાવો માયા મલકો બહાવો, એસા દાવ
નહીં પાવો યહ બાત સુન લીજિયે ॥ એસે જલ માહી નહાવે
જળ શાંતિ ચિત્ત આવે, તખ ઔર ના સુહાવે કષ્ટ આપને મેં
રીઝિયે ॥ જાન્યા આપને કો આપ જળ મિટે તીનોં તાપ, જપૈ
કૌનહૂ કા જપ કહો કાજ કૌન કીજિયે ॥ કરના ભયો સખ દૂર
ગુપ્ત રૂપ હૈ ભરપૂર, સોઈ અપના હૈ નૂર સમઝ યહ લીજિયે ॥

૧૯૭ કવિત્ત ।

ચિત્ર યહ વિચિત્ર ચિત્ર મૈન સૈન સંગ લિયે, તાનકે સુમન
વાન જન ઉર મારે હૈ ॥ સતી માન જો મહાન મતિ તાકી
કરૈહાન, મુરખ અજાન કો બખાન કોન કરૈ હૈ ॥ લલના કો
લોભ દેય તન ધન હુરિલેય, મનકો સંતાપ આપ પાપ માહિં
ડારે હૈ ॥ એસો હૈ અનંગ અંગ બિન સંગ જાય કરૈ, મારકે
સુચેત માર મરે હુયે મારે હૈ ॥ ગુપ્ત શિવકો સરૂપ મહિમા
જાકી હૈ અનૂપ, માર મારે ચૂપ શિવ ભક્ત ના નિહારે હૈ ॥
ધ્રુવશિવરૂપ જાન તાસે હોવે કામ હાન, શિવકે સ્વરૂપ બિન
સવકો પછારે હૈ ॥

૧૯૮ કવિત્ત ।

દેખિયે સુજન જન દેખને કે યોગ્ય આપ, આપકો નિહાર
જાપ દેવકા મિદાઈયે ॥ જાગ્રત સુપન મુષોપતિ ક્ષીન મનતિનકો
જો સાક્ષી સો તો તુરિયા કહાઈયે ॥ એસો તુરિયા સરૂપ તુહીં
તુઝ વિન ઔર નહીં, વેદ મહા વાક્ય સહી સંત અનુભવ સે

જાણ્યે ॥ ગુપ્ત રૂપ કો પિછાન કીજે માયા મલ હાન, ધ્રુવ લક્ષ
જાનિ કહ્યાં જાણ્યે ન આપ્યે ॥

૧૯૯ સવૈયા ।

રૂપ અરૂપ સરૂપ હો ભાસત, દેખિયે ચિત્ર વિચિત્ર વનેહૈ ॥
પુત્ર કલત્ર મિત્ર આદિ વહુ, આંખ સે દેખત શાસ્ત્ર સુને હૈ ॥
દેહ સે આદિ ક્રિયા જિતની, ઉતની સવહી પલ માહિં હને હૈ ॥
ખાંડ કો પૂત અકાશ કો પુખ્ત, ઇમી સવહી યહ વેદભને હૈ ॥
ચિત્ત ચિત્તેરે રચ્યો યહ કૌતુક, સ્વપ્ન સમાન યહ ચિત્ત જને હૈ ॥
ગુપ્ત હૈ સાર અસાર સભી, ધ્રુવડર ડારિ કે જ્ઞાન ગુને હૈ ॥

૨૦૦ સવૈયા ।

સંત શિરોમણિ જે જગમેં, જિન પૂરણ બ્રહ્માહિ આપ
પિછાના ॥ હૂં પરિપૂરણ એક સદા, દ્વૈત અદ્વૈત નહીં કછુ નાના ॥
ઈશ્વર જીવકા ભેદ નહીં કછુ, ભેદ ઉપાધિહિ કૃત વાખાના ॥
ઉપાધિ ઉપાધી કે ધર્મ સભી, મુઝ ગુપ્ત સરૂપ મેં નાહિં સમાના ॥

૨૦૧ સવૈયા ।

તન કે વન મેં તૃણ હિરની, જેહિ મારન હરિજન ચિત્ત
હુભાયો ॥ ॥ ગમકી વાંદક ભરી ઘટ મેં શીતલ બન પલીત
લગાયો ॥ જ્ઞાનકી ગાલી લગી તતકાલ, મરી મિરઘી મનમેં હર-
પાયો ॥ કરની કી કરદ સે છિલિ વનાઈ, વૈષ્ણવ હોત કવાવ
કે ખાયો ॥

૨૦૨ સવૈયા ।

કામ કબૂતર તામસ તીતર, જ્ઞાન કે ખડગ સે મારી ગિરાયો ॥
પંખ પરપંચ દ્વરિ કિયે, મોહકે અસ્થિ નિકારી ડરાયે ॥ સંયમ
કૂટ વિચાર મસાલા, માધુકી સંગતિ સીક લગાયે ॥ બ્રહ્મ હુતાસન
સેંધિ વાવરે, વૈષ્ણવ હોત કવાવ કે ખાયે ॥

૨૦૩ સુલના ।

ભરમકી ભંગ પી આવલા હારેહા, બકત હૈ ઓર તે ઓર
બાની, પુન્ય ઓર પાપ કરિ ॥ સુખ દુખ ભોગતા, જામું અરુ
મરુંહું જીવ અજ્ઞાની ॥ હોશ કર દેશ તૂં આપને આપકી, તૂં

कछु ओरते और जनी ॥ सेरतु देहरी बेद क्यों होरहा, आपनी
 सुधते नाहि आनी ॥ आपको भूल कर दुष्म सुगते सदा,
 शिवता किरण आरि आनी ॥ नाशु दुया ना है कछु होगया,
 हीने सुने सो लभ भरु थल पानी ॥ एव अरु अक्ष का बेद
 कछु है नही, सिधु के माहि जन्म भूँद सानी ॥ कहे गुप्त आनन्द
 सत गित आनन्द तू गुरु ओ वेद से हम् जनी ॥

२०४ जुला ।

यह पाया मनुष शरीर मांस यह सावन का आया ॥ टेका
 दया धरम का रससा करिके जुला बलवाया ॥ प्रेम पहरिया रूषि
 के जिस पर जूलन को आया ॥ १॥ पांच सहेली संग में लेकर
 भगल को गया, मनुषा भगन लया डोलत है जन्म आप ३५
 पाया ॥ २॥ अक्ष राग को गाने लाया, आनन्द उड लाया ॥
 सय लरम करम मिटि गये, जहाँ पर रही नहीं माया ॥ ३॥
 अक्षानन्द को प्राप्त होकर गुप्त ३५ पाया, धू अथ भरना दूरि
 हुवा नहि देर जन्म पाया ॥ ४॥

२०५ जुला ।

जूलत है संत सुजन दृष्टि जूलेकी अजन्म पहार ॥ टेका
 ऐसा जुला संत जुली कर होगये पहले पार, लव सागर की
 नदियां गहरी ॥ वह गये मूढ गवार ॥ १॥ गगन मंडल में
 जुला घाला, पवन बले एक तारा ॥ छडा पिंगला सुषमन द्वारा,
 बढ गये दसवे द्वारा ॥ २॥ निरलय होकर रहे जहाँ पर पडे न
 काल की भार, अजन्मा ताली लगी गगन में दूटत नाहीं तार
 ॥ ३॥ गुप्त गुप्त में आजे आजे अक्षानन्द अंकार ॥ ढोलक अंज
 अजे हुरमुनिया आनत धुइ सितार ॥ ४॥

२०६ जुला ।

ना जनों कल क्या होय, आज कर लीजे यारो काज ॥ टेका
 नर नारायणी देह मिली है, सय शोभा का साज ॥ १॥ धस में
 कछु गड़लत नहि करनी, जूहा सली समाज ॥ २॥ काल सली
 के सिर पर जैले, क्या रघयत क्या राज ॥ पल में तोकों पकडि
 पछारे, ज्यों तीतर को आज ॥ ३॥ सत संगति नौका में जैको,

છોડ જગત કી લાજ ॥ વેદ ટેર કર કહતા તોકો, સખ પ્રમાણ
સિરતાજ ॥૩૧॥ ગુપ્ત રૂપ કો જખહી પાવે, મિટૈ વિષય કી ખાજ ॥
બ્રહ્માનંદ મગન ભયે મનમેં ધ્રુવ નિશ્ચય ભયો આજ ॥૪૧॥

૨૦૭ ઝુલા ।

કહૂ તોહિ સમુઝાય, દેખે દુક ઝૂલે કા આનંદ ॥૧૮૬॥ ઇસ
ઝૂલે પર જો નર ઝૂલે, કટિ જાય ચમકે ફંદ ॥ આશા તૃણા રાગ
દ્વેષ જહાં, કોઈ નહીં દુખ દંદ ॥૧૮૭॥ જિન ઝૂલે પર ઝોંટા ખાયા,
પાર ભયે ભવસિંધ ॥ જનત હૈ કોઈ જનત હારે કયા જાને મતિ
મંદ ॥૧૮૮॥ ઝુજા ઝુલત મિલા પિયારા, આનંદન કા કંદ ॥ સભી
જગહ મેં વ્યાપક એસે ઝુલોં મેં ગંધ ॥૩૧॥ બ્રહ્માનંદ ભરા હૈ
સખ મેં સોઈ ગુપ્તાનંદ ॥ ધ્રુવ યહુ ખાત સમઝ કે વિચારત
જ્યોં પૂનમ કા ચંદ ॥૪૧॥

૨૦૮ ઝુલા ।

જગમેં સોઈ બડ ભાગ, સુજન જન ઝુલિ રહે ઝુજા ॥૧૮૯॥
સુખ દુખ સમાં એક સમ જાને, ના કોઈ પ્રતિ ફૂલા ॥ સખ
કર્મ ભયે જલ છાર, જલ્યા જખ જ્ઞાન અગિન ચૂલા ॥૧૯૦॥ હુવા
જ્ઞાન અગિન પરકાશ, અવિદ્યા નાશ ગઈ મૂલા ॥ હમ રહતે હૈં
બે ખોડ કહા અખ કર સક્તી તુલા ॥૧૯૧॥ સુખ કે સાગર ગાતા મારા
મિટિ ગઈ સખ સૂલા ॥ જખ ઉઘડે જ્ઞાન કપાટ, મોક્ષ કા દરવાજા
ખૂલા ॥૩૧॥ ઉડી ગુપ્ત ખુસ વોય, ફૂલ એક બ્રહ્માનંદ ફૂલા ॥
ધ્રુવ નિશ્ચય ભયો અગાધ નહીં કંઈ જાન્યા નહિં ભૂલા ॥૪૧॥

૨૦૯ ઝુલા ।

રહી સુરત હિંડોલે ઝૂલ, મુલે મેં ભૂલ નહીં પાઈ ॥૧૯૨॥
ધુન સુન મનવા મગન ભયો હૈ, સુરતા મુસકાઈ ॥ એક અખ-
ડિત બ્રહ્મ શુન્યા જખ, આપ રૂપ પાઈ ॥૧૯૩॥ દ્વૈત અદ્વૈત ભૂલ
ગઈ સખહી, જહાં કોઈ જીવ નહીં માર્ગ ॥ જ્યોં લોન પુતરિયા
જાય સમુદર મેં, ઉલટ નહીં આઈ ॥૧૯૪॥ શુદ્ધ રૂપ કો જિસને
પાયા, મિટિ ગઈ સખ કાઈ ॥ કહન સુનન મેં કહુ નહિં આવે,
ખાત યહુ સમઝન કી ભાઈ ॥ બ્રહ્માનંદ મેં મગન ભઈ, જખ

જળ આનંદ અધિકારી ॥ ધૂવ પાયા હૈ ગુપ્ત જહાં પર, લેક
નહીં રાઈ ॥૪॥

૨૧૦ ઝુલા ।

આયો સાવન ચે મન ભાવન, ચલો ગુપ્તેશ્વર દરબાર
ઠાઠેકા ચિત્ત કા ચંદન પ્રેમ કી પાતી, સુરત પુષ્પ લે લાર, અગર
કપૂર દધી ઔર માખન ॥ છુટત દૂધ કી ધાર ॥૧॥ સંયમે કા
કર થાલ લિયા, હૈ, જ્ઞાન દીપલિયો જર ॥ ગુપ્તેશ્વર કી પૂજા
કરકે પાયા આતમ દીદાર ॥૨॥ જ્ઞાન ઘટા જળ ચઢી ઉમડ કે
પડને લગી ફાહાર ॥ મન આતક જળ કરને લગ્યા, બ્રહ્માનંદ
પુકાર ॥૩॥ કાયા ઘન મેં ચેતન બિજલી, ચમક રહી ચમકાર ॥
બ્રહ્માનંદ ગુપ્ત ભયો પરઘટ કહતા ધુર પુકાર ॥૪॥

૨૧૧ ઝુલા ।

કર દિલમેં દેખો જ્યાલ, લાલકો ક્યોં વિરથા ખોવે ॥૧॥
લાખ ચૌરાસી ભરમત આયા, ફેર ક્યા ગફલત મેં સોવે ॥ ચહ
માનુષ તન છુટિ જાય, મૂંઠ ફેર સુષુકસુષુક રોવે ॥૨॥ ધન ધામ
તનય ઔર વામ. દેખિકે ધનકો ક્યોં મોહે ॥ અન્ત સમય કે
માહિં, તેરા ચહાં કોઈ નહિં હોવે ॥૩॥ ભજ પરમાતમ દેવ,
તેરે વહ સખ દુખ કો ખોવે ॥ જનમ મરન કા છુટિ જાય ચક્કર,
આનંદ જળ હોવે ॥૪॥ કર બ્રહ્માનંદ વિચાર, ગુપ્ત મેં ક્યોં
ના મન મોવે ॥ ધુર નિશ્ચય કર કીજૈ સુધરે, જળ એક બ્રહ્મ
જાવે ॥૫॥

૨૧૨ ઝુલા ।

તુઝે કહતા ગુપ્ત પુકાર, વખત ચહ તુઝ કો પાયા હૈ ॥૧॥
જગત શહર મેં જીવ વેપારી, સૌદે આયા હૈ ॥ અળ સૌદા
કીજૈ સમજ બહુત ટોટે ને ખાયા હૈ ॥૨॥ જો સૌદાગર સૌદે
આયા, રહને ન પાયા હૈ ॥ ચહ કાલ શેર વિકરાલ, જિસે સખ
કોઈ ખાયા હૈ ॥૩॥ જ્ઞાન કવચ કો પહિર, સભી ચહ ઝૂઠી માયા
હૈ ॥ લિયા તત કા તેગ બનાય, કાલ નિયરે નહિં આયા હૈ ॥૪॥
જિસ કો પાયા હૈ નફા, સોઈ બ્રહ્માનંદ નહાયા હૈ ॥ ગોતા ગુપ્ત
લગાય, ધુર ફિર ઉલટ ન આયા હૈ ॥૫॥

૨૧૩ જુલા ૧

રંગ વરસે બ્રહ્માનન્દ ચન્દ, જહાં સૂર નહિં તારા ॥૧૬॥
ના કોઈ પરકાશ જહાં પર, ના કોઈ અધિયારા ॥ ૧૭ ॥ દેખા
તરાજૂ તોલ, નહીં કછુ હલકા નહીં ભારા ॥૧૮॥ જહાં નહિં
પિંડ નહિં પ્રાણ, નહીં કોઈ આધેય આધારા ॥ જહાં સૂક્ષ્મ
સ્થૂલ, તહાં કોઈ મહારા નહિં થારા ॥૧૯॥ જહાં એક નહિં દેાય
વહાં કોઈ મિત્રા નહિં ન્યારા ॥ સખ માયા ગર્ભ બિલાય, છૂટિ
રહી હૈ ચેતન થારા ॥૨૦॥ જહાં નહિં ગુપ્ત નહીં પ્રગટ, જીવ અરુ
બ્રહ્મ સભી જારા ॥ જહાં નહીં ધ્રુવ નહિં ચલે જહાં પર મધુર
નહીં ખારા ॥૨૧॥

૨૧૪ જુલા ૧

ઘટ મેં મયા જ્ઞાન કા ઘોટ, પીસિ દિયે ભુઝી ઓર આભાસ
॥૨૨॥ વ્યાપક બ્રહ્મ આપકો જાન્યા, પૂરણ સ્વતઃ પ્રકાસ ॥ જીવ
ઈશ કો મિટિ ઉપાધી, દૈસે અખ કરિયે કર્મ ઉપાસ ॥૨૩॥ સ્વર્ગ
અરુ નરક એક કરિ જાન્યા, રહી નયમ કો ત્રાસ ॥ ભેદ ભરમ સખ
દૂર હુવા, સોઈ કુરડી સોઈ કૈલાસ ॥૨૪॥ બ્રહ્મ પુરી અરુ ભંગી
કા ઘર, સખહી હોવે નાસ ॥ એસી બાત સમજ કે પ્યારે, સખ
છૂટી જગત કી આસ ॥૨૫॥ અન્ધકાર મિટિ ગયા, દસહૂં દિશિ હુવા
બ્રહ્મ ઉજિયાસ ॥ ગુપ્ત રૂપ ભયા પરઘટ, ધ્રુવ જખ કરને લાગે
હાસ ॥૨૬॥

૨૧૫ જુલા ૧

જિસ કો સમજી ચહુ રમજ તિનોં કી દુરિ હુઈ શંકા ॥૨૭॥
ઉડિગયા કોટ અજ્ઞાન, હુટી જૈસે રાવન કી લંકા ॥ સખ કર્મ અસુર
હુયે નાશ, કાલ રાવન કા કિયા ફંકા ॥૨૮॥ ચઢિ ઉતરે જ્ઞાન કે
સેત, જિજ્ઞાસૂ રામચન્દ્ર બંકા ॥ જખ પાર્થ સીતા મોક્ષ, જીત કા
બાજ હૈ ડંકા ॥૨૯॥ બ્રહ્મરાજ મેં અદલ જમા સખ, ખુશી ભઈ
રંકા ॥ ચઢિ મુક્તી પુણ્ય વિમાન, અવધ કા આનિ કિયા ઝંકા ॥૩૦॥
આનન્દ મેં સખ અવધ બીતતી, શોક સખ દૂરિ હુયા મન કા ॥
ધ્રુવ ગુપ્ત બ્રહ્મ કો પાય, ફેર કછુ શોચ નહિં તન લા ॥૩૧॥

૨૧૬ મસ્તી ।

કોઇ હાલ મસ્ત કોઇ માલ મસ્ત, કોઇ મૈના તીતર સૂચે મેં ॥
 ૧૧ કોઇ ખાન મસ્ત પહિરાન મસ્ત, કોઇ રાગ રાગની છુદે મેં ॥
 કોઇ અમલ મસ્ત કોઇ રમલ મસ્ત, કોઇ સતરંજ ચોપડ જૂચે મેં ॥
 ૧૨ એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત, સખ પડે અવિદ્યા કૂચે મેં ॥૧૧॥
 કોઇ અકલ મસ્ત કોઇ શકલ મસ્ત, કોઇ ચંચલાતાર્ધ હાંસી મેં ॥
 કોઇ વેદ મસ્ત કતોવ મસ્ત, કોઇ સેવક મેં કોઇ દાસી મેં ॥
 કોઇ ગ્રામ મસ્ત કોઇ ધામ મસ્ત કોઇ મક્કે મેં કોઇ કાશી મેં ॥
 એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સખ ફૂંસે અવિદ્યા ફાંસી મેં ॥૧૨॥
 કોઇ હાટ મસ્ત કોઇ ઘાટ મસ્ત, કોઇ ખન ખરવત ઉજિયારા મેં ॥
 કોઇ જાત મસ્ત કોઇ પાંતિ મસ્ત, કોઇ તાત બ્રાત સુત દારા મેં ॥
 કોઇ ધરમ મસ્ત કોઇ કરમ મસ્ત, કોઇ મજહુબ ઠાકુર દ્વારા મેં ॥
 એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત, સખ વહે અવિદ્યા ધારા મેં ॥૧૩॥
 કોઇ પાઠ મસ્ત કોઇ ઠાઠ મસ્ત, કોઇ ભેરેં મેં કોઇ કાલી મેં ॥
 કોઇ ગ્રન્થ મસ્ત કોઇ પન્થ મસ્ત, કોઇ શ્વેત પીતરંગ લાલી મેં ॥
 કોઇ કાવ્ય મસ્ત કોઇ ખવાખ મસ્ત, કોઇ પૂરણ મેં કોઇ ખાલી મેં ॥
 એક ખુદા મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સખ ફૂંસે અવિદ્યા જાલી મેં ॥૧૪॥
 કોઇ રાજ મસ્ત ગજ ખાજ મસ્ત, કોઇ છપરે મેં કોઇ પૂલે મેં ॥
 કોઇ યુદ્ધ મસ્ત કોઇ કુંદ મસ્ત, કોઇ ખડગ કુઠાર વસોલે મેં ॥
 કોઇ પ્રેમ મસ્ત કોઇ નેમ મસ્ત, કોઇ છીંકે મેં કોઇ મૂલે મેં ॥
 યક ખુદ મસ્તી ખિન, ઔર મસ્ત સખ પડે અવિદ્યા ચૂલે મેં ॥૧૫॥
 કોઇ સાકિ મસ્ત કોઇ ખાક મસ્ત, કોઇ મલ મલ મેં કોઇ ખાસે મેં ॥
 કોઇ યોગ મસ્ત કોઇ ભોગ મસ્ત, કોઇ સ્થિર મેં કોઇ ચંચલ મેં ॥
 કોઇ ઋદ્ધિ મસ્ત કોઇ સિદ્ધિ મસ્ત, કોઇ લેન દેન કી કલકલ મેં ॥
 એક ખુદ મસ્તી ખિન, ઔર મસ્ત સખ ફૂંસે અવિદ્યા દલદલ મેં ॥૧૬॥
 કોઇ રદન મસ્ત કોઇ વદન મસ્ત, કોઇ પશુ પક્ષી કે સાવક મેં ॥
 કોઇ નૈન મસ્ત કોઇ વૈન મસ્ત, કોઇ લડકી મેં કોઇ ચાવક મેં ॥
 કોઇ સૈન મસ્ત કોઇ ચૈન મસ્ત, કોઇ નઈયા મેં કોઇ બાવક મેં ॥
 યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સખ પડે અવિદ્યા પાવક મેં ॥૧૭॥
 કોઇ ઈસ્ત મસ્ત કોઇ બ્રિષ્ટ મસ્ત, કોઇ નતિની મેં કોઇ નાતે મેં ॥
 કોઇ નામ મસ્ત કોઇ ચામ મસ્ત, કોઇ ઈંટ મેં કોઇ ખાતે મેં ॥

કોઈ ધમલ મસ્ત કોઈ ચિલમ મસ્ત, કોઈ અક્ષર મેં કોઈ પાતી
 મેં ॥ ૧૮૮ ॥ કોઈ ખુદ મસ્તી બિન, ઔર મસ્ત સખ કટે અવિધા કાંતી
 મેં ॥ ૧૮૯ ॥ કોઈ જીવ મસ્ત કોઈ સીવ મસ્ત, કોઈ પુસ્તક મેં કોઈ
 પાની મેં ॥ કોઈ મૂલ મસ્ત કોઈ તૂલ મસ્ત, કોઈ સાખા મેં કોઈ
 ડહને મેં ॥ કોઈ લોક મસ્ત પરલોક મસ્ત, કોઈ તાને મેં કોઈ
 ખાને મેં ॥ ૧૯૦ ॥ કોઈ ઉર્ધ્વ મસ્ત કોઈ અર્ધ મસ્ત કોઈ બાહુર મેં
 કોઈ અન્તર મેં ॥ કોઈ દેશ મસ્ત પરદેશ મસ્ત, કોઈ ઔષધ
 મેં કોઈ મન્તર મેં ॥ કોઈ ધામ મસ્ત કોઈ બામ મસ્ત, કોઈ નાટક
 ચેટક તન્તર મેં એક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત સવ ભરમે
 અવિધા જન્તર મેં ॥ ૧૯૧ ॥ કોઈ પુષ્ટ મસ્ત કોઈ તુષ્ટ મસ્ત, કોઈ દીરગ
 મેં કોઈ છોટ મેં ॥ કોઈ ગુફા મસ્ત કોઈ સફા મસ્ત, કોઈ તૂંબે મેં
 કોઈ લોટ મેં ॥ કોઈ જ્ઞાન મસ્ત કોઈ ધ્યાન મસ્ત, કોઈ અસલી
 મેં કોઈ ખોટ મેં ॥ ૧૯૨ ॥ કોઈ મજબ મસ્ત કોઈ ગજબ મસ્ત કોઈ
 કોડી મેં કોઈ પૈસે મેં ॥ કોઈ એક મસ્ત કોઈ દોય મસ્ત કોઈ
 ગૈયા મેં કોઈ ભૈસે મેં ॥ કોઈ મણડલ મસ્ત, કોઈ પણડલ મસ્ત,
 કોઈ ચેલે મેં કોઈ ચેલી મેં ॥ ૧૯૩ ॥ કોઈ મૂંઝ મસ્ત કોઈ ભૂંઝ મસ્ત
 કોઈ નંગે મેં કોઈ ચંગે મેં ॥ કોઈ ભવન મસ્ત કોઈ ગવન મસ્ત,
 કોઈ મૌન મસ્ત કોઈ દંગે મેં ॥ કોઈ નદી મસ્ત કોઈ બદી મસ્ત,
 કોઈ તીરથ મેં કોઈ ક્ષેતર મેં ॥ ૧૯૪ ॥ કોઈ ટિકટ મસ્ત કોઈ વિકટ
 મસ્ત, કોઈ ઘંટી મેં કોઈ સિંગલ મેં ॥ કોઈ તાર મસ્ત પલગાર
 મસ્ત, કોઈ કસરત કુશતી દંગલ મેં ॥ કોઈ બૂંટ મસ્ત કોટ મસ્ત
 કોઈ ટાપી મેં કોઈ કુપ મેં ॥ ૧૯૫ ॥ કોઈ રાગ મસ્ત કોઈ બાગ મસ્ત
 કોઈ ઢાલક ઝાંઝ સિતારે મેં ॥ કોઈ શેલ મસ્ત કોઈ મહુલ મસ્ત,
 કોઈ કરતે શયન ચૌખારે મેં ॥ ૧૯૬ ॥ કોઈ તાલ મસ્ત કોઈ ખ્યાલ મસ્ત,
 કોઈ સાંસ્ગી ધોતારે મેં ॥ ૧૯૭ ॥ કોઈ ડંડ મસ્ત કોઈ સંડ મસ્ત

કોઈ સંન્યાસી પંથાઈ મેં ॥ કોઈ કુંભ મસ્ત કોઈ જંગ મસ્ત,
 કોઈ પટે મલેહુદી સ્યાહી મેં ॥ કોઈ હિન્દુ મસ્ત કોઈ મુસલ મસ્ત,
 કોઈ કાજી પડિત મુલ્લા મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત
 સખ ફૂંસે અવિદ્યા ગદલા મેં ॥૧૬॥ ચે લૌકિક મસ્ત કહાં ભગ
 વરનો, હૈ માયા કે દંગલ મેં ॥ કરે કૌન ઈનકી ગિનતી સવ
 જકડે હૈ દહ સંગલ મેં એક છિન મેં ૩૭૮ પુષ્ટ એક, છિન મેં
 સ્થિત લદા અમંગલ મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત
 સખ ભૂલિ રહે અવિદ્યા જંગલ મેં ॥૧૭॥

દોહા—વસ્તુ અનાતમ મેં ફૂંસે, ત્યાગા આતમ રૂપ ॥

દુનિયાં મેં ભટકત ફિરે, તે મૂઢન કે ભૂપ ॥

આતમ વસ્તૂ ત્યાગિ કે, કરે જગત કી આસ ॥

મૃગ તૃષ્ણા કે નીર સે દૂર ન હોવે ખ્યાસ ॥

૨૧૭ છપ્પય છન્દ ।

સો નર જાનો સંત અંત જિન જગકા કીના, કરી અવિદ્યા
 નાશ આપ પરિપૂરણ ચીના ॥૧॥ રહ્યો ન ભેદકો મૂલ શૂલ અજ્ઞાન
 હિરાના, અદ્વય અમલ અપાર રૂપ જિન નિશ્ચય જાના ॥૨॥
 શંકા રહીન કોય મોહ વ્યાપે નહિં માયા, ના કોઈ તાત ન ભ્રાત
 નહીં કોઈ જન્મી જાયા ॥૩॥ સદા અખંડિત આતમા ચેતન પૂરણ
 શુદ્ધ, ગુપ્ત ગલી બેઠ કર કોઈ લખે સંતપર ખુદ ॥૪॥

૨૧૮ છપ્પય છન્દ ।

જગ તેજે ન માયા મોહ નામ અતીત કહાવે, ઘરમેં લેહિ
 કુસીદ ભીખ પુનિ માંગન જાવે ॥૧॥ કહેં એકાંત બનેવાસ સંગ
 બહુ દ્વંદ મચાવે, સોવે નિરંતર રાત દિન કહેં હુમ ધ્યાન લગાવે
 ॥૨॥ સોધન મઘ મલીન મુખ ભૂપ સેજ કર પૌલ પર ॥ ધન
 લિપસ્યા બ્યાકુલ મહા સરમા પતિ સમાહુત પર ॥૩॥ હરકા પંથ
 સો દૂર પંથ વહુ આપ ચલાવે, રહી ફકીરી દૂર માંગિકર પેટ અઘાવે
 ॥૪॥ શૈનિ ઈરે રતિ ભોગ દિને પુનિ ભસ્મ રમાવે, આપ કરે
 સખ પાપ ઔર કો ધર્મ સુનાવે ॥૫॥ ઇસ ભાંતિ અતીત જો મેં

લખે નખ શિષ તેં અભિમાન અતિ ॥ નિશિ વાસર દમડે ચહેં
કબહુ ન હોવેં રામ રતિ ॥૬॥

દોહા-ચામ ચિરડ સળ જગતહે, ચક ચૂંધર પઢી પુરાન ॥

ષટ શાસ્ત્રી પાગલ ભયે, વેદાંતી કેા ઉલ્લૂ જન ॥

યે ચારિડ અન્ધે ભયે, વિના સ્વરુપક જ્ઞાન ॥

ગુપ્ત રૂપ મેં ઘટ લખો, નિત્ય અનિત્ય કેા છાન ॥

૨૧૯ મરાઠી છન્દ ।

જવ તૂં ભૂલા અપને આપકો તખ સે પાપ લગા ભારી,
જન્મ મરણ કા અન્ત ન આયા બહુત ઘરી શિર પર ખવારી ॥
કભી ભયા તૂં પુરૂષ નપુંસક કભી ભયા હૈ બલ ધારી ॥ બડે બડે
યોધા રણમેં જીતે યુદ્ધ ક્રિયા હૈ અતિ ભારી ॥ કભી ભયા તૂં રાજા
રાની કભી ભયા આજ્ઞાકારી ॥ કભી તો દર દર ફિરે માંગતા બહે
સન્યાસી અરુ બ્રહ્મચારી ॥ કભી તૂં બ્રહ્મા કભી તૂં વિષ્ણુ કભી
બનાહૈ ત્રિપુરારી ॥ દેવ પુરિકા અધિપતિ હોકર ભોગે ભોગ બહુત
ભારી ॥ જખ લગ અપના આપ ન જાન તખ લગ વિપત્તિ સહી
ભારી ॥ અખતો કહૂં સમજલે પ્યારે માર અધિધા મંજરી ॥ ખાકી
મનકો પકડિ પછારો વસ કીજૈ પંચો નારી ॥ તત્ત્વમસિ કા અર્થ
વિચારો છોડ જગત કી સખ ચારી ॥ ગુરૂ વેદકા આશા સમજો
શ્રદ્ધા કરિ કે અતિ ભારી ॥ તત્ત્વમસિ કા અર્થ બતાવેં એસે ગુરૂ
પર બલિહારી ॥ વાચ્ય અર્થ કા ત્યાગ કરો અરુ લક્ષ અર્થ કી
કર ત્યારી ॥ ગુપ્ત રૂપ ઘટ માહિ વિચારી બાત કહી તોસોસારી ॥

૨૨૦ મરાઠી છન્દ ।

જો તૂં સચ્યા રામ સનેહી ફેર જગત સે નેહ કહા જો તુમને
ઘરખાર તજ તખ ફેર દુવારે મેં કામ કહા ॥૧॥ દુખ રૂપ જાન
કર કુટુંબ તજ ફિર સેવક સતી મેં આરામ કહાં ॥ જાતિ વરણ
સખ છોડિ દિયા તખ ફેર મજબ કી દુકાન કહાં ॥૨॥ સો હૈ ઝુકા
રામસનેહી જો ધન બાતોં મેં અટક્યા ॥ રામ દ્વારા મેં કથા
સુનાવે હાથ લિયે વાણી ગુટકા ॥૩॥ ઔરન કેા ઉપદેશ બતાવે
આપ ફિરે જગમેં ભટકા ॥ જ્ઞાન ધ્યાન કી રાહન પાઈ કનક

કામના મેં અટકા ૥૪૥ ગુપ્ત મતેકી અખર નહીં ફિર કયા ફેરેકી
માલા ૥ ચેલા ચેલી ફિરે મૂંડતા રામનેહી કા સાલા ૥૪૥

૨૨૧ મરાઠી છન્દ ।

પહલવાન જગ કે બહુ જીતે, ક્રતે કિયે કલહી ખારે ૥ મહ
હંકાર માન મેં ધસ ગયા, અન્દર લૂટ રહે સારે ૥ યે નિતગપટ
હૈ તો પર, ચશમ ખોલ દેખો પ્યારે કયા મસ્ત હુવા તુ ફિરે જગત
મેં, તેરે અન્દર પહલવાન ભારે ૥ યહ પહલવાન મન ચાલીસા
હૈ, જિસ કે યે ચેલે સારે દસ શાગિદ્ સંગ મેં રહતે, પંચ કરે ન્યારે
ન્યારે ૥ જો કોઈ ઈન સે કૃશતો જીતે, પહલવાન હોવે પૂરા ૥ કાયર
કો યે પકડિ પછારે, કોઈ જીતત હૈ સારા ૥ જિન ગુપ્તાનન્દ કો
પાય લિયા, ઉન કૃશતી જીતી દંગલ મેં હુપ શોક સખ મનકે નાશે,
અવધ જાત હૈ મંગલ મેં ૥

૨૨૨ ત્રોટક છન્દ ।

આતમ નિતહી પરકાસત હૈ, તત્ત્વ વેતન યોં ભાસત હૈ ૥
જાન્યત મેં સખકો જાનત હૈ સ્વપ્નેકે માહિ પિછાનત હૈ ૥૧૥
સુષપતિ મેં સખકા ભોગ કરે, તુરિયે મેં સાક્ષી રૂપધરે ૥ યહ આ-
તમ અતુગત એક રહે, સખ દેહન કા વ્યતિરેક રહે ૥૨૥ વિધિ
નહિં તેજસ પ્રાણસ ભી, તુરિયતા કૈસે હોયે જભી ૥ એસા નિજ
આતમ રૂપ તુહી ૥ અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય રૂપ સહી ૥૩૥ સો વ્યાપક
બ્રહ્મ અખંડ સદા, તિસકો નર જાને મૂઠ જુદા ૥ સત ચેતન
આનન્દ શુદ્ધ તુહી, ધોખે મહું દુનિયા જાત વહી ૥૪૥

૨૨૩ ત્રોટક છન્દ ।

સતસંગતિ નૌકા બૈઠત ના, સતગુરુ કેવટિયા જાન્યત ના ૥
કૈસે ઉતરે ભવ પાર જના, દિન રાત લગે ધન ધામ મના ૥૧૥
તરને કા સકલ સમાજ બના, વૃથા હુખત હૈં મૂઠ જના ૥ સતગુરુ
કે શબ્દ લાગત ના, યે મોહ નીંદ સે જાગતના ૥૨૥ નિત ચૌકીદાર
જગાવત હૈ, ફિર આલસ કર સોજાવત હૈ ૥ જખ ચોર નિશા મેં
લૂટત હૈ, જાગે તખ છાતી કૂટત હૈ ૥૩૥ જખ ચશમ ખુલી હૈ
અન્દર કી, સખ વસ્તુ ભાપી મન્દિર કી ૥ જખ ગુપ્તરૂપ કો પાયા
હૈ, નહીં કાલ કર્મ જહું માયા હૈ ૥૪૥

૨૨૪ ત્રોટક છન્દ ।

જહાં રામ રહીમ કરીમ નહીં । અલ્લા ઈશ્વર કી સીમ નહીં
 જહાં રંગ રૂપ કા ભેદ નહીં । કોઈ સ્થિરતા અરુ ખેદ નહીં ॥૧॥
 જહાં કાગજ સ્યાહી કલમ નહીં । લિખના પઢના કોઈ ઇલમ નહીં ।
 જહાં વેદ ક્તેવ કુરાન નહીં । કોઈ દેવલ-દેવ નિશાન નહીં ॥૨॥
 જહાં ચન્દન તારા ભાનુ નહીં । કોઈ સાધન સાધ્ય અરુ જ્ઞાન નહીં
 અષ્ટાંગ ન યોગ સમાધી હૈ । કોઈ સાદી નાહિં અનાદી હૈ ॥૩॥
 ચેતન ચમકારા ચમકત હૈ । જહાં જ્ઞાન ધ્યાન સખ કટિપત હૈ ॥
 જો ઈન ગલિયન મેં આવેગા । સો ગુપ્ત રૂપ કો પાવેગા ॥૪॥
 દોહા—જો દીખે સો હૈ નહીં, નહિં દીખે સો જન ॥

વૃત્તિ લક્ષણા કીજિયે, અરુ અનુભવ પરમાન ॥

૨૨૫ વારખૈત ।

આદિત્યવાર નિવાર સખ, સંભાર આપને આપ કો ॥ ઔર
 ભરમ સવ છોડિ કર, નર જપો સ્મિ જપ કો ॥૧॥ સોમવાર અખ
 ધાર સમતા, જર દૂજ ભાવવે ॥ મનુષ જન્મ કી મૌજ પાઈ, ફેરન
 એસા દાવવે ॥૨॥ મંગલવાર નિહાર લે છખિ, ચહૂં દિશિ આનન્દ
 લયો ॥ સત ચિત્ત આનન્દ એક લખિ, સખ તાપ ત્રય મનકે ગયે
 ॥૩॥ બુધવાર બિચાર લે, અપાર વાર સરૂપ વે ॥ પાર વારકી
 ગમ નાહીં. નહિં જહાં છાયા ધૂપવે ॥૪॥ વૃહસ્પતિવાર ઉચારતા
 ગુરુ, ગમ્ય લખિ બેહુદ ગયે ॥ હુદકા દરજા છોડિ કર તુમ દેખ
 આનન્દ નિત નયે ॥૫॥ શુક્રવાર પુકારિ કહતા, પશ્ચિમ કો મત
 જાઝવે ॥ પશ્ચિમ દિશાકો શૂલ હૈ, નર આવે પૈર ફેડાય વે ॥૬॥
 શનિચરવાર જોહાર ગુરુકો કરત હજાર ન બારવે ॥ પકડિ ભુજ
 જિન કાઢિયા જન વહે જાત મઝધાર વે ॥ ૭ ॥ સાત વાર વિચાર
 લે, નર સાર સખ તોંસો કહા ॥ તત્વ પદ કો શોધિલે ફિર ગુપ્ત
 અસિપદ તુહિ લયા ॥ ૮ ॥

દોહા—વાર ખત કે અર્થકા, મન મેં કર વિચાર ॥

જીવન મુક્ત લહે વહી, જન્મ ન દૂજવાર ॥

સાક્ષી પૂરન એક હૈ, ડોગર ડહર દયાલ ॥

અર્ધઉર્ધ અરુદસોં દિશિના, કહું જોરાકાલ ॥
 સો આતમ કૂટસ્થ હૈ, નહીં બ્રહ્મ સે ભેદ ॥
 ભેદ પાપકો દૂર કર, ખડા પુકારે વેદ ॥
 ભેદ ઉપાધી કૃત હૈ, સો તૂં મિથ્યા જન ॥
 તૂં ભૂમા સુખરૂપ હૈ, યહી, બ્રહ્મકા જ્ઞાન ॥
 ઔર જ્ઞાન સખ જ્ઞાનડી, બ્રહ્મજ્ઞાન સોઈ જ્ઞાન ॥
 જૈસે ગોલા તોખકા, કરતા જય મદાન ॥

૨૨૬ ખૈત ।

બન્દે જાનિ આતમ સાર વે, જો આવે દેખન સુનન મેં
 સખહિ કો જાન અસાર વે ॥૧॥ નૌકાલિયે હૈં કાલ ને ચૌબીસ
 પર પડી મારે ॥ જો ચક્રવર્તી રાવથે ॥ સખહી કી ઉડિગઈ
 છારવે ॥૨॥ અનગિનત વિજ્ઞુ ચતુર મુખથે અન ગિનત શંકર
 ગયે ॥ ઇનસે આદિ ઔર ભી સખ કાલને ચઢની કિયે ॥૩॥
 આગે જો બાકી રહે એક દિના સખકો ખાયવે ॥ વારી ધરા મુમેરૂ
 ચારૂ સખહી ભરમ હોયજાહિ વે ॥૪॥ યહ સમજ વાત વિચારલે,
 ઇસ દેહ કી ક્યા આસવે ફસી કર અવિદ્યા જાલમેં જૂંઠ કરે પર-
 લાપ વે ॥૫॥ વેદ સતવાદી કહે તિસકી ભી માને નાહિં વો
 સખ જૂંઠા નામ અરુ રૂપ હૈં, કયોં ઉલજતા તિસ માહિં વે ॥૬॥
 જિમિ નામ નામી ભાસતે હૈ, સ્વપ્નકે મંઝાર વે ॥ પૂજ્ય પૂજક
 અર પૂજા દ્રષ્ટા કે આધાર વે ॥૭॥ ખુદ આપ ચેતન ગુપ્ત પર-
 ઘટ કર કે દેખ સંભાલ વે ॥ સો સમજ તેરા રૂપ હૈ, સખ
 કાલહૂ કા કાલવે ॥૮॥

૨૨૭ સવૈયા છન્દ ।

પિયુસે નાહિં મિલી લડકી, તખ ગુડી કે ખેલ સોં ખેલિ
 રહી હૈ ॥ જખ સાજ સજ્યા તખ ખેલ તજ્યા. વહ બાપ કે
 તાખ મેં ખેલિ ગઈ હૈ ॥ જૈસે સ્વપ્ને મેં દેવ બનાય લિયા તિસ

દેવકી સેવ મેં આચુ ગઈ હૈ ॥ જાગિ ઉઠાવત દેખિ રહ્યા તહાં
દેવરુ દાસ કી ગંધ નહીં હૈ ॥

સોરઠા—ગુપ્ત ગલી કે માહિં, ના કોઈ દેવ ન દાસ હૈ ॥
દીને ભર્મ ખહાય, એક અદ્વિતીય આપ હૈ ॥

૨૨૮ વૈત ।

ખંદે જાન આતમ રૂપ વે, ઇસ નર કે તનકો પાય કર કયોં
પડત હૈં ભવ રૂપ વે ॥ ભવ તરન કાયા ઘાટ હૈ સતસંગ નૌકા
ઐક વે ॥ મિલિ કર ગુરુ મલ્લાહ સેં, ઇસ ભવ કે સંકટ કાઢિવે
॥૧॥ જો કાજ કરના કાલિહૈ, કર લિજિયે તિસે આજવે ॥ નહિં
ખખર ક્ષણ એકકી, યહ બિગડી જવે સાજવે ॥૨॥ ઇસ ઘોખે
મેં બહુતેં ગયે હૈ, આનિ પકડે કાલવે ॥ માટી મિલાયે ભૂપ
ભારે, લુટગયે ધન માલ વે ॥૩॥ ભક્તી કરમ નિષ્કામ કે અખ
સાજકો તુહ સાજ વે ॥ જિસ કરકે પાવે જ્ઞાન કો, ઇસ જગત
સે મત લાજિ વે ॥૪॥ સખહી અવિદ્યા જલ કી, યહ ઇશ ને
લેખજ રચી ॥ અહં બ્રહ્મ મેં આપ હૂં યહ બાત જિનકે ઉર
જચી ॥૫॥ જનમ જિસકા સફલ હૈ, પાયા હૈ અપના આપ વે ॥
શાંત હોકે વિચરતે, છુટિ ગયે હૈં તીનોં તાપ વે ॥૬॥ શંકા
ન માને લોકકી, કછુ સમજતે નહિં વેદ વે ॥ ગુરુ વેદ યા ભય
માનતે હૈં જિનકે હૈ કુછ ભેદ વે ॥૭॥ વહુ ગુપ્ત ગુપ્તાનન્દ હૈ,
જિનકો નહીં દુખ દ્રવ વે ॥ વહિ આપ દિવ્યાનન્દ હૈં, નહિં
પડે યમ કે ફંદ વે ॥૮॥

દોહા—સાખુન જ્ઞાન લગાયકર, માયા મલ કો ઘોય ॥

શીલ શિલા ફટકારિ લે, ફેર ન મૈલા હોય ॥

૨૨૯ તિથિ જૈત ।

પૂનમ પૂરણ આતમા હૈ, અસ્તિ ભાંતિ પ્રિયે સદા ॥ સત-
ચિત આનન્દ એક હૈ, સખ સે મિલા સખ સે જુદા ॥૧॥ એકમ
એક નિહાર લે, નર કહા દેખે દૂર વે ॥ જલકે જલાબિમ્બ જયોં
સદા, સો સમજ તેરા નૂર વે ॥૨॥ દુજ દુતિયા દૂરકર, તું સદા
આપહિ આપ વે ॥ જન્મા ન મુઆ હૈ કભી, કોઈ નહીં માર્ધ

આપ વે ॥૩૩॥ તીજ તીનોં સે જુદા, દુક ખોલ ચશ્મે જગ વે
 જાગત સ્વપન સુપોષિત, નહીં વિશ્વ તેજસ પ્રાગ વે ॥૩૪॥ ચૌથ
 ચૌથા પદ હૈ તુરિયા, સખ ફૂલન કા ફૂલ વે ॥ તુહાંસર્વ મેં અનુસ્મૃત
 હૈ, નહીં કારણ શૂદ્ધ સ્થૂલ વે ॥૩૫॥ પંચમી ન પંચો કોપ તૂં
 નર સર્વકા પર કાશવેતુ આપ ચેતન હૈ સહી, ફિર કૈ કિસ કી આશ
 વે ॥૩૬॥ છઠ જાન દેખો દૂધ પાની, હંસ હાકર આપ વે ॥ તું
 આપ માલિક ખુદખુદ, ફિર કૈ કિસકા જાપ વે ॥૩૭॥ સાતમ
 સુખ સરૂપ તેરા, દુઃખ કા નહિં લેશ વે ॥ તૂ કહાં ભૂલા ભરમ
 મેં, દુક દેખ અપના દેશ વે ॥૩૮॥ આઠમ આઠોં પુરી ખોજો
 અપન આપ સંભાલ વે ॥ ભૂત ભવિષ્યત વર્તમાન, તુંહ સખ
 કાલન કા કાલ વે ॥૩૯॥ નવમી નવ દારન પુર્યા યહ, દેહી
 આતમ આપ વે, કરતા નહીં કરાવતા કયુ, નહીં પુન્ય ન પાપ
 વે ॥૪૦॥ દસમી દમકા કા ખોજ કરલે, દેખ આપ સંભાલ વે ॥
 યહ જડ હવા ન રૂપ તેરા, તુંહ લાલન કા લાલ વે ॥૪૧॥
 એકાદશી કા વર્ત આયા કીજે તાહીં સંભાલ વે ॥ દસ ઇન્દ્રી
 મન રોકના સખ છાંડિ જગ જંગલ વે ॥૪૨॥ દ્વાદશી દસોં
 દિશી આતમા હૈ, વ્યાપક જ્યોં નલ રૂપ વે ॥ દુજો હુયા
 નહીં હોયગા, કિસકી દિયે તહં ઉપ વે ॥૪૩॥ ત્રયોદશી જહં
 ત્યાંગ નાહીં ગ્રહણ ભી કયુ નાહીં વે ॥ કર્તા ક્રિયા કર્મ નાહીં
 નહીં ન્યારા નહીં માહિં વે ॥૪૪॥ ચૌદહ ચતુર્દશં ભુવન નાહીં
 નહીં તીનો લોક વે ॥ રાગ દ્વેષ કી ગન્ધ નહિં, નહીં હર્ષ ન શોક
 વે ॥૪૫॥ પંચ દશી, પાવન આતમા જહં નહીં પ્રકાશત ચન્દ
 વે ॥ બન્ધ મોક્ષ કા ભર્મ તજ, તુંહ આપ ગુપ્તાનન્દ વે ॥૪૬॥

દોહા- તિથી જૈત કે અર્થ કા ચિંત દે કરો વિચાર ॥

જે યાકો ધારન કરે પહુચે ભવ કે પાર ॥

૨૩૦ નેષ્ટક જૈત

જિસ કારન ફિરા બન પરવત મંઝાર ॥ ઓર દેખે હૈં હમકો
 હજારોં બજાર ॥ પાયા નહીં હમેં ઉસકા દિદાર ॥ ઇસ જગ મેં
 હુયા હું મેં અતિશય ખુવાર ॥૧॥ મિલે ભુરશાહ હમેં જખ
 ઢિના વિચાર ॥ ઇસતન મેં લખાયા હમેં વોહી યાર ॥ ઊસ

દિલવર કી દેખી હૈ દિલ મેં બહાર ॥ બલકે મુર ચન્દા વહાં લાખોં
હજર ॥૨૧॥ નહિં તોલ મોલ નહિં હલકા ન ભાર ॥ નહીં દુર
મેરે કછુ નહીં બાર પાર ॥ સત ગુરુ લખાયા હૈ સખઠા જોસાર ॥
આપે મેં દિખાયા હૈ અપના દિવાર ॥૩૧॥ નહીં બાર મોમેં નહિં
કછૂ પાર ॥ ભીતર ઓ બાહર ભરાએક સાર ॥ ઘર મેં ન દેખે
યહુ જાવે બાહર ॥ વસ્તુ ગુપ્ત ઇસ કાયા મંઝાર ॥૪૧॥

૨૩૧ પૈત ।

પાયા હૈ હમકો અમોલક જો લાલ ॥ મિલે સતગુરુ જો
પૂરે હમકો દલાલ ॥ કાઝા હૈ તિનકો સખ માયા કા જાલ ॥
કિની મેંહર કિયા હમકો નિહાલ ॥૧॥ જૂઠા લગ્યા યહુ માયા
કા જાલ ॥ જેતા જહાં લગયે સ્વર્ગ અરુ પતાલ ॥
તીનોં વખત કા જો જાને હૈ હાલ ॥ જો જાનન મેં આવે સો
જૂઠા હૈ ખ્યાલ ॥૨॥ દીન અરુ દુનિયાં ખજાના ઓર માલ ॥
સખ રહજાય ઇલાહીં જખ પડેગા કાલ ॥ દેખે કવીલા જો હોવેગા
હાલ ॥ કોઈ ચલે ના વહા તેરી જો નાલ ॥૩॥ નહિં રિસવત
કો લેકે વહુ કરતા હૈ ટાલ ॥ કરતા બખત પર વહુ સખડી પર-
તાલ ॥ વિવેક અરુ વૈરાગ કી કિજિયે નાલ ॥ ગુપ્તજ્ઞાન ગાલિ
સે મારો ન કાલ ॥૪॥

૨૩૨ પૈત

ઇસ નફસ કો રોકો યહુ કરતા સૈતાન ॥ નિત ઉઠ કે કરતા
વિપયોં કા જો પાન ॥ ઇસે કિયા લુચ ગુડા ઓર બેઈ જોમાન ॥
કુછ દેખો સમજ કે કર અપની પિછાન ॥૧॥ બન્દા નહીં અજબ
તેરી જો શાન તુહીં ખુદ ખુદા હૈ ક્યોં હોતા હૈરાન ॥ દુક સમજ
કે રમજ કો કરદે મુકામ ॥ જિસ કરકે મિલેગા અખ તો કો
આરામ ॥૨॥ ઓર કિજે નહીં કોઈ દૂબ જો કામ ॥ ખુદ અહું
ખુદ અહું કરે આઠોહિ યામ ॥ સખ પાની મેં ગરો કિતાબા
કુરાન કુછ ઇતને ન હોતા હૈ દિલ મેં આરામ ॥૩॥ યક સચ્ચા
અલિક આપ જુઠા જહાન ॥ સખ છોડા ન ચારોં મજબ કી
દુકાન ॥ તૂઝે કહતા ગુપ્ત યહુ તુસખા પિછાન ॥ કરસે દવાઈ
હોય રોગોં કી હાન ॥૪॥

२३३ जौत

जैसे तिलो में तेल है, गुलो में सुगंध ॥ त्यों काया में
आत्म सदा है निरन्ध ॥ जैसे जल में हरियाव और कल्पित है
सिंध ॥ तैसे काया अर्थात् आत्म का जनो संध ॥१॥ जैसे
गुला में होय पन्नग का लान ॥ तैसे आत्म में करता कर्म
असे जन ॥ जैसे पुत्र के भींचे से जुटे है तार ॥ तैसेहि जनो
सथ जग का विस्तार ॥२॥ यह तो परिणामी यह विवर्त पिछान ॥
सुवर्ण और लूप्य का अकलि मुकाम ॥ जैसे मृद में मिथ्या
घटाही असार ॥ मन्दिर और समजिद सथ जुटे अजर ॥३॥
जैसे गगन में नीले का बड़े लान ॥ तैसे आत्म में तूं काया
पिछान ॥ जैसे लोहे में मिथ्या ससी हथियार ॥ गुप्त आत्म
में ऐसेहि जनो ससार ॥४॥

२३४ जौत

जो समझे हमारे जिगर की जो आत ॥ इस दुनिया में
गोता सो क्यहुं न आत ॥ तुही अन्न व्यापक तुही शुद्ध शुद्ध ॥
यही दुष्ट लारी जो माने जुदा ॥१॥ दूजे से लय होय कर
दोषो विचार ॥ यही कहते हैं छहुं और आरो पुकार ॥ इस
मिथ्या पर दावा न कीजरे यार ॥ सथ जुठे सौदागर और जुठे
आजर ॥२॥ यह आत्म येतन है सथका आधार ॥ दीजे
सुने हैं सथ जुठे अकार ॥ तूंही आप व्यापक है पूरण जो
अन्न ॥ जो सुनिये और कहिये सो जुंहा है लर्म ॥३॥ सत
गुरु से जिसको यह पाया है भर्म ॥ तिसको न होता है जग
में शरम ॥ गुप्त रूप का पाया है जिसको आनन्द ॥ सो सदा
सुखी शांत जैसे पुनम का चन्द ॥४॥

२३५ कुटुंबर शण्ड

मन तूं क्यो दुजे मज्झारा, ले सतसंग सहारा ॥१॥ नर
तन लव वारिधि के जेरे, ता यहि होउ पारा ॥२॥ कठिन समाज
सुलल सथ पायो, फिर क्यो अहे गंवार ॥३॥ या नर तन
को सुर वांछित है, सो तैं कियो अवार ॥४॥ या तन भाहिं
गुप्त वृक्ष है मूल फूल इल डारा ॥५॥

૨૩૬ શબ્દ

મન તુમ હરિ ભજ ઉતરો પારા, ઔર ન કહું ગુજરા
 ૧૧૮૬૧ ભવસાગર મેં સતસંગ નૈયા, સતગુરુ ખેવન હારા ૧૧૮૬૨
 જખ સતગુરુ કે શરને આવે હોય અવિદ્યા છારા હૈ ૧૧૮૬૩ સત-
 ગુરુ જાકે બદલી લગાવે પાર કરે ભવ ધારા ૧૧૮૬૪ ગુપ્ત મતે કી
 ખાત જનાવે, દેવે મૂલ સહારા ૧૧૮૬૫

૨૩૭ શબ્દ

જગત મેં સોઈ નરજનોં સૂરા, અહં બ્રહ્મ શમશેરસે જિન
 કાટિ દિયા દલ પૂરા ૧૧૮૬૬ મહાવલી અજ્ઞાન રાવ કો, દલ સાજ
 હૈ પૂરા ૧૧૮૬૭ સેનાપતિ કામાદિ ભટ હૈ, બાજે જિનકે તૂરા ૧૧૮૬૮
 દલ હૈ જ્ઞાન વલી કો, સો યોગી રણધીરા ૧૧૮૬૯ સેનાપતિ શીલ હૈ
 જાકે, સો વીરન કા વીરા ૧૧૮૭૦ દોઉ દલ આનિ જુડે સન્મુખ,
 હોરહો ધુરન ધુરા ૧૧૮૭૧ ચલી તેગ તલવાર અરુ બરછી શબ્દ હુયા
 હૈ પૂરા ૧૧૮૭૨ કાયર હોયર સો ભગે ઉલટિ કે પગ રોપે સોસૂરા ૧૧૮૭૩
 આગે હી કો પૈર ધરત હૈ, માર કરે ચકચૂરા ૧૧૮૭૪ કાયર કા મુખ
 પીલા પડ ગયા, મન મેં ધીરે ન ધીરા ૧૧૮૭૫ સૂરા અડિગ લડે રણ
 માહી જા મુખ બરચે નૂરા ૧૧૮૭૬ દોઉ રાજન કા મન હૈ મન્ત્રી,
 કાજ કરત હૈ પૂરા ૧૧૮૭૭ તાકે દોય રૂપ તુમ જાનોં, ચક ખાકી ચક
 નૂરા ૧૧૮૭૮ ખાકી કો જિન પકડિ પછારા, વશ કીના હૈ નૂરા ૧૧૮૭૯
 પાંચ પચીસોં અકસર મારે, જખ બાજે જ્ઞાન કા તૂરા ૧૧૮૮૦ ગુપ્ત
 ખજના મિલા મૂલ સે જખ સતગુરુ મિલિયા પૂરા ૧૧૮૮૧ બ્રહ્મરાજ મેં
 અદલ જમાયા, જીત લિયા તમ કૂરા ૧૧૮૮૨

૨૩૮ શબ્દ

જગત મેં સોઈ નર જાની સંન્યાસી, વર્ણઆશ્રમ મજખ પન્થ
 કી કાટિ દઈ જિન ફાંસી ૧૧૮૮૩ કંચન કાચ એકકર જાના, અલુણ
 ત્યાગ બુધિ નાસી ૧૧૮૮૪ મન્દિર માલ નહિં કછુ જિન કે, ના કોઈ દાસ
 અરુ દાસી ૧૧૮૮૫ વિધિ નિયિધ નહીં કછુ જિનકે, લોક વાસના
 ફાકી ૧૧૮૮૬ સ્વય ઇખ્યા વિચરત જગ માહી, ક્યા મગહર ક્યા દાશી
 ૧૧૮૮૭ સંપદ કા જખ અર્થ વિચારા, તખ બુદ્ધિ પરકાશી ૧૧૮૮૮ કામ

કોય અરુ આશા તુજા, દારણ સહિત વિનાશી ॥૩૫॥ ન્યાસ પદ
પ્રાપ્ત થઈ દે. દુરે જ્યાં કે વાસી ॥ ગુપ્ત પ્રદાશ બધો ઘ
અન્નર. દુરે મૂલ અવિનાશી ॥૩૬॥

૨૪૯ છન્દ સંગીત ૧

અજી અજી કેળા નિજ આતમ અજળ અનૂપ ૧ પંચ કોય
અરુ તીન કેમ મેં વ્યાપક જ્યાં સરૂપ ॥૩૭॥ તું હો તો ભર્મ માહિં
બૂલા હજુ કીજિયે સંભાલ ૧ ધન ઘર માહીં દળિ રહ્યો નહીં
હજુ તારી બાલ ॥ બિના અગર જેસે વહે રહ્યો કંગાલજી ॥ અગ
કીજિયે ઉપાય તોસેા દહત દૂં દાલ, કાયા ઘર માહિં તોરા ગઢિ
રહ્યો ધન માલ ॥ ગુરુ અરુ વેદ કીજે છુદિ કુદાલ દિર વહે
બૂપન કા બૂપ ॥૩૮॥ પુકારી કહે વેદ યામે નાહીં જૂંકી
આત ૧ ધન હૈ ૧ અખૂદ સદાર હૈ તેરી સાથ લૂંટ નાહીં
ચાધારી ખાવો ચહે દિન રાત જી ૧ જૂંકે ધન કાજ મૂઠ
લાખન ઉપાય કરે ૧ સચ્ચા ધન બાજલ નાહીં રણ માહીં
જાય મરે ૧ જોરદૂં દાકિન દામ અતિશય અનેક કરે ॥ સહે શીત
અરુ કુપ ॥૩૯॥ સન્ત જે મુગ્ધન તોસેાં દહત ટેરી ટેરી ૧ પેદા
સોના પેદ દાલ મારત હૈ ઘરિ ઘરિ ॥ સમજે ના સૈન તોકો કહે
કોન જોર જોર જી ૧ તર્યમસિ વાક્ય યાકો કીજિયે વિચાર ૧ વાચ્ય
અરુ લક્ષ યાકો કોનાં લીજે નિરધાર ॥ લક્ષ નિજ રૂપ લખિ વાચ્ય
હી મે કીજે કાર ૧ દિર નહીં પડને ભવ કૂપ ॥૪૦॥ મુનીયદ આત
જાકે આય બધો વલવાર ૧ જાને પાચો ગુપ્ત જ્ઞાન સોઈ નર દુરે
પાર ॥ દોલી ના શરમ હજુ લાગે નાહીં યામે વારજી ॥ આતમ
અદૈત લખિ ૧ ફરી દુવા કવ જ્ઞાન જાનિ લઈ રજજ તળ દોલ
નાહીં સર્પ જ્ઞાન ૧ કહે મેં અધ્યાસ તૈસા આંતમા મેં અભિમાન ૧
પદ અવધિ જ્ઞાન સરૂપ ॥૪૧॥

૨૪૦ શબ્દા ચાલ ડગરિયા

વ્યાપક જ્યાં અચલ અવિનાશી, પૂરણ શુદ્ધ અનામ દો
પરિહા જન પ્રચિહત પ્રચ્છા જન સચિયા, તન ધરિ ધારત નામ દો
॥ મંદિર જીવ સીવ સોઈ અનિઆ, સંગ માયા કરે દામ દો ॥૪૨॥

એક બાંધત એક છોડત જગ મેં, એક બાંધે ધન ધામ હો ॥ એક
ત્યાગિ બનિ વન વન ડોલત, એક ધમ્મિત સુત વામ હો ॥૨૦॥
એક ભક્તી કર સંગ સંતન કે દેખત આતમ રામ હો ॥ વિષયા
સક્ત વિષય સંગ બધિય દેખત પામર ચામ હો ॥૨૧॥ સૃષ્ટી પ્રગટ
યહુ નજ દોળવે, આખિર ગુપ્ત મુકામ હો ॥ ધ્રુવ સબ રૂપ સરૂપ
હિસી કા, જા બિન સબહિ અકામ હો ॥૨૨॥

૨૪૧. શીખ્દ

ક્યોં ફિરતા ભટકા, અખ તૂં છોડ જગત કા ખટકા ॥ટોકા
યા જગ માહીં ફિરે ભરમતા, ઓઢિ કામ કા પટકા ॥ સિર સે
બોઝા ક્યોં નહિં ડારે, દોઢિ ભરમ કા મટકા ॥૧॥ નાના સ્વાંગ
ધરેતેં જગમેં ॥ જોસે લડકા નટકા ॥ કનક કામિની કો નિત ધાવે
પીવે વિષય રસ ગટકા ॥૨॥ સત સંગતીકી સારન જાની ફિરતા
સટકા સટકા ॥ જખ સતગુરુ શરને આવે, પાવે બ્રહ્મ જ્ઞાન કા
લટકા ॥૩॥ બાહર સે દૂક ભીતર હોકર, બોજ કરો ઇસ મઠ
કા ॥ ગુપ્ત મૂલ કી અજખ મૂરતી, દરશન કર મોરમુકુટ કા ॥૪॥

૨૪૨. શીખ્દ ।

મન તું સુખ કે સાગર બસરે ॥ કહિં ઔર ન એસા યશરે
॥ટોકા ॥ યહુ જગ મૃગ તૃષ્ણા કો ગારો, યા મેં મત ઘસરે ॥ આતમ
નીર નિકટ બહે નિર્મલ, તું યાકો પચિસ ચસરે ॥૧॥ યહુ સંસાર
બિડા થોહર કા, કાટા નખ ઔર શિખરે ॥ બહુત બેર તોકો
સમજાયા ॥ તૂં યામેં મત ફસરે ॥૨॥ તનક બઢાર્ધ પાય જગત
મેં ॥ માન લિયા ॥ બડો યશરે ॥ એક ઘર છોડિ દિયા અપના ॥
તેજ ઘેરે ઔર દૂસરે ॥૩॥ યા સાગર પર ગુપ્ત ઘાટ હૈ ॥ જોતિ
રહી જહાં ચસરે, મૂલ પૈઠી પર પગ ધરિ કે ॥ તું ગોતા લગા
હસરે ॥૪॥

દોહા-ઇસ સાગર પર જે વસેં જિનકે વિમલ વિવેક ॥

ડોભડિયોં મેં ફિરત મેં, મચ્છી યુગત અનેક ॥

૨૪૩ નવીન દોલી ।

કરશે સજન સિંગાર અખ, દોલીકા કિનતો આગયા પાટલા
 ઉસરિન કો યહ દોલી રચી, જિયા કિન જનમકો પાગયા ॥ રંગ
 દેખિયર મકરાર ભૂલ્યા, જનમ જાતા આગયા ॥ ૧ ॥ ઈકશર અપના
 બહા કર, પોખે મે પોખા આગયા ॥ ગફલત મે ફેરે સેવતા,
 બાજેકો કાલે બાજ ગયા ॥ ૨ ॥ ગય જત બાજે જાંઝ રહે, કમ
 ર પે મુરલી સુના ગયા ॥ જાગા લશ્મ કી નીંઠ સે, યોહ રાગ
 માણ ગા ગયા ॥ ૩ ॥ દોલી ઉચી કી સફલ દે, જે આતમ તીર્થ
 નહા ગયા ॥ ગુપ્ત જાતા લાયકે, અજ્ઞાન મેલ બહા ગયા ॥ ૪ ॥
 દોહા-દોલી હરિકે નામ સે, જલતી હોવે શાંત ॥

જેશે જન પ્રહલાદ કો, લગી ન તત્તી આંચ ॥

હરહમ દોલી જલરહી, સમજત હૈ કોઈ ધીર ॥

કારજ અપના કીજિયે, જાનો નીર અરુ ક્ષીર ॥

૨૪૪ ધૂલેટી ।

મોત દોલી કૂંકિ કાયા ધૂલ ધૂલેટી મયા પાટલા અખ ધામ
 બામ તજિ કર ચલા, સખ છોડિ કર બચ્યા બચ્ચી ॥ હસ્થી
 ઘોડા પાલકી, દોલત રહી દુખ સે સચ્ચી ॥ ૧ ॥ મત્યા હિલાવે
 સૈન લાવે, નયન લે આંસુ જિંચી ॥ અખ તો રહના ના બને,
 યહ બાત અંતર મે જંચી ॥ ૨ ॥ બચ્યા ન બાયા પુન લાયા,
 સેવતા લેલે હિંચી ॥ કોટી ન બાઈ સખ બચાઈ, આજ તો યહ
 ના બચી ॥ ૩ ॥ તન ધન કો સચ્ચા જનતા, મરને કી નહિ જાને
 સચ્ચી ॥ ૪ ॥ ઉચ ગુપ્ત ગોચિંક કો બાજે જિનસે યહ સખ માયા રચી ॥ ૫ ॥

દોહા-ધૂલેટી જગ ધૂલસમ, જાને કોઈક સન્ત ॥

ધૂલ નામ અરૂપકા, સખી મિરદ મે અન્ત ॥

આતમ ચેતન શુદ્ધમે જગત નામહે ધૂલ ॥

સો તિસસે ન્યારા નહીં મિત્ર લગવે સોઈબૂલ ॥

૨૪૫ જ્ઞાન ધોડા ।

અખ તો ચઢૂં જ્ઞાન કે ઘેડે, તતકા તેગ બનાડીંગા ॥૧૦૬॥
 શુભ ગુણ બહુત બનાડીં શસતર, શીલ સંતોષ કા ધારૂં બખ્તર
 ॥ વિવેક વૈરાગ કે પહિરૂં વસ્ત સત સંગતિ રંગ ચઢાડીંગા ॥૧૦૭॥
 પ્રેમ ભક્તિ કી પાખર ડારૂં સમ, દમ, દોષ રક્ષાખ મુધારૂં ॥
 દયાકી દુમચિ નિશ્ચલ ધારૂં, લક્ષ લગામ લગાડીંગા ॥૧૦૮॥ અજ્ઞાન
 બલી શત્રુકો મારૂં યુક્તિ દૃષ્ટાન્ત બનાડીં દારૂં ॥ એક ફેર મેં
 સખકો મારૂં ગુરુ ગમ તોપ ચલાડીંગા ॥૧૦૯॥ ગુપ્ત રૂપ સ્વયં રાજકો
 પાડીં, સખ પર અપના હુકમ ચલાડીં ॥ એક કોસ ચલકર નહિ
 જાડીં આપ મેં આપ સમાડીંગા ॥૧૧૦॥

૨૪૬ પદ

વહી ચાર હૈ દિલદાર મેરા, સાર કો બતલાવતા ॥૧૦૬॥ પચ્ચીસ
 તત્ત કા દેહ યહ, સ્થૂલ મરતા જમતા ॥ જાગ્રત અવસ્થા કોપ અન્ન
 મય, કાહે મેં મન લાવતા ॥૧૦૭॥ સત્તહ તતકા દેહ સૂક્ષ્મ, લોકો
 મેં જાતા આવતા ॥ અવસ્થા હૈ સ્વપ્ન જાકી, કોષ તત્ર મય
 ગાવતા ॥૧૦૮॥ અજ્ઞાન કારણ તીસરા, આનન્દ મય સમજાવતા ॥
 અવસ્થા જાકી સુસોપતિ, તેરે મેં નહીં પાવતા ॥૧૦૯॥ સાક્ષી હૈ
 દૃષ્ટા તીન કા, સો તેરા રૂપ લખાવતા ॥ ગુપ્ત પરઘટ આપ હૈં,
 જાતા નહીં કહીં આવતા ॥૧૧૦॥

૨૪૭ પદ

જાન્યા હૈં અપને આપ કો, ફિર જાપ સે ક્યા કામ હૈ ॥૧૦૬॥
 આતમ વિદ્યા જો પઢા, ઉસકો ક્યા વેદ પુરાણ હૈ ॥ જો આનન્દ
 બ્રહ્માનન્દ મેં, વિષયોં મેં કહાં આરામ હૈ ॥૧૦૭॥ જો નહાયે નિરમલ
 જ્ઞાન સે, ઉનકો કહા અસનાને હૈ ॥ મિથ્યા લખ્યા પરપંચ કો,
 ઉસકો કહા ધન ધામ હૈ ॥૧૦૮॥ ખુદ મસ્તી મેં જો મસ્ત હૈ, ઉસકો
 ક્યા મદિરા પાન હૈ ॥ વ્યાપક લખ્યા નિજ રૂપ કો વહ
 કિસકા ધરતા ધ્યાન હૈ ॥૧૦૯॥ જો આનિ પકડ્યા કાલ ને, ઉસકો
 ક્યા સુખહ શામ હૈ ॥ જો ગુપ્ત આતમ મેં જુડ્યા, ઉસકો
 કહા સુત બામ હૈ ॥૧૧૦॥

૨૪૮ પદ

પૂનિમઃ પુરુષ તન પાય કે, પૂજન કરો નિજ આપ કો ॥૧૮૬॥
પ્રીતી કે પુષ્પ ચઢાય કે, ચન્દન લગાવો જાપ કો ॥ કરની કેસર
માલિક કે, કર તિલક હરદમ હાથ કો ॥૧૮૭॥ જગ પૂનિમા કે બીચ
મેં જો ચન્દ પૂનમ લાપતો ॥ ત્યોં કાયા મેં ગુરુ આત્મા, પરકાસ
હૈ પરકાસ કો ॥૧૮૮॥ જો એસી પૂનમ પૂજતા, સો આવે તીનોં
તાપ કો મૈલે કો કેસે પુજતા, જિસને પાયા નિજ સાફ કો ॥૧૮૯॥
ગુપ્ત પૂરણ પૂરિ રહા, પુજન કરો કોહ તાસુ કો ॥ દૃષ્ટી ન મુઢી
આવતા, વહ સ્વાસ હૈ સખ સ્વાસ કો ॥૧૯૦॥

૨૪૯ પદ

દીદારકર દિલદાર કા, કાયા દિવાલી મેં સહી ॥૧૯૧॥ જિસે
આંખ સે દેખા ચહૈ, વહ આંખિ સે દીખે નહીં ॥ દેખન વાલા
આપ હૈ, ટુક માની લે મેરી કહી ॥૧૯૨॥ જો સ્વપ્ન માહીં દેખતા,
જાગત મેં વહ પાતા નહીં ॥ દીખે સુને સો ભર્મ હૈ, વહ ખાત
વેદોં મેં કહી ॥૧૯૩॥ ગાબર ગજી કે ઉદર મેં, અરુ દૂધ ભી રહતા
વહીં ॥ ઈશ્વર ને કીના લિન્ન વહ, જિસ માહિં તૂંગેરે દહી ॥૧૯૪॥
વહ ગુપ્ત ગોવર્દન તુહી, ઉસ કી ખબર તુઝ કો નહીં ॥ ફિરતા
હૈ ભેટયા ચાલ મેં કછુ સોચતા મન મેં નહીં ॥૧૯૫॥

૨૫૦ પદ

દેવ તેરા કૌનહીં હૈ, જિસ કી તૂં આશા કરે ॥૧૯૬॥ જો
દાન દેવે હાથ સે, મુખ સે ભજન હરિકા કરે ॥ ઈશ્વર કી એસી
નીતિ હૈ વહ કામ કરતા સો તિરે ॥૧૯૭॥ અપને પુન્ય પાપ કા
ફલ, મુખ અરુ દુખ કો ધરે ॥ દૂખ યહીં કોઈ દેવ હૈ, અપના
કર્યા આપહિ ભરે ॥૧૯૮॥ કોઈ કાજ તેરા આય કે વહ દેવ
કસિહિ ના કરે ॥ જો આસ કરતા દેવ કી વહ મનુષ ગર્હલ સે
પરે ॥૧૯૯॥ ખુદ આપ ચેતન દેવ હૈ, અપની ખબર કુછ ના કરે ॥
ઉસ ગુપ્ત કા નાહિં ભેદ જાન્યા, ખુત્ત કી પુજા કરે ॥૨૦૦॥

૨૫૧ પદ

લક્ષણ કહો ઉસ ધર્મ કા, જિસકા કથન કરને લગે ॥૨૦૧॥
સરપ કરણ કૌન હૈ વિરધી કો કેસે પાવતા ॥ સ્થિતી કહીં પર

રહતા હૈ, અરુ નાશ કો ધરને લગે ॥૧॥ વિપાક તિસકા ઝન હૈ,
સખહી કહો સમઝાય કે । નામ માત્ર વસ્તુ સે' કુછ કાજ ગહિ
સરને લગે ॥૨॥ લક્ષણ બિના પરમાણુ કે, કોઈ વસ્તુ કી સિદ્ધી
નહીં ॥ ઉત્તર સફાઈ સે કહો, બિન મૌત ક્યોં મરને લગે ॥૩॥
ધર્મ કે સમૂહ કી, દસ ખાત હૈ વહ કોનસી ॥ કહતે ધરમ એક
અંગ કો, યહ કામ કયા કરને લગે ॥૪॥ ધર્મ ધર્મી સે જુદા
ઉસકી ખબર તુઝકો નહીં ॥ ઉસ ગુપ્ત કા નહીં ભેદ જાન્યા,
ધર્મ મેં જલને લગે ॥૫॥

૨૫૨ પદ

કરલો જતન ઇસ વતન કા, જહાં જાકે નહીં આના પડે
॥૧॥ ઇસ લોક કી ઇચ્છા તજે, પરલોક નહિં જાના પડે ॥ વહ
લોક અપના રૂપ હૈ, ભગવાન ગીતા મેં પદે ॥૨॥ સોઇ પુરુષ હૈ
સૂરમા, ઇસ મોરચે ઊપર ડટે ॥ આના જાના ભર્મ તજિ, નિજ
રૂપ મેં નિત હી લડે ॥૩॥ ખાના તો એસા ચાહિયે, કછુ ફેરિ
નહીં ખાના પડે ॥ નહાના તો એસા ચાહિયે, કહિં ફેરિ નહીં
નહાના પડે ॥૪॥ લેના તો એસા ચાહિયે, ફેરિ નહીં લેના પડે ॥
જુડના ઉસી કા સફલ હૈ, જો ગુપ્ત આદમ મેં જુડા ॥૫॥

૨૫૩ રાગ આરતી અષ્ટક

ભજ શિવ ગુપ્તનન્દે, જો કોઇ ભજન કરે મન લાકે ॥
કટિ જાય યમ ફન્દે, હર શિવ ગુપ્તાનન્દે ॥૧॥ આરત જન કી
સુનો' આરતી હૈ કિરપા સિન્ધે ॥ મોહ જાલ કી ફાંસી માહિં,
જીવ ફિરે બન્ધે ॥૨॥ સભી કહો સમઝાય, કોન મેં કો યહ જગ
બન્દે ॥ અબ કરો અવિદ્યા નાશ, તભી હમ હોવે આનન્દે
॥૩॥ કો ઇશ્વર કા જીવ કોન રહતા તિનકે સન્ધે ॥ કયા માયા
કા રૂપ, કહો અબ સત ચિત આનન્દે ॥૪॥ આરતી કૈસે કરું
તુમહારી, તુમ વ્યાપક જિન્દે ॥ જો કોઈ તુમરી કરે આરતી, વહ
જુદી કે અન્ધે ॥૫॥ (ઉત્તર કી આરતી) મેં મેરા યહી મોહ
હુયા, અરજુન કો રણ મધે ॥ ઉડા જ્ઞાન ગીતા કા સુનિ લખ
સમઝાની સન્ધે ॥૬॥ તુહ ચેતન ભરપૂર દૃશ્ય મન જગત જાલ
વન્ધે ॥ જબ હોય અવિદ્યા નાશ, ખિલે જબ વિદ્યા કે ચન્દે ॥૭॥

કરે શુભા શુભ કર્મ, ભોગતા ફલ સુખ દુખ દ્રવ્યે ॥ સીવ કો
કહતે જીવ, સીવ કષ્ટ કરે નહીં ધન્યે ॥૭૧॥ તત્ ત્વં પદ મેં અસિ
ને તેતન, દોનોં કા સન્દે ત્રિગુણાત્મક મિથ્યા માયા, ગુપ્તા-
તમ સતચિત આનન્દે ॥૮૧॥

દોહા-પઢે જો અષ્ટક આરતી, સાંજ સમય ચિતલાય ॥

કોઈ કાલ અભ્યાસ તેં સમુજે સહજ સુભાય ॥

૨૫૪ સ્તોત્રાષ્ટક

મનુષ્યોં ન દેવો નહીં દૈત્ય યક્ષ, પંડિત ન મૂરખો કવિયો
ન દક્ષ ॥ જાતા ન આતા ખોયા ન પાયા, શિવઃ કેવલોહં નિર-
મૈલ માયા ॥૧॥ આશ્રમ ન વર્ણ ન કુલ જાતી ધર્મી ॥ નહિં
નામ ગોત્રં શર્મા ન વર્મા ॥ જાત સ્વરૂપ નહીં પ્રાણ કાયા ॥
શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૨॥ દેશો ન કાલો વૃદ્ધો ન
બાલો ॥ તુરિયા વિ તુરિયા નહીં કાલ જાલો ॥ જન્મ્યા ન મૃયા
જાતા ન આયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૩॥ જીવો ન
સીવો ન અજ્ઞાન મૂલં, સુખં દુખં નહિં પાપ સૂલં, કર્તા અકર્તા
નહિં બિંબ છાયા ॥ શિવ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૪॥ મૌની
ન વક્તા બંધો ન મુક્તા, રાગં વિરાગં નહિં લક્ષ લખતા ॥
સખ વાચ્ય અવાચ્ય કા મહલ ઢાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા
॥૫॥ શાદી અનાદી નચ મેં સમાધી, સ્વાસ્તા ન શાસ્ત્ર નહિં
વાદ વાદી ॥ નહીં પક્ષ પાતં જન્મી ન જાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં
નિરમૈલ માયા ॥૬॥ યોગં વિયોગં નચ મેં સમાધી ॥ માયા
અવિદ્યા નચ મેં ઉપાધી ॥ શુદ્ધો સ્વરૂપં નિરંજનં રાયા ॥
શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૭॥ ગુપ્તા ન મુક્તા લિપતા ન
છિપતા ॥ લોકા ન વેદા તપતા અતપતા ॥ એકો ચિદાતમ સખમે
સમાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૮॥ પઢે પ્રાતાઃ
કાલે કટે યમ જાલે ॥ તજે આશ તૃણા સંતોષ પાલે ॥ અણ
સ્તોત્ર મેં મન લગાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૯॥

૨૫૫ રાગ બ્રહ્મ અભ્યાસ ॥

કરો વૃત્તી બ્રહ્માકાર મળ કુછ જળપાવે ॥૧૬૬॥ અણ એણ
બિંબ બિંબ બ્રહ્મ બ્રહ્મ અલિધર જાવે ॥ સોવત જાગત બ્રહ્મ, બ્રહ્મ

પવિત્ર ખાવે ॥૧॥ અણ એણ લેત દેતહૈ અહા, અહા ઝગડા
ઠાવે ॥ દેખત સુનતા અહા ॥ અહા નાચે ગાવે ॥૨॥ અણ એણ
મન બુદ્ધિ આદિક અહા, અહા તીરથ નહાવે ॥ ઉપવાસ કરત હૈ
અહા ૨ પુજા લાવે ॥૩॥ અણ એણ કર્મ ઉપાસન અહા જાવે
આવે ॥ કરત કાજ સખ અહા, અહાહી ભરમાવે ॥૪॥ અણ
એણ ઉપજન હારો અહા અહા હી ઉપજાવે ॥ પાલન કરતા અહા
અહાહી ખપિજાવે ॥૫॥ અણ એણ સમજન હારો અહા, અહાહી
સમજાવે ॥ ખોવન હારો અહા, અહા ઢુંઢે પાવે ॥૬॥ અણ એણ
ત્યાગી રાગી અહા, અહા સખ કરવાવે ॥ જીવ ઈશ સખ અહા,
અહાહી ભુગતાવે ॥૭॥ અણ એણ ગુપ્ત પરઘટ અહા, અહા
જહાં મન જાવે ॥ યો અભ્યાસત જો અહા અહા હી હો જાવે ॥૮॥
દોહા—કીટ ભિરંગી હોત હૈ, પુનઃ પુનઃ અભ્યાસ ॥

સુની ભૂંગા કે શબ્દ કો, ભૂંગ હોય ઉડ જાત ॥

૨૫૬ રંગતિ મજેદાર ।

કુછ મજા ઉસી કો આયા હૈ, જો આપ મેં આપ સમાયા હૈ
॥૧૬૬॥ અહ્માનન્દ કિસકી તુલ્ય ખરનો, નહિં તિસકી પટતર
પાવાહૈ ॥૧૭॥ અહ્માનન્દ કા કોઈ ચક્ર કતરા, સખ તિરલોકી મેં
છાયા હૈ ॥૧૮॥ જો આનન્દ ચક્રવર્તી કા, અરુ અહ્મા કે તક ગયા
હૈ ॥૧૯॥ અહ્માનન્દ આનન્દ કે આગે, સખ આનન્દ ભાસ સુનયા
હૈ ॥૨૦॥ અહ્માલોક વૈકુણ્ઠ પુરી લગ, સહી કાલ નેં ખાયા હૈ ॥૨૧॥
તન ધન મેં આનન્દ હો ખેઠે, યહ સ્વપને કૈસી માયા હૈ ॥૨૨॥
જિસ આનન્દ કો પ્રાપત હોકે, ઔર ન આનન્દ ચાહા હૈ ॥૨૩॥
ગુપ્તાનન્દ કે ગુપ્તાનન્દ મેં જો નિત ઉઠિ ગાતા લાયા હૈ ॥૨૪॥

૨૫૭ મજેદાર

સો મજા ન મહંગા સસ્તા હૈ, જહાં સંત લાડિલા ખસતા હૈ
॥૨૫॥ ઘાટ બાટ કુછ પાવત નાહી, વહ વિકટ મહલ કા રસતા હૈ
॥૨૬॥ નીમ મઝરન નાહી મહલ કે, કોઈ કૈસે ઉસમેં ફસતા હૈ ॥૨૭॥
જો કરતે નિષ્કામ કર્મ કો, અરુ મન ઇંદ્રિય કો સકતા હૈ ॥૨૮॥
સાધન ચાર ચલે રસ્તે મેં સત ગુરુ કે સંગ ધસતા હૈ ॥૨૯॥

અકલ કા અકલ સખ ફૂટા, બે અકલ સૌદા જયતા હૈ ॥૫૦॥
 દુની દ્વેત પર આગ લગી હૈ, વહુ આશિક બેડે હસતા હૈ ॥૬૦॥
 કહા કહું શોભા અરુ સુખ કી, લીયા મુક્તી હાથ ગુલદસ્તા હૈ
 ॥૭૦॥ ગુપ્તાનન્દ કો પરઘટ જના, સો ઘટ ઘટ માહીં લસતા હૈ ॥૮૦॥

૨૫૮ મજેદાર

કપા મજા મિલા જિન્દગાનો મેં સખ ખો દર્ધ ઉમર હરામી મેં
 ॥૧૦૦॥ ખેલા ખાયા લાડ લડાયા, કુછ સમજાનહીં નાદાની ॥૧૧॥
 આઈ તરુનાઈ મસ્તી છાઈ, લો ગઈ કામ અરુ કામી મેં ॥૨૦॥
 બચ્યા બચ્યા ખાન પાન હિત, ફિર ધન હિત ફસા ગુલામી મેં
 ॥૩૦॥ આવે બુઢાપા દે સિર થાપા, હો ગયા આશક્ત મલાની મેં
 ॥૪૦॥ કાલ આય તતકાલ વિનાશે, તુઝે ગેરે ચારોં ખાની મેં
 ॥૫૦॥ લાલ અમોલક યા નર તન કો, ખોય ચલા મૈદાની મેં
 ॥૬૦॥ ના કોઈ કર્મ ઉપાસન કીના, નહીં બૈઠા સતસંગ જ્ઞાની
 મેં ॥૭૦॥ ગુપ્તરૂપ કો જના નાહીં, અતિશય હો ગયા હાની
 મેં ॥૮૦॥

૨૫૯ મજેદાર

કુછ મજા આપ કે જાને સે, ક્યા હૈ ફકરાની ખાને સે ॥૧૦૦॥
 જો આનન્દ સૂખે દુકડે સે, સો નહીં ગિજ માલ કે ખાને સે ॥૧૧॥
 જો આનન્દ હુરિ કી ભક્તિ સે સો નહીં માલ ખજાને સે ॥૨૦॥
 જો આનન્દ વૈરાગ મેં દેખા, સો નહિં વિષય કમાને સે ॥૩૦॥
 જો આનન્દ સન્તોષ સખર મેં સો નહિં દ્રવ્ય કમાને સે ॥૪૦॥
 જો આનન્દ અપને ઘર માહીં, સો નહિં પરદેશ ડુલાને સે ॥૫૦॥
 જો આનન્દ અપને સમજન મેં, સો નહિં લોક રિજાને સે ॥૬૦॥
 જો આનન્દ એકાન્ત દેશ મેં સો નહિં મન કે ભરમા સે ॥૭૦॥
 સભી આનન્દ ગુપ્તાનન્દ સે, આપ મેં આપ સમાને સે ॥૮૦॥

૨૬૦. કુટુમ્બ જન્ય દુખ હરિહરસમ્બાદ

દોહા—મિલે હરી હર પરસ્પર, હસિ પૂંછી કુશલાત ॥

હરિહી હર સે યોં કહયા, કિસ વિધી મારો ગાત ॥

સુનિ કે હરિ કે બચન કે, હર હરખે હર માહિં ॥
 મોંસેતી પૂછન લગે, તુમ કયા જનો નાહિં ॥
 દિયા બિરોધી કુટુમ્બ, અહ નિશિ હર કે જરે ॥
 મેંરા બાહન ખેલ, સતી કા શેર દહાડે ॥
 કાર્તિક સ્વામી કે મારે, તુંડી કે મૂષક ધારે ॥
 મોગલ માહિં સર્પ, હરે અરુ બહુત કુકારે ॥
 દુકુમ્બ બિરોધી દેખિ કે, જલત રહું દિન રાત ॥
 હરહી હરિ સોં યોં કહયોં ઇસ વિધી માડોં ગાત ॥

૨૬૧ પદ

લખિ નિજ આતમ રૂપ અપારા, જિસમેં મિથ્યા સંસારા
 ॥૧૮૬॥ છોડિ જગત પરવાહુ સમઝ અખ, નહોવો જ્ઞાન કી ધારા ॥
 કાલ કર્મ કા છુટૈ મૈલ સખ જખ હોવે ઉદ્ધારાં ॥૧૯॥ આતમ સદા
 અસંગ રહત હૈ, લિપે ન દેહ વિકારા જયો જલ માહીં કમલ
 રહત હૈ, જલ સ્પર્શ સે ન્યારા ॥૨૦॥ પંચ કોષ અરુ ત્રીન દેહ
 મેં વ્યાપિ રહા સારા ॥ કટે ન સૂખે જલ સે ભીંગે, અગ્નિ ને
 નહીં જરા ॥૨૧॥ ગુપ્ત અરુ પરઘટ સભી ઠોર મેં સોહે રૂપ
 તુમહારા ॥ જૈસે ઘૃત દૂધ મેં રહતા રહતા, સભી જગહ એક સારા ॥૨૨॥

૨૬૨ પદ

શાસ્ત્ર વેદ સભી સમઝાવેં, એક આતમ સત્ય બતાવેં ॥૨૩॥
 સુનિ ગુરુ મુખ સે જ્ઞાન આપને, મન મેં કયોં ના લાવે ॥ ભર્મ
 જાત ઉડિ જાવે, તેરા પૂરણ પદકો પાવે ॥ ૧ ॥ જૈહિ એકાંત વિચાર
 કરો, જો સતગુરુ બાત બતાવે ॥ તિરથ વરત ધરમ સખ મન કે, ઉલઝિ
 ઉલઝિ મરજાવે ॥ ૨ ॥ તુહીં શુદ્ધ સન્નિધાનન્દ ફિર, કાહે કો મન
 ભટકાવે ॥ જિસકો અમૃત પાન ક્રિયા, વહ કાહે કો ખલ ખાવે
 ॥ ૩ ॥ બાહર અન્તર રૂપ આપના, ખોજન કિસકો જાવે ॥ ગુપ્ત
 રૂ પરઘટ જડ ચેતન મેં અપના આપ લખાવે ॥ ૪ ॥

૨૬૩ શબ્દ ધનાસરી

આતમ જોતી સખ ઘટ માહીં, બિન સતગુરુ વહ સૂજત નાહીં
 ॥ ૧ ॥ જેસે દ્રવ્ય ગડયા ઘર ભીતર, બિન ભેદી વહ પાવત
 નાહીં ॥ જેસે ધૃત દૂધમેં રહતા, બિન મથન બિન નિકસત નાહીં
 ॥ ૧ ॥ જ્યોં જલ વૃક્ષ, વૃક્ષ મેં અલના, લાલ ધરયા તિસ અલને
 કે માહીં ॥ તાકી દમક પડી જલ ભીતર, ખોજી રહે વહ પાવત
 નાહીં ॥ ૨ ॥ કોઈયક ચતુર પુરુષ કો નિરખ્યા, લાલ ખતાદિયા
 અલને મેં તાહીં ॥ ત્યોં જગ જલમેં તરુ નર કાયા, અન્તઃ કરણ
 અલના દિખલાયા ॥ ૩ ॥ તામેં આતમ લાલ બિરાજત, દમક પડી
 જગ જલધિ મેં સાજત ॥ ગુપ્ત ભેદ સતગુરુ સે પાવત, ઘટમેંહી
 આતમ લાલ ખતાવત ॥ ૪ ॥

૨૬૪ શબ્દ ભર્મ નાસક

લખી આપકે તાંઈ, દીજો ભરમ ખાહાઈ ॥ ૧ ॥ યોગી ભરમી
 રહે યોગન મેં ભોગી જાય ફસે ભોગન મેં ॥ રોગી નિત રોવહી
 રોગન મેં, કાલ નિરંતર ખાઈ ॥ ૧ ॥ પંડિત પંડિતાઈ મેં ભૂલે
 કાજ પડે કજકે ચૂલે ॥ ધારાપતી માન મેં પૂલે મૂરખ મૂરખતાઈ
 ॥ ૨ ॥ કોઈ વિદ્યા વૈરાગ ત્યાગ મેં, કોઈ ધુનીલા જલે આગ મેં, સાર
 વસ્તુ કે ફિરે ત્યાગ મેં, નાહક ઉમર ગમાઈ ॥ ૩ ॥ કોઈ કોઈ જન
 ઉભરે ચૌરાસી, નેમ નહીં ગ્રહી સન્યાસી ॥ જિસકો લખ્યા ગુપ્ત
 આવે નાશી, સભી ઠોર કે માહીં ॥ ૪ ॥

૨૬૫ પદ જૈન વર્મ પ્રકાશક

હુઆ મજહુખ, દિવાના, કરતા ફિરે વ્યાખ્યાના ॥ ૧ ॥
 સોઈ જૈની આપ કો જાન્યા, ભેદ ભર્મ સખ ખોયા નાના ॥ પાપ
 પુન્ય કા મૂલ ઉડના, તાર લક્ષ મેં તાના ॥ ૧ ॥ તન સરાય મેં
 અસંગ રહત હૈ, સોઈ સરાવગી સાર ગહત હૈ ॥ મુખ સે ખાત
 ખનાય કહત હૈ, છોડે નહીં ખેઈમાના ॥ ૨ ॥ સોઈ ઢુંઢિયા જાનોં
 સચ્યા, જિસકો ઘર હુંઠા હૈ પકકા ॥ બાકી ઔર હુરામી કે ખચ્યા
 ખાંધહિં થાનિક થાના ॥ ૩ ॥ સોઈ યોગી યતી સન્યાસી, મજહુખ

પંથ કી કાઠિ કાંમી, ગુપ્ત રૂપ પૂરુ અવિનાશી, ભેષ પંથ કો
જ્ઞાન ॥ ૪ ॥

૨૬૬ શબ્દ

અમ તજ મિથ્યા અહંકાર, ભાર સે કયોં બોજ મરે ॥ ૧ ॥
કારણ સુક્ષ્મ સ્થૂલ, તનરે, ઇનકા તજ હંકાર ॥ તું ચેતન ભરપુર
હૈરે, સિયે ન દેહ બિહાર ॥ ૨ ॥ પંચકોષ મેં મત ફેરે, તેરા રૂપ
અપાર ॥ ભર્મ માહિં કયોં ભરમતારે, અન્તર કરો વિચાર ॥ ૩ ॥
સાંચે સતગુરુ સે મિલોરે, જળ પાવોગે સાર ॥ જુઠે ગુરુ કે આસરે
રે, કમલુ ન હોય ઉદાર ॥ ૪ ॥ ગુપ્ત રૂપ પરવટ આપ હૈરે, જામેં
નહીં સંસાર દિલ કી હુમ્મ ઉઠાયદે રે, આશા તૃષ્ણા માર ॥ ૫ ॥

૨૬૭ પદ

દમકી રહા દમ માહી, રતન અમોલી લાલ ॥ ૧ ॥ ન
સૂખે ભીંગતા રે, કરકે દેખ સંભાલ ॥ અગ્ની સે જલતા નહીં રે,
ખાવે ન તિસકો કાલ ॥ ૨ ॥ દેખે કયોં ના બોજ કરે, ઘર મેં હૈ
સખ માલ ॥ જો પાવો ઉસ નિધી કોરે, ફેર ન હોય કંગાલ ॥ ૩ ॥
મન મજૂર કો લાય દેરે, બોજ કરો સંભાલ ॥ ચિત કી ચક્રમક
ઝાડિ દેરે, બુદ્ધિ કા કરો ન કુદાલ ॥ ૪ ॥ સાવધાન ઇનકા રખોરે
કરતા રહે રખવાલ ॥ ગુરુ જો હરિ ગુપ્ત ખજાના ॥ અતલાવત
તતકાલ ॥ ૫ ॥

૨૬૮ પદ

હમારે સતગુરુ નજર નિહાલ, દારિદ્ર મહારો દુર કિયો ॥ ૧ ॥
કાઠિ યુગન યુગ ભમિયોરે, દુખ નહિં દરિ થો ॥ એક પલક કી
ઝલક મેરે, મોહિં નિહાલ કિયો ॥ ૨ ॥ જુઠે વન કે કારનેરે, ભરક
ભરકિ કે મુયો ॥ સાંચી દૌલત સતગુરુ દીની, જન્મ સુફલ મહારો
હુયો ॥ ૩ ॥ મેં તિર્ધન કંગાલ કોરે, પ્રેમ પ્રીતિ સે લિયો ॥
ખરચા ખાયા અહુત લુટાયા, પાની કે જ્યોં પિયો ॥ ૪ ॥ ગુપ્ત
આતમા લાલ મિલા જળ, સુખ કે સાથી સોયો ॥ આવન
જાવન ખેદ મિઠ્યો સખ, છવ આનન્દિત હુયો ॥ ૫ ॥

૨૬૯ શબ્દ

કાહે મેં કરે અનુરાગ, મન તું માહ નીંદ સે જાગ ॥ ૧૮ ॥
જિન કે જોગ લાગ્યા તું ડાલે, વહ સખ જાવે તોહિં ત્યાગ ॥ ૧૯ ॥
સભી પદારથ દુષ્ટ નષ્ટ હૈ, અખ ધન સે મત લાગ ॥ ૨૦ ॥ પર-
મેશ્વર કા શરણા પકડો, છુટ કરમ કે દાગ ॥ ૨૧ ॥ ગુપ્ત ગલી મેં
જો કોઈ આવત, સુખભર ખેલત ફાગ ॥ ૨૨ ॥

૨૭૦ શબ્દ

જોદઈ ઉમર અખ સારી, નહિં સુમિરે કરતાર ॥ ૨૩ ॥ જખ
ગભવાસ મેં આયા નૌ માસ તહાં દુખ પાયા ॥ ક્રિયા ભગતી
કા કરાર ॥ ૨૪ ॥ ફિર બાહર નિકલ કે આયા, યોગી ચન્તર મેં દુખ
પાયા ॥ કરન લગ્યા હાહાકાર ॥ ૨૫ ॥ મૂઢતા મેં બાલપન ખોયા,
જખ ભૂખ લગી તખ રોયા ॥ કરે માતા પ્યાર ॥ ૨૬ ॥ ફિર તરુણ
અવસ્થા હોવે, તરુણી કે સંગ મેં ખોવે ॥ કામ ક્રી પડગઈ માર
॥ ૨૭ ॥ વહ તરુણ અવસ્થા જાવે, જૈસે બિજલી છિપિ જાવે, ડાકરા
ભયા ગંવાર ॥ ૨૮ ॥ જખ કફ વાઢનિ ઘેરા, કર દિયા પૌર મેં ડેરા
॥ ૨૯ ॥ પડા યહાં કૂકર માર ॥ ૩૦ ॥ અગડ પડોસી સખ દુખિયારે, અખ
તુંહ મર પાપી હત્યારે ॥ ૩૧ ॥ બડે કિયે ખુવારે ॥ ૩૨ ॥ તન મેં ફેલી
બીમારી, ચઢિ આઈ કાલ અસાવરી ॥ ૩૩ ॥ સુન નહિ ગુપ્ત પુકાર ॥ ૩૪ ॥

૨૭૧ સવૈયા

પુત્ર કલત્ર સભી તુઝે ત્યાગત, તું જિનકે સંગ લાગાહિ ડાલે ॥
સ્વાસ્થ હેતુ સે પ્યાર કરે સખ, બિન સ્વાસ્થ કો મુખ સે નહિં
ખોલે ॥ ૧ ॥ તુહ આપની આયુ સખ ખોવત, અન્તર વિચાર કહુ નહિં
તોલે ॥ ૨ ॥ દેહ દિયા હરિ કો હરિ સુમરન, તો હરિ સે પડદા નહિં
ખોલે ॥ ૩ ॥

દોહા-દેખિ રહા હૈ આંખિ સે, સુનતા હૈ સખ કાન ॥

તોભી નર ચેતે નહીં, મન એસા બેઠમાન ॥

૨૭૨ રાગ તરંગ ।

સૌદાગર પ્યારે, સૌદા તો કરિલે હરિ નામ કા ॥ ૧ ॥ નર
તન પાયા જગ મેં આયા કરલે સુઘર કમાઈ ॥ ૨ ॥ કાલ ચપેટા મુખપર

લાગે, ભૂલિ જાવે ચતુર્થી ॥ ૧ ॥ ગર્ભ માહિં છક્યાર દિયા, થા
 દ્યોં ભૂલન હૈ ઉચકો ॥ જે ઉચકો નહીં અદા કરેગા, કયા જવાબ
 દેગા નિચકો ॥ ૨ ॥ ઘન કે દાજ સાજ બહુ સાજે, દરિ મેં કમલ
 ન લાગે ॥ ૩ ॥ યહીં પૈ રહજાય માલ અજોના, યમ પકડી કરેગા આજે
 ॥ ૪ ॥ અપને હાથ મેં કરી કમાઈ, જોડિ જમી મેં રખતા ॥ નાંજ
 હાથોં ચલા મુસાફર, આસ અન્ત અખતા ॥ ૫ ॥ લોક બહાઈમેં
 ફૂલ્યા ફિરતા કરે ચતુર્થ ॥ કાલ કયારી પડિ કંઠ પર, ભૂલિ ગયા
 લખવાઈ ॥ ૬ ॥ કૈતે ચહેજાય પડા જિમી મેં, કૈ આવેજ ભાઈ ॥
 કયા તો જલ સજ મેં હોવે, કયા લે જાહિં થીલ જમાઈ ॥ ૭ ॥
 વિજા પડી સાર નહિં જન્યા જગમેં કરી કમાઈ ॥ વાંચિ સરોદ
 સ્વર કે સોચા, વેદન અખ ફેલાઈ ॥ ૮ ॥ સૌદા દિયા નેદે કે
 દારન ઉલટા રોડિ આયા શુભ રૂપ કે સમજા નાહિં, પડી રહી
 સખ માયા ॥ ૯ ॥

દોહડા—સૌદા કીજ સમજિ કે. ફેર ન એસા દાવ ॥

પુન્ય પુનઃ કરકે મિલ્યાં, વૃથા નહીં ગવાંય ॥

૨૭૩ રાગ તરંગા

અરે સુમિત્રયા રમજની, તોડ ગાયાહૈ સખ નાતા ॥ ૧ ॥ તન
 અસય મેં નિઘસિ ચલ્યા હૈ, કોટ કિલા નહિં ઢાતા ॥ કિસ મારગ
 ગહે ગયા મુસાફર, કોન કિધાને જતા ॥ ૨ ॥ આચી તાઈ ઓર
 ભોજાઈ, બહન ભાનજ માતા ॥ દાદી બૂવા મામી નાની, ત્રિયા
 ફૂટે માયા ॥ ૩ ॥ આચા તાઈ દાદા બાબા, રજા ફૂડા બ્રાતા ॥
 દેહ ઉત્તય જમી મેં ફૂલ્યા, સિર ફોડ દિયા હૈ તાતા ॥ ૪ ॥ આપ
 દિયા સ્નાન સર્ભાને, કરને લાગે બાંતા ॥ કે તિલાંજલી ચલે
 નગરકે, તોડ્યા નીંબ દા પાતા ॥ ૫ ॥ લંબા ધોતા દાંબ મેં પોથા,
 પાંડિતજી બલિ આતા ॥ દર્મદાન્ડ દી બાત સુના કે, અપની
 કીક લગાતા ॥ ૬ ॥ ઘાટ ઊપર દેહ આવે, વહ લી ફેલ મચાતા
 ॥ પાંચ દયાએ ભોજન આવે, સચ્ચા પર સો જતા ॥ ૭ ॥ ઉનકે
 હાલ દી અખર નહીં ફૂઝ, અપની બાત બનાતા ॥ વેતો મત્યા
 ફૂટકે રોવે, વહ માલ મજે મેં આતા ॥ ૮ ॥ વહતો હોયગા શુભ,

કિસી કો ઉસકા પતા ન પાતા ॥ ઠગિ ઠગિ માલ પોપણ ખાતે, કૈસે
ઉસપાસ પહુંચાતા ॥૮॥

૨૭૪ સવૈયા ।

ભેંડયોં કી ચાલમેં ચાલિ રહે નર, નાહીં વિચાર કરે ઘટ અન્દર
મૂયે કા શોક પડયા અતિશય, ધન લૂટત પોપ મચા દિયા દુંદર ॥૧॥
સ્વપને સમાન યહ ખેલ વન્યા કાહે પૈ ચુનાવત ઊંચે સે મંદિર ॥
ગુપ્તકી ખાતન સમજત મૂરખ નાચિ રહ્યોં ત્યોં મદારી કો ખંદર ॥૨॥

૨૭૫ રાગ તરંગા ।

અરે ગફલત કે માતે, ખીત્યા જાત હૈ યહ વેલા ॥૮૬॥ કોઈ
ન તેરા સંગી હોગા, પકડયા જાય અકેલા ॥ ઘડી પલક કી ખબર
નહીં હૈ, પડરહ્યા કાલ કા હેલા ॥૧॥ યા નર દેહી ભજન કરને
કો પકડ હરી કા ગેલા ॥ હાથ ન હિલે પૈર નહીં ચલના, દામ
લગે નહીં ઘેલા ॥૨॥ સૌદા તો નેકી કા કરલે છોડ સકલ બદ
ફૈલા ॥ અખ તો હાટ ખજાર લગ હૈં, ફિર વિધુર જાયગા મેલા
॥૩॥ ઘર સે નિકસ્યા ભજન કરન કો, દેખત ડાલે મેલા ॥ પુત્ર
બ્રાતા છોડિ દિયે હૈં, અખ ગુરુભાર્ષ અરુ ચેલા ॥૪॥ જ્ઞાન
ધ્યાન અધ્યયન કા ભૂંડ્યા કરને લાગ્યા ખેલા, ઉસે દરગહ કી
ખબર નહીં યમ પકડિ નિકાલે તેલા ॥૫॥ માંગે માલ ઉડાને લાગ્યા,
ખનિ ગયા મોટા ખેલા ॥ તન પુઝે મન પુઝ હુવા કરતા કશ્મીર
કા મેલા ॥૬॥ બ્રહ્મ જ્ઞાન કા લક્ષણ કરતા, આવે સખકે ભેલા
॥ મન માનેજિત તિન સા જાવે, ક્યા ઉતમ ક્યા મૈલા ॥૭॥
ગુપ્ત ભેદ કો સમજત નાહીં પડયો અવિદ્યા જોલા ॥ કભી તો
મોન કભી લપરાઈ, કભી ખનિ ખેંઠ હૈ ભોલા ॥૮॥

૨૭૬ કુણ્ડલિયા ।

ફકર કે મકર નહીં, ઔર નહીં ધન માલ ॥ રાજ રહતે ઉસી
મેં, જે કુછ ખીતે હાલ ॥ જે કુછ ખીતે હાલ, ખ્યાલ દૂજ નહિં
કરતે ॥ સખ હોય અદૃશ આવીન મોજ અપની મેં ચરતે ॥
ગુપ્તાનન્દ મેં આનન્દ, આવે ચાહે ઘી અરુ શકકર ॥ પ્રારબ્ધ
કે વેગ નહીં, કુછ કરતે મકકર ॥૧॥

૨૭૭ ભજન

નરપતિ ચલે કાયા કોટ સે, સજિગર્ભ જિસ કા અસવારી
 ॥ટોકા॥ હસ્તી અરુ ઘોડા સખ છોડે, કાઠ કે તામજમ મેં પોઢે ॥
 કસિકર ખાંધિ દિયે દો ગોડે, અખ કુસે બચે યમ ચોટ સે ॥
 હુયા પુન્ય પાપ સખ જરી ॥૧॥ હાહાકાર બાજતે બાજે, સાજ
 સભી ચલને કે સાજે ॥ બહુત સમજન્ધી આયે રાજે, વહ બાત
 કરે નહીં હોઠ સે ॥ હોગર્ભ પુરિષ્ટક ન્યારી ॥૨॥ કહાંસે આય
 પોલકી ઠાઈ, પડી રહી સખહી ઠકુરાઈ ॥ જિનકે વારતે કરી કમાઈ
 સિર ફોડન લાગે સોટ સો ॥ જો પ્યાર કરતે થેભારી ॥૩॥ વહ
 જીને કે ઘોખે મેં રહતા, કાલ આય તતકાલહિ ગહતા ॥ ગુપ્ત
 ભેદ કછુ નાહીં લહતા નહિં બચતા યમ કી ચોટ સે ॥ કર રામ
 ભજન કી ત્યારી ॥૪॥

૨૭૮ ઝગડા ।

યહભી સખ ઝગડા હૈ, ઝગડે સે ન્યારા ઢગડા હૈ ॥ ઝગડા
 કુસે જાન્યા રે, હમેં આતમ બ્રહ્મ પિછાના ॥ ઝગડા એસે જાન્યા
 રે ॥ટોકા॥ પહિલી ઝગડા તોહિ સુનાઝિ, શાસ્ત્રોં કી બાત દિખાઝિ
 યહ ભીં ॥ કોઈ સાત પદારથ ગાવત હૈ કોઈ સોલહ મેં સમજા
 વત હૈ ॥ યહ કોઈ પ્રચ્ચીસ તત્વ વિવેક કરે, કોઈ કર્મ યોગ
 મેં પાંચ ધરે, ॥ યહ ૦ ॥ કોઈ જ્ઞાનહિ જ્ઞાન પુકારે હૈ, એકત્વ કા
 નિશ્ચય ધારે હૈ ॥ યહ ૦ ॥ ઇસ વિધિ પર દરશન બટકિ રહે ॥
 અપના અપના શિર પરકિ રહે ॥ યહ ૦ ॥ ઘર છોડિ કે આપ
 ફકીરી લઈ ॥ બાતેં કરતા હૈ અહીં વહીં ॥ યહ ૦ ॥ સેવગિ
 શિષી લાવત હૈ ॥ પેસે કલદાર કમાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥ અંગ
 માહિં ભભૂતી લાવત હૈ શિર લખે કેશ બઢાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥
 કોઈ ઘોડમ ઘોટ કરાવત હૈ, દાઢી અરુ ભૂંછ બઢાવત હૈ ॥
 ॥ યહ ૦ ॥ ગેરુકા રંગ લગાવત હૈ, લંબી ગાતી લટકાવત હૈ
 ॥ યહ ૦ ॥ ઊંચે મકાન બનાવે હૈ, ફીકે પકવાન કરાવે હૈ ॥ યહ ૦ ॥
 જાપે અરૂ તિલક લગાવત હૈ, લંબીમાલા લટકાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥

ઠાકુર કી પૂજા રાખત હૈ, દિન ભર પરસાદ હિં ચાખત હૈ ॥યહુના
 નાના બિધિકે ભાગ લગાવે, ઠાકુરજી કા નામ બતાવે ॥યહુના
 દુકાન લગાવે ટકે કમાવે, બૈઠી મજે મેં આવે ॥યહુના દોને ચટ્ટા
 કરેં બડાઈ, બડા સિદ્ધ આયા હૈ ભાઈ ॥યહુના કોઈ પદે પઢાવે
 જ્ઞાન સુનાવે દમડો કે ઢંગ લગાવે ॥યહુના ગલી બજારોં કરે
 વ્યાખ્યાના, વિદ્યા પઢી મર્મ નહીં જાના ॥યહુના લઈ ફકીરી તત્તન
 જાના, ખાને લગા વિષોંકા ખાના ॥યહુના ટૂક માંગિકે ભરતે
 પેટ, રહેં ગાંવકે ગારે લેટ ॥યહુના પોખર ઊપર કુટી બનાવે,
 તકિયા ઔર બિછોના લાવે ॥યહુના મોર છડોં સે ઝાડ લાવે
 જાની કા દૂધ માંગિકર લાવે ॥યહુના ઉપવાસ કો કરતે તીરથ
 ફિરતે કાશી મેં મરતે ॥યહુના કરતે સંચારા મૂઠ ગવાંરા તનસુકા
 સુકા કે મારા ॥યહુના ઘર છોડિ બસાયા રામદુવારા, માલા
 બેચિકર કરે ગુજરા ॥યહુના માંગિ માંગિ કર કૌડી લાવે ઋષી
 મેં કુટી બનાવે ॥યહુના ગંગાકે તટ સિદ્ધ બિચરતે; ઘાટોં ઊપર
 આસન કરતે ॥યહુના કુટીમેં બાંધે લાલ લંગોટે, ફિર મુકેરેં
 જંગલ ઝોટે ॥ કોઈ કાશી મેં વિદ્યા પઢી આવે, મંડલી બાંધે
 શિષ્ય બનાવે ॥યહુના કોઈ પદે પઢાવે લોક રિઝાવે, કવિતા ખૂબ
 બનાવે ॥યહુના કોઈ કાનોં માહીં ડાટ હુકાવે, આંખિ મીંચકર
 ધ્યાન લગાવે ॥યહુના કોઈ ર કરતે યોગ સમાધી કોઈ બને હૈં
 આત્મ વાદી ॥યહુના કોઈ ર નાચે કોઈ ગાવે, કોઈ મૌન ગહેરહિં
 જાવે ॥યહુના માંગહિ માલ કરે ભંડારા, બનિગયા મહંત બડા
 ભારયા ॥યહુના કાંખ માહિં લે ચલ્યા પોથા, છોડી કમર તે
 ઢીસા ધોતા ॥ યહુ ॥ પંચાગ વાંચિ કે ગિરે લગાવે, માલ ઠગિ
 કે આવે ॥ યહુ ॥ શંખ બજાય કૂટતે પીતલ, કભી નહીં મન
 હોવે શીતલ ॥ યહુ ॥ ગંડા ગોલી મંતર જંતર કરે કીમિયા
 પઢિ પઢિ તંતર ॥ યહુ ॥ પૂજન લાગે દેવી દૂરગા, કાટેં બકરા
 મારે મુરગા ॥ યહુ ॥ કોઈ વાચન લગે સરોધા, રંગ રૂપ પત્તન
 કા સોધા ॥ યહુ ॥ સ્વર કો સોધિ બતાવે પરશન, મૂરખ કા
 મન કરે આકર્ષન ॥ યહુ ॥ જો કુછ હોંનહાર સોઈ હોવે, ભટકિ
 ભટકિ કે વૃથા રોવે ॥ યહુ ॥ કોઈ બને યતી સંન્યાસી, ઘર કો
 છોડિ હુયે વન વાસી ॥ યહુ ॥ ગલે મેં રૂદ્રાક્ષ કી માલા,

ખાક લગાય ક્રિયા મુખ કાલા ॥ યહ૦ ॥ બ્રહ્મચારી કા ભેષ
બનાવે, કૌડિ કે લિલામ વતાવે ॥ યહ૦ ॥ જીવ ઈશ કી કહી
ઉપાધી, માયા અવિદ્યા સાદી અનાદી ॥ યહ૦ ॥ તાતેં ચે દો
ભેદ બતાવે, ભિન્ન ભિન્ન કર દોનો ગાયે ॥ યહ૦ ॥ મહાવાક્ય
વેદોં મેં ભાષે, ભેદ ઉપાધી કૃત જો નાષે ॥ યહ૦ ॥ ભાગ
ત્યાગ કી સૈન બતાઈ, વૃત્તિ લક્ષણા કહિ સમુજાઈ ॥ યહ૦ ॥
રચે વ્યાસ ઇતિહાસ પુરાના, સાધન સાધ્ય જ્ઞાન અરુ ધ્યાના
॥ યહ૦ ॥ અષ્ટાદસ પ્રસ્થાન બનાવે, અજ્ઞાની કે મન પરચાવે
॥ યહ૦ ॥ નામ રૂપ માયા કી રચના દિખે સુનિયે ગુનિયે તિતના
॥ યહ૦ ॥ ઔર તરહ ઝગડા નહીં દુરે જહાં જાય તહાં કૂકસ
કુરે ॥ યહ૦ ॥ ઝગડા ગુપ્ત ગલી મેં ગરે, વ્યાપક એક આતમા
હેરે ॥ યહ૦ ॥ સખ ઝગડા હૈ, ઝગડે સે ન્યારા દેગડા હૈ ॥
ઝગડા કૈસે જાન્યારે, હમેં આતમ બ્રહ્મ પિછાન્યા ॥ ઝગડા એસે
જાન્યારે ॥

॥ ઇતિ ॥

૨૭૯ તરજ તાન

મત લગે વિષય કી ચાટ, મન કો ડાટ ડાટ ડાટ ॥૧૬૬॥ મન
હી સખ કારજ સારે, વિષયો તે તાહિ નિવારે ॥ નિજ બોધ
રૂપ મેં ધારે, શુભ ગુન કા લાવો ઠાઠ ઠાઠ ઠાઠ ॥૧૭॥ મન કી
ચલતી દો ધારા ॥ કુચક ડાખે દૂજ પારા કુમારગ કરો નિવારા
સત સંગતિ નૌકા બાઠિ બાઠિ બાઠિ ॥૧૮॥ યહ૦ અનુષ્ઠાન કરવાવો
નિજ બ્રહ્મ રૂપ મેં લાવો, અખ અપના કામ બનાવો, મન કા
દપ્તર જા ફાટિ ફાટિ ફાટિ ॥૧૯॥ યહ૦ ગુપ્ત ભેદ લખ પ્યારે, ઇસ
મનને બહુત ઉધારે અખ ગિને કૌન તેં સારે, ટુક મોહ જાલ કો
કાટ કાટ કાટ ॥૨૦॥

૨૮૦ શબ્દ

અખ કીજેરે ચારોં જ્ઞાન ગોષ્ઠી, સખ જોડોં જગત કી દોસ્તી
॥૨૧॥ બડે ભાગ સે નર તન પાયા, યાકે પીછે ફિર રહી લોપટી

૧૧૧૥ બ્રહ્મ વિચાર કરો ઇસ તન મેં આત તજો સખ કોકટી ૧૧૨૥
 આતે આતે બહુત દિન બીતે, અખ તોડા અવિદ્યા જોપટી ૧૧૩૥
 બ્રહ્માનન્દ કો પ્રાપ્ત હોકર, દૂર કરો સખ શોકટી ૧૧૪૥ વ્યાપક રૂપ
 લખો નિજ આતમ, કિર રહે ન યમ કી જોપટી ૧૧૫૥ ગુપ્ત
 મૂલ કે બૈઠ ચૌતરે, જખ પાવેગા પોસટી ૧૧૬૥

૨૮૧ શબ્દ

ઇસ દુનિયા મેં દો દિન લગી હૈ, ધન દોનો કી બાજી
 ૧૧૭૬૥ ઉન કો નામ ધરા હૈ મન્દિર, ઉનકો સમજિદ સાજી ૧૧
 ઉનકો નામ ધરા ઠાકુરજી, ઉનકો ધરા ખુદાજી ૧૧૧૥ ઉનકો નામ
 ધરા પંડિતજી, ઉનકો રખલિયા લિયા કાજી ૧૧ વા સન્ધ્યા ગાયત્રી
 પઢતે વો હોગયે નેમાજી ૧૧૨૥ વે લગે ઉપવાસ કરન કો, વે રોજો
 મેં રાજી ૧૧ વે કાશી ગંગા કો ચાલે, વે હોન ચલે હૈ હાજી
 ૧૧૩૥ અપની અપની બન્ધે પક્ષ મેં, છૂટે કોન ઉપાજી ૧૧ ગુપ્ત
 મૂલ હૈ, એક સલી કા જિન યહ રચના સાજી ૧૧૪૥

૨૮૨ શબ્દ

દેખો દેખો તમાશા દિદાર કારે ૧૧૭૬૬૥ સલી અનાતમ
 ઝગડા છોડો, સૌદા કરલે ન અનાતમ બજાર કારે ૧૧૧૥ જાસે
 ખાસ ખુજે તન મન કી, પાની તૂં પિલે બિજાર કારે ૧૧૨૥
 સતસંગતિ નૌકા મેં બૈઠો, સૈલા કરલે ન પરલે પાર કારે ૧૧૩૥
 ભવસાગર મેં ફેરિ ન આવે, બાન લગે નહીં માર કારે ૧૧૪૥
 નિજનન્દ કો પ્રાપ્ત હોકે, ઝગડા મિટે સંસાર કારે ૧૧૫૥ ગુપ્ત
 ગલી મેં બાજો બાજો ધ્રુવ ઉઠે જંદાર સિતાર કારે ૧૧૬૥

૨૮૩ શબ્દ

બાબા બોલે ને રગડા લગા દિયારે ૧૧૭૬૭૥ તન કી કુંડિ
 મન કા સોદા જ્ઞાન કા ઘોટ મચા દિયારે ૧૧૧૥ સંશય સોંક
 અરુ કામની, માયા કા મિચ્છા હુકાય દિયારે ૧૧૨૥ મમતા મગદ
 કલાયચી, કેશર, લુગડા ઘોટ બનાય લિયારે ૧૧૩૥ સત કી સાફી
 મેં બગિચા કાની, જગ કોષ્ટ કાદિ બગાય દિયારે ૧૧૪૥ પ્રેમ કે

પ્યાલે મેં પ્રીઈ, જાકે અખિયાં મેં જોશ ઉગાય દિયારે ॥૫॥ ગુપ્ત
ગલી મેં શંકર ધૂમત, જગ ભર્મા કા ભૂત ઉડાય દિયારે ॥૬॥

૨૮૪ શબ્દ

યક ખેર બંશી ફેર વળાય વંશી કે વળને હોરેરે ॥૭॥
તેરી વંશીને ને મેંરા મન મોહા, તુએ એસી બળદધ
કારેરે ॥૮॥ તેરી બંશી ને સારા જગ મોહા, મોહે ચન્દ સૂર
અરુ તારેરે ॥૯॥ યક ખેર બંશી બાળ વૃજ મેં તુએ નખ પર
ગિરવર ધારેરે ॥૧૦॥ એક ખેર બંશી બાળ અવધમેં તુ સંતન
સુખકારે રે ॥૧૧॥ એકવેર વંશીવાળ જનકપુર ઉસ રંગભૂમિ
કે મન્જારેરે ॥૧૨॥ યક બેક બંશી બાળ લંકા મેં તુએ અસુર
ખપાદિયે સારેરે ॥૧૩॥ ગુપ્ત બંસુરિયાં ઘટ મેં હી બાજે કોઇ
સુનતે સુનને હોરેરે ॥૧૪॥

૨૮૫ ગુરુ શિષ્ય સમ્બાદ, શિષ્ય પ્રશ્ન ચૌપાઈ

કોઉ એક શિષ્ય આયો ગુરુ શરના ॥ હાથ જોઉ મેલ્યો સિર ચરના ॥
ભો ભગવન તુમ જાનો મરમા ॥ સો કછુ કરો મિટે જિસે મરના ॥
મેં આયો તુમહરી શરનાઈ ॥ પ્રભુ કિજે અખ મોર સહાઈ ॥
જન્મ મરન કા કાટો ફન્દા ॥ જાકર પાવહુ પરમાનન્દા ॥
દેખિ ડર્યો મેં યહ સંસાર ॥ તાતે અખ મોહિ કીજે પારા ॥
યા જગ માહીં દુઃખ અનેકા ॥ સુખ સુપને કબહૂં નહિં એકા ॥
આશા તૃષ્ણા ચિન્તા ખાવેં ॥ કામ ક્રોધ મદ મોહ ડરાવેં ॥
કુમતિ સુમતિ નિત કરે લડાઈ ॥ મમતા ડાકિન નિત ઉઠ ખાઈ ॥
દંભ કપટ ઠગ રહે લુભાઈ ॥ મદ મત્સર અરુ માન બડાઈ ॥
મોપર નિત ગૈરત યે ફન્દા ॥ ખિન સતગુરુ કયા જાનૂં મેં અન્ધા ॥
અખ ઈનસે કીજે ઉદ્ધાર ॥ ભવસાગર તે કીજે પારા ॥
હેતુ મુકિત કા હો સો કહિયે ॥ તુમહારી કૃપા પરમ પદ લહિયે ॥
તુમ ખિન ઔર ન કરે સહાઈ ॥ ડુખત હો ભવસાગર માહીં ॥
માત પિતા બ્રાતા સુત દારા ॥ દારા યે સખ સ્વારથ કે હૈં સારા ॥

બિન કે દાલ કપા નહિં માયા । સો કરતે લીનન પર દાયા ॥
અખ ગ્રાહિં દીને યહ ઉપદેશ । જાઓ છૂટે સકલ કલેશ ॥

દોહા—શિષ્ય ને સકલ સંદેહ ઠહિ, દીનહી ખાત સુનાય ॥
અખ ગુરુ એસા કીજિયે, સકલ ભરમ મિટિ જાય ॥
ભરમ ખરાખર જગત મેં નાહીં દસર ખેદ ॥
સખ કહતે સન્ત પુકાર કે, યોં કહેં શાસ્ત્ર વેદ ॥

૨૮૬ ગુરુ ઉત્તર ।

મુન આસત દી ગિરા વિનીતા । મુનહુ શિષ્ય અખ હોહુ અભીતા ॥
જો તુમ કહી સકલ મેં જાની । મુનિ શિષ્ય હોજતે દુખ હાની ॥
દુખ નાશન દા દારણ એહુ । યાને મિટે સકલ સંદેહુ ॥
તત્ત્વમસિ દા અર્થ મુનિજો । ભાગ ત્યાગ લક્ષણા યક કીજો ॥
છવ ઈશ હી મિટિ ઉપાધી । ચેતન શુદ્ધ સરપ અનાદી ॥
તામેં ભેદ ગંધ ના હોઈ । અપના રૂપ જાનિયે સોઈ ॥
યહ ગુરુ મુખ સે સરવન કરિકે । મનન કરો યુક્તી ચિત્ત ધરિકે ॥
દાલ પાય વહે દુઃખ અખ્યાસા । ફિર છુટે મન દી સખ આસા ॥
નિશ્ચલ હોય ભયો મન થીરા । જૈસે મિદયો નીર મેં નીરા ॥
આતમ અક્ષ રૂપ યક જાના । અભેદ નિશ્ચય યહ જ્ઞાન અખાના ॥
સો જાનો યુક્તી દા હેતુ । જૈસે જલ પારન દો સેતુ ॥
યા વિધી ઉતરે બહુતે પારા । લે સેતુ સત સંગ સહારા ॥
બિન સત સંગ તરયા નહીં દોઈ । હુયેઅરુહૈં અરુ આગે હોઈ ॥
સત સંગતિ મહિમા સખ વરની । અજ્ઞાન નાશ ઇમિ પાવક અરની ॥
મુન શિષ્ય હો પાતે દુખ નાસા । યહ આપરૂપ દા અજખ તમાસા ॥
જો હમ પૂજા સો હમ ભાખા । આગે કહો સંશય જો રાખા ॥

દોહા—જો ભાખ્યો ઉપદેશ યહ, તોકો સુન ચિત લાય ॥
સંશય શોક રહે નહી, ભરમ, વિલય હો જાય ॥

હમણોં નાહીં કહત હૈ, યોં કહે સયાને સંત ॥
નિગમાગમ યોં કહત હૈ, ધમિ હોય ભરમ કા અન્ત ॥

૨૮૭ સંધ્યા આરતી

દોહા—જેતી સંધ્યા અરતી, લિખતે સખકા સાર ॥
સાંઝ સમય યાકોં પઢૈ, સમુજે સાર અસાર ॥
પઢૈ સુનૈ અતિ પ્રીતિયુત, અરુ પુનિ કરૈ વિચાર ॥
જ્ઞાન ભાનુ છિન ર ઉદય, વહે આતમ દીદાર ॥

ચૌપાઈ

એસી આરતી તોહિં સુનાડીં । જન્મ મરન કો ધોય બહાડીં ॥
એસી આરતી કિજે હંસા ॥ છુટે જાતિ વરણ કુલ વંસા ॥
કાયા માહિં દેવ હૈ એસા ॥ દૂજ ઔર નહીં કોઈ તૈસા ॥
કાયા દેવલ આતમ દેવા ॥ બિન સતગુરુ નહીં પાવે લેવા ॥
પહિલે ગુરુ સેવા ચિત્ત લાવે ॥ તાસે સકલ વિધી કો પાવે ॥
જો યુક્તી ગુરુ દેવ બતાવે ॥ તામેં અપના મન ઠહરાવે ॥
માયા કા સખ ઝૂઠ પસારા ॥ સત હૈ ચૈતન રૂપ તુમહારા ॥
પાંચ અંશ સખહી મેં જાનેં ॥ અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય સત્ય બખાનેં ॥
નામ રૂપ ઝૂઠે વ્યભિચારી ॥ તિનસે ભૂલિ ન કીજે ચારી ॥
તીન સચ્ચિદાનન્દ પિછાનેં ॥ તિનકોં બ્રહ્મ રૂપ કરિ માનેં ॥
સો હૈ બ્રહ્મ અપના રૂપા ॥ એસે વેદ કહત મુનિ ભૂપા ॥
દો ઝૂઠે માયા કૃત દેખે ॥ તિનકો સત્ય કબહુ નહિં પેખે ॥
માયા નામ કહત મુનિ ઉસકા ॥ પરમારથ સે રૂપ ન જિસકા ॥
અચિન્ત્ય શક્તિ કર તાહી બતાવે ॥ યુક્તી આગે રહન ન પાવે ॥
સો યુક્તી અખ કહો બતાઈ ॥ જાતે માયા રહન ન પાઈ ॥
સત્ય અસત્ય નહીં કછુ માર્છ ॥ નહિં દાનેં પદ મિલકર ગાર્છ ॥
નહિં યહુયે કહિ સિન્ન અસિન્ના ॥ નહિં દાતોં પદ મિલિ ઉત્પન્ના ॥
નહિં સાહેબ નહિં નિખેવા ॥ દાનેં મિલિ નહિં હોય અખેવા ॥

યહ નવ યુક્તી તિસને જાની । જિનકે માયા મરતી પાની ॥
 યહ સખ યુક્તી ગુરુ સે જાને । ફિર કીજે નિજ આતમ ધ્યાને ॥
 આતમ પુખ બહુ વિધિ કીજે । જાતે સકલ અવિદ્યા છીજે ॥
 સોહા થાલ બહુત વિધિ સાજે । સ્વાસ સ્વાસ પર ઘંટી બાજે ॥
 સંયમ આટ કરે દિન રાતી । જ્ઞાન દીપ બાલે બિન બાતી ॥
 જસ દીપક કા હોય ઉજાલા । અન્વકાર નશીજા તતકાલા ॥
 ઝાંઝ ઝનક ચેતન કી ઝનકી । મૂલ અવિદ્યા સારી છિનકી ॥
 મન મિરદંગ તાન કરે કુટા । ઘૂક ઘૂક કહન લગા મં ઝૂંઠા ॥
 ચિત કા ચન્દન ઘસિ કરે લાયા । તખ હીં દેવ નિરંજન પાયા ॥
 ખુદ્દિ તાલ બજાવન લાગી । કોટી જન્મ કી સૂતી જાગી ॥
 અહંકાર કા વાજા ઘંટા । બહુત કાલ કા દુટા ટંટા ॥
 ચિદાભાસને શંખ વજાયા । અપના રૂપ હમે અખ પાયા ॥
 ચિદાભાસ કા કીના ત્યાગ । કુટસ્થ રૂપ મેં કીના રાગ ॥
 આભાસ રૂપ કો ત્યાગ જખ હી । રૂપ અક્રિય પાયા તખહી ॥
 તા સાક્ષીકર સદા અભેદા । બ્રહ્મ રૂપ યહ ગાવત વેદા ॥
 જિમિ જલાકાશ અરુ ઘટકાશ । મહાકાશ મેં સખકા વાસા ॥
 યહ દૃષ્ટાન્ત વિચારે મન મેં । બ્રહ્મ રૂપ પાવે યા તન મેં ॥
 એસી કીજે આતમ સન્ધ્યા । યાતે છવ છુટે યહ બન્ધ્યા ॥
 એસી સન્ધ્યા આરતી કીજે । જાતે દેવ નિરંજન રીઝે ॥
 ધંદ્રી અરુ તિનકે સખ દેવા । કરન લગે હૈં આતમ સેવા ॥
 ભયે મુદિત સખ કરે વિચારા । આતમ અપના રૂપ નિહારા ॥
 કોઈ નાચે કોઈ ગાવે । કોઈ મૌન ગાહે રહિ જાવે ॥
 કોઈ તાલ બજાવન લાગે । આતમ માહીં હુયે અનુરાગે ॥
 પ્રીતિ પુખ ચડાવન લાગે । ધ્યાન ધુપ કો લાવન લાગે ॥
 બત્તી કરે બ્રહ્મ કા ગાના । ઔર કહુ નહિં ભાખત આના ॥
 એસે કહિ કે બ્રહ્મ સમાઈ । ભેદ ભરમ સખ દિયા ઉડાઈ ॥
 લૌન પુતરી જાવે નીરા । ઉલટ બાત કુછ કહેં ન બીરા ॥
 આપ રૂપ સખ દિયા ગવાંઈ । હોય ઉઠક દક માહીં સમાઈ ॥
 જો કુછ સુક્ષમ યા સ્થૂલા । ઔ કારણ થા તિનકા મૂલા ॥
 ગબહીં ચેતન ગહે પરકાશા । દ્વેત અદ્વેત સભી જંહુ નાશા ॥
 સન્ધ્યા આરતી કરો વિચારા । છૂટે ભરમ કરમ સંસારા ॥

લોક વેદ કી છોડા આસા । તખ દેખોગે બ્રહ્મ તમાસા ॥
 એસી સન્ધ્યા આરતી ગાવે । બહુરચો જગત જન્મ નહીં જાવે ॥
 દૂટે બન્ધન હોય ખલાસા । જન્મ મરન કા મિટિજા સાસા ॥
 બંધ મુક્ત યાતે સખ જાને । દોનોં મરમ કર મિથ્યા માને ॥
 બંધ વિહીન એક નહિં દોઈ । તાકા મુક્ત કૌન વિધિ હોઈ ॥
 બંધ મુક્ત માયા કૃત જાને । આતમ શુદ્ધ રૂપ પહિચાને ॥
 ધ્યાન અરુ જ્ઞાન નહીં કોઈ જામે । સાધન સાધ્ય નહીં કોઈ તામે ॥
 દ્વૈત અદ્વૈત નહીં કહ્યુ ઝગડા । ના કહ્યુ બન્યા નહીં કુછ બિગડા ॥
 અજર અમર આતમ અવિનાશી । ચેતન શુદ્ધ રૂપ પરકાશી ॥
 સજાતી વિજાતી ન તામે કોઈ । સ્વગત ભેદ ફિરે કૈસે હોઈ ॥
 નહિં વહ વૃદ્ધ નહિં વહ બાલા । સ્વેત પીત હરતા નહીં કાલા ॥
 નહિં વહ પુરુષ નહિં વહ નારી । નહિં સંન્યાસી નહિં બ્રહ્મચારી ॥
 લક્ષ અલક્ષ નહિં કહ્યુ તામે । વાચ્ય, અવાચ્ય બનૈ નહિં જામે ॥
 સવ કુછ હૈ અરુ નાહિં । તન વિકાર કુછ પરસત નાહિં ॥
 નહિં વહ હલકા નહિં વહ ભારા । ના કહ્યુ મધુર નહિં કુછ ખારા ॥
 રૂપ રંગ જામે કુછ નાહીં । એસા આતમ સખકે માહીં ॥
 સમ રસ રહે ગગન કી નાઈ । કાલ કર્મ કી પડેન છાઈ ॥
 સદા અક્રિયે નિરભય દેવા । કહા કરૈ કો તિસકી સેવા ॥
 ના કહ્યુ મૌન નહિં કુછ બોલે । ના કહિં સ્થિર ના કહિં ડાલે ॥
 નિશ્ચલ સદા અક્રિયે દેવા । બિન સત ગુરુ નહિં પાવે ભેવા ॥
 નાહું પરિચ્છેદ તાસૂ મેં કોઈ । દેશ કાલ વસ્તુ નહિં હોઈ ॥
 સંધ્યા આરતી કી લિખી ચૌપાઈ । જગ કો મિથ્યા કહે જનાઈ ॥
 આતમ બ્રહ્મ રૂપ કરિ ભાસૈ । સત ચિત આનંદ એક પરકાસૈ ॥
 જૈસે ગુન મેં ભાસત ભોગી । ત્યોં આતમ મેં જગ પ્રતિ યોગી ॥
 શુક્તી મેં રૂપા ભ્રમ હોઈ । ત્યોં આતમ મેં જગ હૈ સોઈ ॥
 સ્થાણુ માહિં પુરુષ કહૈ જૈસે । રવિ ફિરનન મેં નીર કહૈ તૈસે ॥
 આકાશ માહિં જ્યોં ગંધર્વ ગામા । યોં આતમ મેં જગત
 અભિરામા ॥
 મિરચી મેં તીક્ષણતા જૈસે । જલકે માહિં ક્ષારતા તૈસે ॥
 ફૂલન માહિં ગંધ જિમિ હોઈ । આતમ મેં એસે જગ સોઈ ॥
 દોહા—સભી ભરમ કર ભાસતા, કરતા કરિયા કર્મ ॥
 આતમા સદા અસંગ હૈ, કોઈ જનત વિરલા મર્મ ॥

સતગુરુ વિના નહિં ભેદ પાવે , કહત વેદ પુકારિ કે ॥
 લાચાર નહિ ચારા ચલા , હમ ચારોં બેઠે હારિકે ॥
 પર માન જેતી સિમરતી , વસ્તુ અનાતમ કો કહે ॥
 કોન શક્તી તામુઝી , જે આતમા કો વહ લહે ॥
 નિરમેય ચેતન શુદ્ધ નિરમલ , એક દો કી ગમ નહીં ॥
 એસે શબ્દ કરે વેદ કહતા , ઓર કષ્ટ બને નહીં ॥
 દૈસિક કહીં યહ શિષ્ય કો , તુહિ અગ્નિ વ્યાપક રૂપ હૈ ॥
 જે સમજતા ઇંસ રમજકો , પડતા નહીં ભય કૂપ હૈ ॥
 મત ખાય ગટકા ભરમ મેં , તુહી આપ ચેતન હે સહી ॥
 હક સમજ અપને જેહન મેં , યહ ખાત હમ તોસોં કહી ॥
 તત્ત્વમસિ આદિ મહા બાક્ય , કીજે તાહિ વિચાર કો ॥
 મત ફંસે ધિરિયા કીચ મેં , સખ છાંડિ જગ આચાર કો ॥
 યહ પદે સંધ્યા આરતી , ચારો પદારથ બ લહે ॥
 જે ધારે ઇંસકે અર્થ કો , ફિર ખાત ઉસકી કો કહે ॥
 ચાહે અમાલક રતન કો , બેઠે ગુમ દરિયાવ મેં ॥
 યહ વક્ત બીતા છત હૈ , ફિર રોઝે ઇંસ દાવ ને ॥

દોહા—તમ નાશત પરકાશ તેં કહો તોહિ સમુઝાય ॥
 ઓર ન કાહુસે નશે, ચહેં લાખોં કરોં ઉપાય ॥
 અજ્ઞાન વિરોધી જ્ઞાન હૈ, લીજે ખાત વિચાર ॥
 નાશ ન હોવે ઓરતે, ચાહેં ધારો વૃત્ત હજાર ॥

દોહા—નથૂ ભૈયા પ્રાગદત્ત, ગોવર્દન યશવન્ત ॥
 મિશ્ર ભૈયાદાસ હૈ, સખ મણ્ડલી મહન્ત ॥
 કૃષ્ણ ધુર ઓ શિવરતન, ખાબૂ ઓંકાર ॥
 ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા ખના, તિન આજ્ઞા અનુસાર ॥

સારદૂલસિંહ વંશીધર, તીજે ગંગારામ ॥
 ધનસે આદિ ઔર જો, ભક્ત મારુડલી નામ ॥
 સાધૂ જિતે સમાજ મેં, તિનકે લિખતે નામ ॥
 પ્રભાનન્દ કેસરપુરી, ગૌરાંશંકર જન ॥
 સમ્બત કી સંખ્યા લિખે, મુનિયો કરકે કાન ॥
 ગૃહ લગી હૈ પ્રભ પૈ, મુનિશિર મુકુટ પિછાન ॥
 પક્ષ પ્રકાશિત બાદવા, તીજ તિથી ખુધવાર ॥
 મન્દસોર પૂરા હુવા, વિશનપુરી દરબાર ॥

॥ ૐ શાન્તિઃ શાન્તિઃ શાન્તિ ॥



:૦: નવીન અનુભવી છન્દ ૩૧ :૦:

૨૮૯ શબ્દ

મનકી બાત રહે સખ મનમેં । તેરા સાજ બિગડ જાય છિન
 મેં ॥ ૧૬ ॥ એક તિહાર્થ ખેલ ગવર્ધ ॥ ભૂલ્યા બાલાપન મેં ॥
 આર્થ જવાની ચઢી મસ્તાની ॥ મુખ દેખે દર્પન મેં ॥ ૧ ॥ મૂંઝ
 મરોરે ટેલી પગડી ॥ બાંધત સો બેર દિન મેં ॥ તેલ કુલેલ લગાવત
 તન મેં બાત કરે પંચન મેં ॥ ૨ ॥ આયા બ્રહ્માપા સખ તન કાપ્યાં ॥
 મન પુત્તર અરુ ધન મેં ॥ પડ્યા ખાટ મેં મજેકે મારે ॥ બીમારી
 સખ તન મેં ॥ ૩ ॥ હરી કી ભક્તી કબહુ ન કીની ॥ ભૂલ્યા
 તીનોં પન મેં ॥ ગુપ્ત રૂપ કો જાન્યા નાહીં પડ્યા અવિદ્યા વન
 મેં ॥ ૪ ॥

દોહા—લોક બડાઈ મેં ફંસે , કરતે બહુત વિખ્યાન ।

જસે ભવ સાગર તિરે, બિસર ગયા સખ કામ ॥

२६० श्लोक

भगवन् त्वं हिमा जया दिवाना । नदीं आरणा इय विधाना ॥
॥ १६ ॥ हास आनादि हा मिनसाया पायी । सुख न निज
पाया ॥ सुन हास वन पारि लाजे । इन मे हंसि लायाना ॥
॥ १ ॥ जगन भादि निज लाया हासे । अनया लाया आना ॥
नाम वनी हा हनकु न लाजा । अहया हास निशाना ॥ २ ॥
आन या वियन इय लाजा निज जगन हासि लायाना ॥ मेस जगन
हे पाय अहया । पाया पद निज आना ॥ ३ ॥ जगन इय पद
तुली विचार । पद वन आन नाजा ॥ जगन नदीये सुन से
पौरी भिदि जग आना जग ॥ ४ ॥

होहा-सुन दिन आहर करमना, करना अहय अया ॥
सुन पादप तुदि आया है, करके देन विचार ॥

२६१ श्लोक

पौरी राम नाम रस आसा । तेन अनुया होय भववासा ॥
॥ १ ॥ जे कोर पौरी पुन पुन हावे । वर होय नदी आसा ॥
बीरवाही के जगन हेरने । हरि जग वन हा आसा ॥ २ ॥ हास आसे
हे आसा न लाजे । पद हंसि हा आसा ॥ जगन जगन हे हास
हरे जग मेक हंसि नदी आसा ॥ ३ ॥ सुन सजनि मे बीरवासे ।
वहा भिजे जग हासा ॥ वर पद हा अहय पदो । वर अहय
हा आसा ॥ ४ ॥ पुन जगन हा दीप आसा । जग हावे अजि-
यासा ॥ सगली शत्रु भादि निशाना । हर पद जगन हा आसा ॥ ५ ॥

होहा-शत्रु भादि हिये शत्रु ने, पुना भयाया जग ॥

निरजय होकर सौवना, अहय सुन के सग ॥

२६२ श्लोक

जे कोर सुन के सागर नदी पद हेरि जग नदी पावे
॥ १ ॥ जे कोर सुन के सागर नदी पद हेरि जग नदी पावे ।
सगली शत्रु भादि निशाना । हर पद जगन हा आसा ॥ २ ॥

લોકરૂપ વેદ લગે સખ ઝુંઠેભરમ જાલ ઉડી જાવે ॥૧॥ અહીં
 બ્રહ્મ યહ જાપ કરે, સો યમ કી ચોટ બચાવે । કાલ બલી કા જોર
 ન ચલતા, જો યહ ધ્યાન લગાવે ॥૨॥ અસ્તિ ભાતિ પ્રિય સત્ય
 રૂપ હૈ, નામ રૂપ છિટકાવે ॥ જળ યહ રમજ સમઝ મેં નહીં
 આવે ॥ સચ્ચા સત ગુરુ વતલાવે ॥૩॥ ગુપ્ત રૂપ પરઘટ આપ
 રૂપ હૈ । ભેદ ભરમ મિટિ જાવે ॥ અખ કે ઔસર મત નાચૂકે ।
 ફેર દાવનહીં આવે ॥૪॥

૨૯૩ શ્લોક

કર મન પુરુષોત્તમ અસનાના ॥ સખ મિટી જાય આના
 જાના ॥૧॥ તીરથ બરત કરે બહુતેરે, ખોયા બહુત જમાના ॥
 અખકી બાર સમઝ મન મૂરખ । ફિર પીછે હોય પછતાના ॥૨॥
 બ્રહ્મ રૂપ નિજ આત્મ જાનો । પકડો ઠીક ઠીકાના ॥ અખકે
 ઔસર ચૂકિ જાયગા । ચૌરાસી કો જાના ॥૩॥ વાચ્ય અર્થ કા
 ત્યાગ કરો । અખ ચેહી બૈલ છુટાના ॥ બ્રહ્માકાર કરો અખ
 વિરતી । લાવો લક્ષ નિશાના ॥૪॥ ગુપ્ત ગલીચે મુખ સે બૈઠો
 ખાવો બ્રહ્મ રસ ખાના ॥ બહુડ કી જ્યોતિ પિંડ કે માહીં ।
 આપમેં આપ સમાના ॥૫॥

૨૯૪ શ્લોક

તુહ તો ચેતન હૈ અવિનાશી । અખ તોડ ભરમ કી ફાંસી
 ॥૧॥ કારણ સૂક્ષ્મ, સ્થૂલ, દેહ ધન સખહી કા પરકાશી ॥ પંચ
 કોષ ઔર દેશ કાલ મેં ઘટ ઘટ માહિં નિવાશી ॥૨॥ બદ્રીનાથ
 કેદારનાથ મેં, મથુરા મેં ઔર કાશી ॥ રામેશ્વર અરુ જગન્નાથ
 મેં તુહીં દ્વારિકાવાસી ॥૩॥ સ્વર્ગ નરક વૈકુંઠપુરી મેં તુહિ ધંદર
 યમ ફાંસી ॥ તુહીં બ્રહ્મા વિષ્ણુ તૂહીં ઈશ કૈલાસી ॥૪॥ તુહીં
 ગુપ્તરૂ તૂહીં પરગટ, તુહીં રોવે તુહીં હાંસી ॥ તુઝ સે બિના
 નહીં કશું ખાલી, કર કે દેખ તલાશી ॥૫॥

૨૯૫ શ્લોક

ભલા જો કુછ હૈ સો આપૈ આપ । આપહિ જન્મે આપૈ
 મરતા, આપહિ તપતા તીનો તાપ ॥૧॥ આપૈ પંચ ભૂત દસ

પાંડી, મનમુક્તિ મિત્ર હંકારે હી આપે ॥ આપણે, પંચ બ્રહ્મ કી
રચના, આપણે હી હું સખ સાથે અસાધ્ય ॥ ૧૧ ॥ આપણે, ક્ય
આપણે પૂજા, આપે આપણા કરતા ॥ ૧૨ ॥ આપણે, નેમ વચન
કો પાસે, આપણે કરે પૂજ્ય સ્વીર સાથે ॥ ૧૩ ॥ આપણે, અપક આપણે
તત્ત્વ પદ, આપણે અસિ પદ પૂજ્ય આપે આપણે, વાચ્યક, આપ
હાથે હું, આપણે જયે અજય ॥ ૧૪ ॥ આપણે, ગુરુ આપણે
પરગત, રાગહી બેસા બિલાસી ॥ આપે ॥ આપે બિના કોઈ દુઃખ
નાહિ, આપણે વેક બતાવે ॥ આપે ॥ ૧૫ ॥

૨૬૬ શ્લોક

અખ શામ બજન કી કરે નૈયાસી, કયા બૂઝ્યા દુનિયાં કે
સુખ મેં, અખ સમય દિગ્ગી જવાસી ॥ ૧૬ ॥ કયા જવાજ દેખા
સાહુવકો જળ દિગ્ગી પેશી ॥ ૧૭ ॥ શાસી ॥ શુભુક શુભુક કરે શેવે
મૂરખ, જળ દિગ્ગી રિગરી જાસી ॥ ૧૮ ॥ ચહાં તો કોઈ બિલાસ
કિયે શે, વહાં બિપતિ બુજને બાસી ॥ ૧૯ ॥ યમ ફલન શે આનિ છુટાવે
સુમિરે કયો ના બિરધાસી ॥ ૨૦ ॥ ધોળ મેં મન મૂલે મૂરખ, કયો
ખાવે આપુ સાસી ॥ ૨૧ ॥ હરિ કી બકલી કયો નાહી કરતા, બિગડી
ખાત શુધારે સાસી ॥ ૨૨ ॥ શુભ જહી મેં જહી આસે ॥ બાજ કયો
સખ નર નાસી ॥ ૨૩ ॥ અખ કે સ્વીસર સૂકિ જમના પૂજા દિયે અનિ
શય બાસી ॥ ૨૪ ॥

૨૬૭ શ્લોક

બસા મુકત દુવારે પર આયા, અખ તો મિત્ર મુશાફિર ખાસે
કયો ફાલના હંકી આયા ॥ ૨૫ ॥ કાલ બહી કા બજે નજારા,
શાજા રેયત સખ આયા ॥ ૨૬ ॥ પડકાર બખર નાહી હું, અખર
નાહી તેરી કાયા ॥ ૨૭ ॥ મુકી બીચે જગત મેં આયા, અપને જાન
કુક નહીં લાયા ॥ ૨૮ ॥ ચહાં શે કોઈ માલ પરાયા, હક નાહક કો
અપનાયા ॥ ૨૯ ॥ સૌકા કયો અમુકિ સૌકાજર, જિયા સૌકે કો તું
આયા ॥ ૩૦ ॥ શુભ કરશે શામ સુમિરે શે, બસા વખત તુઠકો પાયા
॥ ૩૧ ॥ સુખી જગત શે નાના તોરો, ઈશ્વર મેં મન કો લાયા ॥
૩૨ ॥ વેક અખ કુંકે લગે શુભ રૂપ જળ હી પાયા ॥ ૩૩ ॥

૨૯૮ શ્લોક

ભલા બ્રહ્મ જ્ઞાન કો સુની બાની, પંચ કોશ મેં વ્યાપક
આતમ, બ્રહ્મ રૂપ હૈ નિરવાની ॥૧૦૬૬॥ સો હૈ વ્યાપક રૂપ આપના,
ખોજ કરો ના સખ પ્રાની ॥ જો કોઈ આતમ વિદ્યા પઢતા પડતા
નહીં ચારો બાની ॥ વેદ શાસ્ત્ર કથન કરત હૈ, સમજત નહીં
અજ્ઞાની ॥ પોથે વાંચત કથા સુનાવે, ભરમિ રહા પુષ્પિત સાની
॥૧૦૬૭॥ ભેદ વાદ કી ફિરે ગલી મેં, પૂજત હૈ પત્થર પાની ॥ લોભ
માહ કે ફર્યા ફન્દ મેં, નહીં મૂર્ખ નહીં તત જ્ઞાની ॥૧૦૬૮॥ જો
નર ગુપ્ત જ્ઞાન પાતા હૈ, વિષય વાસના સખ ભાની ॥ પદમ
પત્ર જો જગ મેં રહતે, તિનકી નહીં હોવે હાની ॥૧૦૬૯॥

દોહા—બ્રહ્મ જ્ઞાન યહી જનના, આતમબ્રહ્મ સરૂપ ॥

વેદ કહે નિત ટેરિ કે, સખ ભૂપન કા ભૂપ ॥

૨૯૯ શ્લોક ભજન

હંસા ભૂલ્યા નિજ તાલ કો, જખ સે ભટકત ડાલે હૈ ॥૧૦૭૦॥
માન સરોવર છુટ ગયા નહાના ભૂલ ગયા મોતી ખાના ॥ યુગલ્યો
મેં મિલિ હુયા દિવાના, ખાતા હૈ મચ્છી માલ કો, યુગલ્યો બોલી
બોલે હૈ ॥૧૦૭૧॥ છુટિ ગયે નિજ આતમ ધર્મા, ભૂલિ ગયા કુલ
કે સખ કરમા ॥ બનતા ડાલે શરમા વર્મા, કરતા નહીં આપ
સંભાલ કો, કુછ ઓર ઓર બોલે હૈ ॥૧૦૭૨॥ પગલો મેં મિલિ
હો ગયા પગલા, હૈ તો હંસ વોલતા બગલા ॥ પ્રાકમ ભૂલિ
ગયા હૈ સગલા, ભૂલ્યા હૈ દેશ અરુ કાલ કો, જડ અન્થી નહીં
બોલે હૈ ॥૧૦૭૩॥ ગુપ્ત રૂપ પૂરન હૈ જ્યોતી, ખાત તજો યુગલ્યો
કી થોથી ॥ અહં બ્રહ્મ યહ ખાવો મોતી, દુરિ કરો યમ કાલ
કો, પરવત તૃણ કે ઓલહે હૈ ॥૧૦૭૪॥

૩૦૦ શ્લોક ભજન ।

તુહિં હાજિર સદા હજૂર હૈ, ફિર કિસકા જાપકરે હૈ ॥૧૦૭૫॥
સખ મેં શામિલ સખ સે ન્યારા, જાગ્રત સ્વપ્ન ખેલ વિસ્તારા ॥

સુષોપતિ મેં હૈ એકતારા તુરિયે મેં ભર પૂર હૈ, કયોં ઝૂઠા નાચ
નચે હૈ ॥૧૧॥ ત્રીન અવસ્થા જનનહારા, એસે હૈ ત્રીના સે
ન્યારા ॥ કયોં ફિરતો હૈ મારયા મારા, નહીં નેરે નહીં
દૂર હૈ, ફિર કિસકા તાપ તપે હૈ ॥૨૧॥ વ્યાપક હૈ સો રૂપ તુમહારા
ના કછુ હલકા ના ભારયા, ના વહ મધુર નહીં વહ ખારા જ્યોં
કા ત્યોં ભરપૂર હૈ ॥ યહ કયોંના જાંચ જ'ચેં હૈ ॥૩૧॥ ગુપ્ત
ભેદ કો નાહિં લહતા હૈ કુછ ઔર હી કહતા, યાહી સે ભવ
સાગર વહતા તુઝકો કછુ નહીં સહૂર હૈ, ભવસાગર નાહિં
તિરે હૈ ॥૪૧॥

૩૦૧ ભજન

ખાત યહ કહતે વેદ પુરાન, બ્રાહ્મણ સોધ બ્રહ્મ પિછાને ॥૧૬૬॥
સમ દમ શૌચ તપ કો કરતા, હિંસા રહિત શાંતિ કો ધરતા ॥
જ્ઞાન વિજ્ઞાન આસ્તિક ચરતા, યહિ બ્રાહ્મણ કા લક્ષણ જાને ॥
નિજ આતમ રૂપ કો જાને ॥૧૭॥ સોધ ક્ષત્રી 'જહ' કો જાને,
દિનકર તેજ ધીર્જતા ઠાને ॥ યુદ્ધ સે ઉલટા હટિ નહિં જાને ॥
આસ્તિક હોવે ચતુર સુજન, સખ દાન વિધી કો જાને ॥૨૧॥
વૈશ્ય સોધ જો બનિજ બઢાવે ખેતી કરતા ગડી ચરાવે ॥ ઈશ્વર
મેં અપના મન લાવે, જખ હોવે કલ્યાન, નિજ ત્રીન ધર્મ
કો ઠાને ॥૩૧॥ એક ધર્મ શુદ્ધ કા વરન્યા, નીન વર્ણકી સેવા કરના
ગુપ્ત ધ્યાન ઈશ્વર કા ધરના, સેવે ધર્મ અપના જાના ગીતા મેં
કૃષ્ણ બખાને ॥૪૧॥

૩૦૨ ભજન

જગ નહીં અપુખ્ત સમાન હૈ, ફિર ઈશ કૌન કા કરતા
॥૧૬૭॥ સાક્ષ્ય બિના સાક્ષી નહીં હોવે, દૃશ્ય નહીં નેત્તર કયા
જોવે ॥ ભરમ નીંદ મેં કેસે સોવે ॥ નહીં રૂપ નહીં નામ હૈ ॥
ફિર કો જન્મે કો મરતા ॥૧૧॥ હોય અજ્ઞાન તો જ્ઞાન નસાવે,
બંધ હોય તો મુક્તી પાવે ॥ વેદ શાસ્ત્ર નીતહી ગાવે, ઝૂઠે હમ ઝૂઠ

જહાન હૈ, ક્યોં ઝૂંઠા ઝગડા ધરતા ॥૨૧॥ વેદ વૃક્ષ કા જો ફલ ચખતે,
સો કરતા બુદ્ધિ નહીં રખતે ॥ નિશ્ચલ બહે નિજ રૂપ મેં જાયતે
ઇસ મેં અનુભવ પરમાન હૈ, તુંહ નિશ્ચય સદા અકરતા ॥૩૧॥
ગુપ્ત ભેદ કોઈ લખે વેદ કા, તિસકે લેશ નહીં રહે ખેદ કા ॥
ઝૂંઠા ઝગડા વિધિ નિષેધ કા, મૂર્ખ કા વિલવાન હૈ ॥ જ્ઞાની ઈન
સખસે તરતા ॥૪૧॥

૩૦૩ ભજન ।

જો કછુ ભાષત હૈ વિસ્તાર ॥ વિરતી કા ખેલ હૈ સારા
॥૧૬૬॥ અંતઃકરણ અવિદ્યા દોષતિનકા મિલિ-પરિણામ જો હોઈ,
વિષયન કા પરકાશ સોઈ ॥ રૂપ સમાન વિચાર, સોઈ સખ જગ
કા આધાર ॥૧૭॥ ઈશ જ્ઞાન માયા કી વિરતી તાતે સર્વજ્ઞતા કો
ધરતી, જીવ જ્ઞાન અન્તઃ કરન વિરતી, અવિદ્યા રૂપા સર્પ નિહારી
સો સત્ય અસત્ય મંઝારા ॥૨૧॥ ભરમ યથાર્થ જ્ઞાન કહાવે, દોનો
સંસ્કાર ઉપજાવે, જિસતે જ્ઞાન સિમિરતિ પાવે ॥ અન્દર કરો
વિચાર, અનુમાન જ્ઞાન સે ન્યારા ॥૩૧॥ ગુપ્ત જ્ઞાન હૈ સખસે
ન્યારા, વીરતી જ્ઞાન કો દેત સહારા ॥ પરમારથ અરુ હોય
ખેવહારા, યહિ ફલ હે તિસકા સાર, કર દેખો જ્ઞાન વિચાર ॥૪૧॥

૩૦૪ કવ્વાલી

એક ભૂપ સૈયા પર સોયે, સ્વપ્ને મેં ચિલ્લાને લગે ॥૧૬૬॥
પેર પકડ્યા સ્યારની કો, તિસસે ઘખરાને લગે । યૌધા ખડે
ચૌકેર કો વહ ઉનકો બુલવાને લગે ॥૧૭॥ યોધારુ હથિયાર સખ
કછુ કામ નહીં આને લગે, સ્વપ્ને કા દંડ, હાથ લે, વહ ઉસસે
છુટાવા ને લગે ॥૨૧॥ પગ છુટિ કર લંગડે હુયે, જર્જીલ કો જાને
લગે ॥ ફેહા ન દીના તાસુ કો, ફિર લહાયતે આને લગે ॥૩૧॥
મીલિ ગયે મુનિ એક સ્વપ્ન મેં વહ જડી કો લાને લગે ॥ નહીં
રાજ ધન કછુ કાજ આયા, ગુપ્ત સમઝાને લગે ॥૪૧॥

દોહા-રાજ વિભૂતિ નૃપ કે કોઝી ન આઈ કામ ॥
સ્વપ્ને કે મુનિ દંડ ને, સખી સંભારયા કામ ॥

૩૦૫ કવ્વાલી

મેં તો વિષયો' કે મુખ મેં સોયા પરચા, ગુરૂ જ્ઞાન કે જ્ઞાન
જગાય દિયા, જળ જળી ઉઠ્યા તળ દેખી રહ્યા મેરા માનરુ
માહ મુશાય લિયા ॥૧॥ ગુરૂ જ્ઞાન કલેજ દેાડિ ગયા, ઈશ્વર
સે નાતા જોડિ ગયા ॥ સખ જગ સે યારી તોડિ ગયા નિજ
આતમ માહિ' લગાય દિયા ॥૨॥ જળ જળિ લિયા, નિજ રૂપ
સહી મેરી કશેડ જન્મ કી ભૂત વહી ॥ જ્ઞાનાશિ સે સખહિ
અવિધા દહી, મેરા આતમ તત્ત્વ દિખાય દિયા ॥૩॥ જૈસે નિદ્રા
ગયે સે ગયા સ્વપના તેસે આતમ જ્ઞાન સે જગત હુન્યા ॥
નલ નીલ સમાન જહાન બન્યા મેરે દિલ કા દાગ ધોવાય દિયા
॥૪॥ ગુરુ દેવ ને ફંદા તોડિ દિયા, મેરા દુટયા નાતા જોડિ
દિયા ॥ અગ સફલ હુઆ હૈ જન્મ દિયા, સખ ઝગડયા ગુપ્ત
મુકાય દિયા ॥૫॥

૩૦૬ રાગ તરંગા

રે મુસાફિર પ્યારે, કાહે પર લયા હૈ દિખાના ॥૧॥ ઝૂંઠ
હી યહ ખ્યાલ રચા હૈ, હું રાજ રાના ॥ ઝૂંઠ હૈ સખ લાવર
લશ્કર, હું મુરે નિશાના ॥ ૨ ॥ પંચ ભૂત કી ઝૂંઠી
રચના, સ્વર્ગ પતાલ જહાના ॥ ઝૂંઠ હી સખ સ્વર્ગ નર્ક
હૈ ઝૂંઠ હી તિનકા જના ॥૩॥ ઝૂંઠી કાયા ઝૂંઠી માયા
હું પિડક પ્રાના ॥ જીવ કશ કોઝી હૈ હું, સોઘ સંઘ્યા જિન
જના ॥ ૪ ॥ સોઘ ચેતન રૂપ તુમહારા યહી જ્ઞાન યહી ધ્યાના ॥
॥ તારે લિન્ન જો દિખે મુનિયે, મિથ્યા સફલ જહાના ૪ ॥

દોહા-જો પાવે સત રૂપ કો, મિટિ જવે સખ શોક ॥
સખ કહતે વેદરુ શાસ્તર, ઓર મહાજન લોક ॥

૩૦૭ શબ્દ

સખ જૂઠે ગુરુ ઓર ચેલા, વેદ ગુરુ કહે પુકાર ॥ ૧૬૬ ॥ જૂઠ્યો
કા જૂઠા નાતા, ક્યોં ફેરે ભરમ મેં માથા કરો આતમ નિરવાર
॥ ૧ ॥ ગુરુ વેદ સત્ય જો કહતે, તો દૈત માહિ બંધ રહતે, નહીં
અદૈત સંભાર ॥ ૨ ॥ ભવ દુખ મિથ્યા ગુરુ વેદ, યોં કરે વેદ ગુરુ
છેદા, મિથ્યા જગ કા પરિહાર ॥ ૩ ॥ યહ જ્ઞાન લખો ગુપ્તાઈ જૂઠે
કી ધુલિ ઉડાઈ, તજો તિસકા હંકાર ॥ ૪ ॥

૩૦૮ શબ્દ

ગુરુ વેદ કહે સમજા કે, જગત સખ સ્પષ્ટના સમાન ॥ ૧૬૭ ॥
યહ જગત બલ છિટકવો, જૂઠે જગડે ક્યોં હવો ॥ આત તિનકી તો
માન ॥ ૧ ॥ તુહ કહતા હમ સંન્યાસી ફિર ક્યોં ફેરે લોભ કી
ફાંસી, ધર્મ અપને કો પિછાન ॥ ૨ ॥ તીરથ પર ચઢે ભંડારા, દમડ્યોં
કા ઢંગ હૈ સારા ॥ આવતે કથા પુરાન ॥ ૩ ॥ નહીં ગુપ્ત ભેદ કો
બન્યા, કાહે કો લગાવત વાના ॥ લોભ હિત કરે વિખ્યાના ॥ ૪ ॥

૩૦૯ શબ્દ

કમ તોલે જૂઠ કો બોલે, રહે કેસે ધાર્મિયાર ॥ ૧૬૮ ॥ તકડી
કા ખેંચે કાના, તેરા સભી કપટ હમ જાના લેવે પાસંગ કો
માર ॥ ૧ ॥ તુહ જૂઠી દેત ગવાહી, ગંગાજી સભામેં હાઈ, ડૂબિ દિયા
કુલ પરિવાર ॥ ૨ ॥ તિજી કરે અધિક કમાઈ, હમ દેખે મહાજન
ભાઈ ॥ લેવે પંચીસ હજાર ॥ ૩ ॥ સુન ગુપ્ત આત કો ભાઈ, તુમ
સચ્ચી કરો કમાઈ ॥ જખી હોવેં ઉદ્ધાર ॥ ૪ ॥

દોહા--નામ મહાજન કહતે હૈં. કરતે ખડે અકાજ ॥

મોલ કરેં બાજાર મેં. નેક ન આવે લાજ ॥

કન્યા બેંચ ધન ખાહિંગે, સાંભર જ્યોં ગલિ જાહિં ॥
ભોજન નાહિ સમજના, ખૂન માંસ કો ખાહિં ॥

૩૧૦ ગજલ

ચઢ્યા લૌકિક બઢાઈ પર, પડી ગલ મજબકી ફાંસી ॥ કરે
ખાજર વ્યાખાના છુટતી કુચોં કી હાંસી ॥૩૬॥ મજબ કી જલ
ફેલાવે, જાનવર આનિ ફંસિ જાવે ॥ લાવની ગજલ કો ગાવે, બુદ્ધિ
નિજ રૂપ તે નાસી ॥૧॥ સભા વહુ બહુત સી લાવે, નેમ ઔર વરત કર-
વાવે ॥ કમતી તુલના ન છુટવાવે, જૂઠ બોલના ન છુટવાસી ॥૨॥
છાડતે લિલવી ખાના, તજેં નહીં કન્યા વિકરાના, બહુત સુનતે હૈં
વ્યાખના ॥ કરેં નહિં ધર્મ તલાસી ॥૩॥ કાવ્ય કથની કરે આછી
તીસ હજાર કે ડાંકી ॥ રહી નહિં ભક્તી મેં બાકી ગુપ્ત કહતા
હૈ કૈલાસી ॥૪॥

દોહા—ભગત વહી હૈ જગત મેં, પર ધન કરતે ધાત ॥
ખાત બનાવેં ધર્મ કી, લોગોં કો દરસાત ॥

૩૧૧ ગજલ

લગે હૈં લોભ કે મારે, યહાં પડિત વહાં કાજી ॥ નીર નહીં
ક્ષીર કો છાને ડાખ દઈ દાનોં કી બાજી ॥૨૬॥ ગલા વહુ રહ કા
કાટે, ખૂન ઔર માંસ કો ચાટે ॥ કૈસે ઉસ ખુદા કે નાટે, જિસને
યહુ રચના સખ સાજી ॥૧॥ પથર પાની કો પુજવાતે, મન્દિર
મેં રંડી નચવાતે ॥ રાગ રસિકોં કે વે ગાતે ॥ બને હૈં લોભ કે
પાજી ॥૨॥ રાખતે ગ્યારસ ઔર રોજ, ઠાવતે મજબ કા બોઝા ॥
નહીં સખ ઘટ ખુદા સુઝા, કૌન કરની સે હૈ રાજી ॥૩॥ વેઠ
કુરાન કો જાને, લોભ વશ તિનકી નહીં માને ॥ ગલા ચેતન કા
વહુ ભાને, ગુપ્ત ગાવે ગજલ તાજી ॥૪॥

૩૧૨ ગજલ

અંત મેં હોય પછિતાના, હાથ દોડી જાયગા ખાલી, કહા
ગફલત મેં સોતા હૈ, ગયે બડે મુલક કે વાલી ॥૧૬૬॥ જિનોં કે
ચલે થે ચક્કર, તિનોં કી કોઈ નહીં સરવર ॥ કાલ જિન રાખ્યા
અપને ઘર, લગાકર કૈદ મેં તાલી ॥૧૬૭॥ હરી કી ભક્તી નહીં
પાઈ, મારે ઉન સખાહી કો ખાઈ ॥ ખોજ જિનકા નહી રાઈ,
રહ્યા નહીં મૂલ ઔર ડાલી ॥૧૬૮॥ ચેત અખ છોડી કે હંકાર,
હરી ભક્તી કર હોય પાર ॥ સાજિ લે ચેહી અખ સિંગાર, રહેગી
ઇસસે કુછ લાલી ॥૧૬૯॥ ગુપ્ત ગલિયારે મેં આવે, કહીં ફિર ધોખા
નહીં ખાવે ॥ રૂપ જો અપને કો પાવે, કરહિં કયા કાલ ઔર
કાલી ॥૧૭૦॥

૩૧૩ શબ્દ

નિજ આતમ કા જિલવા યહ છાય રહ્યા રે ॥૧૭૧॥ નેત્ર દેશ
ઇડા નાહી મેં જગત કે રંગ દિખાય રહ્યા રે ॥૧૭૨॥ કંઠ દેશ હેંતા
નાહી મેં સ્વપ્ને દૃષ્ટી બતાય રહ્યા રે ॥૧૭૩॥ હિરદા દેશ પુરી તત
નાહી, સુષુપતિ કા સુખ દરશાય રહ્યા રે ॥૧૭૪॥ તુરિયે મેં તીનોં
કા દૃષ્ટા, ગુપ્તહી જોતિ જગાય રહ્યા રે ॥૧૭૫॥

૩૧૪ શબ્દ

ઇસ કાયા મેં અજબ જહુરા હૈ ॥૧૭૬॥ ક્ષિતિ જલ પાવક
પવન અકાસા પાંચો ગુણ ગંભીરા હૈ ॥૧૭૭॥ પિંડ પ્રાન કા યોગ
ભયા હૈ, મન બુદ્ધિ ચિત હંકારા હૈ ॥૧૭૮॥ દસ ઇન્દ્રી પચ્ચીસ
પ્રકૃતી મન કે સદા હજુરા હૈ ॥૧૭૯॥ બુદ્ધિ બેસવા નૃત્ય કરત હૈ,
ગુપ્ત અચલ નિજ નૂરા હૈ ॥૧૮૦॥

દોહા—ગુપ્ત અક્રિયે નૂર તેં, ઘુટિ રહ્યા સભી જહુર ॥

દેખત હૈ કોઈ ધીરજન, કયા દેખે મતિ ફૂર ॥

૩૧૫ શ્લોક

કાયા ગુલ મેં દો દિન કી ચહ લાલી હૈ ॥૧૬॥ મૌત મલ
નિયાં ફિરતી બાગ મેં, સંગ કાલ બલી માલી હૈ ॥૧॥ ડા
પાત કો તકતે ડાલે, હાથ તિનોં કે ડાલી હૈ ॥૨॥ તોડી
ફૂલ મૂલ સે ફાડે કરતે બહુત કુચાલી હૈ ॥૩॥ ગુમ તા
ફૂલન કે લાવે, જૈચી ફૂલેલ કરે ખાતી હૈ ॥૪॥

૩૧૬ શ્લોક

ગુલ સૂખા હરા નહીં હોતા હૈ ॥૧૬॥ પિંડ પ્રાન કા યો
હૈ જખ લગ કયોં ના પાપ કે ધોતા હૈ ॥૧॥ કોટિ જનમ જ
ભરમત હો ગયે, કયોં ના મૂલ અવિદ્યા ખોતા હૈ ॥૨॥ ક
આય તત કાલ વિનાસે ॥ કયા ગફલત મેં સોંતા હૈ ॥૩॥...
અંત કાલ કયા રોતા હૈ ॥૪॥

૩૧૭ શ્લોક

૩ દમ કા કુછ નાહીં ઠિકાના હૈ ॥૧૬॥ ભૂલિ રહ્યા
ધામ બામ મેં તિનકે હાથ વિકાના હૈ ॥૧॥ ઘડી પલા
ખખર નહીં હૈ, કખ કર ચલે પયાના હૈ ॥૨॥ ખાનપાન વિ
કે સુખ મેં હોય રહ્યા મસ્તાના હૈ ॥૩॥ ગુમ ગલી મેં
ન આયા, અંત રસાતલ જાના હૈ ॥૪॥

૩૧૮ શ્લોક

રંગ લાગ્યા હૈ સતસંગ રેની કા ॥૧૬॥ ઘટ હી ભી
દરસતા, દરશન માધો વેની કા ॥૧॥ અલખ કી બલ
ખિચ છાર્ક, ઘાટ નહાયે તિરવેની કા ॥૨॥ કહના ઔર
ઓરા, કયા ફૂલ હોવત કહની કા ॥૩॥ ગુપ્ત ભેદ ક. ફંદા
જખ ઘર પાયા રહની કા ॥૪॥

૩૧૯ શ્લોક

માયા ગદ્ય મેં કથાહરી લાગી રહી ॥ ૧૮ ॥ આતમ રાજ
 પરમારાધ હૈ, તિસકી ભોતિ ભાગી રહી ॥ ૧ ॥ મન દેવાન જહ
 કુમ સુનાવે, મન્દિ અનુચર ભાગી રહી ॥ ૨ ॥ પ્રાન પવન દિન
 તત ચલત હૈ, કાલ કુગ કુગી બાજી રહી ॥ ૩ ॥ ગુપ્ત આતમ
 મરેતા વેદ કહત હૈ, યહ માયા સખ રચના કો રાચી રહી ॥ ૪ ॥

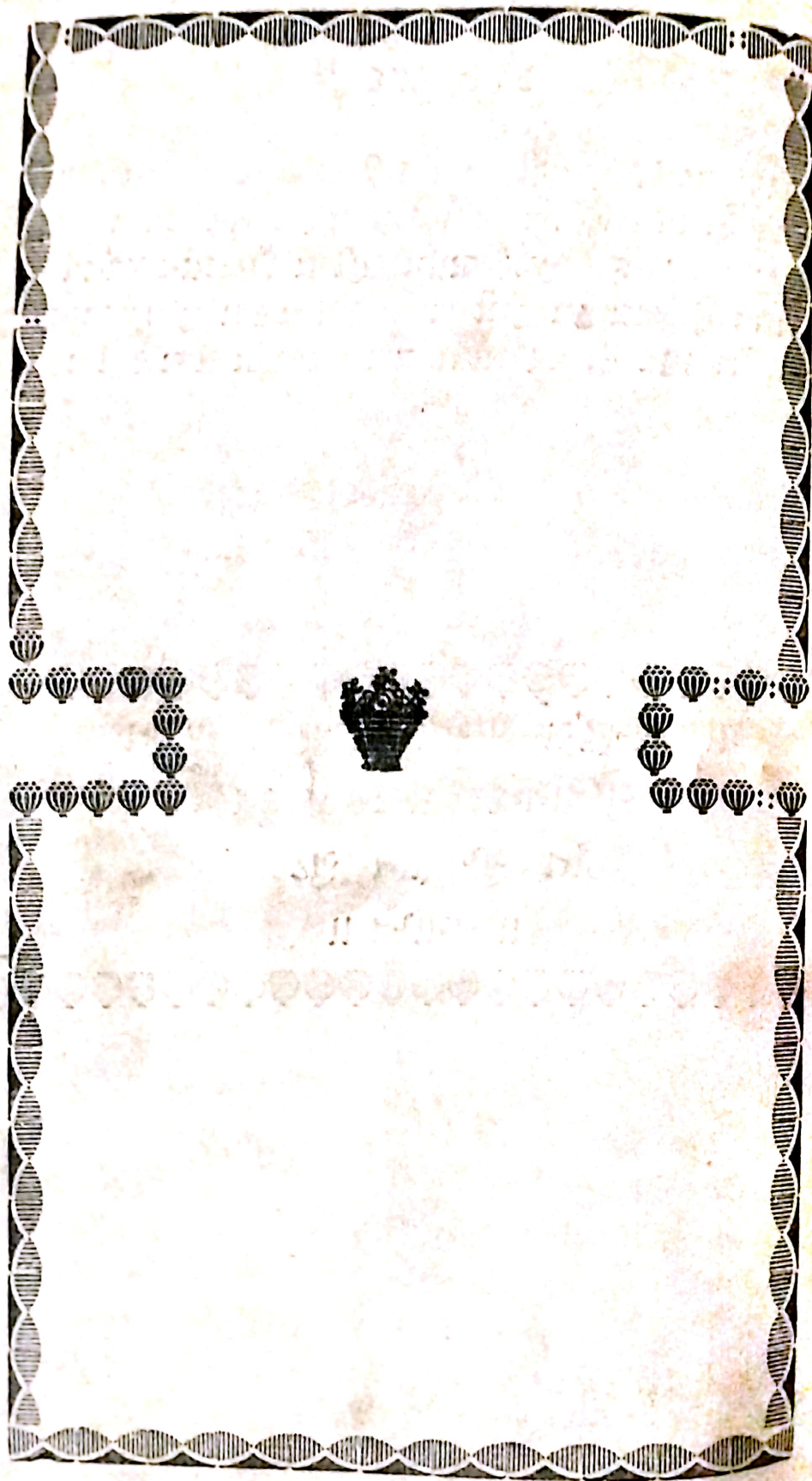
શ્રી પરમહંસ પરિવ્રાજકાચાર્ય અબધૂત

ગુપ્તાનન્દજી મહારાજ કૃત

ધતિ ગુપ્તજ્ઞાન ગુટકા

॥ સમાપ્ત ॥







શ્રી ઐમ. ઐમ. ખંભાતવાળા.
(કેશવધર્મકે કેશતેલોના આગેવાન ઉત્પાદકે)







